ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

बालकों पर स्वसामर्थ्य का अध्ययन

श्रीमति दीपा परते, जबलपुर

स्वसामर्थ्य : स्वसामर्थ्य व्यक्ति की स्वयं की क्षमता का निर्धारण करता है, जिससे वह अपनी क्षमताओं का मूल्यांकन कर, अपने जीवन को प्रभावित करने वाली अनेकों गतिविधियों के अनुसार स्वयं के लक्ष्य का चयन करता है। लक्ष्य को पाने के लिए इस बात का निर्धारण करता है, कि वह क्या सोचता हं, कैसा अनुभव करता है, स्वयं को अपने लक्ष्य के प्रति किस प्रकार प्रोत्साहित करता है।

स्वसामर्थ्य व्यक्ति के जीवन में दृढ़भाव और उपलब्धियों में वृद्धि करता है, जिससे व्यक्ति अपनी क्षमताओं के प्रति आत्मविश्वासी होते है। व्यक्ति स्वयं के लक्ष्य तक पहुंचने के लिए स्वयं और दक्षता और अपनी आंतरिक रूचि, लगन उत्पन्न करमा है, क्योंकि एक चुनौतीपूर्ण लक्ष्य निर्धारित कर उसे पूर्ण करने हेतु दृढ़–संकल्पित होना आवश्यक होता है। किसी कारणवंश असफलता के समय भी अपने प्रयासों को अधिक प्रगतिशील रखते है। वे असफलताओं तथा बाधाओं क कारण अपनी क्षमताओं में विश्वास कर अपने लक्ष्य को पाने का पुनः प्रयास करते है। कठिन परिस्थितियों में भी स्वयं पर विश्वास कर सामना करते रहते है।

स्वसामर्थ्य को निम्नांकित परिभाषाओं द्वारा समझाया गया है –

''स्वसामर्थ्य किसी व्यक्ति वह प्रत्यक्षीकरण है, जो वह अपने लक्ष्य तक पहुंचने के लिए आवश्यक क्षमता के रूप में होता है, यह किसी व्यक्ति में किसी विशिष्ट व्यवहार के निष्पादन में इनके विश्वास प्रदर्शित करता है।''

– बन्डुरा (1977)[1]

''स्वसामर्थ्य वह प्रत्याशा है, जिसमें व्यक्ति यह उम्मीद लगाता है, कि वह एक परिस्थिति विशेष में कितने प्रभावशाली ढंग से कार्य कर पाएगा।''

– बन्डुरा (1978)[2]

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है, कि व्यक्ति स्वयं का स्वसामर्थ्य मापने हेतु पूर्व की कियाओं दूसरों की किया व प्रतिकिया के परिणाम और समूहों के व्यक्ति किस आधार पर कार्य करते है, उस पर निर्भर करता है। व्यक्ति को किसी भी क्षेत्र में सफल बनाने के लिए स्वसामर्थ्य के सकारात्मक प्रभाव महत्वपूर्ण होते है, जिससे उचित प्रतिकिया, किस काम को सीखने में समर्थन मिल सके। बच्चों में सकारात्मक अनुकियाएं और किसी कठिन कार्य को सीखने के लिए स्वसामर्थ्य उपयोगी सिद्ध, बच्चों में उच्च स्तर का स्वसामर्थ्य विकसित करना ठीक प्रकार महत्वपूर्ण होता है, जिस प्रकार आसपास का वातावरण लाभदायक हो एवं चिंतामुक्त और स्वयं में हर्षोल्लास बढ़ाएं।

इसके विपरीत इस प्रकार के व्यक्ति भी होते है, जो अपनी प्रतिभा पर संदेह कर, हमेशा चुनौतीपूर्ण और कठिन कार्यो से दूर रहने का प्रयास करते है क्योकि ऐसे व्यक्ति स्वयं को व्यक्तिगत संकट में मापते है, इस कठिन समय में महत्वाकांक्षी नहीं होते है, तथा लक्ष्य निर्धारण के प्रति स्वयं का दृढ़ संकल्प बहुत कमजोर पाते है। वे कठिन कार्यो में संघर्ष करने के लिए व्यक्तिगत कमजोरियों, बाधाएं और असंतोषजनक परिणामों का अनुमान पूर्व में ही लगा लेते है। व्यक्ति किसी लक्ष्य को पूर्ण किए बिना ही पहले कठिन परिस्थितियों में पूरी लगन और दृढ़ता से प्रयास किए बिना ही पहले कठिन परिस्थितियों में पूरी लगन और दृढ़ता से प्रयास किए बिना ही असफलता को स्वीकार कर लेते है, जिसमें किसी भी प्रकार की असफलता अथवा कठिनाइयों का सामना करने के पश्चात् सामर्थ्यता संबंधी विश्वास को पुनः प्राप्त करने में बहुत अधिक समय लगता है। स्वयं की क्षमताओं के प्रति विश्वास खोने का डर बहुत अधिक होता है। इसलिए व्यक्ति को अपने लक्ष्य को पाने के लिए स्वयं से दर्शाना चाहिए, व्यक्ति के लक्ष्य और उपलब्धियों तक पहुंचने के लिए व्यक्तिगत चयन, प्रोत्साहन, भावात्मक प्रतिकियाएं महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है। स्वसामर्थ्य में व्यक्ति के जीवन के विभिन्न पहलू

जैसे– स्वास्थय, भावात्मक प्रतिकिया और शैक्षणिक इत्यादि का चयन करने में प्रभाव डालती है।

उच्च स्तर के स्वसामर्थ्य व्यक्ति के जीवन में रहन–सहन और उपलब्धियों के स्तर को बढ़ाता है। चुनौतियों का सामना करते समय शांत रहना सीख्ता है। उच्च ज्ञान, नई साच के लिए स्वयं की इच्छा को बढ़ाता है। स्वयं को काम करने के लिए प्रेरित करता है।

निम्नस्तर के स्वसामर्थ्य में व्यक्ति हमेशा सकारात्मक परिणाम ही दें। यह आवश्यक नहीं हैं। इसमे पूर्व परिणाम और नये काम का आधार बनाना भ्रामक सिद्ध होता है, और असफलताओं और अचानक कोई समस्या से उनकी क्षमताओं को कम करना, अवसाद और तनाव को बढ़ाता है।

स्वसामर्थ्य को प्रभावित करने वाले कारक निम्नानुसार है :–

1. स्वसामर्थ्यता के पारिवारिक स्त्रोत – पारिवारिक संबंधों से अल्पवयस्क बच्चों की क्षमताओं के अनुसार रोजाना आने वाली परिस्थितियों और कठिनाइयों का सामना करना आना चाहिए, माता–पिता बच्चों में संज्ञानात्मक क्षमता बढ़ाते हुए, दो रूप को प्रभावित करते है, बच्चो में संज्ञानात्मक क्षमता बढ़ाते हुए, दो रूप को प्रभावित करते है, बच्चों की भाषा विकास और उनके अनुभवों को प्रदर्शित करता है, दूसरी और उनकी क्षमता के बारे में क्या कर सकते है? और क्या नहीं कर सकते है? इससे आत्मज्ञान बढ़ाता है।

2. मित्रों के प्रभाव से स्वसामर्थ्य का विस्तारीकरण – बच्चे अपने सहपाठी के साथ सामाजिक ज्ञान को एक बड़े स्तर पर सीखते है, गतिविधियों को लेकर अपने मित्रों के बीच चंचल होते है, जो उनकी प्रति और लोकप्रियता का मूल्यांकन करते है। मित्रों को व्यवहार बच्चों में काफी गहरा असर डालता है, जिससे अच्छे मित्रों के प्रभाव से बच्चों के जीवन में सकारात्मक स्वसामर्थ्यता का विस्तार होता है।

3. विकास – बच्चों के जीवन की नींव रखने के लिए विद्यालय की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जहां विधार्थियों को संज्ञानात्मक क्षमता, ज्ञान, समस्याओं का निराकरण और कौशलों का विकास होता है, जहां उनके ज्ञान, सोचने का तरीका और सामाजिक कौशल की जांच और तुलना होती है, तो इससे बौद्धिक प्रभावकारिता का विकास होता है।

4. किशोरावस्था की संकमणकालीन अनुभवों के माध्यम से स्वसामर्थ्य का विकास – वयस्कता के दृष्टिकोण के रूप में किशोरों की मांग जीवन के लगभग हर कदम में खुद को पूर्ण जिम्मेदार मानकर सीखने से है, इसके लिए उन्हें जीवन में निपुणता और वयस्कता के तरीके सीखने से होता है। जहां नई क्षमताएं स्वसामर्थ्य के वियवास को विकासित करती है।

5. स्वसामर्थ्य की चिंता वयस्कता के लिए – स्वसामर्थ्य एक वयस्कता की चिंता भी प्रदर्शित करता है। एक वयस्कता के लिए स्वसामर्थ्य क्षमताओं और सफलता की प्राप्ति के लिए महत्वपूर्ण योगदान देता है। एक व्यस्क के लिए कैरियर के विकास और व्यावसायिक गतिविधियों में सफलता के लिए योगदान देता है।

6. उम्र बढ़ने के साथ स्वसामर्थ्य का पुर्नमूल्यांकन – उम्र बढ़ने से जैविक धारणाएं को बड़े स्तर क्षमताओं को कम होते देखा जाता है। उम्र बढ़ने के साथ व्यक्तियों में शारीरिक क्षमताओं में कमी होती है, लेकिन ऐसे बुर्जग भी होते हैं, जिनमें स्मृति को पुनः प्राप्त करने के लिए बेहतर प्रयास करते है, जिसके परिणाम स्वरूप उनकी स्मृति अच्छी होती है।

स्वसामर्थ्य के स्त्रोत निम्नानुसार है :–

1. संज्ञानात्मकता प्रकिया – स्वसामर्थ्य के प्रभाव एवं विश्वास कई रूप में मिलते है, संज्ञानात्मकता प्रकिया से व्यक्ति स्वयं में व्यक्तिगत लक्ष्यों को पूर्ण करने में क्षमताओं को मूल्यांकन करने में प्रभव डालता है। स्वसामर्थ्य का अनुभव जितना मजबूत होगा, उतना ही उच्च स्तर का लक्ष्य निर्धारित होता है, व्यक्ति की बहुत सारी कियाएं शुरूवाती दौर पर विचारों पर निर्भर होती है, संज्ञानात्मकता प्रकिया से स्वसामर्थ्य व्यक्ति का विश्वास उनके पूर्वानुमान परिदृश्यों को आकार देता एवं अभ्यास करता है। सज्ञानात्मकता प्रकिया के द्वारा जो व्यक्ति सामर्थ्य की उच्च समझ रखते हैं, वे सफलता के परिदृश्यों की कल्पना करते है, स्वयं के लिए सकारात्मक ज्ञान और अच्छा प्रदर्शन हो जाता है, जीवन में किसी विचार पर पूर्वानुमान लगाना और उन्हें स्वयं के अनुसार विकसित करना, जीवन को प्रभावकारी बनाता है।
2. अभिप्रेरणात्मक प्रकिया – व्यक्ति में स्वयं को अभिप्रेरणात्मक सामर्थ्य का स्वविश्वास प्रोत्साहन से रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, ऐसे व्यक्ति जो प्रोत्साहन को संयुक्त रूप से दूसरे के सामने उजागर करते हैं, वे स्वयं को प्रोत्साहित करते हुए, कियाओं का संचालन कर अपने पूर्व के अनुमान के आधार पर विचार करते है।
3. भावात्मक प्रकिया – स्वसामर्थ्य में मुख्य रूप से भावात्मक प्रकिया के द्वारा तनाव और चिंता कम करने में रहता है, जो व्यक्ति कठिनाइयों का सामना करने में विश्वास रखते है, ऐसे समय पर व्यक्ति के जीवन में विघ्न डालने वाले विचारों से विचलित नहीं होते हैं, लेकिन जो कठिनाइयों का सामना नहीं कर पाते हैं, और स्वयं के आसपास में कई पहलुओं को खतरों से भरा देखते हैं, कभी न होने वाली चीजों पर व्यर्थ ही चिंता करते है।
4. चयन प्रकिया – स्वसामर्थ्य में व्यक्ति चयन प्रकिया मुख्य रूप से केन्द्रित करता है, जो लाभदायक वातावरण बनाने में सहायता करता है, और दैनिक जीवनचर्या में आने वाली समस्याओं को कम करने में मदद करती है, इनमें काफी कुछ वातावरण से प्रभावित होकर, जीवन का आकर निर्मित करते है। उन कियाओं और परिस्थितयों से बचने का प्रयास करते है, जो उनकी क्षमता से बाहर होती है, लेकिन उन कियाओं और परिस्थितियों का चयन करते है, जिनमें चुनौतियों का सामना करने के लिए तत्पर निर्णय लें।

सदर्भ ग्रंथ सूची

1. संजीव डॉ. कुमार विशिष्ट शिक्षा, प्रथम संस्करण (2008) नंदकिशोर सिंह, जानकी प्रकाशन, अशोक राजपथ, चौहटा, पटना, पृ. 108
2. शर्मा डॉ. आर.ए. विशिष्ट शिक्षा का प्रारूप – 2014, पृ. 256
3. श्रीवास्तव, डॉ. डी.एन. मनोवैज्ञानिक अनुसंधान एवं मापन, नीवनतम संस्करण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पृ. 58
4. सिंह अरूण कुमार, मनोवैज्ञानिक समाज शास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियां, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, पृ. 39
5. नारंग डॉ. सुनीता, विशिष्ट शिक्षा 2004, कल्याणी पब्लिशर्स, लुधियाना पृ. 66

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Customer Perception towards E- Banking

Dr. Bhavya Maheshwari
Faculty, SOS in Economics Jiwaji University, Gwalior Madhya Pradesh-474011

ABSTRACT : Electronic banking is the most inventive services offered by the banks. The transformation from traditional banking started from the use of automatic teller machines, (ATM), direct bill payment, electronic fund transfer (EFT) and the revolutionary online banking is being accepted by the customers with growing awareness and education. Many people are shifting to e-banking and are readily accepting the usefulness of this option. It allows customers to manage their accounts from any place at any time for minimum cost.

The development of information technology has been a big boon to banking industry. It has helped the banking industry in several ways, especially in improving its customer relations. Banking industry has undertaken various activities due to the introduction of electronic media in its operations.

This paper therefore, examines, if customers' choice of banks is influenced by the quality of e banking services provided. Stratified sampling was used; while the survey Instrument was a developed Questionnaire comprising open ended and Likert type of questions.

Keywords : E-Banking, ATM, E-banking services, Customer perception, Time Saving

INTRODUCTION : At present, technology has become the key driver in the banking industry as it has created new business models, process and also revolutionized distribution channels. Earlier, banks were using branch networks and distributed PC software as their delivery channels to reach business customers. However, competition in the financial service industry forced the banks to rethink on their strategy. Consequently, keeping existing customers as well as attracting new ones is a critical concern. The challenging business environment in the financial services market has resulted in pressure on banks to develop and utilize alternative delivery channels, with a view to attracting more customers, improving customer's perceptions and encouraging loyalty. Among the more recent delivery channels introduced is electronic banking i.e. E-Banking.

E-Banking offers a variety of instruments like ATM, Credit Card, Debit Card, Internet Banking, Mobile Banking, Electronic Clearing Services etc. Internet Banking is a innovation that connects the customers with banks website for performing various operations like fund transfer, account information, E-payments, cheque book order, E-Broking etc.

In India, ICICI Bank was the first to offer E-Banking service. After ICICI Bank, City Bank, IndusInd Bank and HDFC Bank were the early ones to join the technology land wagon in 1999. In 2001, Public sector Banks were offers E-Banking in India. SBI is a leading bank in public sector banks.

OBJECTIVES OF STUDY

1) To study the customer perception regarding e-banking services provided by SBI and HDFC Bank.
2) To identify the factors that influences the customer in using e- banking services.
3) To analyse the level of satisfaction of customers about e- banking services.
4) To offer suggestions to improve the standard of e-banking services.

HYPOTHESIS OF STUDY

H_{01}: There is no significant difference in the average frequency of credit card usage in SBI and HDFC Bank.

H_{02}: There is no significant difference in the average frequency of Debit card usage in SBI and HDFC Bank.

H_{03}: There is no significant difference in the average frequency of Online Banking usage in SBI and HDFC Bank.

H_{04}: There is no significant difference in the average frequency of Mobile Banking usage in SBI and HDFC Bank.

H_{05}: There is no significant difference in the average frequency of Mobile Banking usage in SBI and HDFC Bank.

H_{06}: There is no significant difference in the perception of E-Banking customers of SBI and HDFC Bank regarding convenient accessibility.

H_{07}: There is no significant difference in the perception of E-Banking customers of SBI and HDFC Bank regarding time saving.

H_{08}: There is no significant difference in the perception of E-Banking customers of SBI and HDFC Bank regarding time security.

H_{09}: There is no significant difference in the perception of E-Banking customers of SBI and HDFC Bank regarding low transaction cost.

H_{10}: E-Banking has not improved the efficiency and effectiveness of SBI.

H_{11}: E-Banking has not improved the efficiency and effectiveness of HDFC Bank.

H_{12}: Customers do not prefer electronic banking to manual banking of SBI.

H_{13}: Customers do not prefer electronic banking to manual banking of HDFC Bank.

RESEARCH METHODOLOGY : In the research work researcher has followed the scientific method of study. The study is based on the analysis and interpretation of the data collected. Two banks were selected for the study. Out of these one is public sector bank viz State Bank of India and other is private sector bank viz HDFC Bank. The one public sector bank is taken because it has huge customer base is taken as it is the new generation private sector bank have strong retail presence and offer comprehensive range of information to the customer.

A total of 584 questionnaires were distributed amongst the customers of both banks, 436 questionnaires were filled and returned and 350 fully filled questionnaires were taken for the final analysis. Out of 350 questionnaires, 175 questionnaires of State Bank of India customers and 175 questionnaires of HDFC Bank customers were taken. Probability and systematic sampling methods were used to draw the sample from the population.

DATA ANALYSIS

Table 1
E-Banking Instrument Usage in SBI and HDFC Bank

E-Banking Instrument	SBI	HDFC BANK	Total
ATM	175	175	350
Credit Card	38	88	126
Debit Card	88	146	234
On-line/Internet Banking	62	131	193
Mobile Banking	36	44	80
Electronic Clearing Services	75	20	95

Source: Prepared on the basis of response of the customers of both banks Out of sample selected of both banks, all of them preferred ATM to other instruments. In case of Credit card, it has been revealed that the Credit Card usage is high amongst the customers of HDFC Bank as compare

to SBI. The main reason behind this is the easy accessibility to credit cards, as HDFC Bank are issuing Credit Card to almost all its customers, even when they are opening new account to increase their customer base. Debit Card usage has been found high in case of both banks. In case of on-line banking usage has been found high in case of HDFC Bank as compare to SBI. The reason behind this is that E-Banking customers are having more faith on HDFC Bank as compare to SBI. Most of the customers have found online banking website of HDFC Bank very friendly. Intensity of mobile banking usage has been found low in case of both sectors. The number of mobile banking customer is 36 and 44 respectively in SBI and HDFC Bank. The reason behind is that awareness about mobile banking is very less amongst the customers of both banks. In case of Electronic clearing services, it has been revealed that Electronic Clearing Service usage is high amongst the customers of SBI as compare to HDFC Bank. The number of Electronic Clearing Services Customers is 75 and 20 respectively in SBI and HDFC Bank.

Table 2

Factors Encouraging Customers to Selection of E-Banking

Factors	Strongly Disagree		Disagree		Neutral		Agree		Strongly Agree	
	SBI	HDFC	SBI	HDFC	SBI	HDFC	SBI	HDFC	SBI	HDFC
Convenient accessibility	12	-	-	-	12	25	70	50	81	100
Low hidden cost for services	-	-	40	25	13	50	82	25	40	75
Time Saving	13	-	-	-	14	25	54	25	94	125
Money Saving	108	50	40	100	-	25	14	-	13	-
Security for threats/ less risk to use	44	-	33	75	11	-	22	75	65	25
No paper formalities	17	-	-	-	-	25	53	100	105	50
Friends & Relatives	-	50	13	25	67	50	82	25	13	25
Status Symbol	-	50	-	-	62	50	88	25	25	50
Ease to use	-	-	15	50	-	-	131	75	29	50
Nearness	-	-	16	75	32	-	95	100	32	-
Better quality of Notes/ New Notes	-	-	-	75	54	-	13	100	108	-
Number of	-	-	27	58	-	-	54	117	94	-

facilities										
24 X 7 Banking facilities	15	-	-	44	-	-	29	87	131	44
Convenient location of ATMs	-	-	-	-	-	100	75	25	100	50
Provide accurate information	-	-	-	-	12	50	63	75	100	50

Source: Prepared on the basis of response of the customers of both banks Table analyzes the motivational factors encouraging the customers to prefer E-Banking. In case of SBI the strongest factor is saving of time and second, convenient accessibility. Security, low hidden cost, No paper formalities, 24x7 Banking facilities, accurate information and better quality of Notes are the other factor which attract them to choose E - Banking. On other hand is case of HDFC Bank the strongest factor is convenient accessibility, second time saving and third low hidden cost. Security, No paper formalities, accurate information, Ease to use, Status symbol and 24x7 Banking facilities are the other factor which attracts them to choose E-Banking.

Table 3

Customers Perceptions Regarding E-Banking Leading to Efficiency in Banking Services

Agree level	SBI	HDFC BANK
Strongly Agree	62	73
Agree	113	102
Disagree	-	-
Strongly Disagree	-	-
Total	**175**	**175**

Source: Prepared on the basis of response of the customers of both banks Out of sample size of SBI 62 customers strongly agree and 113 customers agree that E-Banking lead to efficiency in banking services. On other hand out of 175 customer of HDFC Bank 73 customers strongly agree and 102 customers agree that E-Banking lead to efficiency in banking services.

Table 4

Customers Opinion Regarding E-Banking Faster Effectiveness in Banking Services

Agree level	SBI	HDFC BANK
Strongly Agree	25	58
Agree	150	117
Disagree	-	-
Strongly Disagree	-	-
Total	**175**	**175**

Source: Prepared on the basis of response of the customers of both banks Out of sample selected of SBI 25 customers strongly agree and 150 customers agree that E-banking faster effectiveness in banking services. Whereas, 58 customers strongly agree and 117 customers agree of HDFC Bank that E-Banking faster effectiveness in banking services.

Table 5

Customers Opinion Regarding Satisfaction Level Provided E-Banking Services by Bank

Satisfaction level	SBI	HDFC BANK
Highly satisfied	12	45
Satisfied	111	88
Natural	38	30
Dissatisfied	14	12
Highly dissatisfied	-	-
Total	**175**	**175**

Source: Prepared on the basis of response of the customers of both banks HDFC Bank customers have more satisfied E-Banking services in comparison to SBI customers. It is examined that 45 HDFC Bank customers have highly satisfied and 88 customers have satisfied from E-Banking services where as 12 SBI customers have highly satisfied and 111 customers have satisfied with E-Banking services.

Table 6

Customers Suggestions to Improve the E-Banking Services by Bank

Improvement	SBI	HDFC BANK	Total
Reduction of cost	100	44	144
More area to be covered	88	73	161
More security measures	112	88	200
Easy accessable	100	58	158
Computer given by bank	-	29	29
More advertising	75	15	90
Contract with Broadband company for concession rate	13	29	42
Conduct more training programmes	100	58	158
ATM will established in convenient place	125	73	198

Source: Prepared on the basis of response of the customers of both banks It analyses improvement preferred by the customers for E-Banking services of both banks. SBI customers have most preferred ATM established in convenient place for improvement in E-Banking and secondly more security measures are preferred. On other side HDFC customers have most preferred more security measures and secondly more area to be covered and ATM established in convenient place are preferred for improvement in E-Banking.

Table 7 Customers Preference Regarding E-Banking in Comparison to Manual Banking

Preference	SBI	HDFC BANK
Yes	150	162
No	25	13
Total	**175**	**175**

Source: Prepared on the basis of response of the customers of both banks Out of sample selected of both banks, 150 customers of SBI and 162 customers of HDFC Bank have preferred E-Banking in comparison to manual banking. It is observed that customers have received many benefits from E-Banking.

FINDINGS

Hypothesis – H_{01}: There is no significant difference in the average frequency of credit card usage in SBI and HDFC Bank.

Table 8

Z-Test for Difference of Means in Average Frequency of Credit Card usage in SBI and HDFC Bank

Bank	N	Mean	Standard Deviation	$Z_{.05}$
SBI	N_1=38	X_1= 4.34	σ_1 = 2.67	.827
HDFC	N_2=88	X_2 = 3.92	σ_2 = 2.49	

The null hypothesis is accepted (Z= .827)

The null hypothesis has been accepted, it highlights that there is no significant difference in the average frequency of usage of credit card among the E-Banking customers of SBI and HDFC Bank. It has been observe that the average frequency of credit card usage is same in SBI and HDFC Bank. The main reason is that usually bank whether SBI or HDFC offers credit card to their customers at a very low annual fees. There is one more reason that it reduces the risk of loss in cash handling. All E-Banking customers of both banks are frequently using credit card for purchasing products.

Hypothesis – H_{02}: There is no significant difference in the average frequency of Debit Card usage in SBI and HDFC Bank.

Table 9

Z-Test for Difference of Means in Average Frequency of Debit Card usage in SBI and HDFC Bank

Bank	N	Mean	Standard Deviation	$Z_{.05}$
SBI	N_1=88	X_1= 7.5	σ_1 = 3.29	2.141
HDFC	N_2=146	X_2 = 6.5	σ_2 = 3.73	

The null hypothesis is rejected (Z= 2.141)

The null hypothesis has been rejected; it highlights a significant difference in the average frequency of usage of debit card among the E-Banking customers of SBI and HDFC Bank. It has been observed that the average frequency of debit card usage is high in SBI as compare to HDFC Bank. The main reason behind this is the cheapest charges to debit card in SBI. SBI issue debit card to almost all its customers, even when they are opening new account to increase their customer base.

Hypothesis – H_{03}: There is no significant difference in the average frequency of Online Banking usage in SBI and HDFC Bank.

Table 10

Z-Test for Difference of Means in Average Frequency of Online Banking usage in SBI and HDFC Bank

Bank	N	Mean	Standard Deviation	$Z_{.05}$
SBI	N_1=62	X_1= 8.15	σ_1 = 4.71	5.075
HDFC	N_2=131	X_2 = 4.75	σ_2 = 3.45	

The null hypothesis is rejected (Z= 5.075)

The hypothesis has been rejected; this shows the significant differences in the average

frequency of Online banking among the customers of SBI and HDFC Bank. It has been observed that average frequency of online banking is high in SBI as compare to HDFC Bank. SBI is following high security standard in case of Online banking, thus it provide regular update relating to online banking to their customers, thus enhances customers awareness. With online banking, bank customer can perform many tasks like checking account status, Cheque status and payment of Credit Card and utility bills.

Hypothesis – H_{04}: There is no significant difference in the average frequency of Mobile Banking usage in SBI and HDFC Bank.

Table 11

Z-Test for Difference of Means in Average Frequency of Mobile Banking usage in SBI and HDFC Bank

Bank	N	Mean	Standard Deviation	$Z_{.05}$
SBI	N_1=36	X_1= 4.72	σ_1 = 2.48	2.21
HDFC	N_2=44	X_2 = 2.95	σ_2 = 1.44	

The null hypothesis is rejected (Z= 2.21)

The hypothesis has been rejected; this indicates that there is significant difference in the average frequency of mobile banking usage in SBI and HDFC Bank. It has been that average frequency of mobile banking is high in SBI as compare to HDFC Bank.

Hypothesis – H_{05}: There is no significant difference in the average frequency of ATM usage in SBI and HDFC Bank.

Table 12

Z-Test for Difference of Means in Average Frequency of ATM usage in SBI and HDFC Bank

Bank	N	Mean	Standard Deviation	$Z_{.05}$
SBI	N_1=175	X_1= 6.79	σ_1 = 4.16	1.178
HDFC	N_2=175	X_2 = 6.21	σ_2 = 5.01	

The null hypothesis is accepted (Z= 1.178)

The null hypothesis has been accepted, it indicates that there is no significant difference in the average frequency of ATM usage in SBI and HDFC Bank. The main reason is that usually SBI or HDFC Bank offers ATM to their customers at a very low annual fee. There is one more reason that almost all E-Banking customers of both banks are frequently using ATM for cash withdrawal.

Hypothesis – H_{06}: There is no significant difference in the perception of E-Banking customers of SBI and HDFC Bank regarding convenient accessibility.

Table 13

Z-Test for Difference of Means for Convenience of Operations

Bank	N	Mean	Standard Deviation	$Z_{.05}$
SBI	N_1=175	X_1= 4.19	σ_1 = 1.06	2.477
HDFC	N_2=175	X_2 = 4.43	σ_2 = 0.73	

The null hypothesis is rejected (Z= 2.477)

The null hypothesis regarding convenient accessibility has been rejected; it means that there is a significant difference in the perception of E-Banking customers of SBI and HDFC Bank. HDFC Bank customers have found E-Banking very simple to access, even when using it for the first time. They have characterized E-Banking by the frankness and clarity of the services. HDFC Bank customers have found that E-Banking products and services are user friendly and it also provides convenient hours of operations.

Hypothesis – H_{07}: There is no significant difference in the perception of E-Banking customers of SBI and HDFC Bank regarding time saving.

Table 14

Z-Test for Difference of Means for Time Saving

Bank	N	Mean	Standard Deviation	$Z_{.05}$
SBI	N_1=175	X_1= 4.23	σ_1 = 1.109	3.214
HDFC	N_2=175	X_2 = 4.57	σ_2 = .728	

The null hypothesis is rejected (Z= 3.214)

It has been observed that hypothesis has been rejected. This has pointed out the difference in the preference of E-Banking customers of SBI and HDFC Bank regarding time saving. HDFC Banking customers think that E-Banking instruments and services save a lot time in operations. They have agreed that E-Banking provides a consistent standard service to customers and no waiting time is involved in obtaining E-Banking instruments and services. On the other hand, E-Banking customers of SBI are not fully convinced with the time management of E-Banking. They have observed that with E-Banking response to the complaints is not very speedy and efficient. They have also found that SBI bank employees are slow especially in case of problem solving or issue handling activities and this result in wastage of time.

Hypothesis – H_{08}: There is no significant difference in the perception of E-Banking customers of SBI and HDFC Bank regarding time security.

Table 15

Z-Test for Difference of Means for Security

Bank	N	Mean	Standard Deviation	$Z_{.05}$
SBI	N_1=175	X_1= 3.18	σ_1 = 1.67	.716
HDFC	N_2=175	X_2 = 3.29	σ_2 = 1.16	

The null hypothesis is accepted (Z= .716)

The null hypothesis regarding security has been accepted, it indicates that there exists no difference in the perception of E-Banking customers of SBI and HDFC Bank regarding security. It has been observed that the perception of E-Banking customer regarding security is same in SBI and HDFC Bank. The main reason is that both banks have developed reputation in the use of technology for delivering instruments and services. This has developed feeling of a faith amongst E-Banking customers of both banks.

Hypothesis – H_{09}: There is no significant difference in the perception of E-Banking customers of SBI and HDFC Bank regarding low transaction cost.

Table 16

Z-Test for Difference of Means for low transaction cost

Bank	N	Mean	Standard Deviation	$Z_{.05}$
SBI	N_1=175	X_1= 3.7	σ_1 = 1.06	1.372
HDFC	N_2=175	X_2 = 3.86	σ_2 = 1.12	

The null hypothesis is accepted (Z= 1.372)

The null hypothesis regarding low transaction cost has been accepted, it indicates that there is no significant different in the perception of E-Banking customers of SBI and HDFC Bank regarding low transaction cost. IT has been observed that the perception of E-Banking customers regarding low transaction cost is same in SBI and HDFC Bank. The main reason is that both banks have provided many instrument and services of low fees and charges.

Hypothesis – H_{10}: E-Banking has not improved the efficiency and effectiveness of SBI.

Table 17 Chi-square test of Independence of Introduction of E-Banking and improved efficiencies and effectiveness

Calculated Value (χ^2)	DF	Tabulated Value ($\chi^2_{.05}$)	Result
20.9	1	3.84	H_{19} - Rejected

The null hypothesis was rejected, this indicate that introduction of E-Banking has improved the efficiency and effectiveness of SBI.

Hypothesis-H_{11}: E-Banking has not improved the efficiency and effectiveness of HDFC Bank.

Table 18 Chi-square test of Independence of Introduction of E-Banking and improved efficiencies and effectiveness

Calculated Value (χ^2)	DF	Tabulated Value ($\chi^2_{.05}$)	Result
6.63	1	3.84	H_{20} - Rejected

The null hypothesis was rejected. It means that introduction of E-Banking has improved the efficiency and effectiveness of HDFC Bank.

E-Banking has a significant effect on both banks efficiency and effectiveness. This means that the both banks are now able to give letter services to their customers and timely response. This has reduced to some extent complaints of customers. Before the introduction of E-Banking, customers experience has being poor in terms of time to service customer and operational services.

Products offering has a limited range like savings, current, investment due to traditional practice of banking but e-banking has brought a lot of impact in effectiveness and efficiency but giving room for other better hybrid products like automated invoice settlement, bank cards, electronic standing orders etc.

Hypothesis – H_{12}: Customers do not prefer electronic banking to manual banking of SBI.

Table 19

Chi-square test of Independence of Customers preference and Electronic Banking

Calculated Value (χ^2)	DF	Tabulated Value ($\chi^2_{.05}$)	Result
89.62	1	3.84	H_{23} - Rejected

The null hypothesis has been rejected. It indicates that customers prefer electronic banking to manual banking of SBI.

Hypothesis – H_{13}: Customers do not prefer electronic banking to manual banking of HDFC Bank.

Table 20

Chi-square test of Independence of Customers preference and Electronic Banking

Calculated Value (χ^2)	DF	Tabulated Value ($\chi^2_{.05}$)	Result
126.86	1	3.84	H_{24} - Rejected

The null hypothesis has been rejected. It means that customers prefer electronic banking to manual banking of HDFC Bank.

It means that the customers of both banks have preferred electronic banking in comparison to manual banking. It is because; E-Banking customers access many benefits of the E-Banking. A primary benefit for the customers is

convenience of operations. Time saving is other benefit of E-Banking. Customers believed that E-Banking responded faster to their needs than other traditional modes to banking. The other benefits of E-Banking are Cost saving increased customers base, mass customization.

CONCLUSION : E-banking has become a necessary survival weapon. Today, the click of the mouse offers customers banking services at a much lower cost and also empowers them with unprecedented freedom in choosing vendors for their financial service needs. Banks have to upgrade and constantly think of new innovative customized packages and services to remain competitive. Banks have come to realize that survival in the new e-economy depends on delivering some or all of their banking services on the Internet while continuing to support their traditional infrastructure.

The rise of E-banking is redefining business relationships and the most successful banks will be those that can truly strengthen their relationship with their customers. Without any doubt, the international scope of E banking provides new growth perspectives and Internet business is a catalyst for new technologies and new business processes.

E-Banking has been offered by stating the significant instruments and services provided by SBI and HDFC Bank. Both banks offer instruments to customers are ATM. Which is cash rendering teller machine, Mobile banking refers to provision and a ailment of banking and financial services with the help of mobile device, credit card. Which is a small plastic card issued to users as a system of payment, Debit Card, Which is a plastic card that provides an alternative payment method to cash when making purchases, smart card which is a credit card sized plastic card with on embedded computer chip, Teller phone service and Electronic clearing services (ECS).

Both Banks offer E-Banking services to customers are Account information, Fund transfer, Insurance of demand drafts, E-payments such as bill pay, Credit card bills pay, prepaid mobile charge etc, ordering cheque books, E-Banking, E-Investments, E-Ticketing, online tax payment etc. Only HDFC Bank offer one view and SBI offer ez pay card services to customers.

References :

Subbiah Dr. A and Jeyakumar S., April 2009, “Customer Service of Commerical Bank with special References to ATMS”, Monthly Journal of Banking Finance, Vol. XXII. No. 4, p.32.

www.en.wikipedia.org/wiki/Automated teller machine.

Dhamodran Mr. R., Sept 2010, “Mobile banking-an upcoming technology in banking sphere”, PNB Monthly review, p.11.

Gupta, Vaisnath and Swami, 2006, “Banking & Finance”, Ramesh Book Depot, Jaipur, p.145.

Dutta Dipanwila, Feb 2010, “Mobile Banking in India”, PNB Monthly review, p.4.

Kumarand Dr. M. Selva and Rathidevi R., July 2010, “Mobile Banking new dimension of customers service”, Monthly Journal of Banking Finance, Vol. XXIII, No.7, p.23-26.

Rao Dr. NVM, Singh Dr. Prakash and Maheshwari Ms. Neeru, 2005, “A framework for evaluating E-Business models and productivity Analysis for Banking Sector in India”, Journal of Internet Banking and commerce, Vol. 10, No.2, pp. 38-41.

Kumar Dr. Narendra and Kumar Dr. Mohan, 2005, “Bank computerization & Customer Services- A study”, Journal of Banking & Finance, Vol. XVIII, No. 6, pp.42-45.

Singh Balwinder and Malhotra Pooja, 2006, “Adoption of Internet Banking: An empirical investigation of Indian banking sector”, The journal of internet banking and commerce April 2006, pp.12-16

Gupta Ankur, 2006 “Data Protection in consumer E-Banking”, The Journal of internet banking and commerce, Vol .II, No.1, pp.23-25.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Globalization & Its Impact on Indian Economy

Dr. (Smt.) Sonika Dhandhariya
Ambedkar Basti Bilehri Mandala Road Jabalpur

The term globalization refers to the integration of economies of the world. This means unrestricted trade free flow of funds, exchange of technology and know how along with free movement of labour between countries. Developed countries have been trying very hard to convince developing nations for opening up of their economy & adopting liberalization process.

As a result Indian economy too experienced major policy changes in early 1990s. reforms were introduced to improve growth rate of economy & make it more competitive globally. Reforms were part of the process known as, Liberalization, Privatization and Globalization (LPG model). The reforms introduced have had wide ranging impact on the way of Indian populace in general. It has permeated all sectors of the Indian economy. It has paved the way of Indian economy being part of a integrated global economy. The changes has a changed not only the sectors of the economy but also the perspective of the Indian population. The reason for reforms in 1991 was that the Indian economy was in a deep crisis situation. It had foreign exchange reserves as low as $1 billion, foreign investors & NRI's were withdrawing their capitals from the market, inflation rate was as high as 17%. The immediate steps taken by Indian government included following:

Devaluation of currency by 17-18%
Disinvestment process was started with respect to public undertakings. This was done partly to increase participation of private capital in the economy & partly as an effort to do away with sick Industrial units which were providing too costly to state exchequer.
Large scale de licensing was undertaken by the Indian government
Foreign direct investments were allowed into previously regulated & controlled areas.
Abolition of MRTP act was done
Special Non- Resident schemes were launched to attract their investment.
Removal of quantitative restriction on export was undertaken
The reduction of the peak customs tariff

Impact of Globalization of Indian Economy

Globalization like any other processes is not without its pros& cons. The Indian economy has experienced both since liberalization started in the year 1991. A number of advocates exist both for its benefits & disadvantages. The Indian economy has experienced following benefits benefit after adoption of liberalization process.

The rate of growth of the gross domestic product of India increased. In the early seventies & before that the growth rate never crossed 6%. However since liberalization in 1991 the GDP growth rate is talked about in terms of 8-9%
The foreign exchange reserve has recorded a phenomenal increase. It has increased from as low as $1 billion in 1990 to $180 billion in 2007. This provides strength to local currency & has improved the Indian standing in international areas tremendously.
The foreign direct investment (FDI) is a major tool which has been used by the developed countries to invest in the developing countries in order to efficiently grow selective areas the economy. The FDI's too has increased specially in software's service industry transportation & telecommunications etc.
Out sourcing has become a huge source of revenue generation for India. India is said to be

center point of 45% of total outsourced jobs in the world. Indian manpower with its command over English & its technical know how has made it possible.

Globalization also has increased the option for the both producers & consumers. Producers have a larger market to cater to & consumers can choose from a wider range of products & services.

Indian capital markets too have benefited from this process. The capitalization in the Indian market was of the amount of $ 894 billion a few years back. This again has resulted in providing of easy funds availability to the entrepreneurs thus making their product more market competitive.

Globalization has paved the way of transfer of international funds & technical know how to the Indian business sectors, thus the products of Indian Industry have become competitive globally both in terms of pricing & standards.

Globalization has also ensured quick transfer of information among countries. This has made the people more integrated with the global community at large. The cultural barriers have been reduced & similarities are gaining prominence along wjth concern for common Interest.

Indian economy has recorded certain small visible advantages too. Some of these are:-

Entry of the private sector banks has completely improved the efficiency of public sector banks too.

Opening up of mutual funds has facilitated provision of low risk high return investment opportunities recognized by specially appointed experts

Life insurance sectors has recorded a tremendous boom. There are now a number of players who are offering easy Insurance in both life Insurance & general Insurance sectors.

Low interest rates have ensured that even small income people can afford house car & mother luxuries of life.

ATM's (Automated teller Machines) have been installed in large numbers. This has reduced overhead cost of banks to large extents while increasing their accessibility to general populace. Thus it has become more fruitful for public to save their income while banks have managed their routine task at a low cost factor.

Online trading, online purchase of various finance products and online banking have helped small investors to take part in Investment process. His has helped to increase the capital base of the economy.

More attractive salary packages are being offered. Even government has increased its pay structure in order to retain good quality manpower.

People are opting for private sector as compared to public sector on account of high salary & better opportunities. This has also helped to increase the number of jobs in the country.

Job condition has become more conductive there is flexibility of timing & also performance has become the criteria for promotion rather than seniority in private sector.

There has been record increase in all sector of economy specially the service sector (more notably the software. Tourism & BPO). They have contributed to tremendous growth of GDP. MNC's have also come in which provide high yield agricultures products thereby increasing the productivity of land. Mechanization & technology up gradation has made manufacturing firms more efficient & productive.

Telecommunication field has expended vastly. There are a number of mobile companies which are operating & even the concept of "Zero" paisa per second come own.

However there is a dark side to this process too. The process like any other process has been sometimes misused & sometimes has given negative outcomes of its own.

Impact on agriculture sector

The agriculture sector has recorded a fall in terms of contribution in terms of contribution to GDP. Its

share has declined. Also the advent of MNC has meant that the small farmers have been further marginalized.

Globalization has further Resulted In the polarization of wealth of country

The richer have become richer & poor have become poorer. The wealth has been concentrated in the hands of a few. The numbers of multi billionaires has increased which is now more than the there is in china. However the average per capita income has not increased proportionately. This means that inflow of wealth has not been equitably distributed among the masses.

Development of large number of slums

Since the investment is primarily made in the urban areas & the rural areas have remain largely devoid of its benefits the rural masses have started moving towards the urban centers in increasing numbers. The city has been unable to meet the influx of masses. The infrastructure & housing facility has fallen short of requirement. This has resulted into development of large number of slums in all cities. Dharavi being the biggest of them. India in form Dharavi boasts of unenviable distinction of possessing the biggest slum in Asia. Such a large scale exodus has also created law order problem in the cities. This can only be attributed to centralized positioning of International funds.

Communal disharmony

The large scale influx of immigrants from various area to business centers has resulted in the development of communal disharmony. The local populace has developed antagonistic view towards the newcomers believing that they are responsible for taking away their jobs. The “dot buster” of USA & certain regional parties of India work on the same philosophies. They also believe that the immigrants have dominated the local culture & values.

Development of communicable diseases

The centralization of large number of population with low level of living condition in slums has meant that there is more chances of large scale communicable disease being spreading. Thus the chance of epidemics have increased tremendously. It is also a known fact that none of the Indian cities are properly equipped to handle such epidemics.

Colonization through Multinational companies

The large scale liberalization has also meant that MNC’s have been given entry into almost all the areas of economy & Industry. They are now operating in sensitive Industries such as telecommunication, banking. Life Insurance, power & most importantly Defense production. Some of these MNC’s have annual turnover exceeding the budget of many small countries. Thus they can easily influence the local politics & administration with regards to their vested interest. The interest of these MNC’s may not always be in accordance with the interest of local population. One example can be dumping of ecologically hazardous waste material especially nuclear fuel in a small country without considering the impact on its natural environment. The MNC’s have totally dominated the economy of certain small countries limiting their economic independence & hampering the growth of local entrepreneurship. The management of MNC’s generally consists of people from their own nation. The MNC’s earn revenue by utilizing the resources of the nation in which they are operating. However they transfer very limited technological know how & very small part of the revenue earned is reinvested in the local economy. There is excess wealth drain. Thus while the developed countries are getting richer the developing nations are getting poorer. The impact of such malpractices economically & environmentally is too high when compared to whatever economic growth MNC’s have brought about. The global warming which has set in cannot be easily reversed & now requires serious efforts for at least a period of 25-

30 years. The growth of consumerism has led to high purchasing of consumable items. Thus the natural resources are fast being depleted. People now more than 2 two- wheelers per household & many houses now boast of processing more than two television. The environmentally hazardous gas being gives by such items has contributed to the worsening of global warming situation. The usage of plastic has increased manifold which is bio non degradable.

Stress on the social fabric of the society

The globalization has led to tremendous stress on the values norms & practices of the society. The intercultural exchange between countries through people & media has led to discussions about practices on which different societies have different perspective. Access to television has grown from 10% of the urban population (1991) to 75% of the urban population (1999). Cable television and foreign movies became available to he masses all these technologies have changed perceptions of ordinary people. Concept of pre-martial sex, dating & live in relationship has affected the society tremendously. Violence in general & in particular against women is no rise. Children violence & child abuse has permeated the Indian society. The growth in business cannot justify creation of such law & order situation or disturbance of the society.

The process of globalization is now a ground reality & the Indian economy cannot & should not resist in participating in it. However it is imperative that while adopting the process it should keep in mind that it adopts a model which suits its own local political, social & economical needs. The Indian government can opt for following measures to suit its own needs:-

Protection of farmers by implementing suitable laws Regarding Agriculture

The Indian government should formulate laws which ensure that agriculture lands are not unscrupulously taken over from small farmers to suit the needs of Industrialist & MNC's. the distribution channels of agriculture sector should be so formulated to protect the interest of farmers. Minimum purchase price should be regularly monitored & fixed keeping in mind the needs of farmers & customers. Retail chains should be regulated to ensure that they do not dominate the agriculture at cost of livelihood of small farmers.

Formulation of strict Environmental Laws & their Implementation

The government PF India should ensure that strict environment friendly laws are formulated & implemented by MNC's & entrepreneurs to protect the well being of the natural environment & resources. Wanton destruction of natural resources & their population should be avoided at all costs. This will ensure a true growth as the local population will not suffer from the after effects of the spill of Industrial waste. This will also ensure that hygiene is maintained & control over communicable diseases is practiced.

Development of Rural Business Centers

Government through SEZ,s & reformation of its taxation policies should ensure that rural areas are also developed as business centers. This will slow mass exodus from rural areas to urban areas, control law & order situation in urban areas, ensure more equitable distribution of wealth, maintain communal harmony specially.

Limit Influence of MNC's in the Economy

The government of India should adopt a policy of selective liberalization. They should develop machinery for continuously monitoring the influences of MNC's & big business on the economy. The monitoring mechanism should suggest areas where role of big business should be allowed & where their interference should be controlled. It should be remembered that America

still provides subsidy to its agriculture sector while stating otherwise for other countries.

REFERENCES :

Globalization and poverty: centre for International economics, Australia.
Globalization Trend and Issues T.K. Velayudham.
Globalization and India lecture: prof. sagar Jain, University of N. Carolina
Repositioning India in the Globalised world lecture: V.N. Rai.
Globalization of Indian economy by Era Sezhiyan.
Globalization and India business prospective lecture Ravi kastia.
Globalization and Liberalization prospects of New world order Dr. A.K. ojha, third concept an International Journal of Ideas, Aug.2002.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

MAINTENANCE AND PRESERVATION OF KERATINOPHILIC FUNGI IN UJJAIN (INDIA)

Salil Singh, (Lecturer) School of Studies in Zoology & Biotechnology, Vikram University Ujjain
Dr. S.K. Jain, (Associate Professor), School of Studies in Microbiology, Vikram University Ujjain

ABSTRACT : Keratins are the largest and most complex family of cytoskeletal intermediate filament proteins of animal cells, particularly epithelia. Keratin occurs in nature in the form of various animal appendages like hair, wool, feather, nails, hooves, horns and also in the outer keratinized layer of skin. In addition to keratin, keratinaceous material contains a large proportion of non-keratin protein, which is most susceptible to decomposition by microorganisms. Soil is rich in pathogenic and non pathogenic keratinophilic fungi including dermatophyte. Occurrence of keratinophilic fungi in soil of Ujjain, India has not been reported previously.

Key words : Proteins, Feather, Keratinophilic fungi, Soil.

INTRODUCTION : Keratinophilic fungi and related dermatophytes have been isolated from various habitats in Indian soils. This group of fungi is known to degrade keratin material added to the soil and produce secondary metabolites for various pharmaceutical and agrochemical used. The species of Keratinophilic fungi have been divided into three categories depending on their natural habitats: anthrophilic, when human beings are natural host, zoophilic, when animal act as natural host and geophilic, when they inhibit soil . Studies on Keralinophilic fungi started in 1952 with the invention of the technique of the isolation soil fungi and soil proved to be the natural reservoir of these fungi. The potentially pathogenic Keralinophilic fungi and allied geophilic dermetophytic species are widespread worldwide, Reports on the presence of these fungi in different soil habitats from different counties e.g. Egypt[1], Australia[2], Palestine[3]Spain[4], India[5-8], Korea[9], Iran[10], Kuwait[11] and Malaysia[12], have shown the fact of its worldwide distribution. Some of these fungi are well known dermatophytes and are known to cause superficial infections (dermatophytoses) of Keratinized tissues (skin, hair, and nails) of human and animals.

A few investigators have reported the occurrence of dermatophytes and Keratinophilic fungi from various habitats in India [8, 13-18]. However there are no reports on Keratinophilic fungi in Ujjain city of M.P. The present investigation was therefore undertaken to record the maintenance and preservation of kertatinophilic fungi in Ujjain M.P.

MATERIALS AND METHODS:-

The number of strains their genus and species are given in Table 1. These strains were preserved by the following methods:

a) By subculturing :

The strains were transferred on Sabouraud's dextrose agar or any other suitable medium in test tube and incubated as a suitable temperature (25-28ºC±1). The well-grown culture were stored in a refrigerator to extend the transfer intervals. The test tubes with cotton plugs were sealed with parafilm to avoid intrusion by mites.

b) In sterile distilled water :

the method is similar to that of Castellani (1967). 1-2 ml of distilled water dispensed into small screw-capped bottles and sterilized by autoclaving. Aerial mycelium from the surface of a mature (preferably sporulating) culture was removed using mounted needle or inoculating wire, taking care not to remove any of the agar medium, and was transferred in to the water. The vials were stored at room temperature or in a refrigerator at 6ºC±2 in the dark.

The revival of a culture stored in sterile distilled water was achieved by removing the aerial mycelia aseptically and placing on a suitable medium.

c) Under mineral oil:

The method used is similar to that Little and Gordon (1967) and Smith and Onions (1983). Well-grown culture on Sabouraud's dextrose agar (SDA) slants grown in glass test tubes were covered to a depth of 1 cm above the top of the slant with twice autoclaved (121ºC for 15 min) liquid paraffin (medicinal paraffin, specific gravity 0.830-0.890). If liquid paraffin is hazy after autoclaving, then it was kept in oven at the temperature between 45-80ºC to clear the haze before using. It is important to us good healthy cultures, preferably well sporulated.

Table 1. List of the cultures isolated and preserved from soils of Ujjain.

Sr. No.	Name of the genus and species	No. of isolates preserved
1.	***Lecanicillium psalliotae***	6
2.	***Arthroderema multifidum***	22
3.	***Purpureocillium lilacinum***	2
4.	***Eurotium amstelodami***	9
5.	***Chaetomium sp.***	5

The revival of a culture maintained in mineral oil is achieved by removing a small amount of the fungal colony on a mounted needle and draining away as much oil as possible on the neck of the culture bottle. The inoculum is then streaked onto a suitable agar medium (SDA). More than on subculture may be necessary after revival as the growth rate can often remain slow because of adhering oil. Better results may be obtained if the culture is inoculated at the midpoint of the agar slant, then allowing the oil to drain to the bottom and the culture grows upwards, away from the oil.

A

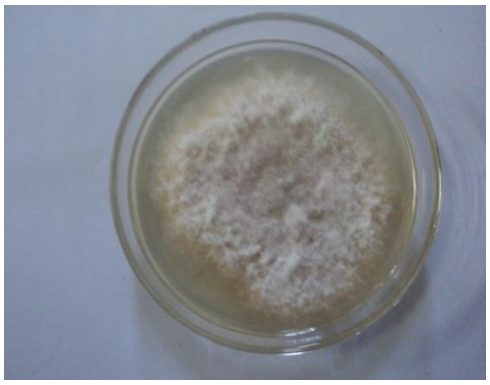

B Fgure 1: Keratinophilic Fungi

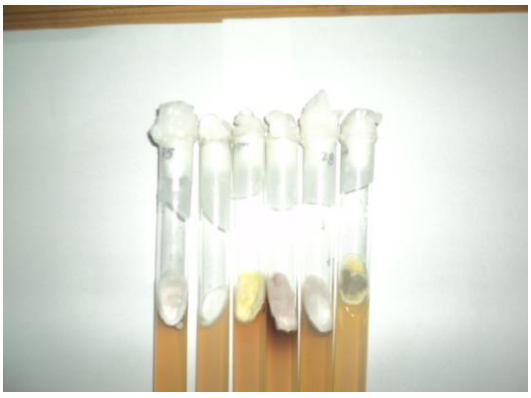

C

Figure 2: Preservation of Kereatinophilic fungi by subculturing

RESULT AND DISCUSSION : The results of the preservation are given in Table 2. The result indicate that keratinophilic fungi and related dermatophytes can be maintained up to 3-4 years in a refrigerator at 8ºC±1 on Sabouraud's dextrose agar and malt extract agar with subcultures at 4-5 month intervals. When the fungi age grown under artificial conditions and repeatedly subcultured they may undergo genetic changes to produce atypical strains more suitable to the condition provided. Many fungi tend to degenerate and lose the ability to sporulate. Transfer to a fresh medium in such cases should be carried out at shorter and regular intervals of 2-3 months depending on the species.

Table 2. Viability of keratinophilic fungi after different maintenance methods and times (years)

Methods	Number of strains (and % in parenthesis)		
	Good growth	Modest growth	No growth
Slant in a refrigerator, Subcultured once in 4 months after 4 years	51(88.64)	6 (10.32)	-
Sterile water after 4 Years	57 (100)	-	-
Under mineral oil after 4 years	50 (86.89)	6 (11.05)	-

Note: Good Growth++++: Modest Growth++ and No growth

As a general rule, the storage period for non-cold sensitive strains is double than that of room temperature. This will reduce the interval between transfer of the culture to fresh medium as the metabolic rate of the fungus is lowered, drying out by evaporation occurs more slowly and infestation of mites is reduced. Some fungi are sensitive to storage at low temperature and suffer chill injury that may cause permanent damage and eventual death. Carmichael (1956, 1962) satisfactorily maintained several pathogenic fungi in frozen conditions.

The species of Arthoderma *multifidum, Eurotium amstelodam, Purpureocillium lilacinum, lecanicillium psalliotate, chaetomium* sp. were satisfactorily maintained up t 4 years in sterile water with no deterioration. Some dermetophytes have been kept in water with little or no deterioration for over 10 years but some morphological changes have been noticed in a number of tubes and it is thought that accidental transfer of agar medium to the tube has enabled growth and mutation to take place during storage (Stockdale *et al.* 1989). This is a simple, inexpensive, and effective way to keep fungi and is equally good for sporulating and non-sporulating cultures. In this case the caps of vials are closed and the cultures are safe from contamination and from mites. Contamination may occur on removal of aerial mycelia and therefore stock cultures should be kept in reserve. Qiangqiang *et al.* (1998) also confirm the above findings.

All 5 species of fungi isolated can be maintained satisfactorily under mineral oil for more than 4 years. Various keratinophilic fungi were preserved by this method up to 12 years (Deshmukh, 2003). This method of preservation is particularly useful in alll climates as it prevents drying out of the cultures, does not allow penetration of mites, requires no expensive apparatus and is easy to use.

The data reveals keratinophilic fungi isolated from Ujjain can be maintained by simple methods. Some cultures of keratinophilic fungi are surviving in one method and others by another method.

Hence it is recommended that each isolate should be maintained by at least two of the methods. The choice of the method will depend to a large extent on the equipment and facilities available in the laboratory.

REFERENCES :

All A.H., El-sharouny H.M.M. (1987) Seasonal fluctuations of fungi in Egyptian soil receiving city sewage effluents. *Cryptogamia*, 8:235-249.

Rose M.A. (1980). Investigation of keratinophilic fungi from soils in Western Australia preliminary survey. *Mycopathologia*,72:155-165.

Ali-Shtayes MS. (1989) Isolation of Keratinophilic fungi from floor dust in Arab alementary and preparatory schools in the West Bank of Jordan. *Mycopthologia*, 106:103-108.

Clavo A, Vidal M, Guarro J. (1984) Keratinophilic fungi from urban soils of Barcelona, Spain. *Mycopathologia*, 85:145-147.

Pandey A, Agrawal G.P., Singh S.M..(1989) Pathogenic fungi in soils of jabalppour, (India). *Mycoses*, 33:116-125.

Anbu P, Hilda A, Gopinath, S.C. (2004) Keratinophilic fungi of poultry farm and feather dumping soil in Tamil Nadu, India. *Mycopathologia*, 158:303-309.

Ganaie MA, Sood S, Rizvi G, Khan TA. *Plant path*. J., 2010, 9: 194-197.

Deshmukh S.K. and Verekar S.A.(2011) Incidence of keratinophilic fungi from the soils of Vedanthagal Water Bird Sanctuary (India), Mycoses, vol. 54, no. 6, pp. 487-490.

Lee MJ, Park JS, Chung H, Jun JB, Bang YJ. Korean J Med Mycol., 2011 16(2):44-50.

Mohmoudabadi AZ, Zarrin M. *Jundishapur J. of Microbiol.*, 2008, 1(1): 20-23.

Al-Musallam, A.A. (1989) Distribution of Keratinophilic fungi in desert soil of Kuwait. *Mycoses*, 32:296-302.

Soon S.H.(1991). Isolation of keratinophilic fungi from soil in Malaysia. Mycopathologia, 113:155-158.

Singh C.J., Geetha S.B., Singh B.S. (1994) Keratinophilic fungi of Ghana birds Snctuary Bharatpur (Rajasthan)P *Ad. In Plant Sc.*, 7:280-291.

Ramesh V.M. and Hilda A. (1999). Incidence of keratinophilic fungi in the soil of primary schools and public parks of Madras City, (India). *Mycopathologia*, 143: 139-145.

Deshmukh S.K., Agrawal S.C. and Jain, P.C. (2000) Isolation of dermatophytes and other keratinophilic fungi from soils of Mysore (India). *Mycoses*, 43: 55-57.

Deshmukh SK. And Kushwaha, R.K.S. (2005) Keratinophilic fungi on birds and their ability to decompose keratin. In “The biodiversity of fungi-Their Role in Human Life” (eds.) Deshmukh, S.K. and Rai, M.K. Science publishers, Ine Enfield, USA. Pp 267-288.

Deshmukh, S.K. and Agrawal S.C. (2004)P. Dermatophytes and Keratinophilic fungi and their secondary metabolites. In “Fungi in human and animal health” (eds.) Kushwaha, R.K.S., Scientific Publisher, Jodhpur, India pp 85-111.

Deshmukh S.K. and Verekar S.A. (2006) The occurrence of dermatophytes and other keratinophilic fungi from the soils of Himachal Pradesh (Idia)P, Czech Mycology, voi. 58, no. 1-2, pp. 117-122..

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

विज्ञापनों के विभिन्न प्रकार

डॉ. लावणे विजय भास्कर
शोध निर्देशक महात्मा गांधी महाविद्यालय, अहमदपूरत, अहमदपूर जिला लातूर (महाराष्ट्र)

संक्षिप्त (**Abstract**) : पुराने जमाने में विज्ञापन को इतना महत्व नहीं था पर वर्तमान में उत्पादन क्षमता बढ रही है और बाजार में अपना अस्तित्व जमाने के लिए स्पर्धात्मक युग में सबसे सुंदर तरिका विज्ञापन ही है। उत्पादन की जानकारी उसका परिचय उपभोक्ता के मन में उसके प्रति रुचि बढाने के लिए, जिज्ञासा जागृत करने के लिए विज्ञापन सही माध्यम है। इसी कारण विज्ञापन का ग्राहक वर्ग कौनसा है किस भौगौलिक क्षेत्र से हमें कीस क्षेत्र में विज्ञापन देना है। इस पर जब लक्ष केन्द्रीत होता है तब विज्ञापन के कई विभिन्न प्रकार खुलकर सामने आते है।

विज्ञापन दाता के अनुरुप विज्ञापन के तीन प्रकार होते है व्यवसायिक विज्ञापन, सरकारी विज्ञापन, व्यक्तिगत विज्ञापन, व्यवसायिक विज्ञापन में व्यवसाय क्षेत्र से संलग्न विज्ञापन आते है सरकारी विज्ञापनों में सरकार की विभिन्न योजनाओं के विज्ञापन आते है। व्यक्तिगत विज्ञापनों मं अपने निजी विज्ञापनों का समावेश इसमें होता है। उद्देश्य के आधार पर भी विज्ञापन के तीन प्रकार होते है। वस्तु और सेवाओं के विज्ञापन, सम्मानक विज्ञापन, संस्थानिक विज्ञापन। वस्तु और सेवाओं के विज्ञापन में संस्थाओं, दुकान के विज्ञापन इसके अंतर्गत आते है। सम्मानक विज्ञापन में किसी को कोई सम्मान मिला या उत्सवों या शोभायात्रा के विज्ञापन आते हैं। संस्थानिक विज्ञापन में समाजसेवी संस्थाद्वारा नशा बंदी, कर अदायगी जैसे विज्ञापन इसके अंतर्गत आते है। भौगोलीक क्षेत्र के आधार पर विज्ञापन के चार प्रकार है। अंतराष्ट्रीय विज्ञापन, राष्टोय विज्ञापन, क्षेत्रीय विज्ञापन, स्थानीय विज्ञापन। अंतर्राष्ट्रोय विज्ञापन में दिखने वाले विज्ञापन पूरे विश्व में दिखाई देते है। राष्ट्रीय विज्ञापन का उद्देश्य राष्ट्र तक ही सोमित रहता है। क्षेत्रीय विज्ञापन किसी विशिष्ट क्षेत्र में सीमित रहता है और स्थानिक विज्ञापन सिर्फ एक किसी षहर तक ही सीमित रहता है।

विज्ञापनों का विभाजन करने से विज्ञापनदाता को भी सुविधा होती है और सही उपभोक्ता तक कम समय में पूरी जानकारी दी जाती है, जब विज्ञापनदाता विज्ञापन प्रकाशित करने वाले के पास जाता है तो किस उद्देश्य के लिए विज्ञापन देना है या किसी विशिष्ट क्षेत्र में विज्ञापन देना है यही प्रश्न करता है, इसी कारण विज्ञापन के प्रकार सबसे पहले विज्ञापन प्रकाशक सामने रखते है क्योंकि विज्ञापन के प्रसिद्धो के बाजार में कई माध्यम है जैस–पर्चे, बॅनर, पोस्टर, समाचार पत्र, रेडियों, दूरदर्शन आदि के द्वारा जब विज्ञापन देना हो तो विज्ञापन को किसी एक विशिष्ट प्रकार में रखकर उस विज्ञापन को प्रकाषित करने का तय होता है।

वर्तमान युग विज्ञापन का युग हो गया है और मानव विज्ञापन से प्ररित होता है और विज्ञापन से ही नियत्रित हो रहा है। उत्पादन और सेवाओं की जानकारी, परिचय, उपभोक्ताओं के मन में रुचि बढाना, जिज्ञासा जागृत करना और उपभोक्ताओं को आकर्शित करके मानसिक स्थिति निर्माण करना यह प्रमुख कार्य विज्ञापन द्वारा होता है। परिणाम स्वरुप ''परिवार का प्रत्येक सदस्य अपनी–अपनी इच्छा और सुविधा के अनुसार विज्ञापनों से प्रभावित होकर वस्तुएँ खरीदता रहता है'' 1) विज्ञापन का ग्राहक कैसा है, किस भौगोंलिक क्षेत्र से है उसका मूल उद्देश्य क्या है इस पर लक्ष्य केन्द्रित करने पर विज्ञापन के कई प्रकार सामने आते है।

अ) विज्ञापन दता के अनुरुप विज्ञापन के प्रकार :

1) व्यवसायिक विज्ञापन :– इसके अंतर्गत बड़े–बड़े औद्योगिक संस्था से लेकर छोटे–छोटे उत्पादकों के उत्पदनों की बिकी संलग्न विज्ञापनों

का इसमें समावेश होता है। ''इस वर्ग के विज्ञापन अत्यंत आकर्षक, सुसज्जित और महंगे होते है।''

2) संचार के विभिन्न माध्यमों का प्रयोग कर इस विज्ञापन द्वारा अपना संदेश ग्राहकों तक पहुचाया जाता है।

2) सरकारी विज्ञापन :– सरकारी कार्यालयों, संस्थाओ द्वारा दिए जाने वाले विज्ञापन इसमें समाविष्ठ होते है जैसे–परिवार नियोजन,वैज्ञानिक चेतावनी, समाजकल्याण, नियुक्तियॉ, निविदाऍ, चुनाव प्रकिया, सरकारी नयी योजनाए, प्रोत्साहन पर योजनाए आदि का समावश इस विज्ञापन के अंतर्गत होता है।

3) व्यक्तिगत विज्ञापन :– आज के युग में पद प्रतिष्ठ के लिए जो विज्ञापन दिये जाते हैं वे व्यक्तिगत विज्ञापन कहलाते है इसमें शिशुजन्य स्थानांतरण, लापता, विवाह के विज्ञापन, जमिन मकान बेचना है, किराये से देना है, आदि संलग्न विज्ञापन इसमें समाविष्ठ होते है यह विज्ञापन ज्यादातर समाचार पत्र में प्रकाशित होते है।

ब) उद्देश्य के अनुरुप विज्ञापन के प्रकार :–
1) वस्तु और सेवाओं के विज्ञापन :– इस के अंतर्गत हमारी वस्तु अन्य उत्पादन के मुकाबले किस तरह उच्च श्रेणी की है यह दिखाना उद्देष्य रहता है और हमारी दुकान, संस्था, आपकों किसतरह से अन्य संस्था दुकान के मुकाबले अच्छि सेवा प्रदान कर सकती है, यह भी दिखाना इन विज्ञापनों का मूल उद्देश्य होता हैं। इन्हें स्पर्धात्मक विज्ञापन कहा जाता है। इस तहस के विज्ञापन रोड, समाचार पत्र, रेडियों, दूरदर्शन पर आते है।

2) सम्मानक विज्ञापन :– इस में फिल्मों, शष्टयद्विपुर्ति, उदघाटन, शोभा यात्रा, उत्सवों, विदेश यात्रा जाने वाले या वापस आने वाले व्यक्ति के संलग्न विज्ञापन इसमें आते है।

3) संस्थानिक विज्ञापन :– संस्थानिक विज्ञापनों का उद्देश्य जनसम्पर्क बने यही होता है। इससे बडो–बडो संस्था अपने कर्मचारी, सदस्य, अन्य लोग इनके संपर्क के लिए संस्थानिक विज्ञापन दिये जाते है। लोक सेवा के अंतर्गत साक्षरता, परिवहन, जनस्वास्थ समाज हित एवं समाज कल्याण, बालकल्याण, अपराध नियत्रण, नशा बंदी और कर अदायगी आदि विभिन्न प्रकार के विज्ञापन इसमें समाविष्ट होते है। यह विज्ञापन समाचार पत्र और दूरदर्शन पर प्रसारित किये जाते है।

क) भौगोलिक क्षेत्र के आधार पर विज्ञापन के प्रकार :–

1) अंतर्राष्टोय विज्ञापन :– इस तरह विज्ञापन अंतर्राष्ट्रोय कपनियों द्वारा दिये जाते है। इसमें अपनी सेवा किस तरह है। अपनी और विदेशी ग्राहकों को अपनी संस्था या वस्तु की जानकारी देना विदेश्र क ग्राहकों के साथ व्यापारिक उद्देश्य के पूर्ती हेतु यह विज्ञापन दिये जाते हैं इस तरह के विज्ञापन ज्यादातर दूरदशन पर दिये जाते है।

2) राष्ट्रोय विज्ञापन :– इसमें वह संस्थाये आति हैं जो अपना उत्पादन सिर्फ राष्ट्रोय स्तर पर बेचते है। इनका मूल उद्देश्य पूरे देश के बाजार में अपने उत्पादन की बिक्री को बढावा देना यह होता है। इस तरह के विज्ञापन ज्यादातर दूरदर्शन पर पुरे देश में दिखाई देते है।

3) क्षेत्रीय विज्ञापन :– एक निश्चित क्षेत्र के विज्ञापन इसके अंतर्गत आते है। इसमें एक राज्य से ज्यादा राज्य भी शामिल हो सकते हैं। राज्य के सीमावर्ती भाग में इस तरह के विज्ञापन दिखाई देते है। क्षेत्रीय भाषा प्रयोग इन विज्ञापनों में किया जाता है। इस तरह के विज्ञापन ज्यादातर समाचार पत्रों में दिखाई देते हैं।

4) स्थानोय विज्ञापन :– इस स्थानीय विज्ञापन में स्थानोय हॉटल, ब्यूटी सलूनों, डिपार्टमेंटल स्टार्स, कपडों की दुकान, आदि के विज्ञापन आते है उन्हें खुदरा विज्ञापन कहते है। यह विज्ञापन सिनेमा घर, रेडियों, समाचार पत्र, बॅनर, पर्चे, और पोस्टर आदि द्वारा यह विज्ञापन घर–घर पहुचते है।

इस तरह विज्ञापन के कई पकार होकर भी हर एक अपना विशिष्ट दायरा होता है। विज्ञापन देना व्यवसाय वृद्धि करने का सबसे बडा तरिका हो गया है। जब तक सामान्य आदमी को उत्पादन की जानकारी पहुंचती नहीं तब तक

उत्पादन की बिक्री बढती नहीं। यह हर संस्था, उत्पादक अच्छी तरह से जानते है इस कारण उत्पादक विज्ञापन पर अपना लक्ष्य केन्दित करता है। सरकार की कई योजनाए है उनको सामान्य आदमी तक पहुचाने के लिए विज्ञापन ही एक सही माध्यम है। आदमी के पास वक्त की कमी जब होती है तो वह समाचार पत्र या दूरदर्शन द्वारा अपने व्यक्तिगत विज्ञापन भी देता है।

स्पर्धात्मक युग में हमारी वस्तु या हमारी सेवाए अन्य वस्तु या संस्था से किस तरह अच्छे है, किस तरह से बेहतर सुविधाएँ प्रदान कर सकते है। यह भी विज्ञापन द्वारा ही समझाया जाता है। किसी को कोई सम्मान मिला या मिलने वाला है या किसीने कोई अच्छा कार्य किया है तो उसका भी विज्ञापन दिया जाता है। कई बडो संस्थाये अपने संदस्य, कर्मचारियों का विज्ञापन द्वारा जानकारी भी प्रदान करते है और सामाजिक संस्था जब कोई सामाजिक कार्य करती है तो उसकी भी जानकारी विज्ञापन द्वारा ही सामान्य आदमी तक पहुचती है।

भौगोलिक क्षेत्र के अनुसार विज्ञापन देते समय पुरे विश्व में दिखाई देने वाले विज्ञापन आते है वह अंतर्राष्ट्रोय विज्ञापन कहे जाते है। राष्ट्रोय स्तर पर भी कई विज्ञापन आते है इनका मूल उद्देष्य अपना उत्पादन सिर्फ राष्ट्रोय स्तर पर बेचना होता है। कई विज्ञापन सिर्फ विशिष्ट राज्य या आस पास के क्षेत्र में दिखाई देते है जिसमें विशिष्ट भाषा का भी प्रयोग होता है और वह ज्यादातर स्थानोय भाषा के समाचार पत्र में आते है। कई बड़े–बड़े शहरों में दुकान, हॉटल, सिनेमा घर, अस्पताल, इनके विज्ञापन बॅनर, पर्चे, पोस्टर, या रेडियों द्वारा दिये जाते है।

इस से स्पष्ट होता है कि हर विज्ञापन का उद्देश्य प्रसिद्धो और उत्पादन की बिक्री बढ़ाना है, पर प्रसिद्धो के माध्यम भी अलग–अलग है जैसे रेडियों, समाचार पत्र, दूरदर्शन, बॅनर, पर्चे, पोस्टर, आदि, उत्पादन सेवा आदि को बढाने हेतु विज्ञापन के विभिन्न प्रकार होते है। विज्ञापनों को बढावा देने का काम संचार माध्यम करता है, क्योंकि ''संचार माध्यमों में विज्ञापन माध्यम व्यवसायिक रुप से स्वीकार किया गया है।'' 3) परिणामस्वरुप विज्ञापन के प्रकार के अनुरुप विभाजन किया जाता है और बाद में ही उसे सामान्य जनता तक पहुचाया जाता है। विशिष्ठ विज्ञापन का विशिष्ठ दायरा जरुर तय होता है। इसी कारण तो विज्ञापन के विभिन्न प्रकार भी निर्माण हुए है।

संदर्भ :–

1) डॉ. रघुनाथ देसाई/विज्ञापनों का मसौदा लेखन/सारंग प्रकाशन/प्रथम संस्करण 2014/पृष्ठ – 46
2) सं. डॉ.जमादार, ए.एच, प्रा. जान अहमद के.जे. /प्रयोजनमूलक हिन्दी तथा भाषा कम्प्युटिंग/ अभिजीत पब्लिकेशन/प्रथम संस्करण 2004/ पृष्ठ –175
3) डॉ. अंबादास देशमुख/प्रयोजनमूलक हिन्दी अधुनातन आयाम/शैलजा प्रकाशन/तृतीय संशोधित 2009/पृष्ठ –62

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

AFFECT OF CREATIVITY ON ADJUSTMENT AND VOCATIONAL ASPIRATION

Dr. vineeta pandey
Associate Professor laxmi bai sahu ji collage Jabalpur

ABSTRACT : The present study attempted to test the hypothesis relating to the affect of creative thinking on adjustment and vocational aspiration Data was collected on post graduate(N-70) subjects drawn from various departments of Jabalpur university, with age ranging between 21-25 years. Torrance Test of Creative Thinking, Adjustment. Inventory for college students by Dr. Sinha and R. Sing and Vocational aspiration Scale Questionnaire by J.S Grewal were administered on the subjects. Results of 2*2 ANOVA show that creativity has been significantly influencing the levels of adjustment and vocational aspiration.

Creativity is taken to mean the production of novel ideas, theories and objects ,either in the sciences or in the arts ,which are accepted by competent expert as original and valuable. such productivity is quite rare ,and tends to be concentrated among relatively small number of scientists and artists .Of course creativity involves cognition ,but it involves a type of cognition that seems only to occur within a matrix of associated motivational ,attitudinal and person logical traits (Gardner ,1983;runco and Albert 1986).

Koestler (1959) made it explicit that creativity often involves not a combination of isolated element but a connection two entire matrices of thought.

Amabile (1983) added the requirement that the idea be produced in a heuristic rather than a algorithmic fashion .

Creativity : Although numerous different definitions of creativity have been proposed (Taylor, 1964; Flower and garbin, 1989, Hayes, 1989, kershner and Ledger, 1985) there be a considerable consensus on the following general statement ,that creativity means a person's capacity to produce new or original ideas , insights, restructuring, inventions or artistic objects ,which are accepted by experts as beings o scientific, aesthetic, social or technological value (Beaudeuces and Brock, 1993) with regard to creativity Guilford (1967) contribution to the field which are worth mentioning.

Adjustment : By adjustment we mean the proper fitting in process of an individual to his environment or when the individual fits in himself to the physical, social and emotional situations ,then he is said to be properly adjusted .In the words of Lawrence. F. shaffer," Adjustment is the words of by which a living organism maintains a balance between its needs and the circumstance that influence the satisfaction of these needs."

During the process of adjustment, when a person encounters stress-inward or outward, three general types of reactions have been observed-(1) Task-oriented reactions aimed primarily at meeting the adjustment demand (2) Defense- oriented reactions aimed primarily at reducing the strain and discomfort resulting from the stress. (3) Decompensatory reactions signaling that stress has become too great. In most situations role of Task oriented reactions has been found to be constructive while in the case of other two reactions it may play much more negative role (Flower & Garbin, 1989).

Drevdhal (1956) found that the personal, social and emotional adjustment of his creative group of psychologists was superior to that of their less eminent counter parts, however, by no means close to perfect.

Vocational aspiration : vocational aspiration is a developmental process. It spans the entire period of adolescence from approximately age 10 to age

21. Each step in the process has a meaningful relation to those which precede and follow it.

Hypothesis : Creativity will significantly affect the levels of Adjustment and Vocational aspiration.

METHOD

Sample : Data was collected on postgraduate(N = 70) subjects chosen randomly, age ranging between 21-25 years.

Tasks Used : Torrance tests of creative thinking (verbal and figural) was used to assess the creativity level of the subjects. Adjustment level was assessed with the help of Adjustment inventory for college students by Dr. Shinha and Dr. R.P.Singh. Vocational aspiration level ware assessed with . Vocational aspiration Scale Questionnaire by Dr. j.s. grewal .

RESULTS AND DICUSSION : Frequency distribution were set up for all the variables separately. There distributions along with their means and S.D's are reported in Table 1.

TABLE 1
Showing the means and S.D's of Scores on all variables

Variables	Mean	SD
Creativity	205.186	80.38
Adjustment	38.63	9.45
Vocational aspiration	39.83	4.23

TABLE 2
Showing 2x 2 way anova Summary table for the effect of creativity and adjustment

Source	SS	Dr	MS	F(t,16)
A(Creativity)	161280.8	1	161280.8	381.64
B(Adjustment)	744.2	1	744.2	1.76
A.B. (Creativity & Adjustment)	111139.2	1	11139.2	26.36
Within Cell	6761.6	16	422.6	
TOTAL	179925.8			

$F_{.05}$ =4.49, $F_{.01}$ = 8.53

In order to test hypothesis 'creativity' will be significantly affect the levels of adjustment and Vocational aspiration 2x2 way analysis of variance was computed. Results of this analysis show that main affect of creativity. On adjustment has been found to be significant, main affect of creativity reached the level of significance F = 381.64, P significant at .01 level. Mean scores for high and

low creativity are 311.9 and 132.3 respectively which clearly indicate the direction of influence. However, the main effect of adjustment ;has not been significant and effect of adjustment has not been significant and effect of interaction (creative x adjustment) is again significant F- 26.36, significant at .01 level. These results clearly indicate the influence of variable of creativity on adjustment.

Similarly 2*2 way analysis of variance was computed for creativity and anxiety where main effect of creativity on Vocational aspiration has been found significant F = 1067.68, P significant at .01 level. Mean scores for high and low creativity are 283.3 and 126.8 respectively. However, the main effect of anxiety is non- significant and effect of interaction (creativity and vocational aspiration) again comes to be significant. These results indicate the creativity also influences Vocational aspiration level of the individuals. These results give support to the statement given in hypothesis.

TABLE 3

showing 2x2 way Anova Summary Table for the effect of creativity and Vocational aspiration.

Source	SS	Dr	MS	F
A(Creativity)	138611.25	1	138611.25	1067.68
B(Adjustment)	68.45	1	68.45	0.58
A.B. (Creativity & vocational aspiration)	10626.05	1	10626.05	81.85
Within Cell	2077.2	16	129.825	
TOTAL	151382.95			

$F_{.05}$ =4.49, $F_{.01}$ = 8.53

REFERENCES :

Amabile, T.M. (1983). The Social Psychology of Creativity, New York: Springer-Verlag.

Koestler, A.(1959). The Sleepwalkers, New York: Macmillan.

Prentky, R. (1989). Creativity and Psycho-pathology, In Handbook of Creativity by gover, J.A., Ronning R.R., Reynolds C. Plenum Press, New York and London.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

DIVERSITY OF MACROFUNGI IN 'GARBHANGA RESERVE FOREST' OF KAMRUP DISTRICT OF ASSAM, INDIA

Dr. KARABI DEVI *
*Corresponding author

ABSTRACT : A study on seasonal diversity of macrofungi was conducted for two consecutive years (2010-2012) in Garbhanga reserve forest of Kamrup district of Assam. Rapid depletion of the forest area due to human activities has resulted in the fast reduction of plant species thus decreasing the number of macrofungi from this forest. Hence its documentation is of utmost importance before they might be wiped out from the face of the earth. Macrofungi render much benefit to the local inhabitants not only in being edible but also of medicinal, ecological and economical uses. As a result of the study, 41 species were found belonging to 24 families and 34 genera. Maximum species, (6) were assigned to the family Polyporaceae followed by Agaricaceae, (5) Russulaceae, (4) Cantharellaceae, Ganodermataceae, Hymenochaetaceae and Tricholomataceae (2 each). Rest of the families was represented by one genus each. Maximum species were saprophytic in nature inhabiting the dead logs, leaf litter, compost etc. while other were mycorrhizal with trees. Only 3 species were parasitic while 1 species i.e., Termitomyces microporous was termitophilic. Maximum frequency of occurrence was exhibited by Bovista plumbea and Lentinus polychrous (33.3% each). The density of Polyporus alveolaris was maximum (2.33). Species Richness Index was more in rainy season (5.91) followed by summer season (1.132) whereas in winter it was found to be very less (0.74). Overall, the richness index in winter season was found to be very less (0.74).

KEYWORDS : Garbhanga reserve forest, macrofungi, species richness, seasonal diversity, documentation.

INTRODUCTION : Macro fungi belong to a distinct group and kingdom of its own. It includes species with large and visible fruiting bodies which can be either epigeous or hypogenous and large enough to be seen with the naked eye. Macro fungi are heterotrophic, saprophytes and utilize lignocellulosic wastes. They appear basically only under precise combinations of conditions like geographical location, temperature, humidity, light and surrounding flora. Macrofungi are not only beautiful but also play a significant role in industry, agriculture, medicine (Molina et al., 1993) and as bio fertilizer and many other ways. Fungi have been occupying a prominent position in the biological world because of their variety, economic and environmental importance. The study of fungal biotechnology has been carried out world over (Crous, 2006) and 1.5 million species has been reported so far (Hawksworth, 2004). The total number fungal species in India is 27,000 (Cowan, 2001, Chang and Miles, 2004).Several workers have studied diversity of macro fungi of their respective places in India viz., Kashmir (Sheikh et al., 2014), Garhwal (Vishwakarma et al., 2012) Tamil Nadu (Mani and Kumaresan, 2009) etc. Assam is rich in macro fungal species but only very few studies have been made so far. In Kamrup district, very less attempt has been made so far. Besides being rich in macro fungal diversity, there had been gathering of the knowledge of a few species to be edible by the local ethnic tribes of the forest. Edible mushrooms good sources of food and have high nutritional value and also rich in vitamins B, C, D and mineral elements. The elderly people only have the knowledge of the use of edible mushrooms and can easily recognize the poisonous ones. The knowledge is becoming scarce as a result of increase in population and

habitat destruction. There is no record of the uses of the edible macrofungi since no study has been made in this reserve forest despite being very rich in fungal diversity. The fungal diversity is very fast depleting due to human activities, hence keeping this aspect in view the present study was conducted during 2010-2012 to document the macrofungal species and its uses.

MATERIALS AND METHOD : The present study was conducted in the Garbhanga Reserve Forest of Kamrup District of Assam. It is located at 25°55' - 25°05' N & 91°37' -91°49' E. The total forest cover is about 110km^2 and is situated in an altitude of 100-200m. The topography mostly comprises of a hilly terrain with a perennial stream. The forest type is mixed deciduous type with a few scattered tropical evergreen pockets. The forest has diverse habitats ranging from an upland forest with a thick rainforest canopy to open forested areas with grassy patches and dense undergrowth.

(i) Collection of macrofungi : The study was conducted during the period 2010-2012. The forest was visited for collection three times in a year site wise. Three study sites were selected randomly. Surveys are particularly dependent on the weather conditions and locations. Macrofungi exhibit diversity basically relating to the substratum and host availability. (Natarajan et al., 2005). Survey in this region shows that the period best for collection is after a spell of rain.

Proper equipment was carried along with during the survey. The samples were collected using knife, forceps, containers, etc. proper photographs were taken in the habitat as well as after reaching the laboratory. Pen, book, lens and labels are also carried along with for recording and relevant information. Date and place of collection were also immediately recorded.

(ii) Identification of macro fungi : The sporocarps encountered were collected carefully and identified using relevant literatures. (Zoberi 1973; Alexopolous et al., 1996; Lamaison and Polese, 2005. Preservation of the samples was done in 2% and 4% formaldehyde depending upon its texture of sporocarp sample.

(iii) Data analysis : Three attributes of the species in the community: Density (number of sporophores per unit area), which is a measure of the numerical individuals relative to species; Frequency (how many samples contain sporophores of a given species), which measures the commonness of the species and abundance, the incidence at which the species occurs most in the sampling area.

The density, frequency and abundance (Ambast and Ambast, 1992) were determined using the following formulae

$$\text{Density} = \frac{\text{Total number of individuals of a species in all quadrats}}{\text{Total number of quadrats studied}}$$

$$\text{Frequency} = \frac{\text{Number of quadrats of species occurrence}}{\text{Total number of quadrats studied}} \times 100$$

$$\text{Abundance} = \frac{\text{Total number of individuals of a species in all quadrats}}{\text{Number of quadrats of occurrence}}$$

Alpha diversity : Margalef's richness index (R) (Ambast and Ambast, 1992) was calculated by using the following formula

$$\text{Richness index (R)} = (S-1)/\ln N$$

(Where, S is the total number of species in the quadrat of species I and N is the total number of S species).

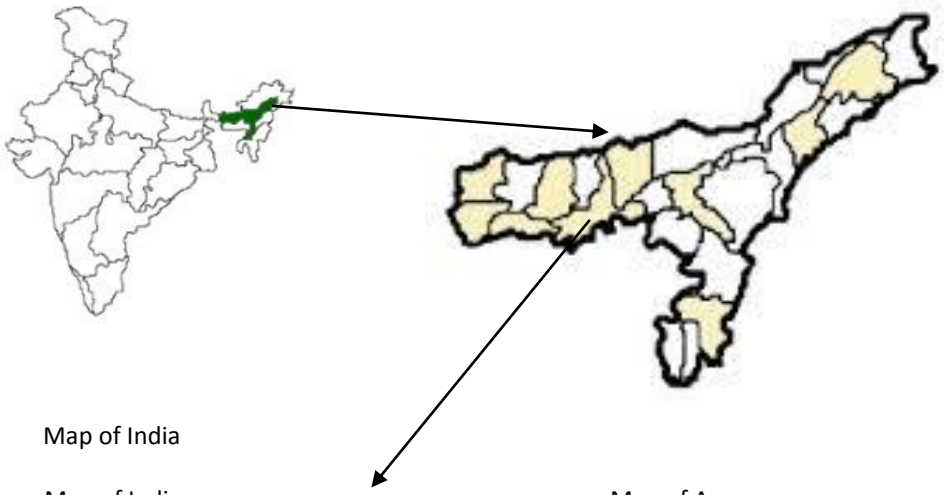

Map of India

Map of India

Map of Assam

Map of Assam

Map of kamrup district

Figure 1: Map of India, Assam and Kamrup district showing the location of study site (Garbhanga reserve forest

RESULTS AND DISCUSSION : The diversity of macrofungi basically depends on the habitat. Some of the factors which influence the growth and development of mushrooms are geographical location, elevation, temperature, humidity, light, surrounding flora, soil conditions, moisture, etc. A total of 41 species belonging to 24 families and 35 genera were collected from the study site **(Table 1)**. Maximum six genera were assigned to family Polyporaceae, four each to Agaricaceae and Russulaceae, two each to Cantharellaceae, Ganodermataceae Hymenochaetaceae and Psathyrellaceae and one each to rest of the families (Figure 2). Maximum frequency was

exhibited by Bovista plumbea and Lentinus polychrous (33.3%), followed by Polyporus alveolaris, Lactarius corrugis, Ganoderma spand Creolophus cirrhatus (27.7%). Rest of the species exhibited frequency between 5.55%-22.2%. In the similar way, the density of Polyporus alveolaris (2.33) is the maximum followed by Creolophus cirrhatus (2, 27) then Cantharellus cibarius (2.16). The other species exhibited density between 0.16-1.72. Polyporus alveolaris was found to be the most abundant species (10.50), followed by Mycena sp. (9.00) **(Figure 2)**.

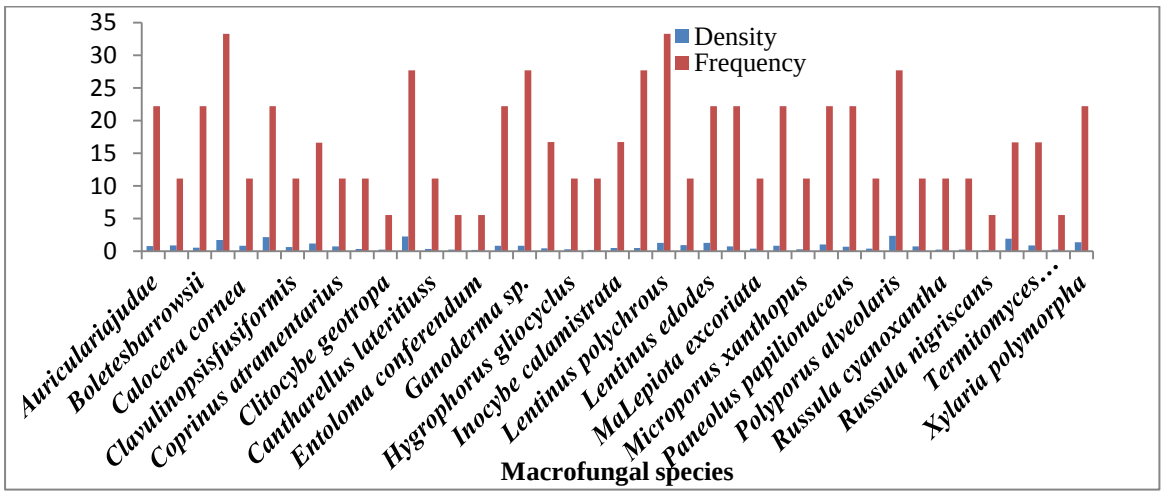

Figure 2: Occurrence of density and frequency of macrofungal species in Garbhanga reserve forest

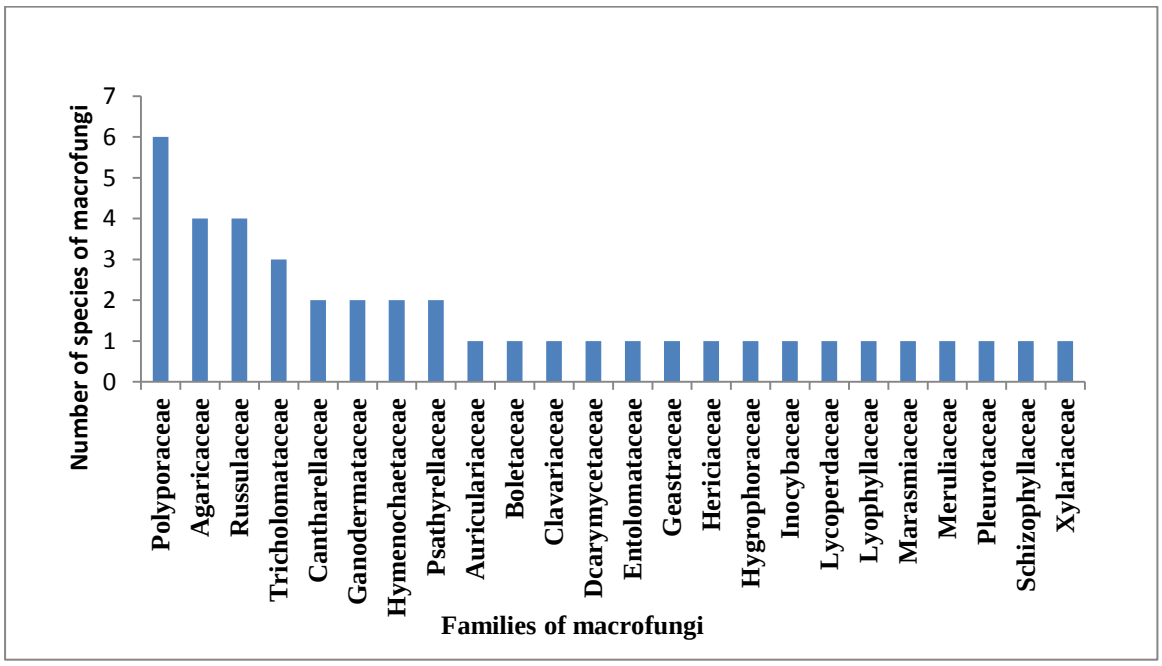

Figure 3: Family wise distribution of macrofungi in Grabhanga reserve forest

Maximum species (6) were assigned to the family Polyporaceae followed by Agaricaceae (5), Russulaceae (4), Cantharellaceae, Ganodermataceae, Hymenochaetaceae and Tricholomataceae (2 each). Rest of the families was represented by one genus each **(Figure 3)**. Regarding the ecological preference it was observed that maximum number of species (63.41%) were saprophytic, (29.3%) were mycorrhizal while (7.32%) were parasitic. (**Figure 4**). One species was found to be termitophilic and one coprophilous. The parasitic macrofungi are Ganoderma sp., G. carnosum and Bjerkandera adusta. The pathogenic fungi directly are responsible for destroying the standing trees which declines the forest health and productivity. But according to Molina, 1994, the pathogens below threshold population are a natural component of the forest ecosystem. Though Ganoderma sp. are present but their population is very low. Besides their harmful nature there is a very important aspect of these fungi. They are being used by the pharmaceutical companies for drug manufacturing processes. Ganoderma is well known to promote health and lowers the risk of cancer and heart diseases and boost immune system. (Wachtel-Galor et al., 2004)

The classification of the macrofungi was also done on the basis of functional groups and the terricolous fungi were found maximum (34.15%) and the termitophilous and coprophilous fungi the least (2.44%) **(Figure 5)**. The fungal species obtained were divided amongst ten morphogroups viz., fleshy fungi, bracket fungi, coral fungi, club fungi, toothed, earthstars, puffballs, flask fungi, jelly fungi and boletes. The study showed the occurrence of highest percentage of fleshy gilled fungi followed by bracket fungi. (**Figure 6).** The Species richness, Shannon diversity index and Simpson index were calculated to be 6.28, 3.49 and 0.959 respectively which indicates a fairly rich diversity. A comparison of the richness with species number and number of sporophores showed that richness was highest in rainy season followed by summer season and the least was observed in winter season. Richness index is directly proportional to an increase in species number. **(Table 2)**.

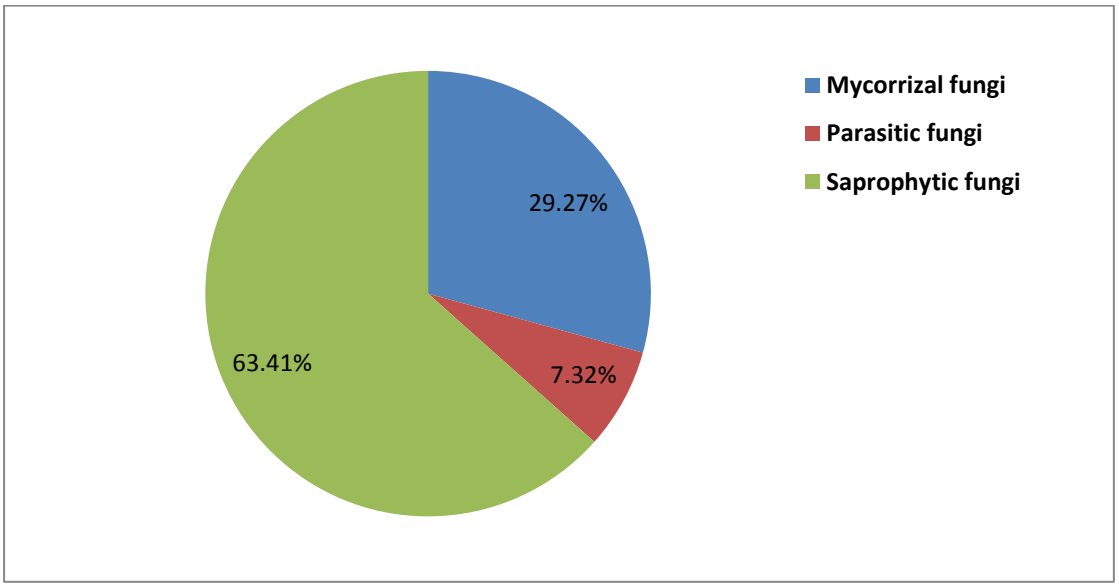

Figure 4: Percentage occurrence of different ecological groups in Garbhanga reserve forest

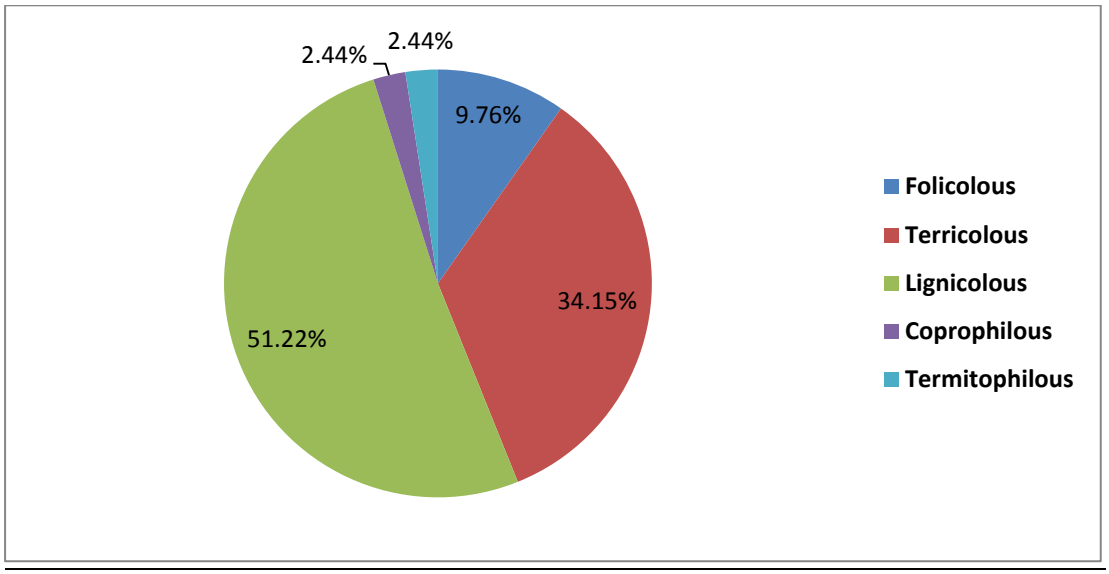

Figure 5: Percentage occurrence of different functional groups in Garbhanga reserve forest

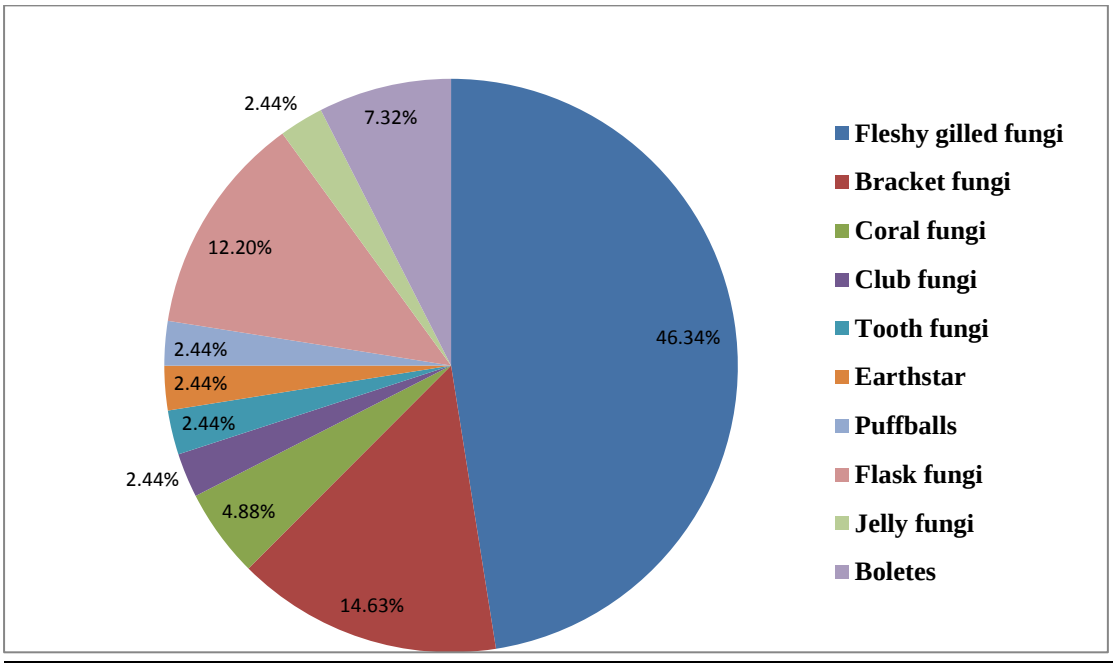

Figure 6: Percentage occurrence of different morphogroups of macrofungi in Garbhanga reserve forest

As a result of personal interview and questionnaire, 4 species were found to be edible and preferred as a culinary excellence by the tribal community like the Karbis and Rabhas of this area. Most common edible mushrooms in Garbhanga are Cantharellus cibarius, Creterrellus odoratus, Lentinus squrrosulus and Schizophyllum commune. Mushrooms are considered to be a substitute for animal protein by the local people and relished to be as delicious as meat. The

practice of collection and consumption of wild mushrooms is widespread across the world in countries like China (Huang, 1993), Malaysia, (Chang and Lee 2004), Nigeria, (Ogundana and Fagade, 1982) Indonesia (Arif et al., 2014) and many other countries. In India, mushroom hunting and collection for consumption is an age old practice. Mushrooms are a non-wood forest produce and popular as food among the ethnic people of North east India. Some of the edible species like Termitomyces eurrhizus, Lentinus conatus, Schizophyllum commune, Tricholoma giganteum and Pleurotus are sold in the markets of Kohima district of Nagaland by the local people (Tanti et al., 2011). In addition to these Kumar et al., 2013 described 15 edible fungi along with their macronutrient content collected from different forest areas of Nagaland. In western part of Assam, the people living in the forest region prefer to consume species growing on soil viz. Termitomyces clypeatus, T mammiformis, T robustus, T microcarpus, Lentinus edodes, L cladopus, L ostreatus, etc. Cantharellus cibarius was found to be most delicious and highly preferred species in all parts of Western Assam. Tricholoma terreum, Marasmius oreades, Laetiporus sulphureus, Lentinus edodes, Schizophyllum commune,etc were good for edible purpose while Calvatia gigantia and Lycoperdon pyriforme are edible at their young stage. Similarly Auricularia auricula, Adelicata and A. polytricha were considered as edible but not very much tasty (Gogoi and Sarma 2012).

Table 1. List of macrofungi in Garbhanga Reserve Forest of Assam with uses and ecological relationship.

Fungi	Family	Host/substrate	Ecological group	Utilization	Density	Frequency %	Abundance
Auricularia judae	Auriculariaceae	On dead trunk	Saprophytic	E	0.77	22.22	7.00
Bjerkandera adusta	Meruliaceae	On standing tree trunk	Parasitic	NE	0.88	11.1	5.33
Boletes barrowsii	Boletaceae	On the floor near tree roots	Mycorrhizal	NE	0.55	22.2	5.00
Bovista plumbea	Lycoperdaceae	In the open meadows and field	Saprophytic	E	1.72	33.3	6.20
Calocera cornea	Dacrymycetaceae	On dead log or branch	Saprophytic	NE	0.83	11.11	5.00
Cantharellus cibarius	Cantharelaceae	On th forest floor	Mycorrhizal	E	2.166	22.2	7.80
Clavulinopsis	Clavariaceae	In woods under	Saprophytic	NE	0.61	11.11	5.50

fusiformis		trees and among grasses					
Coltricia perennis	Hymenochaetaceae	On dead branches	Saprophytic	NE	1.16	16.6	7.00
Coprinus atramentarius	Agaricaceae	Growing on lawns or at the edges often in large groups	Saprophytic	NE	0.72	11.1	6.50
Coprinus floculosus	Agaricaceae	Growing on ground at grassy places	Saprophytic	NE	0.33	11.1	6.00
Clitocybe geotropa	Agaricaceae	On dead branch or trunk	Saprophytic	NE	0.22	5.55	4.00
Creolophus cirrhatus	Hericiaceae	On branches of standing trees		NE	2.27	27.7	8.20
Cantharellus lateritiuss	Cantharelaceae	On the forest floor	Mycorrhizal	E	0.33	11.1	6.00
Daedalia quercina	Polyporaceae	On dead branch	Saprophytic	NE	0.22	5.55	4.00
Entoloma conferendum	Entolomataceae	Growing on ground near tree roots	Mycorrhizal	NE	0.166	5.55	3.00
Ganoderma carnosum	Ganodermataceae	Grows on trunk of standing tree	Parasitic	NE	0.83	22.2	7.50
Ganoderma sp.	Ganodermataceae	Grows on trunk of standing tree	Parasitic	NE	0.83	27.7	3.75
Geastrum fimbriatum	Geastraceae	On the forest floor	Saprophytic	NE	0.44	16.7	4.00
Hygrophorus gliocyclus	Hygrophoraceae	On the ground near trees	Mycorrhizal	NE	0.27	11.1	2.50
Innonotus tomentosus	Hymenochaetaceae	On dead trunk	Saprophytic	NE	0.166	11.1	3.00
Inocybe calamistrata	Cortinariaceae	On the forest floor	Mycorrhizal	NE	0.5	16.7	3.00

Lactarius corrugis	Russulaceae	Near tree on the ground	Mycorrhizal	NE	0.5	27.7	4.50
Lentinus polychrous	Polyporaceae	On dead trunk	Saprophytic	NE	1.27	33.3	4.60
Lentinus squarrosulus	Polyporaceae	On dead trunk	Saprophytic	E	0.94	11.11	5.67
Lentinus edodes	Polyporaceae	On dead fallen trunk of trees	Saprophytic	E	1.27	22.2	7.67
Lepiota cristata	Agaricaceae	On ground with rich humus	Saprophytic	NE	0.72	22.2	4.33
Macrolepiota excoriata	Agaricaceae	On old pastures, mixed forest and on woods	Saprophytic	E	0.38	11.11	3.50
Marasmius rotula	Marasmiaceae	Leaf litter	Saprophytic	NE	0.83	22.2	5.00
Microporus xanthopus	Polyporaceae	Fallen twigs and branches	Saprophytic	NE	0.27	11.1	5.00
Mycena sp.	Tricholomataceae	On dead fallen branches	Saprophytic	NE	1	22.2	9.00
Paneolus papilionaceus	Psathyrellaceae	On elephants dung	Coprophilous	NE	0.66	22.2	6.00
Pleurotus ostreatus	Pleurotaceae	On trunk of live trees	Saprophytic	NE	0.38	11.1	5.00
Polyporus alveolaris	Polyporaceae	On dear trunk	Saprophytic	NE	2.33	27.7	10.50
Psathyrella candolleana	Psathyrellaceae	On dead fallen trunk	Saprophytic	NE	0.72	11.1	6.50
Russula cyanoxantha	Russulaceae	On forest floor	Mycorrhizal	NE	0.22	11.1	4.00
Russula lepida	Russulaceae	On forest floor	Mycorrhizal	NE	0.22	11.1	4.00

Russula nigriscans	Russulaceae	On forest floor	Mycorrhizal	NE	0.16	5.55	3.00
Schizophyllum commune	Schizophyllaceae	On dead branches and logs	Saprophytic	E	1.88	16.67	6.80
Termitomyces microporous	Lyophyllaceae	On compost heap of termite nest in evergreen forest	Termitophilic	E	0.88	16.67	5.33
Tricholoma sp.	Tricholomataceae	On the forest floor near trees	Mycorrhizal	NE	0.22	5.55	2.00
Xylaria polymorpha	Xylariaceae	On dead fallen logs	Saprophytic	NE	1.38	22.22	6.25

(E=Edible; NE=Non edible)

Table: 2 Richness index, number of species and number of sporophores of macrofungi recorded during 2010-12 in Garbhanga Reserve Forest of Assam, India

Seasons	Number of species	Number of sporophores	Species richness	Density	Frequency (%)
Summer	6	83	1.13	0.34	4.87
Rainy	37	442	5.91	1.79	28.0
Winter	4	58	0.74	0.24	2.44

CONCLUSION : During the present study, 41 species were collected which were distributed in 24 families and 34 genera. The diversity of flora and climatic conditions in the forest region has created conditions for the growth and development of a wide variety of macro fungal species. These macro fungi play an important role in the maintenance of ecosystem and also serve as a substitute of food for the local inhabitants. The tribal community gathers wild fungi from the forest for consumption as well as for selling in the local market. Considering the importance of macro fungi with regards to environment, health and economy, their documentation is very essential. Hence further survey of macro fungi in this region is of great importance and should be carried out for conservation before it is wiped from the face of the earth due to human intervention.

REFERENCE :

Alexopoulos, C.J., Mims, C.W. and Blackwell, M.M. (1996). Introductory Mycology, 4TH edition, New York, Wiley, pp 868.

Ambast, R.S. and Ambast, P.K. (1992) Environment and Pollution - An Ecological Approach. Students' Friends & Co., Varanasi, pp. 307.

Arif, N., Muhammad, A., Laifa, F., Nastiti, T., Fadilatur, R., Elvin, H. A. and Ni, M. (2014). Inventorization of edible Macrofungi from the Tropical Rainforest Ecosystem of Meru Betiri National Park East Java. The 5th International Conference on Global Resource Conservation. February 12th-13th, 2014.

Chang, S.T. and Miles, P.G. (2004). Mushrooms-Cultivation, National Value, Medicinal effect and Environmental impact. Second edition.CRC Press. pp. 2-4.

Chang, Y.S. and Lee, S.S. (2004). Utilisation of macrofungi species in Malaysia. Fungal Diversity: 15: 15-22

Cowan, A. (2001). Fungi-Life support for ecosystems. Essential ARB4, pp. 1-5.

Crous, P.W. (2006). How many species of fungi are there in tip of Africa. Stud Mycol 55:13
Eugenio ME, Carbajo

Gogoi, Y. and Sarma, TC. (2012). An ethno mycological survey in some areas of Dhemaji district (Assam).

Hawksworth, D.L. (2004). Fungal diversity and its implifications for geneticresource collections. Stud Mycol 50: 19.

Huang, N. (1993). Edible Fungi Encyclopaedia. Beijing, China, Agricultural Press. 1997 reprint. (In Chinese).

Kumar, R., Tapwal, A., Pandey, S., Borah, R.K., Borah, D. and Borgohain, J. (2013). Macrofungal diversity and nutrient content of some edible mushrooms of Nagaland, India. Nusantara Biosci5 (1):1-

Lamaison, J.L. and Polese, J.M. (2005). The Great Encyclopedia of Mushrooms. Germany: Konemann.

Mani, S. and Kumaresan, V. (2009). Occurrence of macrofungi on the Coromandel coast of Tamil Nadu, Southern India, Journal of Threatened Taxa1 (1):54-57.

Molina, R., O'Dell T., Amaranthus, M., Castellano and Russel, K. (1993). Biology, Ecology and Social aspects of Wild Edible Mushrooms in the forest of the Pacific Northwest: A Preface of Managing Commercial Harvest . U.S. Dept. of Agriculture Forest service, Pacific Northwest Research station, United States. 45pp

Molina, R. (1994). The role of mycorrhizal symbioses in the health of giant redwoods and other forest ecosystems

Natarajan, K., Kumaresan, V. and Narayanan, K. (2005). A checklist of Indian agarics and bolete (1984-2002). Kavaka 33, 61-128.

Ogundana, S.K., Fagade, O.E. (1982). Nutritive value of some Nigerian Edible Mushrooms. Food Chem, 8:263-268.

Sheikh, P. A., Dar, G.H, Beig, M.A. and Shaheen, K. (2014). Two Hitherto unreported Macrofungi from Zabarvan Range of Kashmir Himalaya, India.Caribbean Journal of Science and Technology, Vol.2,399-404

Suman, S., Lahiria, M. D., Shukla, Mamta, B., Shah, H. and Modi A. (2010). Documentation and Analysis of Certain Macrofungal Traditional Practices from Western-India (Gujarat), Ethnobotanical Leaflets 14: 626-41,

Tanti, B., Gurung, L. and Sarma, G.C. (2011). Wild edible fungal resource used by the ethnic tribes of Nagaland, India. Indian J Trad Know 10(3):512-515

Vishwakarma, M.P., Bhatt, R.P and Sweta, J. (2012). Macrofungal diversity in moist temperate forests of Garhwal Himalaya. Indian Journal of Science and Technology Vol 5 No.1

Wachtel-Galor S, Tomlinson, B. and Benzie, I.F.F. (2004). Ganoderma lucidum('Lingzhi'), a Chinese medicinal mushroom: biomarker responses in a controlled human supplementation study. Br J Nutr 91:263-269.
Zoberi, M.H. (1973). Some edible mushrooms from Nigeria. Nigerian Field. 38: 81-90.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

QUALITY & BRAND: PREDICTORS OF CUSTOMER SATISFACTION TOWARDS PACKAGED DAIRY PRODUCTS

Manisha Shah Research Scholar
Dr. Rajendra Jain
Principal, P.M.B Commerce College. Indore

Abstract : Packaged Dairy Products have always been an important traded item for India. Packaged Dairy Products contribute more to the national economy than any other farm commodity. In the context of strengthening the Indian economy Packaged Dairy Products have a special role to play for its many nutritional advantages as well as providing supplementary income to millions of farmers living in remote villages. Government has made investments in establishment of various dairy co-operatives state wise and district wise. Dairy cooperatives have played a major role in the economic and social development of rural India and has also provided vital ingredient for improving the health and nutrition of the Indian population.

Hence, the future of dairying will rely on the continued adaptation of management techniques to suit markets, environments, and socio-economic conditions. In this study, on the parameters of quality and brand was examined towards packaged dairy products. For this study 300 respondents were selected who consume dairy products. The findings concluded that customer satisfaction is explained in the terms of quality and brand.

Keywords : Quality, Brand, Customer Satisfaction, Socio-economic conditions.

Introduction : Over the past decade, the significant transformation took place in the Indian demographic space which led to heightened consumer interest in packaged products. This dynamic shift in the industry proved benefits for the manufacturers since margins in packaged products are more than double the margins in the liquid milk segment. The profitability in liquid milk space ranges from 4-5 percent whereas the profitability in dairy products ranges from 12-18 percent attracting private participation in the industry. Product innovations are likely to accelerate Indian dairy market which is anticipated to improve industry margins by attaining greater scale, higher capacity use and an increasing contribution from new milk variants. Further, the development of processing and packaging technology along with improvement in retail and cold storage infrastructure has increased the shelf life of dairy products.

As per National Dairy Development Board, the Indian dairy industry has experience high growth rates in the next eight years with demand likely to reach 200 million tons by 2022 from 132 million tons in 2013. Presently, only 20 percent of the milk production comes from the organized sector comprising co-operatives and private diaries. The paramount factors driving the growth in the dairy sector include rising disposable incomes, advent of nuclear families and instant food gaining group in India. Other factors such as structural changes in food habits, expansion of food chains and popularity of pizza and pasta aided the usage of milk variants of mozzarella cheese, processed cheese and flavoured milk etc.

There are various brands available in the dairy market in Indore district like Amul, Sanchi, Mother Dairy, Reliance Fresh, etc. Generally, people buy dairy products from the local shops or supermarket. Dairy products have low shell life which needs to consume within 2 days. Due to

increasing population and low supply of milk it's necessary to store and provide without adulteration to the consumers. For this various organizations have been established to distribute and provide dairy products. There is difference in price and quality. Thus it is necessary to know the consumption pattern, satisfaction level, factors which influence in buying packed dairy products.

Rationale of the Study : In this fast and competitive environment where people have no time to manage the things so easily, the demand of packaged dairy products has increased. It is observed that in the present scenario, women are working so they are not able to manage and this need creates the necessity of packaged dairy products. As Amul, Sanchi and other brands are emerged with high nutritional value with disposable income, so these brands have the positive image in the minds of consumers and push them to purchase these packaged dairy products. The packaging of these products is durable and easy to carry out. The development of processing and packaging technology along with improvement in retail and cold storage infrastructure has increased the shelf life of dairy products

In the view of large consumption and production of packaged dairy products, availability of various brands in the same market and due to large establishment of business houses and institutions in the Indore district. Customers have their own lifestyles and affordability. So, it will be interesting to measure the satisfaction level of customers towards packaged dairy products.

Review of Literature : Rajendran K. &Mohanty S. (2004) mentioned the opportunities and challenges in dairy co-operatives and milk marketing. In India dairy sectors needs to enhance its competitive economic advantage towards quality and cost of products. The main objective of dairy co-operative societies is to avail long-term productive investments. Marketing of dairy products is the greatest challenge for dairy industries. 80 percent milk suppliers involve in unorganized sector. Anand dairy pattern increased the opportunities for dairy farmers.

Niezurawski.L(2006) studied on consumer satisfaction on yoghurt product of dairy industry. He observed attractive price and taste are the factors influence in buying decision. Sales volume and consumer satisfaction are correlated. Consumer first preferred taste, secondly brand then price.

Hysen&Mensur (2008) analyzed consumer behaviour in regard of dairy products in Kosovo. Their main aim was to know the consumption pattern of consumers towards dairy products with special reference to different flavours of yoghurt. Trust, quality and price significantly influence the consumers. The study found packaging factor is not consider by consumer while buying dairy product

Sivasankaran S. & Sivanesan R.(2013) focused on brand preference of packed milk among rural and urban area consumer in Kanyakumari. The main aim of the study was brand loyalty of packed milk among consumers. The study was on seven brands of dairy products. In their research they found consumption of packed milk differs according to consumer resident area and mostly rural consumer prefer particular brand packed milk for its thickness and normal price. Urban consumers' prefer particular brand for easily availability and quality of packed milk. They used percentile, likert scale and ranking techniques to test hypothesis.

Manjunatha A.V. & Shruthy (2013) mentioned in their study milk prices are close to the world market and divided counties in regulated, deregulated and informal dominated country. India has potentiality to improve income and employment on dairy sector. Some approaches can remove issues which become hurdle in progress of dairy sector of India.

Bharathy & Selvakumar M. (2013) studied about dairy practices and opportunities in dairy sector.

Their study was empirical research. Milk production in India increases with 3% in 2008-09 whereas in 2011-12 by 30%. Dairy industry contributes in the GDP of Indian economy. The study focused on various factors like agro-climatic, biodiversity and ecology. They suggested to cooperative unions to take some steps to remove problems which help to milk producer to sustain dairy market according to the demand in the market.

The study by **M.Tiwari (2016)** focused on the Level of satisfaction of respondents of packaged and unpackaged milk: Consumers of packaged and unpackaged milk were asked about their level of satisfaction with respect to various parameters like quality of milk, price of milk, taste preference, mode of payment and assurance of right quantity. It was found that the level of satisfaction in case of packaged milk users was the highest for quality of milk and lowest for the mode of payment.The companies can increase the preference for packaged milk by highlighting the quality factor, by making home delivery possible in all areas and by making payment system suitable to the consumers. Mainly women are the decision makers for milk purchase therefore advertising media should be selected keeping this factor in view.

OBJECTIVES OF THE STUDY

1. To study the impact of quality on the customer satisfaction level towards packaged dairy products.
2. To study the impact of brand on the customer satisfaction level towards packaged dairy products.
3. To suggest measure for building the positive image of packaged dairy products among customers.

RESEARCH METHODOLOGY

Sampling Plan : The study was restricted to the Indore city.

Sampling Unit: For the research, total 300 customers were selected.

Sampling Techniques: For the study, purposive sampling technique was used because of those who consume packaged dairy products.

Data Analysis Tools : The data coded in excel using Ms-Office package. The coded data was then analyzed using SPSS version 20.0. The data was analyzed using descriptive statistics. First all questions were subjected to frequency analysis and item total correlation to check whether the scale is measuring any variation or not thereafter, Correlation & Regression analysis was applied.

The secondary data for this particular study were collected through national and international journals, periodicals and other existing reports that were based on the subject. Secondary data helped the researcher to create better comprehension of packaged dairy products. Thus the study conducted and analysed primary data with the significance of the secondary data.

HYPOTHESES OF THE STUDY : H_{01}: There is no significant impact of quality on customers' satisfaction towards packaged dairy products.

Table 1.1: Model Summary[b] on customer satisfaction and quality

Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate	Change Statistics				
					R Square Change	F Change	df1	df2	Sig. F Change
1	.906[a]	.822	.821	3.23215	.822	1373.684	1	298	.000

a. Predictors: (Constant), Quality
b. Dependent Variable: Customer Satisfaction

Over all model summary shows the value of linear correlation coefficient R=0.906, it is the linear correlation coefficient between observed and model predicted values of the dependent variable, Its large value indicates a strong relationship. R2, the coefficient of determination is the squared value of the multiple correlation coefficients. Adjusted R2=0.822, R2 change is also 0.841 and these values are significant which shows that overall strength of association is noteworthy. The coefficient of determination R2 is 0.822; therefore, 82.2% of the variation in customer satisfaction is explained by quality in packaged dairy products.Hence, in this case null hypothesis stands rejected, it is concluded that there is a significant impact of quality on customer satisfaction towards packaged dairy products.

H_{02}: There is no significant impact of brand on customers' satisfaction towards packaged dairy products.

Model Summary[b] on customer satisfaction and brand

Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate	Change Statistics				
					R Square Change	F Change	df1	df2	Sig. F Change
1	.413[a]	.171	.168	6.97187	.171	61.285	1	298	.000

a. Predictors: (Constant), Brand
b. Dependent Variable: Customer Satisfaction

Over all model summary shows the value of linear correlation coefficient R=0.413, it is the linear correlation coefficient between observed and model predicted values of the dependent variable, Its large value indicates a strong relationship. R2, the coefficient of determination is the squared value of the multiple correlation coefficients. Adjusted R2=0.168, R2 change is also 0.171 and these values are significant which shows that overall strength of association is noteworthy. The coefficient of determination R2 is 0.171; therefore, 17.1% of the variation in customer satisfaction is explained by quality in packaged dairy products. Hence, in this case null hypothesis stands rejected, it is concluded that there is a significant impact of brand on customer satisfaction towards packaged dairy products.

Conclusion : The study found that generally people purchase packaged dairy products based on the quality and brand. They do not compromise with the quality for the sake of price. In the study strong bonding is analysed between quality and customer satisfaction so in this case alternate hypothesis is accepted at 5% level of significance. For the second objective moderate relationship is observed and found that in this objective also alternate hypothesis is also accepted. Therefore, these two determinants are important for judging the customer satisfaction level.

Suggestions & Recommendations

- Regarding to create awareness about healthy packaged products among customers through campaigns or door to door selling.
- Packaged dairy products should reach to a large number of customers at affordable price.

- In rural areas there should be communicated to rural consumers through pictorials.
- The entire operation is carried out with clock-like precisions, since the temperature in India is normally hot and hence maintenance of cold chain for the transportation of milk is essential.

References :

- Bharthiya, D., & M.Selvakumar. (2013). A study on dairy practices and opportunities in Dairy industry in Indai. International journal of research in commerce, economics & management, 03 (09), 90-92.
- Lech Niezurawski. (2006). Determinants of customer satisfaction on the markets of selected dairy products. Journal of food and nurition sciences , 155-160.
- M. Tiwari (2016) A Positive Attitude towards Packaged Dairy Products. Business review. 8 (4), pp. 67-79.
- S.Sivasankaran, Dr. R. Sivanesan. (2013). Brand preference of packed milk-comparative study on rural and urban consumers in kanyakumari district. International Journal of Business and management invention, 2 (7), 23-35.
- Verghese Kurein. (1997). Unfinished Dreams. New Delhi: Tata McGraw Hill Publishing Company Ltd.

Reports

- **CARE** (Credit Analysis & Research Limited) Ratings, a Mumbai basedresearch & ratings agency said in a report.13 Aug' 2014
- Department of Animal Husbandry and dairying (2003), 17thQuiquennialLivestock Census, GOI, New Delhi.
- Department of Animal Husbandry and Dairying (DAHD), Annualreports GoI, 2006.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Entrepreneurship Development through Small Scale Industries

Dr. Songirkar Nitin Bhatu, Assistant Professor
SMRK.BK.AK.Mahila Mahavidyalaya, Nashik. (Maharashtra)

Abstract: Entrepreneur is an individual, who carries out new combinations, introduces new means of production by which there occurs disequilibrium. Entrepreneur is basically an innovator and innovator is one who introduces new combinations. And entrepreneurship is the purposeful activity of an individual or a group of associated individuals, undertaken to initiate, maintain or aggrandize profit by production and distribution of economic goods and services.

Small scale industries play a vital role in shaping the economy of the country. This has got special significance with reference to developing nations lie India which contributes in terms of large scale employment generation and higher labour to capital ratio. It is a means for making the best use of surplus human resource available in the country. The SSI units have unique features like shorter gestation period, lower capital investment and reduction in regional imbalances in location of industries and promote the entrepreneurship. They ensure the optimum utilization of locally available resources and cater to the needs of the local market. Thus, SSI units contribute positively towards the industrialization process. The Indian small scale sector has a significant contribution in terms of both industrial production and exports. it is emerged as a dynamic and vibrant sector of economy.

An entrepreneur desirous of setting up his own industry has to perform multifarious activities in a logical sequence. The procedure for starting an industry i.e. Decision to be self-employed, Analyzing using the SWOT analysis, Scanning of business environment, Training, Product selection, Market survey, Form of organization, Location, Technology, Machinery and equipment, Project report Preparation, Project appraisal, Finance, Provisional registration, Power and water connection, Installation of machinery, Recruitment of manpower, Procurement of raw materials, Production, Marketing, Quality assurance, Permanent registration, Market research and Profit generation and reinvestment. From the above procedure an entrepreneur setting up his own Small Scale Industries.

Keywords : Entrepreneur, Entrepreneurship, Small Scale Industry, Employment, Investment.

Introduction:

Entrepreneur and Entrepreneurship : The entrepreneur is an important input of economic development. He is a catalyst of development, with him we prosper, without him we are poor."The entrepreneur in an advanced economy is an individual who introduces something new in the economy, A method of production not yet tested by experience in the branch of manufacturer concerned , a product with which consumers are not yet familiar, a new source of raw material or of new markets and the like".

One of the qualities of entrepreneurship is the ability to discover an investment opportunity and to organize an enterprise. There by contributing to real economic growth. It involves taking of risks and making the necessary investments under conditions of uncertainty and innovating, planning, and taking decisions so as to increase production in agriculture, business, industry etc.

Entrepreneurship is a composite skill, the resultant of a mix of many qualities and traits, these include tangible factors as imagination, readiness to take risks, ability to bring together

and put to use other factors of production, capital, labour, land, as also intangible factors such as the ability to mobilize scientific and technological advances.

Small Scale Industries : Small Scale industries is changing with the years. It is normally defined in terms of investment made and the ceiling of investment has changed from time to time. The SSI have become a new focus of the government. They create the largest employment after agriculture. The government offers financial assistance to make comprehensive plans for developing SSI. They generate new job opportunities, encourage the workforce to utilize their capabilities to their maximum potential and gain access to new technology for production and advancements. Small Scale industrial undertaking refers to that industrial undertaking in which the fixed assets in plant and machinery, excluding land and building, whether held on ownership terms or on lease or on hire purchase does not exceed Rs.1 crore.

Characteristics of Small Scale Industries:

The Characteristics of Small Scale Industries are as follows-

1. Lower Capital investment and in majority of the cases employing less than 10 people.

2. The SSI units are privately owned and either they are managed as proprietary firm or as partnership firms in majority of the cases.

3. The tendency of majority of the firms is to earn huge profits.

4. Quality awareness is growing rapidly among SSI units as it has become a survival strategy for firms.

5. Workers are unorganized and the exploitation of workers is on the rise rather than their development.

6. High turnover of employees.

7. Improper planning leading to financial crisis and ultimately results in sickness.

8. Less Flexibility and adaptability to scope with changing technology and market needs.

9. Higher locking of capital in terms of inventory and credit sales.

10. Ploughing back of capital is limited as the entrepreneur is more keen on getting back the invested money.

11. Located either in industrial estates of big industrialized cities or located in semi-urban and rural areas.

12. The success or failure is attributed to one person in case of proprietary firms.

Objectives:

1. To Know about the Entrepreneur, Entrepreneurship and Small Scale Industries.

2. To Study Characteristics of Small Scale Industries.

3. To Study the Procedure to Start a Small Scale Industry.

Procedure to Start a Small Scale Industry : The promotion of a venture is comprised of a number of complex activities for the entrepreneur. A step-by-step approach towards aiming and achieving the entrepreneurial goal is always desirable. The several steps, which involve the establishment of a business enterprise, can be elaborated upon as follows-

1. **Decision to be self-employed**: This is the most vital decision in entrepreneurship,

which requires the particular entrepreneur to opt for self –employment and disregard wage employment or pursuing a career in the service sector.

2. **Analyzing using the SWOT analysis**: As stated earlier, the entrepreneur should analyze the strengths, weaknesses, opportunities and threats in the concerned product line.
3. **Scanning of business environment**: It is essential for the entrepreneurs to study and understand the business environment in terms of administrative framework, procedures, policies, rules and regulations and other formalities involved.
4. **Training**: An entrepreneur can overcome his own deficiencies by training. He can enroll in such training institutes like EDI, NILESBUD, IEDs, in India.
5. **Product Selection**: This is another crucial step, which involves close scrutiny of size of business, developing new ideas and short listing the appropriate ones.
6. **Market Survey**: This involves systematic collection of data about the product for manufacturing, demand-supply lag, extent of competition, frequency of demand, pattern and design of demand, its potential share in the market pricing, distribution policy, etc.
7. **Form of organization**: This requires deciding about the form of ownership as proprietorship, partnership, limited company, cooperative society, etc.
8. **Technology**: Information of all available technologies should be collected in this step. The most suitable technology should be identified and finalized.
9. **Location**: Deciding the site, size of plot covered and open area where the unit should be set up.
10. **Machinery and equipment**: This involves decision about the type of machinery and equipment in accordance with the chosen technology and product. It also requires cost estimation of equipments.
11. **Project report preparation**: The economic viability and technical feasibility of the product is established through the project report. It helps in obtaining finance, shed , power connection, water connection ,raw materials quota and so on.
12. **Project appraisal**: This means assessment of a project. This helps in evaluating the project from the economic, financial technical managerial and social viewpoints.
13. **Finance**: This involves raising funds for the enterprise with the help of financial institutions. A number of financial agencies provides capital assistance and venture capital to start an enterprise.
14. **Provisional registration**: The industrial unit should be registered with the government. This requires obtaining and filling in a prescribed application form for provision registration from the Directorate of Industries.
15. **Power and water connection**: This requires arrangement of adequate power and water connections as per the necessities of the concerned product venture.
16. **Installation of machinery**: Machinery should be installed as per the plan layout.
17. **Recruitment of manpower**: Adequate manpower, both skilled and unskilled, should be recruited, Placement sources can be contacted to provide desired labour and staff members.
18. **Procurement of raw materials**: A Cheap and guaranteed supply of raw materials needs to be ascertained in this step.
19. **Production**: This involves effective operation of the organizational resources avoiding wastage of manpower, machinery, etc. This production of the concerned item should be taken up in two stages. A) **Trial Production**: This can help

in tackling problems confronted in production and test marketing of the product. B) **Commercial production**: This can be started after the test marketing of the product.

20. **Marketing**: This includes such activities as publicity, advertising commission structure, pricing, contacting distribution channels.
21. **Quality assurance**: The product quality certification should be obtained from such institutions like Bureau of Indian Standards (BIS),AGMARK.
22. **Permanent registration:** Based on its provisional registration from the Directorate of Industries, the small scale unit, after going into production and marketing, becomes eligible for permanent registration.
23. **Market Research:** Adaptability according to the market changes, in the form of up gradation, modification and growth is possible through market research. The entrepreneur has to be alert and should avoid complacency.
24. **Profit generation and reinvestment:** The entrepreneur needs to be watchful about the cost of production and profit generation, Through several activities like evaluation of production, quality, marketing, calculating the Return on Investment and profitability ration, the entrepreneur can know where the firm is heading.

Careful adherence to the above sequence of steps can take the entrepreneur on a highly successful venture where he can achieve his goals with confidence.

Conclusion : Entrepreneur is basically an innovator and innovator is one who introduces new combinations. Entrepreneurship means the function of seeking investment and production opportunity, organizing an enterprise to undertake a new production process, raising capital, hiring labour, arranging the supply of raw materials and selecting top managers of day-to-day operation. All these operations are considered while setting up a small scale industry that adds value to the products and produces a wide range of products that facilitate and cater to a large variety of customer demand. Thus, increasing profits and market share. Another approach of setting up a new business venture is through organizing the management under a holistic method, where capabilities of an organization are enhanced through improved information system and staff training.

References :

1. Telsang Martand,(2007) Industrial and Business Mangement,S.Chand & Company Ltd., New Delhi.

2.Ycmou (2007), Business Entrepreneurship, Vikas Publishing House, New Delhi.

3. Acharya, Debidutta. Nanda ,Amitabha. (2010)Strategic Management And Entrepreneeurship, Himalaya Publishing House, Mumbai.

4. Desai, Vasant.(2011) The Dynamics of Entrepreneurial Development and Management, Himalaya Publishing House, Mumbai.

5. Jadhav S.U., Suryawanshi R.B.,Sonawane M.B.,Bhosale S.A.,(2014),Business Entrepreneurship.Success Publications,Pune.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

दाम्पत्य जीवन में राजनीति की 'काली आँधी'

डॉ0 संजीव कुमार विश्वकर्मा
अतिथि व्याख्याता (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय पथरिया

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासकारों में कमलेश्वर एक नूतन दृष्टि लेकर साहित्य सेवा में संलग्न हुए। इस नवीन एवं आयुनिक दृष्टिकोण के फलस्वरुप कमलेश्वर अपने युग के उपन्यासकारों में प्रमुख स्थान को प्राप्त हुए। उन्होंने स्वयं को आधुनिक उपन्यासकारों में प्रेमचंद का अनुयायी माना और उनकी परम्परा को आगे बढ़ाने का प्रयास किया। वे कहते हैं – '' सही साहित्य की दृष्टि यदि मुझे प्रेमचंद से मिलती है तो सही जिन्दगी की दृष्टि मूझे चाट–मिठाई लगाने वाले ठेले वाले से मिलती है... मेरा प्रेमचंद वह ठेले वाला है, यही मैंने प्रेमचंद से सीखा है और यही प्रेमचंद की देन है।''1 कमलेश्वर का साहित्य युग सत्य को उद्घाटित करने वाला साहित्य है। उनका सृजन हिन्दी की अनमोल निधि है। कमलेश्वर न अपने सृजनात्मक लेखन में समय और जीवन के निरंतर परिवर्तित संदर्भों और परिवेश के बोध को प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत किया है। जिसमें सामाजिक परिस्थितियों, जीवनगत अनुभवों के साथ मानवीय संवेदना की अनुभूति को सही आयाम व अभिव्यक्ति प्रदान की गई है। वे समकालीन लेखकों को जनजीवन से यही अर्थ में जोड़ने के उद्देश्य से प्रयत्नशील रहे हैं। वे किसी 'वाद' की नारेबाजी की अपेक्षा सच्ची मानवतावादी दृष्टि के पक्षधर रहे हैं। '' कमलेश्वर की यही मानवतावादी दृष्टि उसे सर्व भारतीय भी बना देती है। कारयित्री प्रतिभा का वह खोजी रहा है। इसलिए हिन्दी–अहिन्दी भेदभाव के बगैर उसने प्रत्येक क्षेत्र के नवोदित लेखकों को उचित मर्यादा दी है, अपने सम्पादन काल में भारत की विभिन्न भाषाओं में हो रहे साहित्यिक आन्दोलनों, साहित्य कृतियों को हिन्दी के माध्यम से जोड़ने का काम उसने किया है जो हजारों संगोष्ठियों या भाषणों से नहीं हो सकता था। कमलेश्वर की यही व्यापक दृष्टि उसे अन्य सम्पादकों से विशिष्ट बना देती है। अपने सम्पादन काल में उसने 'नयी कहानियों' को भारतीय कथाकारों का मंच बना दिया था, आज 'सारिका' को भी उसने वही भूमिका प्रदान की है। भारतीय साहित्य इसके लिए सदा कमलेश्वर का कृतज्ञ रहेगा।''2

कमलेश्वर की जीवन के प्रति बहुत गहरी आस्था थी। जीवन के प्रति यह आस्था उनके उपन्यासों के पात्रों में भी दिखाई देती है जो कठिन से कठिन संघर्ष करते हुए भी जीवन के प्रति आस्थावान हैं। इसका करण यह है कि स्वयं कमलेश्वर ने कभी अपने सिद्धातों से समझौता नहीं किया। न ही वे किसी सिद्धान्त या चिन्तन के झमेले में पड़े। उन्होंने सदैव अपने युग की समस्याओं, जीवन के यथार्थ को सहज,सूक्ष्म और सांकेतिक ढंग से साफगोई के साथ निरुपित किया है। '' उनका चिन्तन एक ऐसे बुद्धिजीवी का चिन्तन है जो जनसामान्य की चिन्ता से उत्पन्न जनवादी चिन्तन है। उसमें अतिरिक्त आग्रह नहीं है। न उनकी कृतियों में कुण्ठाग्रस्त परिस्थितियों, मनोवैज्ञानिक विश्लेषणों तथा यौन की विकृतियों का अतिरिक्त आग्रह है। उनकी कृतियॉ एक प्रकार से पाठकों को अपने साथ 'इन्वॉल्व' करने वाली कृतियॉ हैं क्योंकि जिस मार्मिक मानवीय पक्ष का वे चित्रण करते है, वह हमारे सामाजिक जीवन का हमारा अपना अनुभव होता है।''3 उन्हौने अपने जीवन में जो कुछ देखा या भोगा है उसी को शब्दबद्ध कर साहित्यिक विधाओं के माध्यम से पाठकां के समक्ष प्रस्तुत किया है। अपने निजी यथार्थानुभव से ही साहित्य की नींव का निर्माण किया है जिस पर खड़ी इमारत साहित्याकाश की अनन्त ऊँचाइयों को स्पर्श करती प्रतीत हो रही है। इतनी ऊँचाई पर भी मिट्टी की सुगंध स्वयं में समेटकर चलना कमलेश्वर की सबसे बड़ी विशेषता है। इसका प्रमुख कारण है उनके कथा भूमि जो 'कस्बों' से लेकर महानगर तक; 'स्वर्ग से लेकर नरक तक; 'मूल्य से लेकर मूल्यहीन तक; 'जीवनगत सफलता से लेकर असफलता तक; 'सुनहरे सपने से लेकर मोहभंग तक; संयुक्त परिवार से लेकर विभक्त परिवार तक; 'राजनीति से लेकर भ्रष्टाचार तक; 'लोकतंत्र से लेकर राजतंत्र तक और विकास से लेकर विध्वंस तक

फैली दिखाई देती है। जिसमें सामाजिक दायित्व का निर्वाह एवं सोद्देश्यता को सूक्ष्म दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है। उनके साहित्य की विषयवस्तु सामाजिक सरोकारों से युक्त एवं विविधता लिए हुए हैं।

कमलेश्वर के उपन्यासों में समकालीनता के तत्वों का समावेश है जिसमें समाज का यथार्थ चित्रण है। उन्होनें सामान्य आदमी की जिन्दगी और जिन्दगी की विसंगतियों को अभिव्यक्त किया है। सन् 1974 में प्रकाशित 'काली आँधी' राजनैतिक महात्वाकांक्षा के हाथों बली चढ़ते पारिवारिक रिश्तों की कथा है। ' काली आँधी' पर 'आँधी' नाम से गुलजार ने फिल्म का निर्माण किया । गुलजार द्वारा निर्देशित ' आँधी' में संजीव कुमार और सुचित्रा सेन मुख्य भूमिका में थे। जिन्हें 1975 में बौद्धिक वर्ग द्वारा सराहा गया। वस्तुतः ही वर्ष 1975 कमलेश्वर के लिए हिन्दी सिनेमा में सबसे अधिक महत्तवपूर्ण है।

कमलेश्वर ने हिन्दी फिल्मों को पारम्परिक फामूॅले से हटाकर नयी दृष्टि या नया आंदोलन दिया। कमलेश्वर द्वारा लिखित उपन्यासों पर आधारित 'बदनाम बस्ती' एवं ' डाक बंगला' जैसी फिल्म जीवन के अछूत कथानकों एवं दृश्यों को सामने लाती है। सिने जगत् में कमलेश्वर को अनेक नवीन अनुभव हुए उन्होनें स्वीकार किया कि फिल्मों के लिए उनके द्वारा लिखी गई कहानी में अनेक हेर–फेर होते थे। स्वयं कमलेश्वर के शब्दों में – '' सिने–दुनिया का एक सबसे बड़ा सत्य यह है कि यहॉ लिख हुआ कुछ भी अंतिम नहीं होता। उसे बार–बार लिखा जाता है। पहले लेखक लिखता है– फिर उसे निर्देशक अपने दिमाग में लिखता है, इत्तफाक से यदि निर्देशक की पत्नी कंधे से कंधा मिलाकर चलने वाली हुई या उनकी कोई साली या सलहज भी सिने–रुचि की हुइ तो दो–चार घटना प्रसंग वे लिख देती हैं। इसके बाद लेखन में फायनेंसर का दखल शुरु होता है। वह अपनी तरफ से दो–चार दृश्य लिखवाता–डलवाता है। फिर उसी फिल्म को शूटिंग के समय कैमरामैन और हीरोइन के बीच कला–कोणों की देखादाखी शुरु हो गई, तो कैमरामैन कुछ दृश्य हीरोइन की दृष्टि से लिख देता है। उसके बाद एडिटिंग टेबिल पर बैठकर संपादक उसे लिखता है, जिसमें निर्देशक उन तमाम रचनाकारों के लिखे दृश्यों के समीकरण बैठाता है और अंतिम लेखन सेंसर बोर्ड द्वारा होता है– इतने लेखकों द्वारा लिखी जाने के बाद फिल्म सामने आती है।''4 कमलेश्वर की कहानियों तथा उपन्यासों की तरह उनकी फिल्में भी आम–आदमी एवं समाज के पक्ष में संवेदनाओं को आकार देती नजर आती है।।

'काली आँधी' में कमलेश्वर ने स्वातंत्र्योत्तर भारत के राजनैतिक, भृष्टाचार, अवसरवादिता, इतिहास, संस्कृति और पारिवारिक विघटन को यथार्थता के साथ प्रस्तुत किया है। लेखक ने मालती और जग्गीबाबू के माध्यम से आजादी के बाद की समस्त राजनीतिक स्थितियों का पर्दाफास किया है। इस उपन्यास में हमें कथा तत्व के दो रुप दिखाई देते है– पहला जग्गीबाबू और मालती के असफल जीवन का और दूसरा भ्रष्ट राजनीति का। ''काली आँधी' में केवल राजनीति में चरित्र हीनता और भ्रष्टाचार का चित्रण नहीं है। इस उपन्यास के कथ्य में खासतौर पर दो तरह की वैचारिकता एक ही साथ गुंथी हुई है। भ्रष्टाचार के अतिरिक्त दूसरी वैचारिकता है–महत्वाकांक्षा के विस्तार की, सफलता और सफलता के नशे की।''5

जग्गीबाबू और मालती पति–पत्नी है जिसमें मालती राजनीतिक सत्ता के वर्चस्व के क्षेत्र में पूॅजीवादी व्यवस्था को प्रतीक है जिसमें नैतिक–अनैतिक मर्यादा का कोई भान नहीं है। वह अपने हित व निजी स्वार्थ के लिए आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग का शोषण अपनी राजनीतिक सफलता के लिए करती है। वह अपनी सफलता के लिए अपने पारिवारिक जीवन को भी दांव पर लगा देती है। वह अपने पति और बेटी लिली से भी दूर हो जाती है। स्वतंत्रता पूर्व जो भारतीय राजनीति सत्य एवं नैतिकता की पर्याय मानी जाती थी स्वतंत्रता पश्चात् वह छल, दांव–पेंच, बेईमानी, अनैतिकता और तिकड़मबाजी के जाल में फंसकर रह गयी। राजनीति एक व्यवसाय बन गई और स्वच्छ छवि एवं सहज–सरल व्यक्ति इससे किनारा करने लगे। उपन्यास के नायक जग्गीबाबू के द्वारा कमलेश्वर राजनीति के यथार्थ को प्रस्तुत करते हुए कहते हैं – ''यार, तुम्हारी यह राजनीति बड़ी घटिया चीज है.....तुम लोगों ने इसे निहायत बेहूदा बना दिया है। तुम लोग सिर्फ चीजों का

बखूबी इस्तेमाल करना जानते हों!... बाढ़ आई तो उसे इस्तेमाल करों, सूखा पड़ा तो उसे इस्तेमाल करो, कहीं कोई लड़की भाग गई तो उसके भागने को इस्तेमाल करो, कहीं कोई मर गया तो उसकी मौत को इस्तेमाल करो..... तुम लोगों ने आदमी के ऑसुओं और जज्बातों तक को नहीं छोड़ा....उसकी आशाओं और सपनों तक को नही बख्शा... इससे ज्यादा घटिया बात और क्या हो सकती है।''6

प्रस्तुत उपन्यास की नायिका मालती उच्च शिक्षा प्राप्त सुसंस्कृत अमीर घर की लड़की हैं। मालती के पिता बैरिस्टर प्रताप राय उसे पढ़ाई के लिए विदेश भेजना चाहते थे, किन्तु इसी बीच वह जग्गीबाबू से प्रेम विवाह कर लेती है । जग्गीबाबू एक सुलझे एवं संतुलित दृष्टिकोण वाले स्वाभिमानी व्यक्ति है। जग्गीबाबू खजुराहों में एक टूरिस्ट होटल चलाते हैं। उनकी राजनीति में कोई रुचि नहीं है फिर भी वे मालती द्वारा राजनीति में प्रवेश का स्वागत एवं सहयोग करते हैं क्योंकि वे नारी स्वतंत्रता के पक्षपाती हैं। भारतीय संविधान में भी राजनीति क्षेत्र में महिला आरक्षण की सुविधा दी गई है। मालती खजुराहो के म्युनिसिपल बोर्ड कमेटी के चुनाव में खड़े होकर अपना राजनैतिक अभियान प्रारंभ करती है। मालती के इस चुनाव में जग्गीबाबू पूर्ण सहयोग करते हैं। एक स्त्री के चुनाव में खड़े होने पर तरह–तरह की अफवाह फैलने लगती है, जिस पर जग्गी बाबू कहतें हैं– '' देश के निर्माण में औरतो को भी आगे आना चाहिए। औरतें यानि हमारी आधी जनसंख्या जब तक इस तामीर में हाथ नहीं बटाएँगी तब तक हर काम की स्पीड आधी रहेगी... यह बेहद जरुरी है कि हमारे घरों की औरतें आगे आएँ और हर काम में मर्दों का हाथ बटाएँ।''7

मालती खजुराहो म्युनिसिपल बोर्ड कमेटी का चुनाव जीत जाती है। अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति, महत्वाकांक्षा, सूझ–बूझ एवं राजनैतिक दांव–पेंच द्वारा वह जिला–परिषद्, विधानसभा व लोकसभा चुनाओं में भी सफलता प्राप्त करती है। इस प्रकार राजनीति के प्रत्येक मैदान में मालती को हमेशा सफलता प्राप्त होती गई आर मालती की आवाज का दायरा बढ़ता गया और वह उच्च स्थान प्राप्त करती रही। '' यह आवाज फैलती गई। आवाज का दायरा बढ़ता गया। आवाज की गूँज गहराती गयी और जग्गी बाबू हर बार इस फैलती आवाज के साथ–साथ पीछे छूटते गए।''8 मालती दिनों दिन राजनीति के चक्र में इस प्रकार धॅसती गई कि वह अपने पति के प्रति उत्तरदायित्व को भी भूल गई। अनेक अवसरों पर जग्गी बाबू की भावनाओं को ठेस पहुँचाकर, उनकी आशाओं को अपनी महत्वाकांक्षा के कारण दरकिनार करते हुए आगे बढ़ती गई। जहॉ से उसने शुरु किया तो फिर पीछे देखने की जरुरत ही नहीं पड़ी।

मालती बड़ी आसानी से राजनीतिक पड़ाव पूरे करती चली गई। सफलता के मद में चूर मालती को अपने पति और बेटी से अधिक अपनी इमेज की चिंता है। अपने राजनैतिक ओहदे को संभावित आक्षेपों से दूर रखने के लिए वह खजुराहो में स्थित अपने पति के होटल को बंद कराने हेतु दबाब डालती है– '' मैं पब्लिक में यह नहीं सुनना चाहती कि हम लोगों ने होटल को बहाना बना रखा है कि यह होटल हमारी काली आमदानी का जरिया है... कि यह गंदे कामों के लिए इस्तेमाल होता है... इससे मेरी पब्लिक इमेज पर धब्बा लगता है।''9 जग्गीबाबू होटल के अपने काम को आमदानी का इज्जतदार जरिया मानते है। फिर भी वह पति–पत्नी के बीच तनाब या विवाद नही चाहते इसलिए होटल बंद करके भोपाल में जाकर गोल्डन सन होटल में मैनेजर की नौकरी करने लगते है। तथा अपनी बेटी लिली को पचमढ़ी के एक छात्रावास में भेज देते ह। वे स्वयं को तथा अपनी बेटी को राजनीति के दलदल से दूर रखना चाहते है। पति पत्नी के बीच आयी दरारों में लिली जैसी अनेक अबोध बच्चों को हॉस्टल में दिन निकालना पड़ता है। साथ ही माता–पिता के प्रेम से वंचित रहना पड़ता है। क्योंकि राजनीति में आयी महिलाएँ वास्तविकता को छोड़कर अपनी स्वार्थ सिद्धि हेतु दिखावटी जिंदगी जीते हुए जीवन के साथ खिलवाड़ करने लगती हैं। यही बात मालती पर भी लागू होती है। मालती ने अपनी बेटी के लिए कभी संवेदना व्यक्त नहीं की किन्तु जब कभी किसी अनाथालय के उद्घाटन हेतु जाती है तो वहॉ के बच्चों को सीने से लगाकर चूमती है, प्यार करती है, और न जाने कितने मुखोटे लगाकर जीती है। वह पब्लिक के बीच भाषण में अपने सुखी वैवाहिक जीवन का जयघोष करती है। महिलाओं की मीटिंग में वह कहती है– ''

कौन कहता है कि मेरा परिवार और मेरा पति सुखी नहों है, और मै समाज के कामों के लिए भी पूरा वक्त निकालती हूँ।''10 मालती सत्ता आकांक्षी है जो अपनी व्यक्तिगत सत्ता को स्थापित करने हेतु अपनी सारी शक्ति लगा देती है। मालती की तरह अन्य महिलाएँ भी अपनी बुद्धि, विवेक का इस्तेमाल समाज निर्माण की बजाएँ लोगों को ठगाने में लगाती है। यही कारण है कि आज महिलाओं की स्थिति सुधर नहीं पा रही है।

मालती का राजनीति के क्षेत्र में बहुत ही सम्मान होता है। इस बार वह लोकसभा का चुनाव भोपाल क्षेत्र से लड़ती है। इस चुनाव में वह प्रत्येक प्रकार के दांव–पेंच और तिकड़मबाजी खेलती है। साधारण राजनीतिक नेताओं के समान वह भी अवसरवादिता है। उसमें सफल नेता के सभी गुण विद्यमान है वह आवश्यकतानुसार सभी व्यवस्था करना भी जानती है उसमें हमेशा प्रगतिवादी चिन्तन निहित है। वह राजनीति की सभी चालें सोच समझकर चलती है। चुनाव के दौरान संयोगवश मालती के रहने और कार्यालय हेतु उसी होटल को चुना जाता है जहॉ जग्गीबाबू मैनेजर की नौकरी कर रहे थे। मालती के स्वागत में उन्हें एक नौकर की भॉति प्रस्तुत होना पड़ता है। वे एक दूसरे को देखकर भी अनदेखा कर देते हैं। होटल मालिक ही मालती को जग्गीबाबू का परिचय करवा देता है कि ये हमारे मैनेजर साहब हैं। यह पति–पत्नी की बहुत बड़ी विडम्बना है कि अपनी पत्नी के स्वागत हेतु पति को नौकर की तरह प्रस्तुत होना पड़ता है शायद इसी विडम्बना का नाम ही राजनीति है। जहॉ रिश्ते मायने नहीं रखते। गोल्डन सन में रहते हुए मालती नही चाहती कि हमारे रिश्ते के बारे में अन्य लोग जान जाये इसलिए वह जग्गी बाबू को अपने कमरे में बुलाती है तब अपरिचित भाव से जग्गीबाबू कहते है–'' मेरा और आपका कोई रिश्ता है क्या ? मैंने तो लिली तक को कभी इस रिश्ते के बारे में नही बताया... क्या आप समझती है कि जो बाप अपनी बच्ची से एक टूटे हुए रिश्ते के बारे में छुपाता रहा है, वह औरों को बताता फिरेगा?''11

दोनों के रास्ते अलग होने पर भी दोनों में प्यार की भावना निहित है। जग्गीबाबू मालती की सफलता में बाधा नही बनते और राजनीति की पट्टी मालती को अंधा बना देती है। मालती जब होटल में रुकती है तो जग्गी बाबू उसका प्रिय भोजन लहसन बनाकर भेजते हैं। भोपाल से लोकसभा चुनाव जीतने के बाद मालती घमण्ड में चूर हो जाती है वह स्वागत कार्यक्रम में ऑटोग्राफ लेने आयी अपनी बेटी लिली को भी नहीं पहचान पाती है। बारह वर्ष पहले टूटे रिश्ते को जग्गी बाबू फिर से जोड़ना चाहते है परंतु सत्ता के मद में चूर मालती के लिए परिवार, पति और बेटी की ज्यादा फिक्र नहीं है। जब जग्गी बाबू कहते हैं– ''देखों मालती, जिन्दगी में हर चीज नहीं मिलती। आदमी को चुनाव करना पड़ता है कि उसे क्या चाहिए....इस चुनाव में जो चीजें छूट जाती है, उनके लिए दुःख नहीं करना चाहिए। तुमने जो ठीक समझा...उसे चुन लिया था। मैनें जो ठीक समझा, वह चुन लिया था। अब पछताना कैसा ?''12

महत्वाकांक्षाओं एवं सफलताओं का नशा व्यक्ति की संवेदनाओं को ध्वस्त कर उसे मशीन में तब्दील कर देता है। मालती की भी यही स्थिति हुई जिसे जग्गीबाबू अच्छी तरह से समझ चुके थे वे मालती को समझाते हुए कहते हैं– ''इतने दिनों अकेले रहकर मैनें यही सोचा है। तुम्हे अपनी बेरफ्तार दौड़ती जिंदगी मे सोचने का वक्त ही कहॉ मिला है ? मशीनें नहीं सोचती, मशोनों के लिए आदमी सोचता है। और सफलता, सफलता सिर्फ एक मशीन है । अब तुम औरत नही– एक सफलता बन गई हो। अब तुम भी कुछ नही हों। सिफ सफलता रह गई हो... अब तुम्हारी मुक्ति और ज्यादा सफल होते जाने मे है।कृऔर कोई रास्ता नहीं है। यही तुम्हारा एकमात्र रास्ता है।''13 एक ही होटल में रहने के बावजूद भी दोनों में पति–पत्नी सम्बन्ध स्थापित नही हो पाते है। स्वार्थ और राजनीतिक सत्ताकांक्षा और सफलता ही मालती के जीवन का उद्देश्य बन गया है। और अगले ही दिन मालती और जग्गी बाबू अपनी बेटी के साथ स्टेशन पर खड़े थे लेकिन दोनों के रास्ते अलग–अलग थे। मालती को दिल्ली जाना था और जग्गी बाबू को अपनी बेटी को पचमढ़ी छोड़ने जाना था। दोनों की गाड़ियॉ पॉच मिनिट के अन्तराल से छूटती है और दो दिशाओं की ओर जाती है गाड़ियों की दिशाओं के साथ ही पति–पत्नी के जीवन का प्रवास भी भिन्न दिशाओं की ओर चला जाता है।

मालती–जिन्दाबाद के नारों के पीछे भागती रह जाती है और सब कुछ पाकर भी रोती है, जबकि जग्गी बाबू अपनी बटी लिली के प्यार में सब पा जाते हैं। पूँजीवादी व्यवस्था की गलत महत्वाकांक्षाओं के कारण मालती अपनी बेटी का प्यार नहीं पा सकी। मालती की सफलता में बेटी के लिए कोई जगह नहीं है।

'काली आँधी' के मुख्यतः दो आयाम है। एक राजनैतिक विसंगतियों का, दूसरा पारिवारिक विघटन का । लेखक ने स्त्री स्वतंत्रता के संदर्भ में इन दो आयामों को कलात्मक एवं भावात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है।'' समकालीन भारतीय राजनीति दावे करती है समाजवाद के, भारतीयता के, धर्म–निरपेक्षता के, मानवीय मूलयों के किन्तु आचरण में वह विषमतावादी है, अभारतीय है, साम्प्रदायिक है और मूल्यहीन है। राजनीतिज्ञ अपने दल से और सबसे अधिक अपने से प्रतिबद्ध होकर अनेक चेहरे बदलता है, पैसे बटोरता है, कुर्सी दौड़ में शामिल रहता है, यश के लिए औरों का हनन कर सकता हैं, गुण्डे पालता है, सेठ पालता है.... काली, आँधी में आया हुआ चुनाव–प्रसंग भारतीय राजनीति के चेहरे के भीतर छिपे चेहरे को खोलता हुआ चलता है।''14 मालती दल दंगे कराकर, रामायण का इस्तेमाल कर , जातिवाद का लाभ उठाकर चुनाव जीत लेता है। मालती का चरित्र पूँजीवादी समाज व्यवस्था की उपज है। जो शोषक वर्ग का एक हिस्सा है। वह अपने हित और स्वार्थ के लिए पिछड़े वर्ग का शोषण करती है उनकी कमजोरी का फायदा उठाती है। वक्त, जरुरत और जीत उसकी कामयाबी का नारा है। धर्म और जाति वाद को राजनीतिक नेता चुनाव में वोट बटोरने हेतु ब्रह्मास्त्र मानते है। रामायण पाठ में भी ''कोई मौका चूकना नहीं चाहते। प्रसाद खूब बॉटा गया और लल्लू बाबू की अक्ल की दाद देनी ही पड़ी। वे गंगाजली मे तुलसीदल डाले आचमनी लिए सबकों चरणामृत बॉट रहे थे और कहते जाते थे भगवान साक्षी है, हमारा साथ देना ! सौगंध है रामजी की ! भूलना मत!''15 मालती का राजनीतिक नेतृत्व व विकास झंझावत की तरह हुआ और उसने दिल्ली का तख्त हासिल किया यह ताज्जुब की बात है परंतु फलती –फूलती मालती अंदर ही अंदर अपने पारिवारिक विफलताओं के दलदल में धसती चली गई और पति तथा बेटी से वंचित हो गयी।

इस प्रकार 'काली आँधी' दाम्पत्य जीवन की त्रासदी एवं कृरुप होते जा रहे राजनैतिक चेहरे का मिश्रण है। यह घृणित राजनीतिक पृष्ठभूमि पर तैयार चमता भव्य महल है जिसके अंदर जग्गी बाबू अपने आत्मीय संबंधों को लेकर व्यथित है और बेटी मॉ की ममता के लिए। इस कारण उपन्यास का कथ्य सीमित युग से निकलकर सार्वकालिक बन जाता है। वस्तुतः कमलेश्वर ने ' काली आँधी' में पति–पत्नी के सम्बन्धों को लेकर पारिवारिक जीवन में आई राजनीति की ऑधी का बड़ा ही मार्मिक चित्र अंकित किया है।

संदर्भ :–

1. कमलेश्वरः एक कथायात्रा (अपनी निगाह में) कमलेश्वर पृ0 66
2. संपा0 मुधकर सिंह– कमलेश्वर, शब्दकार प्रकाशन दिल्ली, सं. 1977 पृ0 356
3. वही पृ0 220
4. कमलेश्वर–यादों के चिराग, राजपाल एण्ड सन्ज दिल्ली सं. 2011 पृ0 86
5. कमलेश्वर–काली ऑधी, समग्र उपन्यास राजपाल एण्ड सन्ज दिल्ली सं. 2011, पृ. 363
6. वही पृ0 366
7. वही पृ0 366
8. वही पृ0 367
9. वही पृ0 368
10. वही पृ0 370
11. वही पृ0 394
12. वही पृ0 438
13. वही पृ0 438
14. डॉ0 रामदाश मिश्र– ' काली ऑधी': समीक्षा (लेख) आधुनिक हिन्दी उपन्यास–01, राजकमल प्रकाशन सं. 2010 पृ0 417
15. कमलेश्वर–काली ऑधी, समग्र उपन्यास राजपाल एण्ड सन्ज दिल्ली सं0 2011 पृ0 40

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

राजी सेठ की कहानियों में चिंतन के विविध आयाम

शोधार्थी नन्दिनी साहू
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

शोध सार – महिला लेखिकाओ ने अपने भोगे हुए यथार्थ को लेखन का विषय बनाया हैं हर पीढ़ी की लोखिकाओं ने नारी के प्रति दृष्टि बदलने और उसे समाज में सम्मान जनक अधिकार दिलाने की कोशिश की है। इन लेखिकाओ ने कहानी उपन्यास में नारी की प्रत्येक समस्याओं का चित्रण किया है राजी सेठ की कहानियाँ भी इन्ही समस्याओं के उजागर करती है वे वर्ग विशेष की समस्याओं को भी जन समान्य की समस्या की तरह समान्य बना देती है

इतिहास में हिन्दी कहानी के इतिहास में बीसवी सदी का छटवॉ व सातवॉ दशक काफी महत्वपूर्ण रहा हैं। हिन्दी कहानी अपने आपको सशक्त विद्या के रूप में प्रतिष्ठापित करने के लिए प्रयासरत थी। आधुनिक युग कि यह विशेषता थी कि इस समय व्यक्ति छंद ग्रस्त होकर आत्मसंघर्ष से जूझ रहा था। स्वतंत्रता के बाद देश में चारों ओर बदलाव हो रहे थे – सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक नैतिक मूल्य, व्यक्तिगत आदि सभी स्तरों पर बदलाव के लक्षण परिलक्षित हो रहे थे। इन बदलावों के कारण ही चिंतन का स्तर भी बदल गया। डॉ. पुष्पपाल सिंह लिखते है – "कहानी में यथार्थ की ओर यह नया प्रमाण है जिसने कहानी को जीवन के गंभीर प्रश्नों, समस्याओं से संपृक्ति प्रदान की। इससे कहानी में परिवेश के प्रति एक सर्वथा नयी सजगता आ गयी। कहानी में यथार्थ परिवर्तित परिस्थिति का प्रतिफलन है।"[1] राजी सेठ 'संवेदना' को स्वर देने वाली लेखिका मानी जाती है। उनका लेखन भले ही देर से प्रारंभ हुआ, पर इस देरी ने उनके अनुभव का गहनता प्रदान करता है। राजी सेठ मानती है कि "अनुभव जन्य संवेदन तो सृजनात्मकता के प्राण है वैसा कुछ मेरे भीतर है, इसका एहसास और विश्वास दोनों सदा से मेरे अंदर थे। में इस विगलित संवेदना को शुरू से पहचानती थी, पर वैसे संवेदना को होना एक बात है, उपयुक्त रूप से चैनलाइज करना या करने का अवसर पाना अलग बात है।"[2] राजी सेठ की कहानियों में स्त्री चेतना के विभिन्न आयाम स्पष्टतः परिलक्षित होते है राजी सेठ कहानियों में चिंतन के विविध आयामों में स्त्री चेतना ही स्त्री अस्मिता है यह स्त्री विमर्श की धुरी है। जब तक समाज में स्त्री अस्मिता को समानता व सम्मानजनक सार्वभौमिक स्वीकृति नहीं मिल जाती तब तक स्त्री का संघर्ष जारी है। राजी सेठ लिखती है कि "वास्तव में इस समय स्त्री का पहला संकट अपनी अस्मिता को पाने का संकट है और जहाँ या जितना यह अहसास हाथ आया भी है वहाँ भी अस्वीकृति के दश और प्रमाणित करने की चुनौती के साथ।"[3] राजी सेठ की कहानियों में स्त्री अस्मिता की छटपटाहठ एवं पीड़ा व्यक्त किया है। स्त्री लेखन को सीमित तथा अस्वीकार करने वालों के प्रति उनका क्षोभ एवं आक्रोश उनकी स्त्री चेतना को सही अर्थों में प्रमाणित करते है। राजी सेठ लिखती है – "यह भी कितना बड़ा विरोधाभास है कि एक ओर अनुभव की प्रमाणिकता और यथार्थ के ईमानदार आकलन के नारे लगाए जाएं और दूसरी तरफ जिस तरह का यथार्थ हाथ में हो, जैसा अनुभव प्रमाणिक हो उसे सीमित कहकर अस्वीकार कर दिया जाए और जमीन से टूटी हुई अपेक्षाएं का एक खोखला और हवा में बांध दिया जाए। अभी जो लिखा जा रहा है वही प्रमाणिक है – क्या उसमें दासता की पूरी घुटन वही छटपटाहट वही मर्यादाओं को ललकारें जाने की कसमाहठ, वही आंतरिक टूटन, उसी छोटे पन में पीसते होने का दर्द, वही करवट लेते हुए अस्तित्व की अस्मिता का प्रश्न प्रतिविंबित नहीं होते, जो स्त्री के अस्तिव्त को वास्तविकता में घिरे हुए है। वास्तविकता की जैसी जमीन पैरो के नीचे है जैसा जल है जैसे बीज है उसमें से ऊपर लिखे प्रश्नों और चिंताओ के पौधे नही उगाए जा सकते यह तय है। वस्तुतः वह अपने जीवन अनुभव से सटकर चल रही है।"[4] राजी सेठ की कहानियों में यही घुटन, आंतरिक टूटन छोटेपन

में पिसते होने का दर्द, अस्तित्व के प्रश्न अभिव्यक्त होकर, स्त्री चेतना को व्यक्त करते है।

अस्तित्व की तलाश में स्त्री – 'एक यात्रान्त' कहानी में पति–पत्नी एक समान उद्देश्य को लक्ष्य बनाकर जीवन की यात्रा प्रांरभ करते है इन दोनों के बीच भौतिकता दीवार बन जाती है पति–पत्नी के अंधे पन की चाहत अस्तित्व के प्रति उपेक्षा का भाव दर्शाता है, पत्नी अतीत में लौट–लौटकर अपने साझे संकल्प का स्मरण करती है। और अपेक्षा करती है कही पति की आंखो में वह साक्षा अपनन्व झलक जाए। किन्तु निराशा ही हाथ लगती हैं। वह मन ही मन सोचती है "तुम तब ही बड़े बन सकें हो जब तुमने सामने वाले को बहुत छोटा बहुत घृणित और बहुत दयनीय करार कर लिया है। ..... तब से अब तक मैं इस तुम्हारे साथ जुड़ने की शर्तें ही समझतो रही थी और स्वीकारती रही थी.... किन्तु इस उघड़े जाते लगाव की नंगी झलकियां इस समय कितनी क्रूर लग रही है।"[5] 'किसके पक्ष में' कहानी का नायिका बेला आज की आधुनिक नारी का वह चेहरा है जो दाम्पत्य के नाम पर अपने अस्तित्व को खोना नही चाहती, पति के नाम पर किसी भी पुरूष की सत्ता को स्वीकार नहीं कर सकती। बेला में पारम्परिक एवं आधुनिक दोनों ही प्रकार के व्यक्तित्व का संगम है। वह मानती है "यदि पुरूष ताकतवर है, समर्थ है तो वह अपना आपा छोड़ देगी पूरी तरह सुरक्षा उसे भी चाहिए। उसे भी अच्छा लगता है, धूप सेकना। नही तो दाम्पत्य में अनिवार्य मान ली गई, गिलगिली दासता को वह समर्पित नहीं होगी, कभी नहीं।"[6] 'गलत होना परतंत्र' कहानी भी स्त्री के अस्तित्व की कहानी है अस्तित्व खोजती नारी मातृत्व के लिए बाध्य हो जाती है। वह अपने भीतर की कला को निकालना चाहती है पर पति अजीत तथा घर की जिम्मेदारी बाधा डालती है। यह बात अलग है कि वह जिस अस्त्वि की तलाश में संतान की उपेक्षा करती रही, न तो वह किसी मुकाम तक पहुंच पायी और न ही संतान के प्रति कर्त्तव्यों का निर्वाह कर पायी। अंततः उसका अस्तित्व उपेक्षित ही रहा। 'मेरे लिए नही' की प्रीति अपनी शर्तों पर जीने वाली सबल व सक्षम आधुनिक लड़की है। रिष्ते में बंधकर अपने अस्तित्व को दूसरों के खातिर हीन बनना उसे स्वीकार्य नहीं है। आज की स्त्री पति एवं परिवार के नाम पर या मर्यादा के नाम पर अपनी इक्छाओं एवं आवश्यकताओं की बलि नहीं देना चाहती। अपनी इक्छाओं की पूर्ति के लिए वह बाहर जाती है और पैरों पर खड़ा होना चाहती है आत्म निर्भर बनना चाहती है। वह मात्र 'घर' नाम की सुरक्षा से संतुष्ट नहीं है। 'ढलान पर' की चाऊ में पति की उपेक्षा के कारण क्षोभ व आक्रोश है वह कहती है मैं उनके वंश का जुआ उठाने वाला बैल नहीं हूँ। आज की स्त्री नरक समान विवाहिक जीवन जीने के लिए बाध्य नहीं है। 'उसी जंगल में' कहानी में पति बदचलन, आवारा है, पत्नी से मारपीट करता रहता है। पति के घर में अपनी कोई सार्थकता न समझकर पत्नि गर्भावस्था में ही पति का घर छोड़ अपने भाई भाभी के यहाँ जाकर नौकरी करती है। 'सदियों से' कहानी में मिन्नी के तनाव और अंतर द्वन्द्व का चित्रण किया गया है। नारी की यह व्यथा, पीड़ा एवं दुख आज का नहीं है तो सदियों से वह भोग रही है। इस दृष्टि से कहानी के कथ्य का सामान्यीकरण हो जाता है। क्योंकि इसमें पुरूष शासित समाज में एक पत्नी की मजबूरी और विवशता का सूक्ष्म अंकन हुआ है। यहाँ लेखिका ने प्रतिपादित किया है कि पुरूष प्रधान संस्कृति के कारण ही स्त्री को विवश रहना पड़ता है। 'अभी तो' कहानी की वृंदा निसंतानता के अभिशाप को झेलती, कुढ़ती और घुटती रह जाती है। इस व्यथा में भी वह अपने अस्तित्व के प्रति जागरूकता की है। अपने अस्तित्व व अधिकारों के प्रति सजग स्त्री, पुरूष को कभी भी पंसद नहीं आती।

परम्पारिक स्त्री – राजी सेठ आधुनिकता की दौड़ में शामिल होकर स्त्री को पुरूष का विरोधी व प्रतिरक्षा प्रमाणित करने के मोह में नही पड़ती। प्रभाकर श्रोत्रिय कहते है – "पुरूष स्पर्धी आधुनिक स्त्री की तरह राजी अपने लेखन में न तो स्त्री होने से इंकार करती है और न उसे नष्ट करती है, बल्कि अपने नैसर्गिक रूप में उसे आने देती है। उसकी शक्ति और संभावना उसके और अनुभव, उसकी नियति और उत्कटता का वह सृनात्मक उपयोग करती है।"[7] राजी सेठ की कहानियों में स्त्री परम्परिक एवं प्रकृतिस्थ रूप में ही अधिक नजर आती है। ये नारी पात्र कही भी अपने अस्तित्व के प्रति हठी नही दिखाई देती। सत्य है कि स्त्रियों पुरूष द्वारा शोषित होती रही

है, उसी प्रकार यह भी सत्य है कि पुरूष द्वारा संरक्षित भी होतो रही है। सम्मान व गौरव भी प्राप्त करती रही है। आज भी स्त्री, पुरूष की छत्रछाया में सरंक्षण तलाशती है चाहे पिता के रूप में हो या भाई के रूप में, पति या पुत्र के रूप में हो सुरक्षा के लिए उसे मजबूत अवलंब नजर आता है। 'समांतर चलते हुए' कहानी की स्त्री पात्र, पुरूष के साहचर्य में ही अपने आपको सुरक्षित महसूस करती है। स्त्री के लिए पति, सुरक्षा प्रदान करने वाला संरक्षक माना जाता है यही करण है कि 'उन दोनों के बीच' कहानी में नायिका की माँ जो विधवा तथा कैंसर से पीड़ित है। बेटी को पति के संरक्षण में सौप देना चाहती है। 'अंध मोड़ से आगे' कहानी में काम संबंधों का तुलनात्मक अनुभव उभरता हैं जहॉ नायिका पति सुरक्षित तथा बाद में अपने बॉस के साथ शादी कर लेती है वह दैहिक संबंधों की तुलना करती है वह पुनः सुरजीत को पाना चाहती है उसे भी संरक्षण की चिंता महसूस होती है वह बॉस के द्वारा स्वयं को ठगा महसूस करती है। 'अनावृत कौन' कहानी की नायिका परम्परिक सोच वाली स्त्री है वह अपने परिवार के सुख–दुख में हमेशा साथ देती है उसे आधुनिकता कहे जाने वाली सोसायटी पसंद नहीं। 'अपने दायरे' की नायिका गौतम के रूप में अपना शरीर नही सौप पाती। 'तीसरी हथेली' की नायिका भी अपने प्रेमी की विवशता को समझते हुए स्वतः अलग हो जाती है। आधुनिक स्त्री की तरह अधिकारों की तथा प्रेम की दुहाई नही देती। 'अपने विरूद्ध' की नायिका अपने लेखक रूप को मरने देती है पर पति से बगावत नही करती। 'सदियो से' की मिन्नी के भीतर एक पारम्परिक संस्कारशील स्त्री बसती है इसलिए पति नरेश के प्रति अपनी जवाब देही एवं नैतिक जिम्मेदारी को महसूस करती है। 'विकल्प' की नील भी पारम्परिक स्त्री है पति अश्विन का व्यवहार उसके बिल्कुल पसंद नही है। दिल्ली दर्शन के समय पति अपने ही देश की कमियां ढूढंता ह। नीलू आहत होती है पर कहने में असमर्थ होती है। 'स्त्री' की कमली ठेठ गॉव की मानसिकता वाली स्त्री है वह समझती है कि पति सिर्फ देह को समझता है मन को नही। वह स्त्री होने की नियति को मानकर पति की इच्छा की पूर्ति करती हरती है। 'अभी तो' की वृंदा भी पति के इच्छा के समक्ष नतमस्तक है राजी सेठ की कहानियों में स्त्री की ऐसी छवि मिलती है। जो घर परिवार से जुड़ी है। अस्तित्व के प्रति सचेत अवष्य है किन्तु दुराग्राही नही है। मर्यादा का उल्लखंन नहीं करती।

विद्रोही स्त्री – मनुष्य जब घुटन महसूस करता है तो वह विरोध के रूप में परिवर्तन क लिए आमादा हो जाता है। डॉ. नरेद्र मोहन के अनुसार – "मनुष्य जब दासता की मनोवृत्ति से उबरने के लिए पाखंड को उजाड़ने के लिए अन्यायपूर्ण और आततायी स्थिति के विरूद्ध लड़ने के लिए प्रयत्नशील होता है और समानता की मनोभूमि पर अपने अधिकारों के प्रति सजग रहकर संघर्षरत् होता है, तभी विद्रोह की नीव पड़ी।"[8] राजी सेठ की कहानियों में विद्रोह नही बल्कि विद्रोह का स्वर अवश्य महसूस होता है यह विद्रोह पुरूष के विरूद्ध मोर्चा खोलने वाला नही है। अपने विरूद्ध की रूचि अपने रचनाओ के प्रति श्याम की उपेक्षा से व्यथित है परेशान होकर रूचि अपनी रचनाओ को आग के हवाले कर देती है। 'अंधे मोड़ से आगे' की नायिका विद्रोही भी है। पति की उपेक्षा तथा बॉस का निष्ठारहित कामप्रेरित प्रेम उसे विद्रोह की अवस्था में पहुँचा देता है। 'किसके पक्ष में' की नायिका भी विद्रोही की स्थिति में आ जाती है। 'ढलान पर' कहानी की नायिका चारू प्रेम विवाह करती है। पति की व्यस्वता के कारण खुद को उपेक्षित महसूस करती है तथा ऐसी स्थिति में बच्चे को जन्म नहीं देना चाहती है वह विद्रोह जता देती है चारू अपनी खुशियों और उमंगो को दम तोड़ता नहीं देखना चाहती। 'दूसरे देशकाल' में स्त्री के दोनों रूप राजी सेठ ने चित्रित किए है। 'अकारण तो नहीं' की दीपाली पति की नपुंसकता और सास के व्यंग्य बाणो से व्यथित है दीपाली खुलकर प्रतिवाद तो नही करती लेकिन अपना विरोध पति सुधाकर को जता देती है। इस प्रकार राजी सेठ की कुछ कहानियो में नारी अपनी परम्परागत छवि से अलग नजर आती है।

संतुलन साधती स्त्री – राजी सेठ संतुलन एवं समायोजन में विश्वास रखने वाली लेखिका है उनका यही गुण उनके कहानियो के नारी पात्रो में पाया जाता है परम्परागत एवं आधुनिक विद्रोही नारियों के अतिरिक्त स्त्रियों का ऐसा भी वर्ग है

जो इन विचारधाराओं के बीच संतुलन बनाए रखने के लिए प्रेरित करता है। 'किस्सा बृजेश्वरी जी का' की बृजरानी पति की नौकरी छुट जाने पर परिवार में संतुलन बनाए हुए। 'अभी तो' कहानी की वृंदा बच्चे कीर खातिर विमल से भाषा के नाम पर अधिक जद्दोजहद न करते हुए अपने ही आदर्शो एवं उसूलों से समझौता कर लेती है। 'सहकर्मी' की डॉली बिनव्याही मातृत्व को निभा रही है। अपनी यथा स्थिति स्वीकार करते हुए हालात से समझौता कर लेती है 'दलदल' कहानी की आरती का पति अमर आर्मी में हादसे का शिकार होकर पैर गवॉ बैठता ह। पति अमर को संभालने के साथ–साथ सास–ननद की जिम्मेदारी वह नौकरी करके स्वयं करती है इस प्रकार वह समझौता करती है। इस प्रकार परिवार की जिम्मेदारी वहन करती हुई सभी पात्र अपनी भावनाओं एवं आवश्यकताओं के बीच सामाजिकता का निर्वाह करती है। द्वन्दग्रस्त मनः स्थिति से जूझती स्त्रियों का भी कहानी में चित्रित किया गया है जो आधुनिक नारी को चित्रण, दाम्पत्य सुख, वृद्ध की व्यथा, अपंगता का अभिशाप, विभाजन का दंश, संत्रास, तनाव आदि चिंतन के विविध आयामों चित्रण किया गया हैं। "राजी सेठ की कहानियो में उपेक्षित पिछड़ी पीढ़ी का भी न्याय देने का प्रयास दृष्टिगत होता है। उपेक्षित वृद्ध आज हमारे लिए चिंता एवं चिंतन का विषय बनते जा रहे हैं। राजी सेठ ने उनकी पीड़ा, व्यथा और अकेलेपन को अभिव्यक्ति प्रदान करते हुए उनकी मर्माहत् संवेदनाओं की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। समाज का एक और उपेक्षित वर्ग, जो हमारी दया का पात्र तो बनता है किंतु समवेदना तथा सहानुभूति का नही, वह है किसी न किसी कारणवश अपाहिज हो चुके लोंगो का वर्ग"[9] राजी सेठ ने इस व्यथा की अनुभूति कराया है। रामेश दवे लिखते है – "जब अनुभव संवेदन, रागात्मक सौन्दर्यतत्व आर विचार एक साथ गुंफित होते है तो जो कहानी जन्म लेती है, न केवल अकेला ठोस अनुभव होती है, न भावुकता से अद्भुत संवेदन, न रोमांच जगाती, रागात्मकता और न किसी धारा में बहता विचार। वह एक संर्जक का अपनों ही कल्प होता है और अपना ही विकल्प। यदि ऐसी कहानी में पाठक की अनुभूतियां और उसका आस्वाद तत्व कही न कही कथाकार में विलीन होता है। तो लगता है कहानी ने एक कथाकार की काया से पृथक होकर पर काया में प्रवेश कर लिया है।"[10]

संदर्भ :–

1. समकालीन साहित्य चिंतन – डॉ. रामदरश मिश्र/डॉ. महीप सिंह, पृ.136
2. राजी सेठ : संवेदना का कथा दर्शन – रमेश दवे, पृ. 184
3. अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य सं. राजेन्द्र यादव/अर्चना वर्मा, पृ.286
4. यह कहानी नही – राजी सेठ, पृ.35
5. अंधे मोड़ से आगे – राजी सेठ, पृ.58
6. पूर्ववत, पृ.88
7. राजी सेठ : संवेदना का कथा दर्शन – रमेश दवे पृ. 112
8. समकालीन साहित्य चिंतन – डॉ. रामदरश मिश्र/डॉ. महीप सिंह, पृ.56
9. राजी सेठ का कथा साहित्य : चिंतन एवं शिल्प – डॉ.सरोज शुक्ला
10. राजी सेठ, संवेदना का कथा दर्शन, रमेश दवे पृ.2

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

यशपाल का क्रांतिकारी जीवन

शोधार्थी तनुजा बन्सोड़
हिन्दी एवं भाषा विज्ञान विभाग रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

यशपाल जी हिन्दी के ऐसे कथाकार है जो अपने रचनाकर्म से पूर्व काफी समय तक क्रांतिकारी आन्दोलन से जुड़े रहे; उस क्रांतिकारी आन्दोलन से जिसका उद्देश्य साम्राज्यवादी पूंजीवादी व्यवस्था का उन्मूलन और समाजवादी सिद्धांतों के अनुसार एक बेहतर समाज की रचना करना रहा है। स्वभावतः उनका कथा लेखन भी एक हद तक इसी उद्देष्य की पूर्ति के लिए समर्पित रहा। उनके साहित्यकार बनने का श्रेय पूर्णतः उनके क्रांतिकारी जवीन को ही जाता है। यही कारण है कि उनकी लेखनी में वास्तविकता, विविधता, सजीवता देखने को मिलती है।

यशपाल ने बाल्यावस्था में अपनी आँखों से कुछ ऐसी घटनाएँ देखी जो उन्हें भीतर तक छू गई। इन घटनाओं को देखकर उनका हृदय अंग्रेजों के प्रति तीव्र घृणा से भर उठा। वे अंग्रेज और भारतीय के बीच जो दूरी देखते उससे तिलमिला उठते। अंग्रेजों का आतंक ऐसा की बड़े–बूढ़े, बच्चे–स्त्रियाँ सब सुनते ही थर–थर कापते थे। उनका कथन है – "मैंने अंग्रेजों को सड़क पर सर्वसाधारण जनता से सलामी लेते देखा है, इससे अपना अपमान अनुभव किया है और उसके प्रति विरोध अनुभव किया है।"

लगभग चार या पाँच वर्श की आयु में यशपाल अपनी माँ के साथ अपने संबंधी के यहाँ ठहरे थे। उस समय के अपने कटु अनुभव के बारे में वे कहते है कि – "सबसे पुरानी स्मृति लगभग चार या पाँच वर्ष की आयु की है। मेरे कुछ संबंधी उत्तरप्रदेश (तब युक्त प्रान्त) के गंज डडुआरा कस्बे में कपास ओटने के एक कारखाने के मैनेजर थे। न जाने किस प्रसंग में मैं अपनी माँ के साथ इनके यहाँ आकर ठहरा हुआ था। कारखाना स्टेशन के समीप ही था। उस जमाने में रेल्वे में अंग्रेंजों या यूरेशियनों में काम करने वाले अंग्रेंजों के दो–चार बंगले थे। आस–पास इन लोगों का खूब आतंक था। इनमें से एक बंगले में मुर्गियाँ पाली हुई थी। एक संध्या मैं सड़क पर से गुजरते हुए इन मुर्गियों से छेड़खानी कर रहा था। बंगले में रहने वाली मेम ने मेरी इस हरकत पर मुझे फटकार दिया। शायद 'गधा' या 'उल्लू' ऐसी ही कोई गाली भी दी। मैंने मेम को गाली से ही प्रत्युत्तर दिया। उसने मारने की धमकी दी तो मैंने भी धमकी से जवाब दिया और भागकर कारखाने में आ छिपा।

मेरी इस हरकत को शिकायत जाने किन शब्दों में हमारे संबंधी मैनेजर साहब के यहाँ पहुँची। यह खूब याद है कि इन्होंने क्रोध और आंशका से नेत्र लाल करके वह शिकायत मेरी माँ से की। घर में ऐसा वातावरण छा गया कि मैंने कोई ऐसी हरकत कर दी है जिससे घर या कारखाने के लोगो पर भयंकर संकट पड़ सकता है। मेरी माँ ने एक छड़ी लेकर मुझे खूब पीटा। उस मार से मैं जमीन पर लोट–पोट गया। इस घटना के परिणाम से मेरे मन में अंग्रेजों के प्रति कैसी भावना उत्पन्न हुई होगी, यह अनुमान कठिन नहीं।"[2]

इस स्थिति की प्रतिक्रिया में यशपाल के हृदय मे अंग्रेजों के प्रति गहरी घृणा प्रवेश कर गई। वह वस्तु स्थिति समझ चुके थे कि अंग्रेज महिला को अपनी जाति के शासन की शक्ति का अहंकार था और उस अहंकार में ही उसने उन्हें भारतीय समझ कर गाली देने का साहस किया था। यशपाल की दृष्टि में यह उनका व्यक्तिगत अपमान न होकर भारतीयता का अपमान था जो उनकी सहन करने की क्षमता से परे था।

ऐसे ही लगभग छः वर्ष की अवस्था में यशपाल का अपनी माँ के साथ नैनीताल जाना हुआ। वहाँ वे अपने एक संबंधी के यहाँ ठहरे हुए थे। वहाँ की एक घटना के बारे में वे कहते है कि – "काशीपुर में कस्बे से कुछ ही दूर सुहावने जंगल में एक पक्का तालाब 'द्रोण–सागर' है। सागर के किनारे एक मंदिर भी बना हुआ था।

एक दिन दोपहर के समय हमारे घर की स्त्रियाँ सैर के लिये इस तालाब पर गई थी। बिल्कुल एकान्त देखकर उन्हें तालाब में नहा लेने की इच्छा हुई। वे नहा ही रहो थी कि अचानक दो–तीन अंग्रेजों को आता देखकर, एक–दूसरे से लिपटकर, भयभीत होकर रोने चिल्लाने लगी और फिर उसी अवस्था में अपने कपड़े उठाकर भाग निकली।"[3] ऐसे यशपाल जी ने अनेक घटनाओं में देखा कि ब्रिटिश सरकार और भारतीय जनता का परस्पर संबंध बाघ और बकरी जैसा था। बचपन में ही उन्होंने भूख से तड़पती जनता के निराशा और कायरता भरे स्वरों को सुना था। मुख्यतः निम्न मध्य वर्ग तो जैसे दो पाटों के बीच घुन की तरह पीस रहा था और उसकी पुकार को सुनने वाला कोई न था।

जब यशपाल हाईस्कूल में अध्ययनरत थे तभी स्वतंत्रता की आवाज चारों ओर गूंजने लगी थी। उसी समय गाँधीजी ने असहयोग आन्दोलन शुरू कर दिया था। उनके आव्हान पर सरकारी अस्पतालों, सरकारी स्कूलों, सरकारी संस्थाओं में कार्यरत भारतीयों ने कार्य करना बंद कर दिया था। जनता ने सरकार के विरोध में जगह–जगह पर निजी स्कूल खोल किए, पंचायतें स्थापित कर दी और निजी अस्पतालों में बीमारों की व्यवस्था कर दी गई। लाहौर में लाला लाजपतराय और भाई परमानंद के प्रबंधत्व में नेशनल कॉलेज की स्थापना की गई जिसका एक मात्र उद्देश्य देश को आजादी के युद्ध में भाग लेने योग्य युवकों को उनके अनुकूल वातावरण तैयार करना था। इसी कॉलेज से यशपाल के क्रांतिकारी जीवन का प्रारंभ हुआ। यहाँ किताबी शिक्षा तो नाममात्र की दी जाती थी किन्तु देश को विदेशी दासता से मुक्त करने की शिक्षा अधिक दी जाती थी। यहीं पर भगतसिंह, सुखदेव, भवगतीचरण बोहरा जैसे शहीदों ने भी शिक्षा ग्रहण की है। यद्यपि यशपाल सक्रिय रूप से क्रांति में हिस्सा लेना चाहते थे किन्तु पारिवारिक आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण उन्होंने पहले अध्ययन कार्य पूर्ण किया।

एक दिन यशपाल, भगतसिंह के साथ रावी नदी पर नौका विहार करने गए और उसी दिन दोनों साथियों ने राष्ट्र के हित के लिए जीवन अर्पित करने की प्रतिज्ञा कर ली और जीवन पर्यन्त इस प्रतिज्ञा को निभाया भी।

अध्ययन पूर्ण होने के पश्चात् सभी साथी "नौजवान भारत सभा" और "सशस्त्र क्रांति" के गुप्त संगठन के सक्रिय सदस्य बन गए और लगातार दो वर्शों तक बम और पिस्तौल चलाना सीखते रहे।

साइमन कमीशन के विरोध में हुए प्रदर्शन में लाला लाजपतराय ने भी भाग लिया था। प्रदर्शन में डी.एस.पी. साण्डर्स की लाठी के वार से लालाजी की मृत्यु हो गई। इस मृत्यु का बदला यशपाल और अन्य साथियों ने साण्डर्स को गोली मारकर लिया। ये सभी लोग इसके बाद फरार हो गए। फरारी में बम बनाने और संगठन का कार्य करने में लगे रहे। भगवती भाई और यशपाल ने वाइसराय लार्ड इरविन की स्पेशन ट्रेन के नीचे बम विस्फोट करने के लिए और लाहौर की बोस्टर्न जेल से सरदार भगतसिंह आदि को छुड़ाने के लिए बम बनाने का कार्य किया। और बम तैयार होने पर वाइसराय की ट्रेन के नीचे बम विस्फोट किया किन्तु इस कार्य में वे सफल नहीं हो सके क्योंकि योजना के अनुसार पूरी ट्रेन को तहस–नहस हो जाना चाहिए था परन्तु गाड़ी के दो–तीन डिब्बे और कुछ आदमियों को ही चोट पहुँची। इन सबसे क्रांतिकारियों को जनता की ओर से बहुत प्रशंसा मिली किन्तु गाँधीजी और अन्य कार्यकर्त्ताओं ने इस घटना की निंदा की और इस कार्य को जघन्य अपराध बताया।

कुछ समय पश्चात् दिल्ली में पुनः एक बम फैक्ट्री का निर्माण किया गया। यषपाल, प्रकाशवती, विमल आदि मिलकर बम बनाने में लगे रहते। पिक्रीक एसिड से हाथ इतने झुलस जाते थे कि वे खिचड़ी बनाने लायक भी न रह पाते थे इसलिए वे लोग होटल में खाना खा लेते थे। इन सब बातों से यशपाल के साथी उनसे नाराज रहने लगे। उनके अनुसार यशपाल में कायरता और विलासिता आ गई थी और वे खतरे से बचना चाहते थे। इसलिए साथियों ने उन्हें मार देने का निश्चय किया। इसके पश्चात् यशपाल ने फिर से एक छोटा सा संगठन बनाकर दल के सामने

अपने आरोपों का खण्डन करके पुनः अपना स्थान प्राप्त किया।

अब तक कुछ कार्यकर्ता गिरफ्तार हो गए थे और कुछ मतभेदों के कारण तितर–बितर हो गए। इधर पुलिस आजाद और यशपाल को गिरफ्तार करने के लिए सरगर्मी से तलाश कर रही थी। दल ने यशपाल को रूस भेजने का निर्णय लिया लेकिन अचानक चन्द्रशेखर आजाद के शहोद हो जाने के कारण यह निर्णय स्थगित करना पड़ा। 23 मार्च 1931 को लाहौर जेल में भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरू को फाँसी पर लटका दिया गया। यशपाल की मनः स्थिति और भी खराब हो गई। अंततः कानपुर में यशपाल को सर्वसम्मति से 'कमाण्डर इन चीफ' चुना गया। पार्टी के कार्य को विस्तृत बनाने के लिए यशपाल इलाहाबाद पहुँचे। जिस घर में वे इलाहाबाद में ठहरे थे दूसरे दिन सुबह पाँच बजे पुलिस ने उस घर को घेर लिया। कुछ देर तक दोनों ओर से गोलाबारी हुई लेकिन गोलियाँ खत्म हो जाने पर यशपाल ने पुलिस के सामने आत्मसमर्पण कर दिया और पुलिस ने यशपाल को हवालात में बंद कर दिया। इसके पष्चात् ब्रिटिश सरकार ने उन पर मुकदमा चलाया। मुकदमा चलाने के पूर्व सरकार ने उन्हें माफी मांगने के लिए तरह–तरह के प्रलोभन देने का प्रयास किया किन्तु यशपाल अपने विचारों से थोड़े भी ना बदले और उन्होंने जेल में रहना स्वीकार किया। जेल में पढ़ने–लिखने, पत्र–व्यवहार आदि की थोड़ी बहुत सुविधाएँ दी गई थी इसलिए जेल में वे साहित्य सर्जना करने लगे।

सन् 1937 में कांग्रेसी मंत्रीमंडल ने सरकार की बागडोर अपने हाथों में ले ली थी। कांग्रेस ने चुनाव में जनता के सम्मुख जो अपना घोषणा पत्र जारी किया था उसमें समस्त राजनैतिक कैदियों की रिहाई की बात भी की गई थी किन्तु यशपाल की रिहाई में गवर्नर अडंगे डाल रहे थे। अंततः अनेक कठिनाईयों के पश्चात् "2 मार्च सन् 1938 को यशपाल की जेल से रिहाई कर दी गई।"[4] जेल से छुटने के बाद अस्वस्थता के कारण वे भुवाली सैनीटोरियम में रहे। स्वास्थ्य लाभ लेने के पश्चात् वे लखनऊ चले गए और स्थाई रूप से वहीं बस गए।

सन्दर्भ ग्रंथ :–

1. सिंहावलोकन, संस्करण 2007 भाग–1 पृ.26
2. वहीं पृ.27
3. वहीं पृ.27
4. इन्टरनेट

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

रामस्वरूप चतुर्वेदी : सहित्यिक सरोकार

इन्दू कुमारी विश्वकर्मा
शोध छात्र, हिन्दी विभाग रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर

डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी समकालीन आलोचकों में से एक हैं जिन्होंने समकालीन साहित्य की आलोचनायें लिखी चतुर्वेदी जी के साहित्यिक सरोकार विशेषतयः आलोचना जगत से है। इसके साथ–साथ 'हिंदी अनुशीलन', 'नई कविता' पत्रिका का संपादन भी किया है। रामस्वरूप चतुर्वेदी द्वारा प्रस्तुत 'हिंदी साहित्य एवं 'संवेदना का विकास' तथा भाषा संवेदना और सर्जन सुविख्यात आलोचना कृति है।

सैद्धांतिक और व्यावहारिक, भाषा शास्त्र तथा विचारों के साहित्य में विशेष रुचि रखते हुए 'आधुनिक काव्य भाषा', 'काव्य भाषा पर तीन निबंध', 'मध्य कालीन काव्य भाषा' इत्यादि विषयों पर अपनी लेखनी चलायी है। भाषा और संवेदना की अद्वैतता पर विचार करते हुए उन्होंने लिखा है कि–''भाषा के सामान्य प्रयोग में बात और जिस भाषा में वह बात कही जा रही है उनके बीच अंतर हो सकता है पर कविता की भाषा में यही अधिकतम सर्जनात्मक भाषा में यह अंतर नहीं रह जाता। बात और भाषा में अभेद रहता है। प्राचनी भारतीय साहित्य शास्त्रियों ने अविधा और व्यंजना का जो रूप माना है, उसमें स्थिति इसके कुछ विपरीत है। वहाँ बात और भाषा में व्यंजना शब्द शक्ति के अंतर्गत सीधा संबंध नहीं रह जाता। वस्तुतः ऐसा मानना व्यंजना और सर्जनात्मकता के चमत्कारी पक्ष पर अधिक बल देना है। परंतु जब हम 'बात' और 'भाषा' के 'अभेद' और 'अद्वैत' की बात कहते हैं तब हम तनाव पर उतना ही बल देते हैं जितना कि अभेद पर। अनुभव और अर्थ का यह अद्वैत समझना कविता और सर्जनात्कता की प्रक्रिया को संभवतः अधिक गहरे और प्रकृत रूप में समझना ह। यही भाषा और संवेदना का अद्वैत है, जहाँ दोनों एक नहीं पर अलग–अलग होकर भी एक हो जाते हैं।''[1]

भाषा और अनुभूति के अद्वैत को केंद्र में रखकर समीक्षा के क्षेत्र में सक्रिय डॉ. चतुर्वेदी यह मानते हैं कि भाषा और संवेदना की स्थिति संश्लेष्णात्मक है। भाषा और संवेदना के विकास स्तरों को भाषा के विकास स्तरों के साथ पहचाना जा सकता है। उनकी मान्यताा है कि चित्तवृत्तियों का संश्लेष ही संवेदन है। इनकी आलोचना 'भाषा', 'संवेदना' और 'सर्जन' तीनों को संश्लेषणात्मक मानती हैं सर्जनात्मक भाषा के संबंध में चतुर्वेदी जी का मानना है कि भाषा में सर्जनात्मक क्षमता जितनी अधिक होगी कलाकृति उतनी ही अधिक शुद्ध और प्रामाणिक होगी–''भाषा जितनी सर्जनात्मक होगी कलाकृति उतनी ही शुद्ध और प्रमाणिक होगी और यदि कला सचमुच कला है तो उसके सामाजिक असामाजिक होने का प्रश्न नहीं उठता।''[2]

रामस्वरूप चतुर्वेदी मुख्यतः काव्य भाषा की सर्जनात्मकता को केंद्र में रखकर समीक्षा कार्य में प्रवृत्त हुए हैं, 'हिंदी नवलेखन', 'भाषा और संवेदना', 'अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्यायें', 'हिंदी साहित्य की अधुनातम प्रवृत्तियाँ', 'कामायनी का पुनर्मूल्यांकन', 'हिंदी काव्य भाषा', हिंदी गद्य विन्यास और विकास आदि आप की महत्त्वपूर्ण समीक्षा कृतियाँ हैं। रामस्वरूप चतुर्वेदी साहित्य में संवेदना को विशेष महत्त्व देते हैं। संवेदना का बदलाव साहित्यिक युगों के बदलाव का साक्षी होता है इसलिए चतुर्वेदी जी साहित्य के विकास के

[1] कामायनी का पुनर्मुल्यांकन–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ 21
[2] सर्जन और भाषिक संरचना–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ 15

साथ–साथ संवेदना के विकास को रेखांकित करना इतिहास कार के कर्म का आवश्यक अंग मानते हैं।

चतुर्वेदी जी की स्थापना है कि सर्जन भाषिक सरंचना है। वे कहते हैं कि–''किसी विचार या अनुभव को किसी अन्य व्यक्तित्त्व में संक्रमित करना, जिससे उसका सिर्फ नया विकास संभव हो, सर्जन प्रक्रिया का आरंभिक चरण है। स्पष्ट ही यह संक्रमण किसी न किसी स्तर पर भाषा में होगी।''[3] कवि जिन अनुभूतियों को व्यक्त करना चाहता है, उसके पूर्व रूप यह किसी न किसी भाषा में ही सोचता है। अर्थात् काव्य सृजन के पूर्व उसका संवेदन उसे किसी भाषा में ही उपलब्ध होता है। वे कहते हैं–''भाषा का आधारभूत रूप वह है जो रचनाकार समाज से स्वीकार करता है और उसी के अनुकूल संवेदना निखरती है। जिसे वह फिर अपनी काव्य भाषा में व्यक्त कर देता है। यह काव्य भाषा कवि के व्यक्तित्त्व के अनुकूल रूपाकार ग्रहण करती है।''[4] इसलिए काव्य भाषा की संरचना क विश्लेषण के द्वारा कवि के व्यक्तित्त्व को समझा जा सकता है। इसलिए आप काव्य भाषा में अर्थ के संधान को समीक्षा की केंद्रीय समीक्षा मानते हैं। शब्द संरचना से गुजरते हुए अर्थ प्रवाह की ओर जाना एक कठिन काम है। चतुर्वेदी जी एक समीक्षक के रूप में यही कार्य करते रहे हैं। चतुर्वेदी जी ने सबसे अधिक विचार अज्ञेय की कविताओं पर किया है। वे मानते हैं कि व्यक्तित्त्व की स्वाधीनता और सर्जनशीलता की सुरक्षा उनकी कवि दृष्टि के केन्द्र में है, कविता के माध्यम से कवि व्यक्तित्त्व की तलाश में निश्चय ही चतुर्वेदी जी को भाषिक विश्लेषण पर अधिक ध्यान देना पड़ा है। उन्होंने शब्द चयन, छंद, ध्वनि समूह, बिंब–विधान, प्रतीक योजना, लय, कथनभंगिमा, वाक्य वक्रता, पद विन्यास आदि के विश्लेषण पर विशेष बल दिया है किंतु वे अंततः यहीं तक रुक नहीं गये हैं। 'मुक्तिबोध' की समीक्षा करते हुए वे कहते हैं–''यहां 'गरबीलो गरीबी' का प्रयोग बरबस ध्यान खींचता है और भारतीय जिंदगी तथा समाज की एक बहुत बड़ी शक्ति को उजागर करता है। 'नई कविता' इस सारे के सारे जीवन और 'गरबीली गरीबी' का काव्य है। चतुर्वेदी जी के अनुसार संस्कृति और कविता का गहरा अंतस्संबंध है। कविता का दायित्त्व है कि वह संस्कृति की रक्षा करे, इसी प्रकार संस्कृति का धर्म है कि वह कविता को विचारधारा, राजनीतिक संचार साधन और यांत्रिकता के खतरों से बचाये।''[5] इधर चतुर्वेदी जी ने आचार्य रामचन्द्र शुक्ल पर भी नये संदर्भ में विचार किया है। आपकी मान्यता है कि आज के बदले हुए परिवेश में आचार्य शुक्ल का 'विरुद्धों के सामंजस्य' का सिद्धांत अधिक प्रासंगिक हो गया है। इसे भारतीय साहित्य की जातीय विशेषता मानी जानी चाहिए।

डॉ. चतुर्वेदी ने काव्य भाषा का स्वरूप नामक निबंध में साहित्यिक भाषा को परिभाषित करते हुए कहा है कि–''साहित्यिक भाषा मूलतः बोलचाल की ही वह भाषा है जो विभिन्न रचनाकारों की सृजन प्रक्रिया में समाहित होकर अपने स्वरूप को परिवर्तित कर लेती है। कवि विशेष के अनुभव की अद्वितीयता से संपृक्त होने पर उसकी अर्थक्षमता में कई प्रकार के अंतर उत्पन्न हो जाते हैं। स्वयं बोलचाल की भाषा के अपने कई रूप और स्तर रहते हैं।''[6]

''बोलचाल की भाषा वहीं साहित्य में आती है, जहाँ अपने श्रम से जीवन का सौन्दर्य गढ़ने वाले लोगों का जीवन साहित्य का विषय बनता है।...भाषा की रचनात्मक भूमिका समग्र कला की जनवादी भूमिका का अंग है। कला की जनवादो भूमिका या रचनात्मक भूमिका है मनुष्य जीवन को मनुष्य शोषण से मुक्त करने में। भाषा इस कार्य में कला की सर्वाधिक सहातया करती है।''[7]

डॉ. चतुर्वेदी काव्य भाषा के तत्वों के संबंध में विचार करते हुए प्रतीक, भाव–चित्र अथवा बिंब

[3] सर्जन और भाषिक संरचना–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ 15

[4] भाषा–संवेदना और सर्जन–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ 72

[5] प्रसाद, निराल, अज्ञेय–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ 89

[6] भाषा संवेदना और सर्जन–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ 20

[7] आलोचना के बहाने–खगेन्द्र ठाकुर, पृ 43

को परिभाषित किया है। इन्होने बिंब, भावचित्र और प्रतीक को काव्य भाषा की निर्माण प्रक्रिया का विशिष्ट तत्व माना है। ''प्रतीक और भाव–चित्र अथवा बिंब काव्य भाषा का निर्माण प्रक्रिया के विशिष्ट तत्व हैं, ये दोनों ही विभावन मूलतः पश्चिमी समीक्षा के हैं। भारतीय साहित्य चिंतन का अलंकार विधान प्रस्तुत और अप्रस्तुत को प्रायः साथ–साथ ले चलने के कारण रचना शिल्प या रचना–कौशल का अंग तो है, पर काव्य भाषा के विकास में पर्यवसित नहीं हो पाता। प्रतीक और बिंब अप्रस्तुत होते हुए भी भाषिक प्रक्रिया में प्रस्तुत के स्थानापन्न हो जाते हैं, अतः भाषा के अत्यन्त संवेदनशील स्तर पर रूपांतरित हो जाते हैं, भाषा हो जाते हैं, जबकि अलंकार अपने नाम से भी और अपनी स्थिति में अतिरिक्त सजावट के रूप में देखे जा सकते हैं। रचना प्रक्रिया का अभिन्न अंग नहीं बन पाते।''[8] चतुर्वेदी जी इसे और अधिक गहराई से उदाहरण देकर समझाने का प्रयास करते हुए बताते हैं कि प्रतीक किसी सूक्ष्म भाव की अभिव्यक्ति के लिए अपेक्षया स्थूल तत्व का चुनाव है। जैसे सूर्य ज्ञान का प्रतीक है, अँधेरा विभ्रम का प्रतीक है, कमल स्निग्धता का और मंगल का प्रतीक है। प्रतीक कालांतर में भाषा की सामान्य शब्दावली की तरह बहुप्रचलित और स्वीकृत हो जाते हैं। जैसे कि उपर्युक्त प्रतीक हो गये हैं, फिर कविता के विकास क्रम में नये प्रतीक बनते हैं और क्रमशः स्वीकृत होकर रूढ़ बन जाते हैं। प्रतीक विधान का यह रूप काव्य भाषा के विकास का एक स्तर हैं। अगला और अधिक विकसित स्तर बिंब प्रक्रिया का ह। बिंब का भाव चित्र की प्रक्रिया अधिक संश्लिष्ट होती है। वह कई तत्वों से निर्मित होने के कारण स्थिर न होकर गतिशील होता है और इसका प्रतीक की तरह पूर्व स्वीकृति अर्थ नहीं होता। इसलिए कविता में अर्थ को स्वायत्त तथा विकासशील बनाये रखने का मुख्यदायित्त्व बिंब पर होता है।...संश्लिष्ट गठन होने के कारण बिंब में उसके विभिन्न तत्वों के बीच संपर्क और टकराहट से एक द्वंद्वात्मक प्रक्रिया परिचालित होती है जो अर्थ को विकसनशील बनाती है। इस तरह बिंब प्रधानता और अनिवार्यतः एक अर्थ संश्लेष है और इसलिए रचना में काव्य भाषा या कि काव्य बनने की मुख्य प्रक्रिया है।''[9]

डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी साहित्य में संवेदना को विशेष महत्त्व देते हैं, इनका मानना हैं कि भाषा और संवेदना की स्थिति संश्लेषणात्मक है। दोनों का विकास युगपत होता है, संवेदना के विकास स्तर को संवेदना के विकास स्तर के साथ पहचाना जा सकता है। चतुर्वेदी जी की मान्यता है कि चित्रवृत्तियों का संश्लेष ही संवेदन है। रचनाकार किसी युग विशेष की संवेदना को समझकर फिर उसे अपनी रचना में प्रतिबिम्बित करता है। जब संवेदना का बदलाव होता है तो साहित्यिक युग में भी परिवर्तन हो जाता है। मानवोय संवेदना को सर्जनात्मक अभिव्यक्ति देने के कारण मानव जीवन में भाषा का अत्यधिक महत्त्व है।

आलोचक रामस्वरूप चतुर्वेदी जहाँ भाषा, संवेदना, और अनुभूति के विषय में अपने अभिमतों की व्याख्या की वहीं साथ ही साथ हिन्दी साहित्य की ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक पक्षों पर भी प्रकाश डालते हैं। वे हिन्दी साहित्य में आधुनिकता को समझने और व्याख्या करने का प्रयास करते हैं, वे हिन्दी कविता में 'आधुनिकता का प्रवेश 'अज्ञेय' द्वारा सम्पदित 'तारसप्तक' (1943 ई.) के प्रकाशन के साथ मानते हैं, आधुनिकता को परिभाषित करते हुए चतुर्वेदी जी कहते हैं कि–''आधुनिकता का प्रश्न अपने आप में बहुत उलझा हुआ है। फिर भी इतना तो कहा जा सकता है कि आधुनिकता एक जड़ स्थिति न होकर विकास की स्थिति है। उसकी प्रकृति सदैव गत्यात्मक रहती है। नवीन परिस्थितियों के संदर्भ में अपने आप का संस्कार करना ही आधुनिकता है। संस्कार करने की यह स्वचेतन प्रक्रिया आरोपित न होकर सहज स्वाभाविक होती है ...आधुनिकता संस्कृति की ग्रहण शीलता तथा विकासोन्मुखता की परिचायक दृष्टि है, इसलिए वह समूची जीवन व्यवस्था को प्रभावित करती है, उसके किसी

[8] काव्य भाषा पर तीन निबंध–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ 86

[9] काव्य भाषा पर तीन निबंध–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ 86, 87

खण्ड विशेष को नहीं।..... कुल मिलाकर आधुनिकता एक भविव्योमुखी दृष्टि है, वर्तमान के सन्दर्भ में।''[10]

''आधुनिक रचना के तत्वों–स्वचेतना, बौद्धिकता गैर रोमांटिकवृत्ति और भाषिक सर्जनात्मकता के सामाजिक–सांस्कृतिक आधार का विश्लेषण भी चतुर्वेदी जी ने किया हैं उनके अनुसार उन्नीसवीं सदी में विज्ञान के विकास ने परम्परागत धार्मिक आस्था को विघटित कर दिया था। बीसवीं सदी में दो महायुद्धों ने मानवीय संवेदना को झकझोर कर रख दिया। परम्परागत् सारे नैतिक–सांस्कृतिक मूल्य विघटित हो गये। यंत्र के सामने मनुष्य अपने को बौना समझने लगा है। मृत्यु की विभीषिका ने उसे अपेन अस्तित्त्व के प्रति अधिक चिन्तातुर कर दिया। ईश्वर के प्रति आस्था समाप्त हो गयी। अभी तक नैतिक मूल्यों का श्रोत ईश्वर था। अब मनुष्य स्वयं में नैतिक मूल्यों के श्रोत का अनुसंधान करने लगा। विज्ञान ने हमारी जीवन दृष्टि को अधिक बौद्धिक बना दिया। धर्म और ईश्वर के स्थान पर 'व्यापक मानवतावाद' की प्रतिष्ठा हुई। बौद्धिक चेतना के जाग्रत होने से 'गैररामैटिकवृत्ति' विकसित हुई। इस वृत्ति ने अप्रतीत और प्रकृति के सम्मोहन को समाप्त कर दिया। फलस्वरूप 'तटस्थ निर्वैयक्तिक' दृष्टि विकसित हुई। रचनाकार के सामने 'मानव' और प्रकृति' के साथ ही 'प्रविधि' से भी सामंजस्य स्थापित करने की समस्या उत्पन्न हुई। यन्त्रों के असुंतलित विकास ने मनुष्यों को पदार्थ बना दिया। मनुष्य की स्वतंत्रता दो स्तरों पर सीमित होने की स्थिति में आ गई।

राजनीतिक स्तर पर फासिज्म ने उसे निर्मूल करने की कोशिश की और वैज्ञानिक स्तर पर यांत्रिकता ने। चतुर्वेदी जी के अनुसार स्वातंत्र्य की चेतना अज्ञेय के व्यक्तित्त्व आर जीवन दृष्टि का केन्द्रीय तत्व है। नयी कविता और नवलेखन की पूरी परम्परा इस समस्या से जूझती रही है। राजनीतिक परिवेश को दृष्टि में रखकर विचार करने पर प्रजातंत्र की मौलिक मान्यताएँ स्वातंत्र्य चेतना के अनुकूल है। फासिज्म, टोटेलिटेरियनिज्म, अधिनायक बाद तथा एक प्रान्तीय राज्य प्रणालियाँ इसके प्रतिकूल हैं। 'अज्ञेय' साम्यवादी विचार धारा का समर्थन इसलिए नहीं कर पाते कि 'स्वातंत्र्य के विभावन' की सीधी टकराहट साम्यवादी विचार धारा से होती है। बौद्धिकता को चतुर्वेदी जी आज के परिवेश में एक अनिवार्यता मानते हैं। वे कहते हैं। आज का मानव जिस परिवेश में प्रतिष्ठित है, उसकी समस्याएँ प्रमुख रूप से बौद्धिक है। 'आवेग', 'आवेश', 'उत्साह' तथा 'दया' सम्भवतः वर्तमान सन्दर्भ में अनावश्यक से हो चले हैं। लोकतंत्र की आधार शिला तर्क–पद्धति है। भावुकता, फासिज्म, टोटेलिटेरियनिज्म, अधिनम्यकवाद अथवा एकतंत्रीय राज्य प्रणालियों के अधिक अनुकूल हैं, प्रजातंत्र की मौलिक मान्यताओं से विकसित 'नयी कविता' हैं, प्रजातंत्र की मौलिक मान्यताओं से विकसित 'नयी कविता' को इसलिए मूलतः बौद्धिक रहना है। बौद्धिकता गैर रोमैंटिक प्रवृत्ति को विकसित करती है।

भाषा और अनुभूति के अद्वैत को सर्जनात्मकता की चरम निष्पत्ति मानने वाले डॉ. चतुर्वेदी अपने विवेचन क्रम में भाषिक विश्लेषण की सीमाओं में ही उलझकर नहीं रह जाते। इनसे सरोकार साहित्य के विभिन्न पक्षों से है। वे काव्य–भाषा के जटिल विकास–क्रम–सन्दर्भ–प्रतीक–भाव– चित्र, मितकथन–अमूर्तन को निरन्तर ध्यान में रखते हुए भाषिक विश्लेषण द्वारा भाषा में निहित केन्द्रीय सन्दर्भ तक पहुँचने की पूरी कोशिश करते हैं, उन्होंने 'निराला' प्रसाद 'अज्ञेय' मुक्तिबोध की समीक्षा करते हुए उनकी काव्य–भाषा की विशेषताओं को निर्दिष्ट करने के साथ उनकी रचनाओं मे अंतर्निहित समकालीन राष्ट्रीय सन्दर्भो, व्यक्तिगत जीवन–संदर्भ, व्यापक मानवीय मूल्यों एवं सांस्कृतिक टकराहटों तथा सृजन की केन्द्रीय प्रेरक संवेदना को भी स्पष्ट किया है। यह अवश्य है कि सर्जनात्मक विकास की चरम निष्पत्ति को समीक्षा के केन्द्र में रखने के कारण डॉ. चतुर्वेदो की समीक्षा–भूमि कुछ संकुचित हो गयी है। समीक्षा भूमि का यह संकोच गद्य रचनाओं के मूल्यांकन में साफ लक्षित होता है। चतुर्वेदी जी ने उपन्यास की समीक्षा में काव्य–भाषा की तरह कथा भाषा का

[10] हिन्दी नवलेखन– डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ. 13

प्रश्न उठाया हैं वे कहते हैं–''वर्णन की परंपरित स्थूल भाषा और नयी कविता की अमूर्त और विरूपीकृत भाषा को एक रचना–विधान में कैसे संघटित किया जाय, जिससे दोनो के बीच न जोड़ दिखाई दे और न दरार ही, यही आधुनिक उपन्यास की मूल समस्या है।''[11]

अपनी नवीनतम प्रकाशित पुस्तक कविता का पक्ष (1994 ई.) में डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी दो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाये हैं। एक है राजनीति और विचारधारा के सर्वग्राही चरित से कवि की रक्षा और दूसरा है सांस्कृतिक प्रदूषण जो अमेरिकी राजनीतिक सांस्कृतिक साम्राज्यवाद के फैलाव के साथ हमारी संस्कृति को बुरी तरह प्रदूषित कर रहा है– को दूर करने का दायित्त्व व कविता का है। अर्थात् माध्यम के संयुक्त मोर्चे से कविता की रक्षा भी करती है दूसरी ओर सांस्कृतिक साम्राज्यवाद के फैलाव से उत्पन्न सांस्कृतिक प्रदूषण से अपनी संस्कृति को मुक्त रखने में कविता को जो भूमिका निभानी है उसके प्रति उसे जागरुक भी करना है। निश्चय ही य दोनों प्रश्न आज के परिवेश में विशेष रूप से विचारणीय हैं। आज के परिवेश में कविता का पक्ष प्रस्तुत करके डॉ. चतुर्वेदी ने एक सजग समीक्षक के दायित्त्व का निर्वाह किया है।

इस प्रकार डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी ने साहित्य के सभी पक्षों पर विचार कर उसके सन्दर्भ में अपने मतों की अभिव्यक्ति की है। जो भाषा, संवेदना, भाव, अनुभूति, विम्ब इत्यादि के साथ–साथ साहित्य के सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं सामाजिक सभी के साथ अपने सरोकार स्थापित किये हैं, यहाँ तक की ऐतिहासिक पक्षों को ध्यान में रखकर आपने आधुनिक काल, वर्तमानकाल, नवलखन युवालेखन को भी परिभाषित किया है।

रामस्वरूप चतुर्वेदी वर्तमान समय को यांत्रिक तीव्रता को साहित्य के प्रति समस्या के रूप में व्यक्त करते हैं जिसके कारण इन्होंने साहित्य के कुछ नये दायित्त्वों की आवश्यकता महसूस की। चतुर्वेदी जी आधुनिक रचना की समस्या को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि– ''कविता यदि यथार्थ का संश्लिष्टतर होता अनुभव है तो समकालीन यांत्रिकी ने गति को इतना बढ़ा दिया है कि गति ही प्रधान है और अनुभव पिछड़ गया है। तेजी से बदलते दृश्यों की यांत्रिक कला सिनेमा या उसका विकसित रूप दूरदर्शन समकालीन जीवन के केन्द्र में आ गया है। अनुभव से सह वर्तित्व का मूल मानवीय गुण आज यंत्र की पूर्वापरता से हारता दिखता है। गति को विज्ञान के अंतर्गत समीकरण में बांधना उतना मुश्किल नहीं जितना कि उसे कविता में रचना।''[12]

डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी का कहना है कि दायित्त्व के संदर्भ में रचनाकार के समक्ष नयी एवं बुनियादी समस्याएँ उत्पन्न हो गयी हैं। अबतक जो कवि मनोविकारों से उलझता रहा है आज उसके सामने उग्रता काल की तीव्र गति को मानवीय व्यक्तित्त्व में व्यवस्थित करेन की समकालीन संस्कृति की बुनियादी चिंता बन गई है।

इस प्रकार डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी ने साहित्य के नये दायित्त्व को अपने चिंतन का विषय बनाया है। संचार साधनों के कारण पशुवत और मूक हुए आदमियों को फिर से मानव या इंसान बनाने की क्षमता वे साहित्य में पाते हैं– ''संचार साधन के मारे इन आदमियों के लिए इंसान होना मयस्सर कर सकना साहित्य के लिए नया, कठिन पर निश्चय ही उसके योग्य दायित्त्व है।''

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. साहित्य के नय दायित्व–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, 1992 ई.

2. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी,

[11] हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास– डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ. 319

[12] साहित्य के नये दायित्त्व–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ. 15, 16

लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम सं. 1986 ई.

3. हिन्दी नवलेखन–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, 1960

4. काव्य भाषा पर तीन निबंध–डॉ रामस्वरूप चतुर्वेदी, सपांदक डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र, चतुर्थ संस्करण 2008 ई.

5. प्रसाद निराला अज्ञेय–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, छठवां संस्करण 2009 ई.

6. भाषा संवेदना और सर्जन–डॉ रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, 1996 ई.

7. सर्जन और भाषिक संरचना–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, प्रतिभा प्रकाशन इलाहाबाद, 1980 ई.

8. कामायनी का पुनर्मूल्यांकन–डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, 1993 ई.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

संगीत–लेख–पत्रिका
''शास्त्रीय रागों पर आधारित फिल्मी भजन एवं निहित भक्ति भाव''

श्रीमति संगीता राय
शोध छात्र, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर

शोध सार– ईश्वर की उपासना करना ही भक्ति कहलाती हैं, संगीत और भक्ति का संबंध अटूट हैं व्यक्ति जब अपने मनोभावों को गाकर व्यक्त करता हैं तब उसे ऐसा लगता है कि वह ईश्वर के अधिक निकट है शास्त्रीय रागों पर आधारित भजन जब फिल्मों में गाये जाते हैं तब जनसाधारण को अधिक आनंद की अनुभूति होती हैं।

आराधना, सेवा, विभाग, विश्वास, उपचार, आश्रय लेना, आश्रित होना, आराध्य देवता का नाम जपना तथा उसका बारंबार स्मरण और ध्यान करना, अतः ऐसा कहा जाता है कि भक्ति किसी साधक के अपने आराध्य देव के प्रति निरंतर पूज्य भाव, स्मृति एवं प्रीति रखने का भाव ही भक्ति ही है। भक्ति में क्रिया, ज्ञान एवं भाव तीनों ही अमूर्त रूप से अतंरनिर्हित रहते हैं। अतः भक्ति सबसे स्वतंत्र होते हुये भी सकल गुणों की भंडार है।

''भक्ति स्वतंत्र सकल गुण खानि।''

भक्ति स्वयं सर्वसमर्थ अहैतुकी कृपा से दिया हुआ वह दिव्य साधन हैं, जिसे धारण कर लेने पर भक्त भी भगवन्त गुणों से सम्पन्न हो उठता हैं। कबीर ने परमात्मा को मित्र, पिता और पति आदि रूपो में देखा हैं। कबीरदास जी कहते हैं–

''हरि मोरे पिउ, में राम की बहुरिया''
और कभी कहते है ''हरि जननी मैं बालक तोरा''।

उनकी उलट बासियों में उनका भगवान के साथ जो मधुर प्रगाढ़ संबंध था उसकी बहुत सुंदर व्यंजना हुई है। सरलता, साधु स्वभाव, निश्छल संत जीवन के कारण ही कबीर आज तक भारतीय जन समुदाय मे लोगों के कंठहार बने रहे है। संत शिरोमणि कबीर का नाम उनकी सरलता और साधुता के लिए संसार में सदा अमर रहेगा। ख्याल गायन में प्रस्तुत इनकी प्रमुख रचनाएं।

राग रामकलीः झपताल (मध्यताल)

स्थाई – अब बली तब बली भुव बली राला,
जाके मदद पीर मौन दीन ख्वाजा,

अंतरा – देगा अली की ते गा अली की,
जाके द्वारन पर गाय गुनि साजा,

संचारी – राम रहिम जो ना भाव दूजा,
कहत कबीरा उनका पसारा।

आभोग – जौ दॉद माने परे जो जरब में।
ग्वाली शास्त्र कुरान निरखे सताजा।।

राग दरबारी कान्हड़ा, एकताल

स्थाई – घूँघट के पट खोल रे तोहे राम मिलेंगें।
अंतरा – घटघट रमता राम रमैया कटुक वचन मत बोल रे।

रंग महल में दीप बरत है आसन से मत डोल रे।
कहत कबीर सुनो भाई साधो अनहत बाजत ढोल रे।

भारतीय संगीत में निहित भक्ति को महत्व अनेक युगों के भक्तों एवं उनकी रचनाओं की देन है। भारतीय संगीत के विविध रूपों यथा सामगान, धुवागान, गीतिगान, जातिगान, प्रबंध गान ध्रुपद, धमार, गायन से लेकर ख्याल गायन में भक्ति प्रधान रचनाएं निरंतर प्रचलित रही हैं।

प्रबंध गान के पश्चात् ध्रुपदगान शैली प्रचार में आई, जिसमें संस्कृत–श्लोकां को गाकर हमारे ऋषि–मुनि भगवान की आराधना करते थे।

गीत का यह प्रकार मध्यकाल से लेकर आज तक प्रचलित है। इसमें स्वर, लय और सहित्य इन तीनों अंगों का समुचित संयोग अपेक्षित रहता है। ध्रुपद गायन शैली का आविष्कार ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर द्वारा हुआ है।

इसमें स्थायी, अंतरा, संचारी और आभोग – ये चार भाग होते हैं ध्रुपद की विभिन्न शैलियों को वाणी कहा जाता था। ये चार वाणियां थी गोबर हार, डागुर, खण्डार और नौहार, ध्रुपद का विषय विष्णु, शिव, राम कृष्ण आदि की भक्ति और चरित्र–चित्रण भी रहा है। तानसेन, बैजू, रामदास, स्वामी, हरिदास, गोविंद स्वामी आदि अनेक महान् ध्रुपद–गायको की रचनाएं भक्ति भावना से ओतप्रोत है। ध्रुपद गायक धमार गायन में भी प्रवीण होते थे। धमार शैली बहुत कुछ ध्रुपद के समान होती है। इसे धमार गायकी 'होरी' भी कहत है। धमार के गीत प्रायः श्रृंगारिक होते है। जिसमें राधाकृष्ण के परस्पर होली खेलने का वर्णन होता है।

फिल्मों के विकास में भारतीय शास्त्रीय संगीत का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। हिंदी फिल्मों में रागों पर आधारित भजनों के द्वारा ईश्वर भक्ति का मार्ग मिलता है। मानव जाति के अंतकरणः विशिष्ट भावनाओं के लिए ईश्वर उपासना से आनंद की प्राप्ति होती है। जब ईश्वर भक्ति में लीन भक्त भगवान के गुणगान स्वर और ताल के माध्यम से करता है तब वह ईश्वर की उपासना करने में सफल होता है।

भारतीय फिल्म संगीत सन् 1931 से बोलती अर्थात् सवाक् फिल्मों का युग आरंभ हुआ। प्रथम भारतीय सवाक् हिन्दी चित्रपट 'आलम आरा' थी जिसके संवाद, गीत आदि हिन्दुस्तानी में बोले गये थे। फिर फिल्म जगत में बहुत सी ऐसी फिल्में बनी जिसमें भगवान की आराधना, सुमरन स्तुति, गुणगान किया जाता था। सन् 1952 में फिल्म बैजू बावरा आई जिसमें भजन 'मन तडपत हरि दर्शन को आज' राग मालकौस में गाया गया है। इसका गायन मुहम्मद रफी द्वारा और इसका संगीत नौशाद द्वारा दिया गया है।

मन तडपत हरिदर्शन को
हरि ओम्..... हरिओम्.....हरिओम
मन तडपत हरि दर्शन को आज, मोरे तुम बिन बिगरे सगरे काज।
बिनती करत हूँ, रखियों लाज! मन तड़पत हरिदर्शन को आज।।
तुम्हारे द्वार का मैं हूँ जोगी, हमरी ओर नजर कब होगी।
सुनो मोरे व्याकुल मन का बाज! मन तड़पत हरि–दर्शन को आज ।।
बिन गुरू ज्ञान कहॉ से पांऊ, दीजो दान, हरि गुन गांऊ ।
सब गुनिजन पै तुम्हरा राज! मन तड़पत हरि दर्शन को आज।।

राग– मालकौंस
ताल –तीनताल

भावना का विस्तार ही भजन का लक्ष्य हैं। संगीत के माध्यम से जब भक्ति गीतों को प्रस्तुत किया जाता हैं तो संपूर्ण वातावरण में सात्विक गुण की वृद्धि होने लगती हैं और मानव की चेतना ऊर्ध्वमुखी होकर परमात्मा में विलीन होने लगते है। यही भक्तिपरक गान का लक्ष्य है।

भजन

भजन मे शास्त्रीय संगीत की तरह बंधन नहीं रहता। जिन गीतों में ईश्वर का गुणगान या उनसे प्रार्थना की जाती है, उन्हें भजन और जिन कविताओं को स्वर–ताल बद्ध करके गाते हैं, उन्हें गीत कहते हैं। राग–ताल नियमों से स्वतंत्र, आकर्षक रचनायें, भावानुकूल शब्दों द्वारा गीत रचना आदि इनकी विशेषताएं होती हैं। अधिकतर ये दादरा और कहरवा ताल में होते है। इनमें और चित्रपट गीतों में मुख्य अंतर यह है कि इनकी तुलना में चित्रपट गीतों की रचना बहुत चलती–फिरती और शब्द सस्ते ढंग के होते हैं।

हृदय की समस्त वृत्तियों को अपने जीवन काल के पुनीत चरणों में समर्पित करना ही भक्ति हैं दो हृदयों के एकीकरण को भक्ति कह सकते है। किंतु भक्ति में एकरूपता एक रसता होते हुये भी भक्त कि भगवान के प्रति श्रद्धेय तथा पूज्यनीय भावना होती है यही कारण है कि भक्ति में गंभीरता और तन्मयता होती है। भक्ति में इस तन्मयता को बनाये रखना एकमात्र साधन हैं। संगीत में एक सुनियोजित श्रृंखलाबद्ध लय होती हैं। स्वरों में एक गति होती हैं जिससे आवधित रस प्रभाव संभव हो पाता है इससे हृदय की तल्लीनता विशेष सहायता मिलती है। इन्हीं गुण

के कारण संगीत को सभी ने भक्ति का श्रेष्ठतम उपादम्य माना है। विश्व की विभिन्न जातियों के विभिन्न धर्मों में संगीत को उपासना का प्रधान अंग माना जाता है। बिना संगीत देवताओं को कल्पना ही निराधार हैं जैसे–भोले बाबा शंकर द्वारा डमरू घोष के साथ ताडंव नृत्य और पार्वती जी लास्य नृत्य तो जग प्रसिद्ध है ही देवर श्री नारद के एक तारे की झनकार अभी तक झनकृत्य हैं विद्या की अधिष्ठात्री मॉ सरस्वती की कल्पना तो उनकी वीणा के बिना अधूरी है। बंशी के जादूगर कृष्ण कन्हैया की तान कभी कोई भूल नहीं पाया जब अपने आराध्य को संगीतमय देखा तो भूला भक्त तो कैसे इस जादूभरे संगीत को छोड़कर अपने भगवान को मन मोहने के लिए किसी अन्य वस्तु का सहारा लेता, आज के यांत्रिक युग में भी जबकि व्यक्ति की व्यस्त दिनचया तक ने एक यंत्र का रूप ले लिया है। हमें भक्ति और संगीत के सुगम बद्ध एवं सुघटित रूप के दर्शन होते रहते है। आज भी व्रज के रास कृष्ण भक्ति के साथ–साथ संगीत के तीनों अंगो गायन, वादन तथा नृत्य के दर्शन होते है। पडित डी.वी. पलुस्कर द्वारा गाये गये अनेक पद जा भक्ति के साथ पूर्ण शास्त्रीय संगीत में निबद्ध है। किसका मन नही मोह लेते पंडित ओमकारनाथ ठाकुर द्वारा 'मैया मोरी मै नहीं माखन खायो' तथा मीरा का गिरधर आगे नाचूगी पद आलाप तानों द्वारा भावनाओं को गाकर साकार रूप प्रदानकर देते है इस प्रकार हमारी भारतीय संस्कृति में भक्तों और संगीत का पारंपरिक संबंध चिरकालिक सनातन और साश्वत हो गया है।

शास्त्रीय संगीत को फिल्म संगीत में इतना महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ हैं कि फिल्म संगीत अथवा शास्त्रीय संगीत की एक अलग शाखा बना सकते है। शास्त्रीय रागों का प्रयोग फिल्म गीतों में मुख्य रूप दो प्रकार से हुआ है। प्रथम गीत किसी राग विशेष पर आधारित हो या उसमें स्वर बद्ध हो किंतु शास्त्रीय गायकी कि भांति उसमें अल्प तान आदि अभिन्न अंग न हो तथा बंदिश सीधी व सरल हो किसी साधारण श्रोताओं वर्ग गीतों का संबंध रागों स करता ही नही। इस श्रेणी के गीतों में कदाचित सबसे अधिक गीत भैरवी राग में गाये गये जैसे फिल्म अमर प्रेम बड़ा नटखट है रे कृष्ण कन्हैया राग भैरवी में गाया है शास्त्रीय संगीत में रागों की कमी नही इसका फिल्मी संगीतकारों ने पूरा लाभ उठाया है। कदाचित इसी कारण स यदि एक और सरल रागों में गीत प्रस्तुत किये गये है। तो दूसरी और कठिन व कम प्रचलित और रागों में भी बड़ी ही आकर्षण तथा कर्ण प्रिय रचनायें प्रस्तुत की हुई है। फिल्मी गीतों में मधुवन में भी राधिका नाचे रे, फिल्म कोहिनूर जैसे त्रिवट और चतुरंग अंगो स गाये गये गीतो के अनेक उदाहरण प्रस्तुत है। फिल्मी शास्त्रीय गीतों अनेक भारतीय वाद्यों का विशेष उपयोग भी बड़ी ही कुशलता व सुंदरता से किया जाता है। इस प्रकार शास्त्रीय रागों पर आधारित फिल्म भजन का संबंध गहरा हैं अतः फिल्म संगीत निर्देशक को इस ओर ध्यान देना चाहिये और सभी जनता शास्त्रीय संगीत को स्थान प्राप्त करेगी।

संदर्भ :–

1. सत्यवती शर्मा, ख्याल गायन शैली विकसित आयाम, पृ.सं. 105

2. डॉ राजीव जैन, उत्तर भारतीय शास्त्रीय गायन शैलियों में निहित भक्तिभाव, संगीत पत्रिका पृ.सं. 60,

3. डॉ. लक्ष्मीनारायण गग, फिल्मी भजन अंक, संगीत कार्यालय हाथरस उ0प्र0 संस्करण 2001, पृ.सं. 05,

4. डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग, भक्ति संगीत अंक वर्ष 36, अंक 01 जनवरी 1970 पृ.सं. 37,

5. डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग, फिल्मी शास्त्रीय गीत अंक वर्ष 36 अंक जनवरी 1973 पृ.सं.11,

6. संगीत लेख इंटरनेट के माध्यम से ज्ञानभक्ति कोश द्वारा,

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

आर्थिक विकास और उद्यमिता

अभिलाष पाण्डेय
शोध छात्र अर्थशास्त्र, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर

किसी भी देश के आर्थिक विकास और उद्यमिता के मध्य घनिष्ट संबंध पाया जाता है। मानव सभ्यता इस बात का प्रमाण है कि प्राचीन काल से अब तक जो आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन हुए हैं, वह उद्यमिता विकास की देन है। पश्चिमी देशों, यू.एस.आर, और एशिया में जापान के आर्थिक विकास में उद्यमिता एक महत्वपूर्ण घटक रहा है। अब यह भारत जैसे देश में भी तेजी से महत्वपूर्ण बनता जा रहा है। अल्प विकसित देशों में गरीबी, पिछड़ापन, बैरोजगारी, प्राकृतिक संसाधनों का अल्प या अपूर्ण विदोहन, अशिक्षा, परम्परागत सामाजिक जीवन रुढ़िवादिता आदि विशेषताएं पाई जाती है। ऐसे सामाजिक परिवेश मे जहां परिववववर्तन की इच्छा का अभाव होता है, सामाजिक व आर्थिक परिवर्तन सहज नहीं होता है। जब तक देशवासियों और समाज के लोगों के दृष्टिकोण की इच्छा जागृत नहीं होती है, तब तक सामाजिक व आर्थिक विकास और परिवर्तन की संभावनाएं नहीं होती है। मेंयर एण्ड वाल्डविन के अनुसार ''विकास की प्रकिया स्वतः प्राकृतिक रुप से घटित नहीं होती है। जब आर्थिक दशाएं अनुकूल रुप में होती है, तब एक उत्प्रेरक या अभिकर्ता की आवश्यकताएं होती है। और इसके लिये उद्यमीय कियाएं आवश्यक होती है। उद्यमी, सामाजिक परिवेश का अध्ययन और विश्लषण कर यह जानने में सफल होता है कि लोगों में परिवर्तन की इच्छा है अथवा नहीं ? यदि परिवर्तन की इच्छा पाई जाती है तो उद्यमी भावी परिवर्तन की रुपरेखा और उसके कियान्वयन की योजना तैयार करता है। उद्यमी इस संपूर्ण योजना मे निहित जोखिम का अनुमान और विश्लेषण कर, व्यावसायिक इकाई के संगठन और इसकी स्थापना की रुपरेखा तैयार करता है। इससे देश में उपलब्ध प्राकृतिक मानवीय संसाधनों के विदोहन का मार्ग प्रशस्त होता हैं। इस प्रकार कुशल उद्यमी, उत्पादन के विभिन्न साधनों को संगठित और समन्वित कर, उनका मानव समाज और राष्ट के हित में विदोहन संभव बनाते है। विश्व के किसी भी क्षेत्र में व्याप्त निर्धनता समस्त संसार की समृद्धि के लिये खतरनाक हो सकती है। यही कारण है कि अब विकसित देश भी अल्पविकसित देशों के पिछड़ेपन को दूर करने के कठिन कार्य में रुचि लेकर कुछ सीमा तक इनके औद्योगीकरण में सहयोग प्रदान करने लगे है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के एक प्रकाशन के अनुसार ''अल्पविकसित राष्ट्रो से आशय उन देशों से है, जिनमें प्रति व्यक्ति वास्तविक आयु संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया एवं पश्चिमी यूरोप के देशों की प्रति व्यक्ति आय की तुलना में कम है। प्रति व्यक्ति आय की कमी और निम्न जीवन स्तर होने का प्रमुख कारण औद्योगिक पिछडेपन के परिणाम स्वरूप औद्योगिक विकास की दन निम्न होना है। प्रो. जेकब बाइनर ने लिखा है कि ''एक अल्प विकसित देश राष्ट्र है, जिसमें अधिक पूंजी अथवा अधिक श्रम–शक्ति अथवा उपलब्ध प्राकृतिक साधनों अथवा इन सभी के उपयोग के लिए उत्तम सम्भावनाएं मौजूद होती है। जिससे कि वह देश की वर्तमान जनसंख्या के जीवन स्तर को ऊंचा किया जा सके और यदि उस देश की प्रति व्यक्ति आय पहले ही पर्याप्त ऊंची है, तो सहन–सहन के विद्यमान स्तर में कमी किए बिना और अधिक जनसंख्या का निर्वाह किया जा सकें।

प्रो. वाइनर ने जीवन स्तर में वृद्धि अथवा वर्तमान जीवन स्तर को बनाए रखने के लिए पूंजी श्रम व अन्य साधनों के उत्तम उपयोग की संभावनाओं पर बल दिया हैं ये संभावनाएं कुशल उद्यमियों की पूर्ति से ही साकार हो सकती है। अनेक विद्वानों ने आर्थिक विकास के लिए तकनीकी स्तर को भी महत्वपूर्ण माना है। अल्पविकसित राष्ट्रों में निम्न तकनीकी स्तर के कारण ही विकास की सीमा इतनी कम होती है कि उससे यथार्थ में उत्पादन एवं बचत के वर्तमान स्तर को ही बनाए रखा जा सकता है। फलस्वरूप

प्रति श्रमिक औसत पारिश्रमिक उस राशि की तुलना में बहुत कम होता है। जो उसे उस देशों में प्राप्त होता है। जब उन्नत प्रौद्योगिकी अथवा संपूर्ण ज्ञात तकनीक का उपयोग उत्पादन में किया गया होता।''

किसी भी देश में उद्यमिता विकास कार्यकमों का कुशल संचालन होने से उत्पादन एवं बचत दोनों में ही वृद्धि होती है। इससे उद्योग से जुडे हुये लोगों की आय में भी वृद्धि होती है, यह वृद्धि उद्यमिता विकास के परिणामस्वरूप तकनीकी ज्ञान के अपनाएं जाने से संभव होता है। रेगनर नर्क्से, विकास के लिये पूंजी अनिवार्य रूप से उपलब्ध होनी ही चाहिए, किन्तु इससे विकास तभी संभव हो सकेगा जब पूंजी के साथ–साथ मानवीय गुणों तथा अनुकूल सामाजिक एवं राजनैतिक दशाओं की पूर्ति भी हो सके। श्री नर्क्से के शब्दों में विकास के लिये पूंजी यद्यपि एक आवश्यक शर्त है, किंतु पर्याप्त शर्त नहीं है।

मानवीय गुणों सामाजिक मनोवृत्तियों, सामाजिक दशाओं तथा ऐतिहासिक घटनाचक से आर्थिक विकास का घन्ष्टि संबंध होता है। स्पष्ट है कि नर्क्से महोदय ने पूंजी को मानवीय तत्व की अपेक्षा कम महत्वपूर्ण माना है, क्योंकि पूंजी स्तर में वृद्धि आर्थिक विकास की प्रकिया प्रारंभ होने के परिणाम स्वरुप ही हो सकती है। आर्थिक विकास की प्रकिया प्रारंभ कर देना मात्र ही प्र्याप्त नहीं होता, जब तक कि उद्यमिता विकास के लिये सुनियोजित प्रयास न किये जावें। उद्यमिता विकास के लिये सुनियोजित प्रयास कुशल उद्यमियों की पूर्ति पर ही निर्भर होता है।

मैकलॉयड ने आर्थिक विकास के लिये पूंजी की अपेक्षा साहस को अधिक महत्व प्रदान किया है। मैकलॉयड के अनुसार अर्द्ध विकसित उस देश अथवा प्रदेश को कहा जावेगा, जिसमें उत्पादन के अन्य साधनों की तुलना में साहस का अनुपात अपेक्षाकुत कम होता है, किंतु साथ ही उत्पादन कार्यों में पूंजी के और अधिक लाभदायक विनियोग की उत्तम संभावनाएं विद्यमान है। उत्पादन कार्यों में पूंजी का अधिक लाभदायक विनियोग कुशल मानवीय गुणों, अर्थात कुशल उद्यमियों पर अवलंबित होता हैं। भारतीय योजना में इसे इस प्रकार स्पष्ट किया गया है– ''एक अल्प विकसित अर्थव्यवस्था वह होगी, जिसमे न्यूनाधिक रुप से एक और अपयुक्त या अल्पप्रयुक्त मानव श्शक्ति तथा दूसरी और अशोषित अथवा अप्रयुक्त प्राकृतिक साधनों का सह आस्तित्व दिखयी देता है। कुशल उद्यमी प्राकृतिक व मानवीय संसाधनों के मध्य प्रभावी समन्वय स्थापित कर औद्योगीकरण की दिशा में उपयोगी बनाने के लिये साहस एवं उद्यम की आवश्यकता होती है। कुशल उद्यमी औद्योगिक अवसरों की खोज कर उसमें निहित जोखिम को वहन करने की इच्छा–शक्ति के साथ, एक संगठनकर्ता एवं प्रबंधकर्ता के रुप में कार्य करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. खान. एम. ए. इन्टरप्रिन्योरियल डेव्हलमेंट प्रोग्राम्स इन इण्डिया, पृ. 39
2. दि. इकॉनामिक टाइम्स, अगस्त 30, 1983
3. हैण्ड बुक ऑफ स्टैटिस्टिक्स, 1989, स्मॉल स्केल इंडस्ट्री इन इण्डिया, पृ. 41
4. लुइस, डब्लू. ए. : दि थ्योरी ऑफ इकॉनामिक ग्रोथ, पृ. 52
5. मिश्र, डी. एन. इन्टरप्रिन्योरशिप डेव्हलमेंट एण्ड प्लॉनिंग इन इण्डिया, पृ. 24

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

ENTREPRENEURSHIP AND SMALL BUSINESS

Sudhanshu Gupta
Research Scholar, RDVV, Jabalpur

INTRODUCTION : There is growing realization about potential contribution of small enterprises both in developed and developing countries. Because of their unique economic and organizational characteristics, small enterprises play important economic, social and political roles in employment creation, resource utilization and income generation and in helping to provide change in a gradual and peaceful manner. Socio-economic factors affecting small enterprises came to be noticed during industrial revolution, with notions of entrepreneurial importance gaining favor by the mid-twentieth century.[1] During the 1960s, the behavior of the individual came to be highlighted as a major factor contributing to small enterprise development as entrepreneurship and therefore supply of entrepreneur came to be recognized as critical to development.[2]

The Industrial Revolution was accomplished largely through Small Scale Industries (SSIs)-entities with modest capital, a few score workers at most, owned and managed by a single individual of family. Really large firms were slow to emerge. As late as 1900, the hundred largest British industrial firms accounted for no more than 10 percent to 15 percent of manufacturing value-added, and the same held in the rest of Western Europe and North America. The explosive growth of really large scale organisations occurred in the next half century; large firms are now the dominant mode. But their share of employment is smaller, relative to output.

Nonetheless, many small manufacturers continue to exist in these economies, showing a skewed distribution of manufacturing enterprises with the modal size being close to the smallest and a long rightward tail stretching toward the giants. Most of the small firms are service-oriented, or produce for a circumscribed or specialized niche in the market. Many produce intermediate products for large firms; the development of the sub-contracting relationship was particularly marked in the economic history of Japan.[3]

Healthy small business sector is rightly considered to be the backbone of any developed economy. Research studies conducted in USA (Birch, 1987) suggest positive link between economic development and entrepreneurship. Similar systematically conducted research studies are rarely available in developing and underdeveloped countries. But absence of such studies does not suggest that such a positive relationship does not exist in developing and underdeveloped countries. Even in the case of heretofore tightly controlled economies in Eastern Europe, people are anticipating that small business and entrepreneurship will lead the way to new economic development.[4]

Most countries in Eastern Europe have already switched over to market-based economy. Developments witch took place in USSR in 1991 also provide much scope to small enterprises in reviving the disintegrated economies. Developing economies like India, China, Pakistan, Sri Lanka, Malaysia and many other South Asian countries have always considered small business sector as an important sector of economy.

Many characteristics of small enterprises enhance their pivotal positions in accelerating economic growth in countries.

- There flexibility makes them best suited in environments where intervening variables play

a large part in day-to-day business management.

- Small enterprises have a better chance to carry out a number of innovations like combination of new products, new materials, new methods of production, new markets, new source of materials and even new forms of organisations, resulting in increased productivity The National Science Foundation, an Organisations in USA found that small companies produce fore time more innovations per research dollar than do bigger companies.[5]

- Being change-susceptible and highly reactive to socioeconomic influences on the outside, small enterprises can easily adapt to and adopt measures that will ensure not only their own viability but also the growth of the economy in which they are situated.

- Being fairly labour intensive, they provide and economic solution by creating employment and income opportunities in urban and rural areas at relatively low cost of capital investment.
- Decentralization and dispersal of industries into rural areas prevent the influx of job-seekers in cities and urbanizing centres, thus allowing for a more balanced growth of economy in the whole country by reducing the ossification of established social institutions and the concentration of economic power.

Moreover, a few large scale industries started by entrepreneurs from outside the state in an economically backward area may help as models of pioneering efforts, but ultimately the real strength of industrialization in backward areas depend upon the involvement of local entrepreneurship in such activities.

- By using indigenous raw materials and the promotion of intermediate and capital goods, small enterprises can contribute to faster economic growth in a transitional economy.
- Being set-up by individuals, they provide a productive outlet for expressing the entrepreneurial spirit of human resources.

In newly industrializing countries, small enterprises become the focus of various approaches to entrepreneurship development since they function as 'Seedbeds of entrepreneurial and managerial talent'.[7] People from all walks of life are encouraged to set-up their own small business, thus providing a wide base for industrialisation.[6]

The Small Scale Industries sector in India, over the past 50 years, has made significant contributions towards building a strong and stable national economy. It has attained successive heights by enhancing its fundamental strength and resilience, This sector in producing a wide range of more than 7,500 products, accounting for almost 40 percent of the total production of the manufacturing sector and 35 percent of the total exports. The SSI sector also acts as a nursery for promoting entrepreneurial talent and as a catalyser in industrial growth through a wide network of more than three million units in the country (SSIs account for 95 per cent of the total industrial units). At present, the SSI sector is one of the largest employers in the country providing direct employment to an estimated over 17 million persons. It has thus, emerged as a conduit for fulfilling the national objectives of providing gainful employment. The linkages between the small scale and large scale industries get strengthened through ancillarisation and subcontracting. The SSI sector has been a prime contributor to the overall growth of the industrial sector in India. The growth rate recorded by the SSI sector has normally been higher than that of the industrial sector as a whole. As one of the important segments of the economy, the SSI sector acts as a prime mover in pushing up the industrial growth and give boost to overall economic growth.[8]

REFERENCES :

1. Gaikwad, V,R., entrepreneurship: The concept and Social Context, Developing Entrepreneurship: A Handbook, Pareek, Udai and RAo, T. Venkateswara (ed.), New Delhi, Learning System, 19878.
2. Cunningham, J. Barton and Lischeron, Joe, Defining Entrepreneurship, The journal of Small Business Management, Vol. 29, No.1, January, 1991, P. 45.
3. P, Michael, The Application of Psychological Testing to Entrepreneurial Potential in Entrepreneurship and Venture Management, B Clifford M. and Mancuso, Joseph, D.B. Tar. Sons and Co. Pvt. Ltd., Bombay, 1981.
4. Harbison, F. and Myers, Charles A., Education, Manpower and Economic Growth: Strategies of Human Resources Development, New York, McGraw Hill Service in International Development.
5. Zinkin, Maurice, 'Entrepreneurs : Key to Growth," Stanford Research Institute Journal, Second Quarter, 1961.
6. Bisht, Narendra S. And Sharma, Pamila K. Entrepreneurship: Expectations and Experiences, Himalaya Publishing House, New Delhi, 1991.
7. Working Women : Problems and Unionisation, All India Trade Union Congress (AITUC) Publication, Education Series-7, New Delhi.
8. New Economic Realities: The Rise of women entrepreneurs, A Report of the Committee on Small Business, House of Representatives, Second Session (June 28, 1988), Washington, D.C., US Government Printing Press.
9. Carter, S. and Cannon T., Women as Entrepreneurs: A Study of Female Business Owners, Their Motivation, Experiences and Strategies for Success, Academic Press, London, 1992.
10. Kirve, Harsha and Kanitkar, Ajit; Entrepreneurship at the Gross Roots: Development Developing the income generating capabilities of Rural Women, The journal of Entrepreneurship, Volume 2, 1993.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Global Expertise of Chinese and Indian Market for the Reminiscent Strategy

Dr. Uroos Fatima Rizvi
UIVSSD, RDV Jabalpur

Saba Fakhruddin
Research Scholar RDVV, Jabalpur

Abstract : The ability to constantly satisfy your customers' needs better than your competitors are able to make organization the preferred supplier in the marketplace. In today's global market, different marketing strategies have built their global logistics capability to serve increasing demands of customers worldwide and try to make them satisfy. The paper presents the theoretical frame work and evidence on how the India and china using different process to concentrate its limited resources on the great opportunities to increase their sales and achieve a sustainable competitive advantages to compete the global market. In order to achieve this, you will need to create flexible strategies that can respond to change in customer perceptions and demand. The emphasis is on marketing competence in china as well as in India and how the china market dominating in South Asian Market in relation to cost, internet, revenue etc.

Introduction : Marketing is a strategy which helps companies to grow faster and more cost-effectively. To be successful in today's business environment, it is must to strategize, control and synchronize every communications opportunity. Developing a marketing strategy is a vital for any business. Without one, the efforts of organization to attract customers are likely to be haphazard and inefficient. The focus of your strategy should be to make sure that your products and services meet customer needs better than competitors and develop long-term and profitable relationships with those customers. It may also help you to identify whole new market that you can successfully target.

Central to any successful marketing strategy is an understanding of your customers and their need. The ability to constantly satisfy your customers' needs better than your competitors are able to make organization the preferred supplier in the marketplace. In order to achieve this, you will need to create flexible strategies that can respond to change in customer perceptions and demand.
Once you have created and implemented your strategy, it is equally important to monitor its effectiveness and to make any adjustments required to maintain its success. Every marketing strategy is measured by its ability to directly impact and improve upon each of the related factors. Increasing one factor will produce linear business growth. Increasing all three factors will produce geometric business growth.

Needs of marketing strategy: there are three marketing strategies to grow a business:

1. ***Increase the number of customers***: the first step of business owner and manager is to increase the number of customers to grow their business side by side losses can occur when inexperienced sales personnel are put in charge of designing and implementing a marketing program.
2. ***Increase the average transaction amount***: most of the time of owners and managers spent in operating their business and searching for new customers. Systematically offering customers more value via additional products or services at the point of sale are two simple steps business owners can

take to increase their average their average transaction amount.

3. ***Increase the frequency of repurchase:*** in an established: in an established business, an average customer purchasing pattern develops and is usually taken for granted and rarely improved upon. A customer's repeat business is earned by the business who gives the customer what they want. Frequently communicating news and offers to past and present customers via telephone or mail generally increases their frequency of repurchase and it one step through which owner can take to grow their business.

Stages of developing marketing strategy:

A. ***Understanding strengths and weaknesses:*** your strategy must take account of how your business' strengths and weaknesses will affect your marketing. Your marketing strategy document with an honest and rigorous SWOT analysis, looking at your strengths, weaknesses, opportunities and threats.

a. Strengths:

- Personal and flexible customer service
- Special features or benefits that your product offers.
- Specialist skill.

b. Weaknesses:

- Limited financial resources
- Lack of an established reputation
- Inefficient accounting system

c. Opportunities:

- Increased demand from a particular market sector
- Using the internet to reach new markets
- New technologies that allow you to improve product quality

d. Threats:

- The emergence of new competitor
- More sophisticated, attractive or cheaper version of your product or services
- New legislation increasing your costs
- A downturn in the economy, reducing overall demand

B. Write a market plan- during the planning process different questions should be kept in mind

a. What is the environment of the business? Threat/ opportunity.
b. What are the strength and weakness of organizations?
c. What are the needs of customer?
d. Which customers are most profitable?
e. Are the groups I can target easily?
f. What are the best ways of communicating with them?
g. Could I improve my customer services?
h. Could changing my products or services increase sales and profitability?
i. Could my extending product list or service provision meet existing customers' needs more effectively?
j. How will I price my product or service?
k. What is the best way of distributing and selling my products?
l. How can I best promote my products?
m. How can I tell if my marketing is effective?

C. Finding and extracting from the previous available or adopted strategies by others.

In India, 2002 the company was doing well, but our approach to marketing was hit and miss. The study was done through the business from top to bottom and pinpointed our strengths and weaknesses. On the plus side, customer research showed that we had a great reputation for quality service. On the minus side, brand awareness was low and some of our systems weren't working well. We also used published academic research to find out more about our target customers' mindset and why they buy. We used all information to create a marketing strategy

with clear objectives. These included developing our network of partnerships, raising brand awareness, positioning ourselves as strategic thinkers in our market, and getting more business through referrals.

China market :

The investment bank report says the economies of China, India and other developing countries have expanded so much that they now surpass the established industrialized world in belching out carbon dioxide pollution blamed for climate change.

Sayings of (Canadian Imperial Bank of Commerce) CIBC economist Jeff Rubin and other economist regarding China and India is "it becomes absurdly unrealistic to ban coal plants in North America while at the same time China's got 570 coal plants slated to go into production between now and 2012, 30 plants between now and the Olympic". "We are moving in opposite direction".

The research report notes that while governments in developed nations are taking painful steps to cut greenhouse gasses, carbon emission from developing nations- in particular China have skyrocketed in recent years. Since 2000, total emission has climbed by more than 6000 million metric tons with 90 percent of that coming from China and other developing nations. China is now the single largest carbon emitter country in the world, producing more than 21 percent of the global total.

"As OECD countries begin to tax their own economies by charging growing fees on CO_2 emissions, their tolerance of the carbon practices of its trading partners will diminish rapidly," says Jeff Rubin, Chief economist and Chief Strategists, CIBC world markets "Particularly when the painful cut made by the North America, Western Europe and a handful of other OECD economies are dwarfed by the emission follow spewing from China and the rest of the developing world"

Cost :

Mr. Robin notes that these DE carbonization efforts will be effective in reducing greenhouse gasses if done in concert with the developing world. Otherwise it simply adds costs to consumers, make domestic industry less competitive and will increase overall global emissions as more and more productions shifted to unregulated jurisdictions.

CIBC World Markets calculates that China's export related emissions were approximately 1,700 mmt in 2007. Outside of the entire US economy, China export sector is world's largest carbon emitter.

In the last seven years, China's overall emissions have grown by close to 120 percent. Its average annual increase is equal to the total greenhouse gas emission of the United Kingdom or Canada. Its cumulative increase in emission over the past seven years equals to the total current level of emission of Japanese, Indian, Spanish and Canadian economies combined.

The reasons for this dramatic jump are rooted in the sheer pace of economic growth in the country and the absence of enforceable and meaningful environmental regulations. But the more vital factor has been the emissions intensity of the China economy.

"Energy use in the manufacturing intensive Chinese economy as a share of GDP is four times larger than in the largely service- based US economy" says Mr. Robin. "To make matter worse, China is not particularly carbon efficient. It produces third more CO_2 emissions per unit of energy than does the US economy. And double that of Canada. Combine the energy intensity of the Chinese economy with the poor carbon efficiency of its energy use and you have a powerful cocktail for exploding emission growth."

By slapping a CAD$ 45 per ton cost onto CO(2) emission a tariff would raise roughly CAD$ 55 billion a year from China exports to the US. "Of

course, it's not just Chinese exporters who will have to pay," Mr Robbin. "Are least initially, before other carbon complaint sourcing can be found, it will be consumers who will have to bear the bulk of the tariff burden in higher import prices. Based on China's share of US imports, a CAD$ 45 per tonne tariff would raise US consumer price inflation by more than 0.6 percentage points. "At some point, however, the inflationary impact might be mitigated as either domestic production replaces some China imports or sourcing is shifted to a less egregious emitter than China."

Given the increase emissions imbalance between the developed world and countries such as China "only leverages is through trade access", specially a "carbon tariff". It has been predicted tariff, based on $ 45 tonne of carbon dioxide or equivalent, would be $55 billion annually, a 17 percent levy on all Chinese's imports to the US almost six times greater than effective current import tariffs.

The main impact of such a scenario would be on companies that have moved their factories of China-and consumer in North America. In a world, where carbon emission cost nothing is moving towards China with its cheaper labor, made perfect sense.

Comparison between Indian and China Market :

I. **Telecom:** The released study by Telecom Regulatory Indian Authority of India(TRIA) reveals the divergent way in which the telecom sector is growing in two highly populated nations. Interesting the study finds a contrasting growth oin the mobile and fixed line services in India and China. The growth of mobile subscriber in India has been at a hectic 85 percent since 1999. China with a large base , however, has seen a growth of 16 percent in mobile subscriber in 2005. Nonetheless, China is adding five million subscribers join the mobile bandwagon every month.

The 'mobile craze' appears to have a telling fall out on fixed line services in India, which have registered an annual growth of a measly two percent. China however saw fixed line services grow at 12 percent in 2005. Interestingly enough, the study finds that over 23 percent fixed line subscriber in China are connected in through wireless in local loop (WLL).

II. **Revenue:** if compares the telecom revenue in these two countries, China is a way ahead of India. The total revenue of Chineses telecom companies increased from $65 billion in 2004-5 to $72.70 billion in 2005-2006.

The telecom revenue in India during 2005-06 was $19.50 billion, up from 417 billion in the preceeding year. The growth of telecom revenue percentage-wise was higherin India at14.7 percentage against 11.8 percent in China. Interestingly the study indicates that the ARPU (average revenue per user) in India and China is comparable in the GSM pre-paid segment.

III. **Generating EBITDA:** China companies are able to generate a higher rate (earnings before interest, tax, depreciation and amortization) of margin and better return on capital than their India counterparts. This can be explained by the fact that the Indian mobile market is much more competitive when compared to Chinese one.

IV. **Internet :** while India got its first taste of internet in 1986, establishing ERNET, China got Internet connectivity a slate as 1993. But within one year it had 3.5 times as many Internet users as India. Despite the huge differences in numbers, the Economist Intelligence Unit (EIU) puts India in the group of "E-business followers" and China in the group of "E-business laggards". The most apparent reasons for these differences are the government policies. China has only one guarded access to the World Wide Web. Internet users cannot access a range of foreign web sites. Domestic web sites are checked at the source through a registration process and content monitoring. This has

hampered adoption of the internet for a variety of commercial uses.

In India, on the other hand, while the government has been criticized for its late awakening to cyber laws, the initial un-monitored period proved a boon for E-Commerce. Though post 2000, India has taken measures to keep a check on the happenings on the Internet.

	Relative Advantage	Relative Dis-advantage
China	• Higher per capita GDP • Higher investment in telecom sector resulting in higher tele-density • Higher international band • Self-dependent in most IT products • Cheaper internet access rates	• No e-commerce and digital signature law • Control on internet content
India	• Well-developed private sector with both domestic companies and conglomerates • Democratic tradition and transparent legal system • Large middle class aware of glovbal brands • Large English speaking workforce • Extensive networks of contacts created by expatriates • World leader in software development and IT services	• Less political leadership to create an E-business hub in India • Stifling bureaucratic and red tape • Higher illiteracy rate • Numerous different languages to be addressed to reach the full range of population

The Chinese government faces numerous economic challenges, including: (a) Reducing its high domestic savings rate and correspondingly low domestic demand; (b) Sustaining adequate job growth for tens of millions of migrants and new entrants to the work force; (c) Reducing corruption and other economic crimes; and (d) Containing environmental damage.

The factor comparing economy of China and India:

I. GDP
II. Trade Patterns
III. Poverty Reduction
IV. Human Development
V. Employment Growth
VI. Rate of investment

Conclusion: The Economy of China is the 2nd largest in the world by Nominal GDP. The 2nd largest by Purchasing Power Parity (PPP). The country is one of the G-20 major economies and a member of BRICS. On the per capita income basis China is ranked 87th by nominal GDP and 92nd by GDP (PPP) in 2012. The Economy of China is the world's fastest-growing major economy, with growth rates averaging 10% over the past 30 years. China is also the largest exporter and second largest importer of goods in the world. China is the largest manufacturing economy in the world, outpacing its world rival in this category, the service-driven economy of the United States of America. ASEAN–China Free Trade Area came into effect on 1 January 2010. China-Switzerland FTA is China's first FTA with a major European economy. The provinces in the coastal regions of China tend to be more industrialized, while regions in the hinterland are less developed. As China's economic importance has grown, so has attention to the structure and health of the economy. The internationalization of the Chinese economy

continues to affect the standardized economic forecast officially launched in China by the Purchasing Managers Index in 2005. At the start of 2010s, China remained as the sole Asian nation to have an economy above the $10-trillion mark (along with the United States and the European Union). Most of China's economic growth is created from Special Economic Zones of the People's Republic of China that spread successful economic experiences to other areas. The development progress of China's infrastructure is documented in a 2009 report by KPMG. Since the late 1970s China has moved from a closed, centrally planned system to a more market-oriented one that plays a major global role - in 2010 China became the world's largest exporter.

Economic development has progressed further in coastal provinces than in the interior, and by 2011 more than 250 million migrant workers and their dependents had relocated to urban areas to find work. In 2010-11, China faced high inflation resulting largely from its credit-fueled stimulus program. Some tightening measures appear to have controlled inflation, but GDP growth consequently slowed to under 8% for 2012. An economic slowdown in Europe contributed to China's, and is expected to further drag Chinese growth in 2013.

The GDP comparison of China and India: CHINA: The gross domestic product in china expanded 2.20% in the third quarter of 2013 over the previous quarter. GDP Growth Rate in China is reported by the National Bureau of Statistics of China. From 2011 until 2013, China GDP Growth Rate averaged 2.0% reaching an all-time high of 2.5% in June of 2011 and record low of 1.5% in March of 2012.In China the Growth Rate in GDP measures the change in the seasonally adjusted value of the goods and services produced by the Chinese economy during the quarter. China's economy is the 2nd largest in the world after that of United States. INDIA: The Gross Domestic Product in India expanded 4.40% in the second quarter of 2013 over the same quarter of the previous year. GDP Annual Growth Rate in India is reported by the Ministry of Statistics and Program Implementation. From1951 until 2013, India GDP Growth Rate averaged 5.8% reaching an all-time high of 10.2%December of 1988 and a record low of -5.2% in December of 1979. In India the Growth Rate in GDP measures the change in the value of goods and services produced in India without counting government's involvement. It excludes the indirect expenses and includes the original value of the product.

References: websites

- www.aicte-india.org-downloads-reg-paydegree220110.url
- www.slideshare.net/.../**indian**-economy-vs-**chinese**-economy-a-**comparati**
- www.worldscientific.com
- www.**research**manuscripts.com
- www.thehindu.com/**books**

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

ग्रामीण विकास में शिक्षा की भूमिका

आरती झारिया, शोधार्थी
समाजशास्त्र एवं समाजकार्य अनुसंधान विभाग रा.दु.वि.वि. जबलपुर (म.प्र.)

प्रस्तावना : असली भारत गांव में निवास करता है, यह कहावत आज भी सत्य है। आजादी के कई दशक बीत जाने के बाद भी यह बात सत्य है, तथा इसी कथनानुसार आज भी आधे से भी अधिक जनसंख्या गांवो में निवास करती है ग्रमीण विकास हमारी अर्थव्यवस्था के विकास के लिए एक विख्यात कारक है तथा अर्थव्यवस्था के विकास के लिए सबसे महत्वपूर्ण प्रेरित कारक शिक्षा है, अतः भारतीय शिक्षा प्रणाली की सभी शाखाओं के विकास की प्रकिया में तेजी लाने के लिए सरकार ने कई अहम् फैसले लिये है। ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा प्रणाली ही अर्थव्यवस्था के विकास में एक महत्वपूर्ण योगदान करती है तथा केन्द्र सरकार ने तकनीकी और उच्च शिक्षा की जिम्मेदारी लेते हुए शिक्षा को मानव संसाधन विकास विभाग मंत्रालय और राज्यों में सरकारों के माध्यम से केन्द्र सरकार शिक्षा नीति और योजना तैयार की है।

आज मनुष्य सभ्यता कि जिस चोटी पर खड़ा है। उसका कारण है मनुष्य का सदैव परिवर्तनशील रहना तथा विकास परिवर्तन की एक प्रकिया है। जिसके द्वारा एक देश के अधिकाधिक नागरिक उच्च भौतिक रहन–सहन क स्तर स्वस्थ एवं दीर्घ जीवन प्राप्त करने के साथ–साथ अधिकाधिक मात्रा में शिक्षित होने का प्रयास करते हैं।''विकास'' दूसरे शब्दों में सामाजिक जीवन में गुणात्मक सुधार (स्वास्थ्य पोषाहार, शिक्षा, आवास, औसत आयु रहन–सहन की दशाए) आदि तथा मानवीय आवष्यकताओं कि पूर्ति विकास है। यह ग्रमीण व नगरीय समाज कि विद्यमान दषा में कुछ सकारात्मक प्रगति का नाम ही विकास है।

साक्षरता मानव का अधिकार है सशक्तिकरण का मार्ग है और समाज तथा व्यक्ति के विकास का साधन है। ाक्षा के अवसर साक्षरता पर निर्भर करते हैं गरीबी उन्मूलन के लिए वाल मृत्युदर को कम करने के लिए जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रण में रखने के लिए स्त्री पुरूष में समानता को बढ़ावा देने के लिए तथा सतत् विकास आवश्यक है तथा किसी भी समाज या देश का विकास शिक्षा पर ही निर्भर करता है। शिक्षा व्यक्ति को समाजोपयोगी बनाती है शिक्षा से मनुष्य का शारीरिक बौद्धिक सामाजिक एवं भावात्मक विकास होता है इसलिये शिक्षा को व्यक्ति के चहुंमुखी विकास की प्रकिया के रूप में जाना जाता है, शिक्षा ग्रामीण विकास के लिए एक बहुउपयोगी है तथा शिक्षा का सरोकार जागरूकता बढ़ाना नैतिक मूल्यों की स्थापना करना एवं सामाजिक आर्थिक विकास को बढ़ावा देने।

बोगार्डस के अनुसार ''सांस्कृतिक विरासत तथा जीवन के अर्थ को ग्रहण करना ही शिक्षा है।''

कॉम्ट के अनुसार ''शिक्षा व्यक्ति की उस सम्पूर्णता का विकास जिसकी उसमें क्षमता है।''

शिक्षा के आभाव में व्यक्ति अपनी विशिष्टता का लाभ उठाने से वंचित हो जाता है। जो मानव संसाधन विकास की प्रथम आवष्यकता है तथा सरकार द्वारा भी शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिये ग्रामीण क्षेत्रों में कई महत्वपूर्ण कदम उठाये गये जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा को बढ़ावा देने के लिये कानून और न्याय मंत्रालय निःषुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार 2009 के लिए बच्चों का अधिकार पेश किया गया यह एक अधिनियम 6 से 14 वर्ष की उम्र के बीच के सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने के लिऐ शुरू की। सन् 1966 से 8 सितम्बर का दिन अंतर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस के रूप में मनाया जाता है। इसका उद्देश्य ग्रामीण, शहरी, व्यक्तियों, समुदायों और समाजों में शिक्षा के महत्व का प्रचार करना तथा ''21 वीं शताब्दी के लिए साक्षरता '' अंतर्राष्ट्रीय दिवस को समर्पित है।

हमारी राष्ट्रीय शिक्षा नाति में शिक्षा की भूमिका और महत्व को दर्शाया गया है और वह आज भी प्रासंगिक है शिक्षा ग्रामीण क्षेत्र में सभी के लिये जरूरी है और हमारे चहुॅमुखी विकास का मूल आधार है। शिक्षा में अर्थव्यवस्था के विभिन्न स्तरों के लिए मानव शक्ति को विकसित किया जाता है जो ग्रामीण क्षेत्रों को विकास कि ओर ले जाता है।

सारांशः– किसी भी राष्ट्रीय विकास कार्यकम को सफल बनाने हेतु उपलब्ध संसाधनों और वातावरण को समझकर उसमें सकारात्मक परिवर्तन लाने जनशक्ति में वांछित चेतना जागृत करने के लिए शिक्षा प्रथम सोपान है, शिक्षा वर्तमान और भविष्य के लिए एक अद्वितीय निवेश है पिछले दशक में भारत में साक्षरता की दर काफी बढ़ी है। विशेष रूप से गांवो में निःशुल्क शिक्षा लागू होने के बाद।

संदर्भ ग्रंथः–

1. '' महिला विकास एवं स्वरोजगार'' सौरभ उपाध्याय इषिका पब्लिशिंग हाऊस जयपुर भारत।
2. ''सामाजिक स्तरीकरण तथा परिवर्तन '' वन्दना वोहरा ओमेगा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
3. ''विकास का समाजषास्त्र एवं नियोजन '' डॉ गणेश पाण्डेय राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
4. ''उच्चतर समाजषास्त्र विश्वकोष'' हरिकृष्ण रावत् रावत पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

सतपुड़ा क्षेत्र में संचार व्यवस्था–एक ऐतिहासिक अध्ययन (म.प्र. के बैतूल जिले के विशेष संदर्भ में)

दिनेश कुमार सूर्यवंशी, इतिहास विभाग रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर म.प्र.

सारांश :– स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात बैतूल जिले के बारे में जानना ही अपने आप आप में रोमांचकारी है और जब बात अपने जिले और कर्मभूमि की हो तो जिज्ञासा अपनी चरम सीमा पर होता है। बैतूल जिले की अपनी विशिष्ट स्थिति रही है। यहाँ परिवहन तथा संचार व्यवस्था संबंधी स्थिति संतोषप्रद नहीं थी। एक स्थान दूसरे स्थान पर पहुंचने के लिए पर्याप्त साधन न थे, और संदेष पहुंचाने के लिए पर्याप्त साधन की भी व्यवस्था न थी।

अंग्रेजी शासन की स्थापना के पूर्व यहाँ की संचार व्यवस्था संतोषप्रद नही थी। जिले की प्राकृतिक संरचना के कारण यहाँ सड़क तथा रेल मार्गों का निर्माण करना वास्तव में एक कठिन चुनौती थी। 1913 में बैतूल में पहली रेल लाईन बिछाई गई, लेकिन सड़क निर्माण तथा उसके विकास की दिशा में ब्रिटिष शासन उदासीन ही रहा। वस्तुतः आधुनिक सड़कों का विकास स्वतंत्रता के पश्चात् ही परिलक्षित होता है। संचार के अन्य साधनों में डाक तार व्यवस्था मध्यकालीन थी, जो हरकारों पर आश्रित थी। ब्रिटिष शासन काल में डाक तार प्रणाली को पाष्चात्य एवं आधुनिक स्वरूप प्रदान किया गया। 1955 ई. में पहली बार टेलीफोन व्यवस्था स्थापित की गई। इस प्रकार जिले में संचार साधनों का विकास क्रमिक रूप से हुआ। यहाँ के सामाजिक एवं आर्थिक विकास मं इनका अत्युत्तम योगदान रहा है।

प्रस्तावनाः– पूर्व काल में परिवहन तथा संचार व्यवस्था संबंधी स्थिति संतोषप्रद नही थी। जिले की सड़क व्यवस्था अभी भी विकास की प्राथमिक अवस्था में है। जिले की स्थलाकृति ऊँची–नीची होने के कारण सड़क तथा रेलमार्ग का निर्माण सदैव ही एक कठिन कार्य रहा। सड़कें सामान्यतः नदी के तटों में दूर–दूर हटकर पठार के अपेक्षाकृत अधिक चौड़े भागों के किनारे–किनारे बनाई गई थीं।

ईसवी सन् 606 [1] में गोंड राजवंश के राजा शशांक ने कन्नौज के राजा राजवर्धन को पराजित किया और उसका वध कर दिया। ऐतिहासिक वृतातों से प्रतीत होता है कि इतिहास के प्रारंभिक काल में गोंडवाना राज्य का कुछ भाग मालवा द्वारा जीत लिया गया था। बैतूल जिले के मुलताई में ईसवी सन् 799 के कुछ ताम्रपत्र प्राप्त हुये हैं जो राष्ट्रकूट राजवंष के हैं। इससे संकेत मिलता है कि मुलताई के पठार पर ईसवी सन् 750 से 950 तक राष्ट्रकूट राजवंष का आधिपत्य था। इसके बाद बैतूल का उल्लेख एक सन्यासी धार्मिक मुन्दराज स्वामी, जो लगभग ईसा पश्चात् 13 वीं शताब्दी के अंत के लगभग रहे, द्वारा लिखित विवेक सिंधु नामक धार्मिक ग्रंथ में मिलता है। उसकी समाधि खेरला के किले के परिसर में हैं तथा उस पर एक मंदिर बना दिया गया है। [2] 18वीं शताब्दी में मुगलों के पतन के पश्चात् देवगढ़ राज्य का विस्तार बैतूल जिले तक हो गया था।

इन तथ्यों से यह पता चलता है कि विभिन्न ऐतिहासिक कालों में बैतूल तथा खेरला प्रशासन के महत्वपूर्ण केन्द्र थे। पूर्व में देवगढ़ उत्तर में होशंगाबाद तथा उत्तर–पूर्व में अचलपुर से मार्गों द्वारा जुड़े थे।

परिवहन के साधन – प्राचीन काल में जिले में जहाँ अच्छी सड़कें नही थीं। वहाँ माल दुर्गम रास्तों से सिर पर ढोकर या बैलों पर या घोड़ों पर लादकर ले जाया जाता था। जिले के शेष भाग में परिवहन प्रयोजनों के लिये गाड़ियों का उपयोग किया जाता था। इन क्षेत्रों में सड़क बन जाने के बाद इन गाड़ियों के स्थान पर कारें, बसें और ट्रक चलने लगे। जिले के भीतरी क्षेत्रों में

जहाँ अभी भी सड़कों से नहीं पहुँचा जा सकता था, परिवहन के पुराने साधन आज भी प्रचलित हैं।

19 वीं शताब्दी में सड़कें –

वर्ष 1868 में जिले के आर–पार जाने वाली पाँच मुख्य सड़कें थीं –

1. बदनूर (बैतूल) से नागपुर की ओर जाने वाली सड़क, जिस पर कहीं–कहीं पुल भी था।
2. बदनूर बैतूल से होशंगाबाद की ओर जाने वाली सड़क जिस पर सभी स्थानों पर पुल था, होशंगाबाद में शाहपुर से सोहागपुर तक एक शाखा थी।
3. बदनूर (बैतूल) से महू, हरदा होकर
4. बदनूर (बैतूल) से एलिचपुर तथा बडनेरा (महाराष्ट्र)
5. बदनूर (बैतूल) से छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

होशंगाबाद से नागपुर जाने वाली सड़क जिले की लंबाई में काटती थी तथा लगभग पूरी सड़क पर पुल बने थे। बैतूल से होशंगाबाद की सीमा तक वर्षो के मौसम में भी सड़क पर वाहन चल सकते थे। जिसके फलस्वरूप इटारसी रेलवे स्टेशन तक जो पहाड़ियों की तराई से दो मील दूरी पर होशंगाबाद जिले में स्थित या बैतूल से सभी मौसमों में पहुँचा जा सकता था। यह होशंगाबाद को जाने वाली सीधी सड़क पर बैतूल पर बैतूल से 85.29 कि.मी. की दूरी पर स्थित था। सिविल स्टेशन (बैतूल) से अचलपुर को जाने वाली सड़क पर कहीं–कहीं पुल बन गये थे।

बदनूर (बैतूल) से मुख्य सड़क नागपुर की ओर निर्मित की गई। दूसरी सड़क बदनूर से नीमपानी से होती हुई होशंगाबाद तथा जिले की तीसरी महत्वपूर्ण सड़क बदनूर (बैतूल) से प्रारंभ होकर हरदा होते हुये मुड़ जाती थी। जिले के भीतर यह सड़क चिचौली छेत्पाला गासाई तथा लोखरखाली आदि स्थानों से गुजरती थी। इसी प्रकार बड़नेरा, छिन्दवाड़ा और सोहागपुर जिला होशंगाबाद की ओर जाती थी। इन सड़कों की बीसवीं शताब्दी में स्थिति का वर्णन इतिहासकार रसल ने इस प्रकार किया है –

''उत्तर–पश्चिमी सड़क जो नागपुर से बैतूल और होशंगाबाद होती हुई उत्तर की ओर जाती है। जिले को लगभग एक सिरे से दूसरे सिरे तक काटती है और चिचंड़ा, मुलताई, बैतूल, बदनूर और शाहपुर होती हुई धार जिले से बाहर चली जाती है। अब यह लगभग पूरी गिट्टी की पक्की सड़क है तथा इस पर पुल और रपटे बने हुये हैं। इटारसी जंकशन बदनूर 55 मील, बदनूर से मुलताई 28 मील, और मुलताई से छिन्दवाड़ा सीमा 14 मील दूर है तथा जिले में सड़क की लंबाई 77 मील है। इटारसी से नागपुर की ओर यह दक्षिण दिशा को जाती है तथा मुलताई से दक्षिण के भाग का महत्व मुलताई तथा इटारसी के बीच के भाग की तुलना में कम है।'' [3]

अन्य सड़कें – ''बदनूर से प्रारंभ होने वाले अन्य भागों में मल्लार से होकर जाने वाली एलिचपुर सड़क आंशिक रूप से पक्की सड़क थी तथा जिले में इसकी लंबाई 51 मील थी। इस सड़क से कुछ इमारती लकड़ी बरार से लाई जाती थी। बदनूर–हरदा सड़क सीमा तक 51 मील लंबी थी तथा यह चिचौली और चीरपातला से गुजरती थी तथा इस पर बजरी बिछी हुई है। एक बजरी सड़क बदनूर से 22 मील दूर स्थित आठनेर तक जाती है। मुलताई से छिन्दवाड़ा तक एक सड़क थी जो व्यापार की दृष्टि से कोई महत्व नही रखती थी न ही मुलताई से आगे उत्तर–पष्चिम सड़क पर कोई अधिक यातायात रहा है, यद्यपि नागपुर से इस सड़क से सूत तथा फल और गरम मसाला लाया जाता था। जिले के दक्षिणी भाग को बरार से मिलाने वाले भागों में मुलताई से विकटधार द्वारा पटटन होकर सेंदुरजना तक ओर आगे बदनूर से एलिचपुर–अमरावती सड़क तक आने वाली सड़क 1897 में गाड़ियाँ चलने लायक बना ली गई थीं तथा हाल ही में इसे पक्का बना दिया गया है। इस सड़क से अमरावती जिले में चंदेल के महत्वपूर्ण बाजार के लिये पैदावार ले जाई जाती थी। बदनूर–एलिचपुर सड़क भी दर्रो के नीचे गाड़ियों के आवागमन योग्य बना दी गई थी। अन्य दो मार्ग बरार तक जाते थे, एक आठनेर होकर हीरादेही और दूसरा मुलताई से मसौद होकर उसका घाट किन्तु ये अभी तक ग्रामपथ था। सड़क मसौद से आठनेर, और भैंसदेही को होकर आती है और 04 मील तक जिले के दक्षिण से गुजरती है। जिले में पक्की

सड़कों की कुल लंबाई 95 मील तथा कच्ची सड़कों की लंबाई 152 मील है। इनका वार्षिक अनुरक्षण व्यय 48000 रू.है। 244 मील सड़क लोक निर्माण विभाग के प्रभार में हैं तथा सड़क और कुछ ग्रामपथ जिला परिषद के प्रभार में थे जिस पर वह 600 रू. वार्षिक व्यय करती थी।[4] 1910 में पक्की सड़कों की कुल लंबाई 95 मील थी तथा कच्ची सड़कों की लंबाई 152 मील थी और इन पर होने वाले वार्षिक व्यय 48000 रू. था। लोक निर्माण विभाग के प्रभार में 244 मील सड़क थी तथा शेष सड़क और कुछ ग्रामपथ जिला परिषद के प्रभार में थे।

वर्ष 1944 में उत्तर–पश्चिमी सड़क के 60 वें मील से एक 10 मील लंबी सड़क का निर्माण किया गया था। इसका अनुरक्षण सैनिक इंजीनियरी सेवा (मिलिट्री इंजीनियरिंग सर्विस) द्वारा किया जाता था। वर्ष 1910 के बाद विशेषतः 1950 से 1963 की अवधि के दौरान, जिले में सड़क संचार व्यवस्था का पर्याप्त विकास किया गया तथा सड़क सतह में सुधार हुआ है एवं सड़क की लंबाई में भी पर्याप्त वृद्धि हो गई।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में सड़कों का विकास – जिले में विकास आयोजनावधियों में सड़क निर्माण कार्यों में चहुँमुंखी उन्नति हुई है। द्वितीय आयोजनावधि के दौरान हाथ में ली गई सड़क निर्माण की योजनाओं में 02,70, 875 रू. की लागत से 2.62 मील (4.21 कि.मी.) चिचौली ढेकनर सड़क का सुधार 53,732 रू. की लागत से 08 मील (12.80 कि.मी.) लंबी पट्टन चिल्था–चिलहाटी सड़क का निर्माण 8.75 मील (14.07 कि.मी.) पक्की तथा 8.75 मील (57.52 कि. मी.) कच्ची ग्राम सड़कों का निर्माण 11,343 रू. की लागत से खारपी मुक्तागिरी सड़क का सुधार शामिल था। आरंभ किये गये अन्य निर्माण कार्य मुलताई खेड़ली–बोरदेही सड़क, बरठा–घोड़ाडोंगरी सड़क, तवेगाँव आमला सड़क तथा पट्टन जितपा चिलहाटी सड़कों से संबंधित थे। इसके अतिरिक्त, उसी अवधि में मुलताई आठनेर चिलकापुर सड़क के क्रमोन्नयन का कार्य भी हाथ में लिया गया था।[5] तृतीय पंचवर्षीय आयोजना के दौरान पुरानी सड़कों के अनरक्षण तथा नई सड़कों के निमार्ण के लिये 42.89 रू.के व्यय का अनुमान लगाया गया था।

आयोजना कार्य के दौरान दो नई सड़कों, अर्थात् बैतूल–रानीपुर सड़क तथा मुलताई–खेड़ी बोरदेही सड़क कार्य का निर्माण का भी प्रारंभ किया गया था। निर्माण कार्य की 28.96 कि.मी. लंबाई के लिये 5.35 लाख रू. की रकम निर्धारित की गई थी। विद्यमान सड़कों के क्रमोन्न्यन के अंतर्गत 02 सड़कों पर कार्य आरंभ किया गया था। जिसमें से चिचौली टेकना सड़क का कार्य द्वितीय आयोजनावधि से चालू था। तृतीय आयोजनावधि के लिये 10.37 लाख रू. का व्यय निर्धारित किया गया था तथा कुल 57.93 कि.मी.लंम्बाई की सड़क का क्रमोन्नयन किया जाना था। तृतीय आयोजनावधि के दौरान मुलताई–आठनेर मसौद, गुड़गाँव सड़क पर 11.20 कि.मी. लंबाई के लिये 1.37 लाख रू. की अनुमानित लागत से कार्य आरंभ किया गया।

खुले मौसम की नई सड़कें – इस योजना के अधीन दो सड़कों अर्थात् होवर खेड़ी नंदा सड़क तथा नवगाँव–बोरदेही आमला सड़क का 77000 की लागत से 25.60 कि.मी.लंबाई का निर्माण कार्य सम्मिलित किया गया था।

राज्य के राजपथ – जिले में 31 मार्च 1969 को राज्य के राजपथों की कुल लंबाइ 174.3 कि.मी. थी। इस श्रेणी में आने वाली सड़कें निम्नानुसार है –

उत्तर–पश्चिमी सड़क – 125.17 कि.मी.

बैतूल–खण्डवा सड़क – 17.30 कि.मी.

मुलताई–छिन्दवाड़ा सड़क – 31.83 कि.मी.

कुल क्षेत्र – 174.30 कि.मी.

जिले की प्रमुख सड़कें – 31 मार्च 1969 को जिले मे इस श्रेणी में आने वाली सड़कों की कुल लंबाई 431.15 कि.मी. थी। उनका अनुरक्षण राज्य के लोक निर्माण विभाग द्वारा किया जाता रहा था। इस श्रेणी में निम्नलिखित सड़कों का समावेश था –

बैतूल–अचलपुर सड़क झल्लार और गुडगाँव होकर – 71.03 कि.मी.

बैतूल–हरदा सड़क – 66.00 कि.मी.

बैतूल–आठनेर सड़क – 34.60 कि.मी.

मुलताई–आठनेर चिल्कापुर सड़क – 70.85 कि.मी.

बैतूल अचलपुर सड़क झल्लार तथा गुडगाँव से गुजरती थी। यह पूरी सड़क डामर की थी। बैतूल–हरदा सड़क 66 कि.मी. लंबी है। इसमें से 12.66 कि.मी. गिट्टी की पक्की सड़क है और शेष पर मुरम बिछी हुई है। मुलताई–आठनेर, चिल्कापुर सड़क की लंबाई 70.85 कि.मी. है। इसमें 26.46 कि.मी. पर मुरम बिछी हुई थी और शेष डामर की है।[6]

रेलवे – 1913 तक बैतूल जिले से होकर कोई रेलवे लाइन नही गुजरती थी किन्तु 1906 में शासन द्वारा जिले में रेलवे लाइन बिछाने की योजना अनुमोदित की गई थी। जिला गजेटियर 1907 में इसका उल्लेख इस रूप में मिलता है– ''बैतूल मध्य प्रांत (सेन्ट्रल प्रॉविन्सेस) का एक ऐसा अंतिम जिला होगा जिसमें रेलवे संसार की व्यवस्था की जायेगी। अभी तक (1906) इसके किसी भी भाग में रेलवे लाइन नही गुजरती है, किन्तु यह स्थिति अधिक समय तक नही रहेगी। नागपुर में अमरावती तक एक लूप लाइन डालने की परियोजना विचाराधीन थी जो वर्धा जिले के उत्तर से गुजरेगी तथा दूसरे किसी स्थल से एक नई रेलवे लाईन बैतूल जिले से होकर इटारसी तक बिछाई जायेगी। संभवतः इससे पिछली परियोजना सीधी इटारसी तक आने वाली थी। जिसका सर्वेक्षण कार्य 1902 में पूरा हो चुका था। पूर्व में मुलताई से छिन्दवाड़ा तथा दक्षिण–पूर्व में बैतूल से एलिचपुर और अमरावती के लिये एक फीडर रेलवे लाईन डालने की भी परियोजना है।'' [7]

डाकतार तथा टेलीफोन –जब डाक विभाग प्रारंभ किया गया था तब सामान्यतः पत्र तथा पार्सलें डाक हरकारों द्वारा ले जाई जाती थी। ये हरकारे सहज ही हर खतरे के शिकार होते थे और कभी–कभी उन पर डाकुओं द्वारा का हमला कर दिया जाता था तथा वे लूट लिये जाते थे। समय–समय पर इस प्रकार के अनेक मामले शासन की जानकारी में आये। डाक विभाग के जख्मी कर्मचारियों को प्रायः पेंशन दी जाती थी। कालांतर में डाक हरकारों के स्थान पर घोड़ों द्वारा खींची जाने वाली डाक–गाड़ियाँ चलाई जाने लगीं। यह परिवर्तन पहली बार 1949 में किया गया और क्रमषः सभी भागां में अपना लिया गया। डाक एक स्थान से दूसरे स्थान को ठेकेदारों द्वारा ले जाई जाती थी, जो डाकघरों से किन्हीं दो स्थानों में डाक तथा पार्सल ले जाने का करार करते थे। डाक बांटने वाले चपरासियों तथा डाकियों को पाँच रूपये मासिक वतन दिया जाता था जो उन दिनों अच्छा वेतन माना जाता था।

अधिकांश शासकीय पत्रादि एक स्थान से दूसरे स्थान को डाकघरों के अतिरिक्त जिला डाक से भी भेजे जाते थे। जिला डाक जिला मुख्यालय तथा जिले के भीतरी भागों तक पत्रादि भेजने तक ही सीमित थी। 1846 से जिला डाक की सुविधाएँ जनसाधारण के लिये उपलब्ध कर दी गई थीं। जिला डाक 1865 तक जिला अधिकारियों द्वारा नियंत्रित की जाती रही और 1865 में डाकघर विभाग के अंतर्गत कर दी गई।[8]

1856 में डाक आयोग की सिफारिशों के अनुसार डाकघर एक अपना विभाग के रूप में स्थापित कर दिया गया। जिसका पर्यवेक्षण महानिदेशक डाकघर द्वारा किया जाता था। शासन द्वारा पूरे देश में डाकघर की शाखाएँ खोलने का भी निर्णय लिया गया। इसके अतिरिक्त पत्र तथा पार्सल पहुँचाने की दूरी तथा सुविधाओं पर ध्यान दिये बिना पूरे देश के लिये समान डाक दर नियत कर दी गई। विभिन्न डाकघरों में नगद–भुगतान की रीति को त्याग दिया गया और डाक टिकिट प्रारंभ किये गये, जिन्हें खरीदकर पत्रों पर चिपकाया जाता था।

डाकघर खोलने के बारे में बाद की प्रगति का जो उल्लेख मिलता है वह इस प्रकार है ''प्रत्येक पुलिस थाने पर तथा प्रत्येक सदर स्टेशन पर एक जिला डाकघर स्थापित करने के उपाय किये गये हैं। डाक विभाग के सामान्य नियम अपना लिये गये हैं। जिला न्यायालय का नाजिर जिला डाक का प्रभारी अधिकारी था। थाने के पुलिस मुहर्रिर जिला पोस्ट मास्टर होते हैं तथा प्रत्येक जिला डाकघर में जिल के डाक उपसंभाग में डाक पहुँचाने के लिये एक चपरासी होता है।

जिसकी सीमायें पुलिस थाने की सीमाओं के समान ही होती थी। सदर स्टेषन तथा पुलिस थानों (स्टेशन हाउस) के बीच भीतरी भागों में डाक हरकारे पहले विद्यमान थे। यह भी प्रबंध किया गया है कि जिलों के भीतरी भागों के बड़े कस्बों में वहाँ के निवासियों के चाहे जाने पर जिला डाकघर खोले जायें जिनकी दरें डाक की दरों के समान होंगी तथा जहाँ पुलिस थाने (स्टेशन हाउस) स्थापित नहीं किये जा सकेंगे। पुलिस अधिकारी जिला डाकघरों के निरीक्षकों का कार्य करते थे, तथा डिप्टी कमिश्नर प्रबंध की दक्षता के लिये उत्तरदायी होते थे। इसके द्वारा यह आशा की जाती थी कि डाक सुविधाएँ समाज के सभी वर्गों को उपलब्ध हो सकेंगी।[9]

मध्य प्रांत में इम्पीरियल डाकघर 1864–65 तक महाध्यक्ष डाकघर पश्चिमी ोत्तर प्रांत के पृथक शासन में रहे जबकि इन प्रांतां के डाक प्रबंध को एक पृथक महाध्यक्ष डाकघर के अधीन रखने का प्रस्ताव किया गया। बार–बार की गई सिफारिशों के फलस्वरूप 1865–66 में इम्पीरियल डाकघर मुख्य निरीक्षक डाकघर के अधीन कर दिये गये। इसी वर्ष ग्रामीण डाक सेवायें भी मंजूर कर दी गईं। उन्हें भी मुख्य निरीक्षक के पर्यवेक्षणाधीन रखा गया। इस सेवा की लागत के कुछ भाग का भुगतान भूमिधारियों द्वारा दिये गये विशेष उपकर से किया जाता था। ये भीतरी डाक सेवायें जो पूरे भीतरी भागों में सघन रूप से फैली थीं, अच्छी अवस्था में थीं।[10]

स्वतंत्रता के पश्चात् जिले की डाकतार व्यवस्था – 01 मार्च 1969 को जिले में 117 डाकघर थे, जिनमें बैतूल में एक प्रधान डाकघर था, 13 उप कार्यालय, 103 शाखा कार्यालय थे, जिनमें 30 स्थायी तथा 73 अस्थायी थे। इनके अतिरिक्त उसी तारीख को 10 संयुक्त डाकघर तथा तार थे।

टेलीफोन – जिले में पहला टेलीफोन कनेक्शन 22 जून, 1955 को बैतूल में किया गया था। उस समय नगर में 26 टेलीफोन कनेक्शन दिये गये थे। बैतूल तथा मुलताई में दो टेलीफोन केन्द्र थे। बैतूल का केन्द्र हस्तस्वचलित था जबकि मुलताई का स्वचलित था। बाद में 31 मार्च 1964 को आमला में एक टेलीफोन केन्द्र खोला गया था जो स्वचलित पद्धति का था। इसमें 25 टेलीफोन कनेक्षनों की व्यवथा थी। जिले के सार्वजनिक टेलीफोन घर (पब्लिक काल ऑफिस) बैतूल प्रधान डाकघर, बैतूल गंज डाकघर (बैतूल तहसील में) मुलताई तथा आमला (मुलताई तहसील में) और भैंसदेही मं स्थापित किया गया।

रेडिया तथा बेतार केन्द्र (वायरलेस स्टेशन) –जिले में कोई रेडियो या बेतार केन्द्र नहीं था। जिले की जनता को भोपाल के आकाशवाणी केन्द्र का लाभ मिलता है।[11]

निष्कर्ष :– जिले की प्राकृतिक संरचना के कारण यहाँ सड़क तथा रेल मार्गों का निर्माण करना वास्तव में एक कठिन चुनौती थी। लेकिन सड़क निर्माण तथा उसके विकास की दिशा में ब्रिटिश शासन उदासीन ही रहा। वस्तुतः आधुनिक सड़कों का विकास स्वतंत्रता के पश्चात् ही परिलक्षित होता है। संचार के अन्य साधनो में डाक तार व्यवस्था मध्यकालीन थी, जो हरकारों पर आश्रित थी। ब्रिटिश शासन काल में डाक तार प्रणाली को पाष्चात्य एवं आधुनिक स्वरूप प्रदान किया गया। 1955 ई. में पहली बार टेलीफोन व्यवस्था स्थापित की गई। इस प्रकार जिले में संचार साधनों का विकास क्रमिक रूप से हुआ। यहाँ के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में इनका अत्युत्तम योगदान रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. त्रिपाठी, आर.एस.; हिस्ट्री ऑफ एंशियेन्ट इण्डिया, पृ. 293
2. रसल, आर.वी.; पूर्वोक्त, पृ. 25–26
3. पूर्वोक्त, पृ. 173
4. पूर्वोक्त
5. श्रीवास्तव, पी.एन.; पूर्वोक्त, पृ. 193
6. पूर्वोक्त, पृ. 197
7. रसल, आर.वी.; पूर्वोक्त, पृ. 172
8. श्रीवास्तव, पी.एन.; मध्यप्रदेश जिला गजेटियर बैतूल 1990, पृ. 199
9. सेन्ट्रल प्रॉविन्सेस एडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट 1863–64
10. पूर्वोक्त,

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Confronting Hygiene Issues: Interrogating School Sanitation and Hygiene Education in Rural Bundelkhand

Ahfaz Khan
Research Scholar Dept. of Sociology and Social Work
Dr. Harisingh Gour Vishwavidyalay, Sagar. M.P.

Abstract :- School is important for cognitive, creative and social development of children. So are the School Sanitation and Hygiene Education, necessary for the safe, secure and healthy environment for children to learn better and face the challenges of future life. Sanitation is one of the basic determinants of quality of life and human development index. Good sanitary practices go a long way in helping to prevent diseases. Hand washing and oral hygiene are the basic steps to maintaining good health. The present study is a school based survey undertaken among children in a state government Primary school in three villages of Sagar district with the objectives of finding out the prevalent status of personal hygiene in the study population and school's role in promoting these practices among the students. The total sample was 100 students. The study was conducted using interview schedule and questionnaire from school authorities and parents of students and informal interaction with the school students. Most of the junior children carried their own water bottles to the school, while this practice decreased as they grew older and senior. Almost all the children adhered to the good habit of washing their hands after using the toilet, always, or at least most of the times, but the practice of using soap was variable. The present study revealed a generally good standard of hygiene amongst the study population. However, steps are required to be taken to improve the status of personal hygiene of all the school children, who are found lacking in this aspect, through various coordinated primordial as well as primary preventive measures like imparting health education.

Keywords :- Hand washing, Sanitation, School children, Toilet, Urban, Water.

Introduction :- School sanitation and hygiene depend on a process of capacity enhancement of teachers, community members, SMCs, Non-Governmental Organisations (NGOs) and Community Based Organisations (CBOs) and education administrators. Water, sanitation and hygiene in school aims to make a visible impact on the health and hygiene of children through improvement in their health and hygiene practices, and those of their families and the communities. It also aims to improve the curriculum and teaching methods while promoting hygiene practices and community ownership of water and sanitation facilities within schools. It improves children's health, school enrolment, attendance and retention and paves the way for new generation of healthy children. It is the role of policymakers, government representatives, citizens and parents to make sure that every child attends a school that has access to safe drinking water, proper sanitation and hygiene facilities. This is every child's right.

India has one of the largest numbers of school going children, especially in rural areas. In fact, the primary education system in India is one of the largest in the world with over six hundred thirty thousand (630,000) primary and upper rural primary schools, over 3 million teachers, There is high level of diversity especially in the case of enrollment, for instance in some states the enrolment of children is around 100%, and overall literacy ranges above 80%. In other states, the primary enrolment of children is around 60% and literacy overall is less than 40%. The consequences

of the given situation are not far to see. Diarrhea takes a heavy toll. Typhoid, dysentery, gastroenteritis, hepatitis A, intestinal worms and malaria continue to kill, debilitate and contribute to the high rates of malnutrition among young children in the country. While acute malnutrition has diminished, 47 percent under-5 children are under-weight. The child mortality rate stands at a high of 95 in the under-5 age group. Only 7 out of 10 children aged 6-14 years attend primary school. There is a high drop out rate, especially among girls. Only 42 percent girls and 48 percent boys reach class eight (Indian Child, Ministry of Human Resource Development, 2002). Therefore, a coordinated and regular activities at school are needed pertaining to health and hygiene specially health check up and de-worming for better and healthy environment.

As per the Census of India 2011 out of around 247,000,000 households, only 44% have improved sanitation1, 2.9% households have unimproved sanitation, and alarming 53.1% of the households have no sanitation facilities at all (MHA 2011a). Only a single-digit percentage of the Indians without any sanitation are using public latrines. Consequently about 600 million people in India have to practice open defecation (WHO and UNICEF 2013). The ratio 'people practicing open defecation' to 'total number of population in India' decreased from 63% in 2000 to 50% in 2011 (WHO and UNICEF 2013), however it is still a very alarming state. Most of the people without any access to improved sanitation (about 76% (WHO and UNICEF 2013)) are living in rural areas. According to the Indian Constitution, sanitation is a state-level responsibility. Therefore it is the State Government's task to plan, finance and implement programs for 'water' and 'sanitation' (wsp India 2011, page 21). In the 73rd and 74th Constitutional Amendments (1991, 1992) it was decided, that sanitation should be delegated to the rural self-governments (Panchayati Raj Institutions) and Urban Local Bodies (ULBs), respectively.

Objectives of Study :- In Madhya Pradesh, 87% of rural population lack access to safe sanitation, which reflects severely off track progress towards the sanitation MDG Target (Census 2011) It is important to know about what kind of WASH facilities they are availing is either less studied or unknown to us. So, this study is conducted with objective to find out current status of sanitation & hygiene education to the school going children and different hygiene and sanitation facilities & condition in selected schools of Hanauta Panchayat which comes under Jaisinagar block, Sagar district in Madhya Pradesh. The specific objectives of study were:

- To find status & condition of sanitation & hygiene facilities in schools.
- To find status & condition of waste management in schools.
- To find awareness action taken by school through IEC activities.

The Problem :- Many basic schools in deprived communities in rural India are challenged with issues of poor sanitation and hygiene because many of them are without toilet and waste disposal facilities. This is a true reflection of what pertains in the communities where people defecate openly thereby polluting the environment; thus, creating unsafe and disease – prone locale. Hardly will one come across a dustbin let alone a hand washing facility in these basic schools. Few schools with toilet facilities cannot also maintain them due to their deplorable state, owing to over usage by the members of the communities. Sagar district is one of the deprived districts in the central region of India or Bundelkhand, which has been a focal point for various environmental imbalances resulting in failed crops leading to a setback for rural economy. Unlike any other part of rural India poor sanitation and hygiene issues can be identified here too. Many schools in the rural area of district are without toilet facilities. For instance in Lakhni Village which is one of the village in the study , there were only two toilets and two urinal facilities

serving two cluster of schools with a population of over two hundred 60 pupils. And because teachers also use the same facilities, one is often reserved for them leaving only one to be shared by the pupils. These poor sanitation and hygiene conditions caught the attention of the researcher during school visits they conducted in the villages. Only formal fulfillments of Swachh Bharat Mission can be seen as some newly constructed toilet were identified and some were under construction.

If we look into the issues confronting government schools in India .There are following problems:

- Inappropriate hand washing facilities & poor hand washing practices.
- Lack of gender friendly toilets.
- Lack of waste disposal arrangement in schools .
- Poor Maintenance of available facilities.
- Poor awareness of school children over sanitation & hygiene.

Area of Study :- The present study is based on an intensive fieldwork conducted in three villages Salaiya Gazi, Lakhni and Hanauta of Hanauta Panchayat of Sagar district, Madhya Pradesh , during the months of September 2016 to January 2017. Before the commencement of fieldwork, a pilot study was conducted during the month of August 2016. Based on that pilot study, Hanauta Panchayat of Sagar district was selected for final study. Purposive sampling method was used while selecting the study area.

Sampling Procedure :- Using purposive random sampling method three schools were selected for final study. No. of enrolled students, caste diversification were considered. The sample for the study comprises 100 respondents made up of 50 boys and 50 girls, who were randomly selected from six schools in the villages. The schools were purposively selected because they were those which had sanitation challenges.

Boys	50
Girls	50
Total	100

Methodology/Sources of Data Collection :- The Methodology for study includes survey of selected schools three villages Salaiya Gazi, Lakhni and Hanauta of Hanauta Panchayat of Sagar district, Madhya Pradesh , during the months of September 2016 to January 2017. Participation of students of the schools was completely voluntary. They provided oral consent prior to participating and they actively participated in study. This study tried to provide current status of sanitation & hygiene in schools and about sanitation and hygiene education. There were questions regarding sanitation & hygiene in schools. In addition to survey, following steps were taken for completion of study:

- It has reviewed government programme like Swachh Bharat Mission, Sarv Shiksha Abhiyaan, & School Sanitation & Hygiene Education programme under aforesaid programme. It helps us to find gaps in ongoing implementation of sanitation & hygiene facilities & condition in selected schools of districts. Secondary Data also helped in this study.
- Interaction was conducted with various stakeholders'. These stakeholders include principal, school staff & students.
- The interaction with officials of various department such as BDO, Panchayat Sachiv etc. has been done.

Both primary as well as secondary data was collected and analysed, primary data collection techniques like observation, interview, case study, schedules were used and the sources of secondary data are the published and unpublished reports. Data from secondary sources were gathered from

books, articles, journals, published reports, Census reports, and Government documents.

Survey of Schools	Data Collected from Interaction with Principal	6 sample schools
Interaction with Students & Teacher	Discussion over facilities, materials available to them	Teachers and selected students from all three schools

Findings Findings from the study have been given below:

- There were only formal fulfillments of the swachh bharat mission for schools as some newly constructed were seen and some of the toilets were under construction.
- On the part of teachers it was observed that due to administration's special emphasis on sanitation campaign, teachers were keen to make students aware of sanitation and hygienic practices.
- Surveyed school toilets did not adequately address gender or disabled needs of pupils.
- Total number of toilets available across surveyed schools was insufficient.
- In Majority of school maintenance & repairing is problem. It has included visible excreta on floor/seats, bad smell etc.
- Study also finds open defecation by school children. Reasons are: insufficient number of toilets & smells from toilets.
- Urinals are rarely seen in surveyed schools .
- 3 schools do not have hand washing facilities while 2 are dependent on hand pumps which is also used for drinking water
- Interaction from students and principal suggest that the overwhelming majority of surveyed schools do not have adequate facilities in place for schoolgirls to effectively manage their menses.
- Hand washing facilities available immediate to toilets.
- No schools provide materials on sanitation & hygiene.
- 4 surveyed schools do not have any disposal container , only 2 have Garbage receptacle in classrooms only.
- Majority of schools dispose of its rubbish or trash next to school compound.

Conclusions and Recommendations :- This study was conducted to examine the impact of school sanitation and hygiene education on basic school pupils in the three villages Salaiya Gazi, Lakhni and Hanauta of Hanauta Panchayat of Sagar district, Madhya Pradesh. It was in an attempt to find out how students practice sanitation and what is the level of sanitation and hygiene education in these schools. According to WHO (2000), a health promoting school is "one that is constantly strengthening its capacity as a healthy setting for living, learning and working". Improving the health of school children is thus a significant factor for achieving educational outcome. Though the results of this study could not be generalized, it was possible to draw the conclusion that in the selected schools studied in the Hanauta Panchayat, School Sanitation and Hygiene Education did not have any significant impact on the students in the area since most of the pupils

could not practice proper sanitation due to lack of appropriate sanitation facilities. If such conditions continue to prevail, the provision of total and holistic hygiene education for pupils in the study area and in bundelkhand as a whole, will not achieve the desired impact. This conclusion is particularly true for schools in rural and deprived school where provision of basic amenities are usually lacking. This could be a possible reason why many incurable illness or diseases prevail and even take alarming turns in some rural communities. Equally important is the fact that continuing general decline in school sanitation and hygiene education could results in poor school attendance and possible drop-out rate among female pupils. This is because most female students have to usually stay out of school for between 4 to 7 days each month during their menstruation due to unhygienic or lack of gender friendly toilet facilities although these girls were not a part of study but it was worth mentioning as it gave an idea about sanitation and hygiene education in the area of the study . This situation puts the girl-child at a disadvantage position academically as she has to do extra work to catch up with her peers due to lost contact hours she experienced due to their natural disposition of being females. Many girls who are not able to manage this extra burden of learning harder and spending more time with their books in order to catch up with peers, do not often do well in school and even drop out of school. Eventually, pupils are unable to acquire needed education which hampers the achievement of the Millennium Development Goals as well.

In conclusion, school-based hygiene education is vital in order to decrease the rates of transmissible diseases as well as school drop outs. During Interaction & survey, it was found that students are more receptive to learning and are very likely to adopt healthy behaviors at a younger age. They can also be agents of change by spreading what they have learned in school to their family and community members. In future, our study should assess the attitudes that students have towards sanitation & hygiene.

The study also provided some recommendations :

- Advocate with relevant stakeholders to ensure that all targeted schools have access to toilet facilities. This also includes new construction or rehabilitation of existing sanitation facilities.
- All infrastructures should be gender & disabled friendly. There should be installation of incinerators.
- Students should be actively engaged throughout the construction process to seek their feedback. Once built, consider adding a practical demonstration on proper toilet use by teachers.
- Promote greater education on sanitation & hygiene & include it in curriculum.

References :

1. Bartram, J.; Cronk, R.; Montgomery, M.; Gordon, B.; Neira, M.; Kelley, E.; Velleman, Y. Lack of toilets and safe water in health-care facilities. Bull. WHO **2015**, 93, 210–210.

2. Cronk, R.; Slaymaker, T.; Bartram, J. Monitoring drinking water, sanitation, and hygiene in 000000000000000000000000000non-household settings: Priorities for policy and practice. Int. J. Hyg. Environ. Health **2015**, doi:10.1016/j.ijheh.2015.03.003.

3. Progress on Drinking Water and Sanitation: 2014 Update; WHO/UNICEF: Geneva, Switzerland, 2014.

4. Water, Sanitation and Hygiene in Health Care Facilities: Status in Low and Middle Income Countries and Way Forward; WHO/UNICEF: Geneva, Switzerland, 2015.

5. Jasper, C.; Le, T.T.; Bartram, J. Water and sanitation in schools: A systematic review of the health and educational outcomes. Int J. Environ. Res. Public Health **2012**, 9, 2772–2787.

6. Alexander, K.T.; Dreibelbis, R.; Freeman, M.C.; Ojeny, B.; Rheingans, R. Improving service delivery of water, sanitation, and hygiene in primary schools: A cluster-randomized trial in western kenya. J. Water Health **2013**, 11, 507–519.

7. Blanton, E.; Ombeki, S.; Oluoch, G.O.; Mwaki, A.; Wannemuehler, K.; Quick, R. Evaluation of the role of school children in the promotion of point-of-use water treatment and handwashing in schools and households—Nyanza province, western Kenya, 2007. Amer. J. Trop. Med. Hyg. **2010**, 82, 664–671.

8. Freeman, M.C.; Greene, L.E.; Dreibelbis, R.; Saboori, S.; Muga, R.; Brumback, B.; Rheingans, R. Assessing the impact of a school-based water treatment, hygiene and sanitation programme on pupil absence in Nyanza province, Kenya: A cluster-randomized trial. Trop. Med. Int. Health **2012**, 17, 380–391.

9. O'Reilly, C.E.; Freeman, M.C.; Ravani, M.; Migele, J.; Mwaki, A.; Ayalo, M.; Ombeki, S.; Hoekstra, R.M.; Quick, R. The impact of a school-based safe water and hygiene programme on knowledge and practices of students and their parents: Nyanza Province, western Kenya, 2006. Epidemiol. Infect. **2008**, 136, 80–91.

10. Bar-David, Y.; Urkin, J.; Kozminsky, E. The effect of voluntary dehydration on cognitive functions of elementary school children. Acta Paediatr. **2005**, 94, 1667–1673.

11. Bartlett, S. Water, sanitation and urban children: The need to go beyond "improved" provision. Environ. Urban. **2003**, 15, 57–70.

12. Benton, D.; Burgess, N. The effect of the consumption of water on the memory and attention of children. Appetite **2009**, 53, 143–146.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Preparation of different chemicals/bio-pesticide for the treatment (In reference of south forest division Seoni)

Kashiram karmkar , Zoology RDVV Jabalpur

Only one chemical hypermetric 25% EC was used in this experience which was purchased from the market. Rest all the bio-pesticides were prepared in locally established lab near the study site. The method for preparation of these bio-pesticides id described briefly as below.

1. Preparation of ''BADAGA'' species insecticide:- in Seoni

district, bio pesticide prepared by the local tribal which consist of leaves of five plants and bark of tendu plant. All these plants having some insecticidal properties. The foliar spray of the prepared solution was done in the field on the same day its preparation. The quantity and method of its preparation is given as below.

S no.	Local name	Botanical name	Quantity in kg	Method of preparation
1	Satawar leaf	Asparagous recemosus	0.5	Fresh material were collected from the field and pest prepared by fine grinding on stone. Water was used during the grinding. The pest was dissolved in 20 liter of water.
2	Bhirra leaf	Chlorozylan sutanium	1	
3	Base leaf	Dendrocalamus strict us	0.5	
4	Bhilva leaf	Semecarpus anacardium	0.5	
5	Garadi leaf	Cliestanthus Colinus	0.5	
6	Tendu bark	Diospirous melanoxylon	0.5	
Total			3.5	

2. Leaves of sitaphal (annona squamosa): 1kg leaves of sitaphal (annona squamosa) were collected and pest was prepared by fine gridding on stone. The volume was made up to 10 lit by adding water in it.
3. Leaves of Neem + cow urine were mixed and the solution was diluted with water. The total volume was made up to 10 lit by adding water in it.
4. Leaves of sitaphal + garadi + Neem + cow urine: 1 kg fresh leaves of Neem, sitaphal and garadi were collected and pest was prepared by fine grinding on stone. In this pest 1 liter cow urine was mixed and the solution was diluted with water. The total volume was made up to 10 lit by adding water in it.
5. Leaves of garadi: 1 kg fresh leaves of gradi were collected and pest was prepared by fine grinding on stone. Thish pest was diluted with water. The total volume was made up to 10 lit by adding water in it.
6. **Neem leaves:** 1 kg fresh leaves of neem were collected and pest was prepared by fine grinding on stone. This pest was dilated with water. The total volume was made up to 10 lit by adding water in it.
7. **Neem leaves + cow urine:** 1kg fresh leaves of neem were collected and pest was prepared by fine gridding on stone. In this pest, 1 lit cow urine was mixed. This mixture was furtherer diluted with water. The total volume was made up to 10 lit by adding water in it.

8. **Dry neem leaves+ cow urine:** 0.5 kg dry leaves of neem were collected and powdered. This powder was dissolved in 1 lit of cow urine and kept for one week. This mixture was diluted with water. The total volume was made up to 10 lit by adding water in it.
9. **Chemical treatment with cypermethrin:** cypermethrin 25 EC was purchased from the market. 0.5& concentration was prepared by adding 10 litter water in 20 ml cypermethrin. Precautions were taken during the preparation of this solution because this solution is very strong.
10. All these adobe mentioned solution were prepared fresh and sprayed in concerned treatment blocks. Foliar spray was done in 10 plants of each block.

References

1. Puri G.S. (1953) litter fall in Dehra dune forests. Bull bot. soc. Univ. sager 9:28-34.
2. Browne, F.G. (1968). Pest and disease of forest plantation trees, 1324 p, Clarendon press, oxford.
3. Driessche, R.V.D. (1974). Prediction of mineral nutrient status of tree by foliar analysis. Bot. rev., 40(3) : 347-394.
4. Billings, W.D. (1952) the environment complex in relation to plant growth and distribution Quarter rev biology. 27:251-265.
5. Meshram, P.B. (2005) Tropical Forest insect and their control measures. Khanna Bandhu, 7th Tilak road Dehra dun, Pp 5.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

A STUDY ON EFFICACY IN SERVICES PROVIDED BY ANGANWADI CENTRES FORE CONOMIC EMPOWERMENT

Ms. Shraddha Tambe, Research Scholar, DAVV Indore

Mr. Sandeep Sharma, Sanwer

ABSTRACT :- A number of Government departments at the Central and the State levels have initiated programmes for the economic empowerment of society. This paper has examined the working of Self-Help Groups through which the Government of India not only provides services to children but also endeavours to empower women economically. Self-Help Groups works in association with the local Anganwadi Centres. In this study services and facilities provided by the Anganwadi centres to the beneficiaries were measured and determined how these factors were important for economic empowerment. Through the applying of correlation and regression, the impact was determined. For this study total 200 beneficiaries were chosen on the basis of random and purposive sampling method. The findings concluded that the services and facilities in lieu of employment generation, increase in per capita income, free education, free medical services, and subsidy in food are make them economically empowered.

Keywords :- Economic empowerment, Facilities & Services, Integrated Manner, Effective Implementation.

INTRODUCTION :- India is one of the developing countries in the world. Even now nearly 30 per cent of the Indians belong to below poverty line. So their standard of living can be improved through the Self Help Groups Activities in association with the Anganwadi Centres. Hence as of today, the role of Self Help Groups in the context of improving empowerment to beneficiaries of Anganwadi Centres has become a vital one. Anganwadi Centres could be studied in terms of their influence over economic resources of the family, participation in the household decision making in money matters and on the decisions pertaining to general welfare of the householders. Anganwadi Centres also depends on self development which could be realized through the growth of personality in terms of ability of rural people to influence and participate in the decision making, freedom to start new micro enterprises, income generation capacity, to join in adult education programme if they are illiterate or to pursue their higher education through distance mode when they are literates. The self help group women are also capable of overlaying the prevalence of some evil factors like gender discrimination, gender bias and social attitudes towards people in society. Self Help Group women's ability to influence the behaviour of others and ability to have influential power, improvement in the technical and managerial skill of Self Help Group members, attendance in training programme and Self Help Group meeting, leadership rotation practice and intensity of involvement in Self Help Group activities, etc. are the other aspects of analysing rural empowerment which are seen in self help group.

Two approaches are commonly used by the Anganwadi Centres to examine the empowerment. Empowerment in economic status through (i) Economic intervention such as employment, income generation and access to credit and (ii) Integrated rural development programmes in which, strengthening women's economic status is the only component along with

education, literacy, the provision of basic needs and services and fertility control.

REVIEW OF LITERATURE :- Prekshi, Sehgal, Salil and Kawatra, Asha. (2008) worked on—Anthropometric Measurements of Preschool Children of Gurgaon District As Affected By Socioeconomic Factors- Children have special nutritional needs because of their extensive growth during the preschool age. The growth pattern or anthropometric measurements of a child is a useful criterion for judging his/her nutritional status. A study was conducted to determine the anthropometric measurements of preschool children (4-5 years) of Gurgaon district of Haryana. Data was collected of300 preschool children (150 boys and 150 girls) selected from randomly selected 6 villages namely, Vazirabad, Jharsa, Chakarapur, Badshahpur, Teekli and Palra. Mean height of boys and girls was 87.49 cm and 84.67 cm respectively which was significantly lower than the reference value. Mean weight of boys was 13.65 kg and that of girls was 12.81 kg. However weight of boys and girls was significantly lower than the reference value, and was 88.35% and 86.44% of reference value. Sex-wise analysis showed that mean weight of boys was significantly higher than that of girls. This indicated that boys were heavier than girls in the preschool age. On the basis of mid arm circumference (MAC), 76% children were healthy, 18.3% were on the borderline and 5.7% were undernourished. Sub-optimum nutritional status of the preschool children might be due to lower intake of energy, protein and iron rich foods. While studying the effect of socio-economic factors on anthropometric measurements of children, it was observed that height and weight of children were affected by caste, income, size of family, landholding and father‘s occupation.

Gunajit, Kalita et al., (2006) have reported on —The Effectiveness of the Mother and Child Protection Card as a Community Management Tool: A Case Study. Indore: NIPCCD, Regional Centre Indore The broad objective of this study was to determine the effectiveness of the MCP Card as a community management tool. Mother and Child Protection Card is a folding pictorial tool designed to assist the mother to understand and monitor individual progress of maternal and child health and psychosocial development.

OBJECTIVES OF THE STUDY :-

1. To study the economic empowerment of the beneficiaries from low level income group.
2. To suggest some measures for improvement in the administration of the Aanganwadi Centers.

RESEARCH METHODOLOGY :- In this study, survey research design is adopted. Survey research design was chosen because the sampled elements and the variables that are being studied are simply being observed as they are without making any attempt to control and manipulate them.

Study Area :- In the study, the researcher has included beneficiaries of Aanganwadi Centres located in Indore as the study area.

Data Collection :- Primary Data collection was collected through Specific self-designed Questionnaire based on the 5-Point Likert Scale to measure the impact of facilities and services provided by the Aanganwadi Centres on the Economic Empowerment of beneficiaries belonged to the low level income group. Also, Secondary Data was procured from Internet Websites, Journals and E-Journals, Books / Magazines, Research Papers.

Sampling Technique :- For effective coverage and lower cost purposive sampling techniques were used to select the participating respondents.

Sample Size :- 200 beneficiaries were selected from the above mentioned segments.

Data Collection Instrument : -The questionnaire was developed into many parts in such a way as to

reflect the perception of beneficiaries towards the facilities and services provided by the Anganwadi centres as the researcher aimed to keep the parts of questionnaire similar in content in order to get a comprehensive view.

The results of the reliability analyses determined that the Cronbach's α values was 0.918. This value is higher than 0.7, meeting the requirement suggested by Guielford（1965）. Thus, it is concluded that the questionnaire used in this study has high reliability.

Data Analysis Tests :- Correlation & regression analysis were applied to examine the impact of economic empowerment provided by the Aanganwadi Centers on the beneficiaries belonged to low level income group.

RESULT OF HYPOTHESIS :- H_{01}: There is no significant impact of facilities and services provided by the Aanganwadi Centers on the economic empowerment of beneficiaries belonged to low level income group.

Model Summary[b] on facilities and services by the Aanganwadi Centers and the economic empowerment of beneficiaries

Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate	Change Statistics				
					R Square Change	F Change	df1	df2	Sig. F Change
1	.174[a]	.030	.025	1.19351	.030	6.199	1	198	.014

a. Predictors: (Constant), FS

b. Dependent Variable: EE

Above table shows the correlations and it is evident from this table that Pearson's correlation coefficient between facilities and services by the Aanganwadi Centers and the economic empowerment of beneficiariesis 0.174 which is significant since the significant value (p-value) 0.014 is less than 0.05. Therefore, we may conclude that there is significant association between facilities and services by the Aanganwadi Centers and the economic empowerment of beneficiaries. Furthermore, since the value of correlation coefficient r suggests a strong positive correlation, we can use a regression analysis to Model the relationship between the variables.

Over all model summary shows the value of multiple correlation coefficient R=0.174, it is the linear correlation coefficient between observed and model predicted values of the dependent variable, Its large value indicates a strong relationship. $R^{2,}$ the coefficient of determination is the squared value of the multiple correlation coefficient. Adjusted R^2=0.030, R^2 change is also 0.025 and these values are significant which shows that overall strength of association is noteworthy. The coefficient of determination R^2 is 0.030; therefore, 30% of the variation in economic empowerment of beneficiariesis explained by facilities and services by the Aanganwadi Centers.

ANOVA[a] on facilities and services by the Aanganwadi Centers and the economic empowerment of beneficiaries

Model		Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
1	Regression	8.830	1	8.830	6.199	.014[b]
	Residual	282.045	198	1.424		
	Total	290.875	199			

a. Dependent Variable: EE
b. Predictors: (Constant),FS

Coefficients[a] on facilities and services by the Aanganwadi Centers and the economic empowerment of beneficiaries

Model		Unstandardized Coefficients		Standardized Coefficients	t	Sig.
		B	Std. Error	Beta		
1	(Constant)	7.309	1.495		4.890	.000
	FS	.623	.250	.174	2.490	.014

a. Dependent Variable: EE

ANOVA is used to exhibit model's ability to explain any variation in the dependent variable. ANOVA table exhibits that the hypothesis that all model coefficients are 0 is rejected at 1% as well as 5% level of significance which means that the model coefficients differ significantly from zero. In other words we can say that there exists enough evidence to conclude that slope of population regression line is not zero and hence, facilities and services by the Aanganwadi Centers are useful as predictor of the economic empowerment of beneficiaries.

From the table of coefficients, the regression equation can be obtained as Economic empowerment of beneficiaries= (Y) 7.309 + .623 (X_1)*facilities and services by the Aanganwadi Centers.

FINDINGS :- The above null hypothesis is not supported and found that beneficiaries are economic empowered through the facilities and services provided by the Anganwadi Centers and also further discussed that if more improvements are to be made in the system of the centers, the more beneficiaries would be benefitted with the services.

CONCLUSION :- Finance is an element which everyone needs. Regular and immediate financecan play an important role for development of socio-economic conditions of the women particularly the rural poor. Microfinance is expected to play a significant role in povertyalleviation and rural development particularly the rural women. The potential for growingmicro finance institutions in India is very high. Major cross-section can have been benefitedif this sector will grow in its fastest pace. From the analysis of data it can be concluded thatnumbers of members have started savings only after joining the groups while majority of themembers have no savings in the pre-SHG era. After joining the groups most of the memberssolved their problems alone.it is observed that SHGs which showed arena and motivated women for formal affiliation to groups not just for improving Economic Status but also to handle family better than earlier. They proved themselves that they are good transformational leaders of their family as well as society by effectively and efficiently using the available sources. But still there is lot more to prove and at the same time their present performance is not negligible. This micro study shows that SHGs are leading Women to become empowered.

SUGGESTIONS :- Based on the present study the following suggestions have been made for future lineof work.

- Special training programme should be provided regarding the proper accounts keeping and accounting experts should be invited as a resource person so that the beneficiaries can enhance their accounting

knowledge and maintain their cash book and other necessary books of accounts accurately.

- For better functioning of the groups women should be properly educated and periodical training at regular intervals may be made and also a study on the respective field may be conducted to outcome the findings.
- The study was conducted in only M.P districts with reference to socioeconomic development through microfinance, it is necessary to have studies in other areas also in order to generalize the findings.
- The level of corruption in our country should be checked to prevent the misplacement of microfinance funds to the hands of the politicians in the society.
- The Poverty Alleviation Programme should be restructured to meet the needs of the less privileged members of the society mostly the women that are in serious need for microfinance.

REFERENCES :

1. Women Empowerment and Inclusion", UNDP in India, 12 March 2015, http://www.in.undp.org/content/india/en/home/ourwork/womenempowerment/overview.html.
2. Ministry of Women and Child Development, Implementation of ICDS Scheme, Press Information Bureau Government of India, Krishna Ram Tirath, 15 March 2013, 17 March2013. http://pib.nic.in/newsite/PrintRelease.aspx.
3. Evaluation Report on Integrated Child Development Services, Programme Evaluation Organization, Planning Commission, New Delhi, p-18
4. Activity Note - 2012-2013, Panchkula: Women and Child Development Department, Government of Haryana, p. 9.
5. Other Schemes, Department and Women and Child Development, Haryana, 12 December2012 http://wcdhry.gov.in/new_schemes_htm
6. Department of Women and Child Development, "Role and Responsibilities of an Anganwadi Worker", Government of Haryana, 11 March 2013, http://wcdhry.govin/job_responsibility.htm
7. Department of Women and Child Development, "Role and Responsibilities of a Supervisor," Government of Haryana, 11 March2013, http://wcdhry.govin/job_responsibility.htm.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

स्वंय सेवी संस्थाओं का समाज पर प्रभाव

लक्ष्मी रजक
शोधार्थी ग्रामीण विकास, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

संगठन की ताकत को कौन नही जानता ? संगठन के माध्यम से अनेक असाध्य कार्य भी सफलतापूर्वक सम्पन्न हो जाते हैं। स्वसहायता समूह ने इसे पूरी तरह से प्रमाणित कर दिया है। स्वस्वहायता समूह का आधारभूत सिद्धात है – संगठन के माध्यम से स्वंय की सहायता।

हमारे देश एवं प्रदेश के विभिन्न अंचलों में तेजी से स्वसहायता समूह का गठन किया जा रहा है, परन्तु इस कार्य से जुड़े कार्यकर्त्ताओं को समूह गठन के उद्देश्य, प्रकिया एवं उसकी कार्यप्रणाली के बारे में स्पष्टबध जानकारी नही है इसलिए अधिकांश समूह दिशाहिन हो रहे हैं। आज स्वैच्छिक क्षेत्र और विशेषकर स्वंय सेवी संस्थाओ के बीच ईमानदारी और सत्यनिष्ठा पारदर्शिता, विकेन्द्रीकरण, सूचना की स्वतन्त्रता तथा जनतांत्रिक साझेदारी की मान्यता चली आ रही थी। यदि इन न्यूनतम नैतिक मापदण्डों की अवहेलना की गई तो समाज के अन्य घटकों की भॉति इन पर भी सवालिया निशान लगने शुरू हो जायेंगे, जिसकी शुरूआत कहीं – कहीं देखने को मिल भी रही है। स्वंय सेवी संस्थाओं को समाज के हित में कार्य करते हुए स्वंय अपने लिए एक सर्वमान्य'' आचार संहिता'' तैयार करनी पड़ेगी जिसे वे स्वंय सजक होकर आपसी नियंत्रण के रूप में चलाते रहें। वस्तुतः इस प्रकार की संस्थाओ और संगठनों की नींव एक सुविचारित मिशन पर आधारित होती है। इसलिए इनके लिए यह भी आवश्यक है कि अपने विजन और मिशन तथा दायित्वों की रक्षा करना भी इनका स्वंय का कर्तत्य है। अतः सामाजिक विकास की धारा का पोशित करने में स्वैच्छिक संगठनों का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। इनमें अधिकांश संस्थाएँ सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय मुद्दों के आधार पर विकास की प्रकिया को निरंतरता प्रदान कर रहे हैं। इस प्रकिया को निरंतर जारी रहना अति आवश्यक है क्योंकि स्वंतन्त्रता के 50 वर्ष बीत जाने पर यद्यपि देश में वैज्ञानिक प्रगति तो बहुत की लेकिन समाज का आज भी एक बड़ा वर्ग ऐसा है जो जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं से अछूता है, और देश तभी प्रगति कर सकता है जब देश का अन्तिम व्यक्ति विकास की प्रकिया में शामिल होकर अपना योगदान कर सकेगें। वर्तमान में विश्व के अन्दर तेजी से हो रह परिवर्तन तथा विद्यमान सामाजिक –आर्थिक व्यवस्था के विकास में स्वंयसेवी संस्थाओं का उद्भव एवं विकास उनकी प्रकृति एवं स्वरूप विकास कार्यो में उनकी भागीदारी ,उनकी कठिनाईयॉ व निराकरण के उपाय तथा भारतीय राजनैतिक व्यवस्था में स्वंय सेवी संस्थाओं के पुनः अभिमुखीकरण की दृष्टि से भी इनका अध्ययन करना अति आवश्यक हो जाता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन इसी दिशा में किया गया एक प्रयास है।

''स्वैच्छिक'' शब्द का ऐतिहासिक अर्थ बिना किसी साधन के अथवा'' स्वैच्छा'' से कार्य करना माना जाता है। इसका अंग्रेजी शब्द 'वॉलेन्टरी' इस बात का पर्याय बन गया है कि लोग अपने रहने, खाने, भोजन परिवार वहन की चिन्ता किये बिना सामाजिक परिवर्तन की कसक के बूते स्वैच्छिक विकास के प्रयासों में कूद पड़े किन्तु वास्तविकता ऐसी नही हैं। स्वैच्छिक शब्द का अर्थ स्वैच्छा से किये जाने वाले कार्यो से है, जिसमे सरकारी हस्तक्षेप न्यूनतम होता है। अपने देश के इतिहास में स्वैच्छिक विकास के प्रयासों की अहम भूमिका रही है इसको समझने के लिए एक ऐतिहासिक सिंहावलोकन की आवश्यकता है। प्रथम चरण में उन्नीसवीं शताब्दी की शुरूवात में समाज सुधार के तमाम आन्दोलन देश में चले । इन आन्दोलनों में महिलाओं, हरिजनों इत्यादि के प्रश्नों से लेकर शिक्षा, स्वास्थ्य के प्रश्न भी जुड़े रहे थे। इन्होंने एक विशिष्ठ समाज सुधार की भूमिका निभाई। राज राम मोहन राय, ब्रह्म समाज, फरदी आन्दोलन और किश्चयन मिशनरी

लोगों के प्रसास इस श्रेणी में लाये जा सकते हैं। दूसरा चरण 1850 से 20 वीं शताब्दी की शुरूवात तक माना जा सकता है इस अवधि में अंग्रेजों ने अपने शासन को और सशक्त करने के लिए व देश के संसाधनों पर कब्जा जमाने के लिए कई तरह के कानूनी बनाये। इस अवधि में दो तरह के स्वैच्छिक प्रयास रहें एक वे जो कि सरकार के इन तमाम कानूनों के विरोध में उभर रहें आन्दोलनों को मदद पहुँचाते रहे दूसरे प्रयास वे थे जो कि सांस्कृतिक और शैक्षणिक संस्थानों के माध्यम से लोगों में नयी तालीम की शिक्षा और नये मजदूर संगठन बनाने की बात कर रहे थे। तीसरा चरण वह है कि जब बीसवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में स्वतन्त्रता आन्दोलन और महात्मा गांधी जी को नेतृत्व रहा । गांधीजी के स्वदेशी आन्दोलन से एक नये आर्थिक ढांचे की भी गतिविधियॉ शुरू हुई। इस चरण में गाधीवादी विचारधारा से स्वैच्छिक विकास के अनेकों कार्यकता व संस्थाएँ तैयार हुई। चौथा चरण स्वतन्त्रता और उसके बाद के बीस वर्शों का है इस चरण में स्वैच्छिक विकास के तमाम कार्यक्रम सरकारी विकास के प्रयासों और राष्ट्र निर्माण की परिधि के साथ ही जुड़े रहे और उनकी कोई पृथक और विशिष्ट पहचान न बन सकी । पॉचवे चरण को हम 1960 के दशक के 1970 के मध्य मान सकते हैं। स्वतन्त्रता के उपरान्त की नयी पीढ़ी के कई लोग शिक्षा प्राप्त करने के बाद शिक्षा, स्वास्थ, पीने के पानी, खेती इत्यादि समस्याओं से निपटने क लिए स्वैच्छिक वैकल्पिक विकास के प्रयासों में जुट गये। छठे चरण की शुरूवात इमरजेंसी की घोषणा से मानी जाती है, इस समय लोगों की अपनी समझ सोच और जानकारी के आधार पर संगठित दबाव के माध्यम से स्वविकास को बल मिला। खेतिहर मजदूर, दलित आदिवासी, महिलायें हरिजन इत्यादि समुदायों के बीच में जागरूकता और संगठन निर्माण का का बड़ी तेजी से स्वैच्छिक विकास के प्रयासों का स्वरूप लेने लगा है। इसके बाद सातवां चरण पिछले छः वर्षों का माना जा सकता है, जिसमें विकास के नये मुद्दे आज के परिवेश में स्वैच्छिक विकास के प्रयासों से ही उभर सकें। आज के परिवेश में स्वैच्छिक विकास के कार्यक्रमों ने एक नया और व्यापक स्वरूप हासिल किया है।

इतिहास के अवलोकन से स्वच्छिक विकास के प्रयासों के अनेक स्वरूप देखने को मिलते हैं। कहीं पर ये प्रयास लोगों की सेवा वाले प्रयास थे, कहीं पर किसी विशिष्ट परेशानी में लोगों की मदद के प्रसास थे, कहीं पर लोगों की जागरूक और संगठित करने के प्रयास थे,कहीं पर सरकारी नीतियों का विश्लेषण और वैकल्पिक सिद्धान्तों के अवरूपण के प्रयास थे। अलग–अलग उद्देश्यों से अलग–अलग प्रकारों से शुरू किये गये स्वैच्छिक विकास के ये तमाम प्रयास अलग – अलग स्वरूप लेते हैं। स्थानीय स्तर पर महिला मण्डल और युवा दल भी ये काम करते हैं। आज के परिवेश में नक्सलवादी की संज्ञा ग्रहण किये राजनीतिक दल भी सामाजिक परिवर्तन की विधा से जुड़े हुए माने जा सकते हैं। इनमें से अनेकों प्रयास सोसायटी रजिस्ट्रेशन कानून के तहत भी पंजीकृत हे और अनेकों सरकारी संस्थाएँ भी वही वैधानिक स्वरूप लिये हुए हैं, पर जब हम स्वैच्छिक विकास के प्रयासों के स्वरूप की बात करते हैं तो हम सिर्फ उन्हीं प्रयासों को लेते है जो वस्तुतः स्वैच्छिक हैं, वस्तुतः सरकारी ढांचे और तंत्र से परे हैं, वस्तुतः निजी स्वार्थ के क्षेत्र से पृथक है और किसी धार्मिक राजनैतिक दल की छत्र छाया से अलग हैं, इन स्वैच्छिक विकास के प्रयासां को समझने के तीन मुख्य आधार हैं।

इतिहास में स्पष्ट है कि स्वैच्छिक विकास के तमाम प्रयास अलग–अलग प्रेरणा से शुरू हुए है आज के परिवेश में गांधीवादी विचारधारा से प्रेरित तमाम प्रयास उभर कर सामने आये इनका मूल रचनात्मक स्वरूप स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान प्रस्तुत हुआ और आगे चलकर स्वतन्त्रता उपरान्त भी उसी विचारधारा से काम करता रहा। दूसरा प्रेरणा का स्त्रोत समाजवादी विचारधारा रहा हैं, जिसका सबसे विशिष्ट उदाहरण बिहार की छात्र–युवा संघर्ष वाहिनी माना जा सकता है। मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित तमाम लोग मार्क्सवादी पार्टियों और नक्सलवादी आंदोलन से हटकर स्वैच्छिक विकास के कार्यक्रमों को प्रेरित करने में अहम् स्थान रहा है। हिन्दू, इस्लाम, बौद्ध प्रेरणा से प्रभावित स्वैच्छिक विकास के कार्यक्रमों में लगे हुए लोग संस्थाएँ देश में अनगिनत है।

दूसरा आधार वह है कि जिससे हम यह तय करते हैं कि स्वैच्छिक प्रयासों का क्या महत्व है और वो एक विशिष्ट परिवेश में किस विधा से चलाये जा सकते हैं। अगर हम आज चल रही स्वैच्छिक विकास की संस्थाओं पर नजर डाले तो कई तरह की विधाएँ उभर का आती है, पहली विधा वह है कि जिसमें हम यह मानकर चलते हैं कि लोगों को सहायता की जरूरत है गरीब शोशित कमजोर वर्ग के लोगों को कुछ आर्थिक , कुछ शैक्षिक , कुछ तकनीकी सहायता की आवश्यकता हैं तभी वह अपनी समस्याओं से जूझ सकते हैं इस आधार पर काम करने वाले स्वैच्छिक विकास की संस्थाएँ चैरिटी (परोपकारी) और कल्याणकारी संस्थाएँ मानी जाती है। मुसीबत के समय राहत कार्य करने वाली संस्थाएँ भी इस श्रेणी में आती है। इनके कार्य की प्रणाली के अन्तर्गत लोगों की आवश्यकता अन्तर्निहित है और इनकी गतिविधियों में सेवा में तमाम कार्यकम भोजन प्रदान करने से लेकर स्वास्थ्य प्रदान तक देखे जा सकते हैं। दूसरी विधा विकासीय मानी जा सकती है।, इसमें लोगों को बाहरी मदद की आवश्यकता है यह तो मानते हैं पर लोगों को स्वंय अपने विकास से जोड़ना है यह भी जरूरी है इस तरह के काम करने वाली संस्थाओं में विकास क तमाम कार्यकम आपसी जुड़ाव पर चलाए जाते हैं। शिक्षा और आर्थिक कार्यकमों सिंचाई और जंगल के कार्यकमों में यह जुड़ाव देखा जा सकता है।

स्वैच्छिक विकास की तीसरी सशक्तता का आधार मानी जा सकती है इसमें स्वैच्छिक विकास की संस्थाएँ यह मानती है कि गरीब और शोशित संगठित होकर ही अपने विकास के लिए संघर्ष कर सकते हैं। इसमें जागरूकता बढ़ाने का कार्यकम, संगठन निर्माण, शिक्षा के कार्यकम गरीबों के अपने संसाधनों के विकास के कार्यकम, मजदूरों की लड़ाई और कुछ सकिय कानूनों के कियान्वयन के संघर्ष जोड़े जा सकते हैं।

चौथे विधा विकास को व्यापक स्वरूप में देखने की हैं, इसमें संघर्ष और परिवर्तन को अलग – अलग स्तर पर महत्व दिया गया है इसके तहत अनुसंधान, प्रलेखन, प्रशिक्षण करने वाली संस्थाएँ सरकारी नीतियों का विश्लेषण कर वैकल्पिक सिद्धान्तों का अवरूपण करने वाली संस्थाएँ व्यापक स्तर पर नेटवर्क और फैडरेशन (संघ) बनाने वाले प्रयास व स्थानीय स्तर से राष्ट्रीय व अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर समान रूप से संघर्ष करने वाले प्रयास जुड़े हुए हैं। यह चार प्रकार की विधाएँ किसी एक संस्था में एक साथ भी उपलब्ध हो सकती है लेकिन प्रत्येक विधा का अपना तर्क है और उसको विकसित करने वाले कार्यकमों का अपना स्वरूप बनता हैं। कुछ संस्थाएँ एक विशिष्ट स्थान पर ही एक विशिष्ट समुदाय के बीच में काम करती है। स्थानीय स्तर पर इन तमाम मुद्दों पर कार्यकम के तहत् निर्णय विकास से जुड़ी हुई संस्था का विशिष्ट स्वरूप देता है।

आज के परिवेश में स्वैच्छिक विकास की संस्थाएँ अलग – अलग आकार की हैं, कुछ तो बहुत छोटी एक दो गांवों में काम कर रही हैं और कुछ पूरे राष्ट्र के स्तर पर या प्रदेश के स्तर पर कार्य कर रही हैं। पहली श्रेणी में हम उन तमाम छोटे – छोटे संगठनों और समूहों को ले सकते हैं जिनकी संख्या हमारे देश में हजारों में हैं और कुछ सीमित एक दो गावं के अन्दर ही या शहर की किसी एक गरीब बस्ती में काम कर सकते हैं, इनमें से मुख्यतः वौलेन्टीयर (स्वंय सेवक) या अशंकालिक कार्यकर्ता ही है और कुछ एक दो लोग ही शायद पूर्ण कालिक तौर पर कार्य करते हैं। इसके साधक अधिकांशतः स्थानीय स्तर पर ही जुटाए जाते हैं। कभी कभार बाहर से कुछ मदद मिल जाये तो ठीक। दूसरी श्रेणी उन मध्य आकार की संस्थाओं की है जो किसी एक ब्लाक में गांवों के एक समूह में काम करती हैं। इनमें पॉच , छः, आठ, दस पूर्णकालिक स्टाफ एक प्रोजेक्ट बजट के आधार पर अपनी गतिविधियों को चलाता है। उनका यह बजट वर्ष में लगभग एक लाख रूपयें से कम का होता है। तीसरी श्रेणी उन बड़ी संस्थाओं की है जिनमें बीस से पचास फुल टाइम लोग हैं। पन्द्रह से बीस लाख रूपये तक वार्षिक का बजट है और वे व्यापक क्षेत्र में अपने काम को फैलाये हुए हैं चौथी श्रेणी उन व्यापक संगठनों और संस्थानों की मानी जा सकती हैं (जिनकी संख्या देश में बहुत कम हैं) जिनमें सौ से अधिक फुल टाइम स्टाफ काम करता है और जिनका वार्षिक बजट पचास, साठ

लाख रू. से अधिक है। यदि आज के परिवेश में स्वंय सेवी स्वैच्छिक विकास के प्रयासों से जुड़ी हुई संस्थाओं को प्रेरणा, विधा और आकार के हिसाब से बांटे तो हमें अलग – अलग स्वरूप और अलग – अलग ढांचे देखने को मिलेगें, इन संस्थाओं में प्रेरणा के स्वरूप अलग हो सकते है, काम की विधा अलग होती है और उनका आकार अलग होता है पर किसी भी तरह की स्वैच्छिक विकास की संस्था अपने क्षेत्र में विकास कार्यो में जुटी रहती है।

प्राचीन काल से ही स्वंय सेवी संस्थाओं की समाज में महत्वपूर्ण भूमिका रही है समाज की देख – रेख व उसकी विकास की इच्छा से उत्प्रेरित ये संगठन खासकर अभावग्रस्थ लोगों के बीच शिक्षा, स्वास्थ्य समाज कल्याण और आर्थिक सुधार के कार्यकम चलाते हैं (गैर सरकारी संगठन 1911) इन कार्यों क माध्यम से वे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से जनतांत्रिक कार्य पद्धितियों को प्रोत्साहित और विकसित करते हैं। गैर सरकारी संगठन समाज की जरूरतों को पूरा करने के लिए नयी प्रकियाओं व पद्धितियों को सामने लाने में अग्रणी रहे हैं, हाल के कई वर्षो में सामाजिक पर्यावरणीय और आर्थिक विकास की टिकाऊ प्रकियाओं तथा शान्ति जनतंत्र मानवाधिकार, स्त्री –पुरूष समानता व निर्धनता के सवालों पर कार्यवाही ही कार्यकमों के केन्द्र रहे है।

स्वतन्त्रता के पश्चात हर भारतीय तक स्वतन्त्रता का लाभ पहुंचाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य था जिसे स्वीकारते हुए राष्ट्र निर्माताओं ने भारतीय समाज को सदियों से व्याप्त निर्धनता दरिद्रता, अशिक्षा व पिछड़ेपन को दूर करने के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना से सामूदायिक विकास योजनाओं को ग्रामीण विकास का माध्यम बनाया, परन्तु जन सहभागिता के अभाव के कारण इन योजनाओं से वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति नही हो पायी । परिणामतया इन विकास योजनाओं में जन सहभागिता बढ़ाने हेतु स्वंय सेवी संस्थाओं के सहयोग की आवश्यकता पर बल दिया गया, तथा सरकार द्वारा ग्रामीण स्तर पर जहॉ नवयुवक मंगल दल, महिला मंगल दल, ग्राम सुधार समितियों और ग्राम विकास समितियों का गठन व स्थापना की गई वहीं राष्ट्रीय एवं प्रादेशिक स्तर पर भी ऐसे स्वंय सेवी संगठनों की स्थापना के कियान्वयन में बल्कि वित्तीय संसाधन जुटाने में भी सहायक सिद्ध हुए है। इनमें अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, लोक शिक्षा परिषद , दीन द्याल शोध संस्थान आदि प्रमुख हैं।इन संस्थानों के माध्यम से न केवल ग्रामीण विकास की अभिकल्पना की गयी बल्कि इन संस्थाओं से ग्रामीण विकास के परम्परागत मूल्यों में परिवर्तन की आशा भी की गयी थी, फिर भी इन योजनाओं के लाभ वांछित व्यक्तियों तक नही पहुंच पाये । इन सारे तथ्यों को दृष्टिगत करते हुए नीति निर्माताओं के द्वारा छठी पंचवर्शीय योजनाओं के कियान्वयन में भी स्वंय सेवी संस्थाओं को पृथक बजट की व्यवस्था करते हुए उनकी सहभागिता सुनिश्चित की गयी । चूँकि सामान्यतया स्वंय सेवी संगठन लोगों का ऐसा समूह होता है जो कि उस समाज में परिवर्तन का नेतृत्व करता है इस दृष्टि से स्वंय सेवी संगठनों द्वारा विकास हेतु योजनाओं का निर्माण नीति, सामाजिक चेतना, जागृति तथा निर्बल वर्ग के विकास में स्वंय सेवी संस्थाओं द्वारा अपनाये गये दृष्टिकोण और प्रकृति से किसी भी समाज की मूल व्यवस्थाओं का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता हैं।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Study of Nutritional Awareness amongst College girls with reference to frequency of Junk Food Consumption

Bhavana Tripathi* Dr Rajlakshmi Tripathi**
*Research Scholar RD University, **Associate Professor, Govt M H College of Home Science & Science for Women, Jabalpur, MP

Abstract :- Junk foods are rich in calories, salt and fats. Junk foods become a prominent feature of the diet of youngsters in the developing country. Excess consumption of junk foods lead rise to wide variety of health disorders like; obesity, cardiovascular disease CVD type two diabetes, diverticulitis, bowl cancer constipation etc. The aim of present study was to know about junk foods eating habits of college going girls and their awareness regarding food quality, nutrients fact label and chemicals and their harmful effects present in junk food. Sample population was selected randomly by using disproportionate stratified sampling technique from Government M.H. College of Home Science and Science for Women (Autonomous), Jabalpur Madhya Pradesh. A pre structured questionnaire has prepared for the interview by the subjects. Each student has given sufficient time to understand the multiple choice questions and the response were recorded. The data was then arranged, tabulated and discussed upon and was presented with the help of tables and figures. The data was further statistically analysed by presenting the information through percentage. The analysis showed that 18% students were not aware about quality of food, nutritive value, chemical present and its harmful effect on health. Based on the study it was found out that 62.5 % of students had no idea for balanced diet, 78.2 % of individuals liked junk food for their taste as it was one of the predominant factor for their choice. While 13.9 % were taking junk food as an alternative to regular meal. Only 21.5% had the habit of seeing the list of nutrients.37% of respondents, they had no idea about chemical and their safety level. Around 28.8% of students said they were not aware about consequences. In order to promote healthy food, the food manufacturer should produce healthy foods with good taste and an attractive presentation. Students will need to acquire the knowledge skills regarding the food habit this study concluded that the students partly aware about food quality, balanced diet, nutrients fact label, and harmful effects of excessive consumption of junk foods. This study highlights the need for educational program to raise the awareness of the health risk produced by intense consumption of such foods.

Introduction :- Junk food simply means an empty calorie food. An empty food is a high calorie or calorie rich food which lacks in micronutrients such as vitamins, minirala, or amino acida and fiber (Ashkiran and deepthi, 2012). The term junk food was coined as slang in the public interest in 1972 by Michel Jacobson, Director of the Center for Science, Washington D.C.(Brendan, O Neill, 2006).Junk foods are rich in calories, salt and fats and poor in other nutrients.Common junk food includes fast food, chips, candies, gums, sweat disserts as well as alcoholic beverages (Phillips et al. 2004). India s fast food industry is growing by 40% a year. Statistics place India in 10th place in fast food per capita spending figures with 2.1of expenditure of annual total spending as per (Ashkiran and deepthi, 2012).

Eat healthy and live healthy is one of the essential requirement of for long life. Unfortunately, today's word has been adapted to a system of consumption of foods which has several adverse effects on health.Excess consumption of junk foods lead rise to wide variety of health disorders like; obesity, cardiovascular disease CVD type two diabetes (hu et al. 2010), diverticulitis,

bowl cancer constipation etc. Nature in 2007 states that preventable diseases caused mainly due to smoking, poor diet as junk food consumption and lack of exercise could kill millions in developing world in next 10 year. Obesity has increased rapidly in incidence to become a global issue today (Kestan et al. 2013; World Health Organization. 2013).

Junk foods become a prominent feature of the diet of youngsters in the developing country. Many students have adapted to such changing fast-food trend culture. Several studies have found adolescents staying away from home is associated with increased consumption of these food with high calorie value (Larson et al. 2011) and poorer diet quality which finally ends up in weight gain. However, most adolescents may not be acquainted of the high calorie content of such items because the information is often not easily accessible in fast- food shops. High salt contents food can be act as addictive substances that stimulate the dopamine receptors in the brain, leading to increase in craving and hunger. It leads to increased appetite, calorie consumption, overeating, obesity and related illness (Cocores et al. 2009). Nowadays, unhealthy dietary habits are highly prevalent in the college going adolescents. Students should know that these kinds of eating habits create nutritional deficiencies along with weight gain which ultimately consequence in metabolic syndrome. Additionally, the development of a healthy lifestyle is important because a healthy body enhances academic performance (Giovannini et al. 2010; Gourdet et al. 2014; Egner et al. 20 14).

Rapid changes in diet with increasing consumption of oil, fats and trans fats and decreasing consumption of vegetables and fruits are the factors fast food related health problems. Sometimes food additives are added to junk food to increase the shelf life, taste and also to preserve it from microbial contamination. The internal barriers to nutritional change include negative perception of healthy eating, the decreased taste difficulty in changing familiar eating habits, eating for comfort and the prioritization of mental health (Barre et al. 2011). Phosphorous containing food additive causes serious health effects on people with renal disorder (Sullivan et al. 2009). The present study planned to conduct a survey to determine the level of awareness, knowledge and attitude towards junk foods. The study has been taken with the following objectives:

- To know about the choice preference of college going girls.
- To elicit predisposing factors that make students consume junk foods.
- To assess the Level of awareness regarding food quality, nutrients fact label, chemicals present in food and their adverse effect among them.

Material and methods :- The present work was conducted in Madhya Pradesh India. The population sample included students selected from government MH College of home Science and Science for women hostel, Jabalpur. The sample population 224 were randomly selected by using disproportionate stratified sampling technique for this study. All the participants were in the age group from 16-21 years. The data regarding the study was collected from both sources viz .primary and the secondary sources. Collection of primary Database carried out by perceiving the views and ideas from girls through filling up of pre-structured questionnaire by interview method. Collection of secondary data was done by information obtained from various books, journals, newspapers, websites and university libraries. A single page questionnaire containing set of 10 multiple choice questions was prepared and distributed individually in their rooms. Before interview the students were given a brief overview about junk food and their ill effects. The information gathered and obtained for the study was carefully interpreted and condensed into master chart. The data was then arranged, tabulated and discussed upon and was presented with the help of tables and figures. The data was

further statistically analysed by presenting the information through percentage.

Questionnaire :-

1. What is your favourite food among the following?
(a) Fast food (b) Snacks (C) Soft drinks (D) Candies

2. Do you check food quality if bought from market?
(a) Yes (b) No (c) Sometimes (d) Never

3. Do you check the nutrient fact label in the food?
a) Yes (b) No (c) Sometimes (d) Never

4. Are you aware about the chemicals for preservation or colour present in food and its safety level?
(a) Yes (b) No (c) No idea (d) Yes sometimes

5. Do you know the harmful effect of chemical present in food?
(a) Yes (b) No (c) No idea (d) Yes sometimes

6. What are the factors influencing the choice of food
(a) Time (b) Taste (c) Changing lifestyles (d) Influence of advertisement?

7. How many times do you eat these foods on an average per week?
(a) Once or twice (b) Thrice (c) Four times (d) Five or more than five times

8. Do you know having such food on a daily basis makes you eat more calories?
(a) Agree (b) Disagree (c) Sometimes (d) Never

9. Do you take such food as an alternative to regular meals?
(a) Yes (b) No (c) Sometimes (d) Never

10. Do you know about food pyramid for balanced diet?
(a) Yes (b) No (c) Some idea (d) No idea

Results :

Favourite junk food :- The total sample size includes (N= 224 individuals).The types of junk foods preferred by students is given in table no. 2. Nearly 39 % respondents preferred snacks, followed by 36% of individuals who like fast food, 12% consumed soft drinks and the remaining 12% preferred to take candies.

Table no. 2 Respondents favourite junk food

Favourite food items	Respondents counts (N=224)	N%
Fast food	81	36.2%
Snacks	88	39. 3%
Soft drinks	28	12.5
Candies	27	12.06

Junk food eating habits :- Three out of out of out of ten questions were asked to analyse eating habits of students. The responses for whether the junk food serves as an alternative to regular meal is given figure no. 2. Around 4% individuals indicated that they never take junk food as an alternative to regular meal, while 20% of girls simply denied, 61% of students indicated that they would take sometimes, very least quantity 13% indicated that they would take junk food as an

alternative to regular meal. And when the students were asked to select the factor that influences them in selecting the type of junk food, 78% opted for taste, 9% for time, 5% opted for changing life style and remaining 5% opted for influence of advertisement as given in figure no. 1.

Figure no. 1: factors affecting the choice of junk food

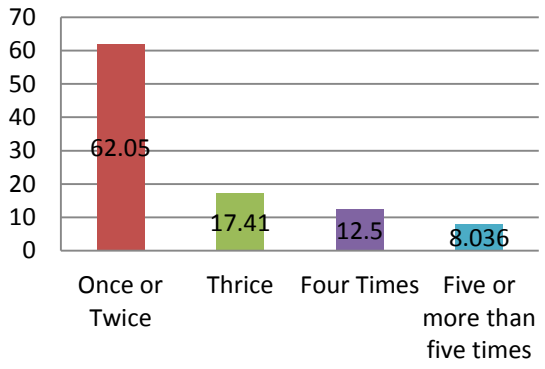

Figure no. 2:consumption of junk food as an alternative to regular meal

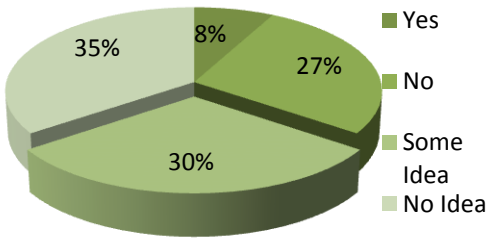

From figure no. three it was found out that 62% opted for once or twice per week, 17% of students opted for three times per week, 12% for four times and only 8% of respondents opted for five or more than five times per week.

Figure no. 3: number of serving of junk food by individual in per week

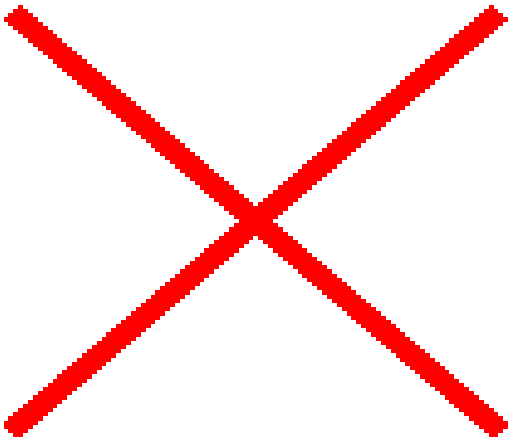

Awareness about the junk food :- Out of ten questions four questions were asked to analyse students' awareness level about junk food. About 53% of respondents said that they check food quality sometimes; followed by 35% respondents who check food quality regularly, 8% of students said they don't check the quality and only 3% of students who never check the quality of foods. For the question related to nutrients fact label awareness, 9.4 % of respondents said they did never check the nutrients label, followed by 21.5% of respondents checked the label, 24.2% who did not check the label and about 45% of majority checked sometimes. In the case of chemicals and their safety level related information, only 7.2% of respondents were aware of it, 25.5% of students were unaware, 30. 4% of students have specified that they had some idea about some chemical and their safety level and 37% of respondents; they had no idea about chemical and their safety level. When asked about harmful effect of chemical present in junk food, 47.4% of respondents said they had some idea about harmful effects of chemicals in junk food, around 28.8% of students said they were not aware about consequences, and 23.6 % were opted for yes they were aware about it. Responses to various parameters such as food quality, nutrients fact label, chemical safety level and its harmful effects are given in figure four.

Figure no. 4 : responses to various parameters such as food quality, nutrients fact label chemical safety level and its harmful effects.

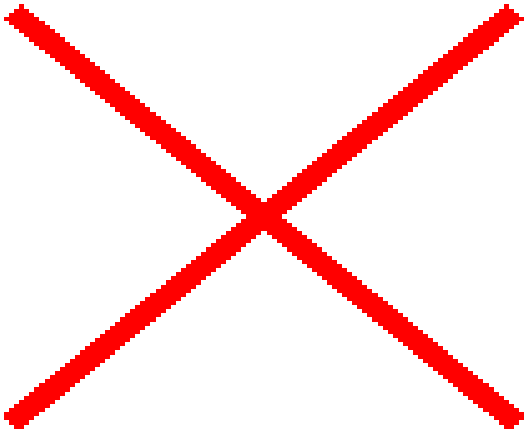

Opinion about balanced diet :- In the figure five it is evident that about 40% of individuals agreed that junk food consumption makes person to eat more calorie, while 40% of respondents chosen for sometimesfor the same, 13% elected for never and only 7% of students have disagreed for the same. From the figure six data depicted that nearly 62 % of students, they were opted for no or no idea about balanced diet, followed by 30% have some idea and only very few 8% students were attentive for balanced diet.

Figure no. 5:data represent the opinion of study population n whether junk food is addictive or not

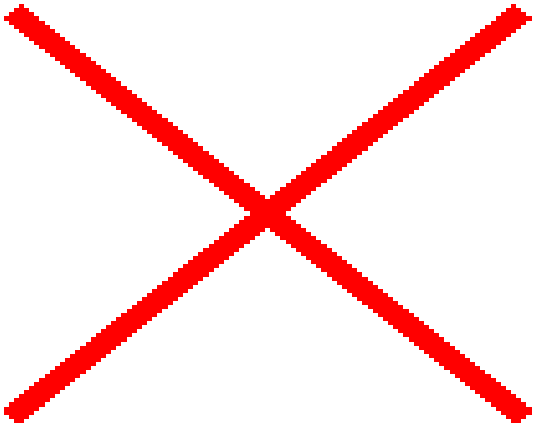

Figure no. 6: **Data represent students' knowledge level towards the food pyramid for balanced diet**

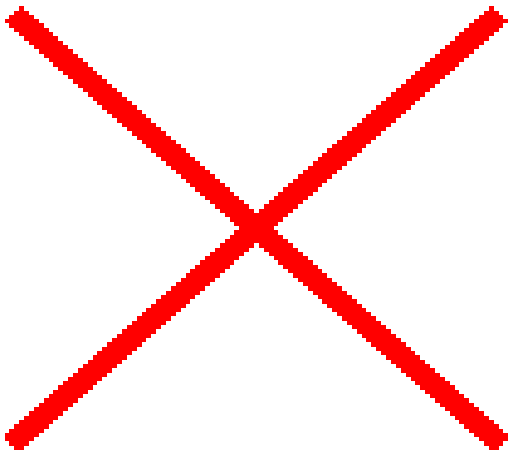

Discussion :- This study described eating habits, awareness about junk food and opinions for balanced diet of college going girls. About 36% of students were preferred fast food and 39% liked snacks. thamarai et al. (2015) reported that consuming chips and popcorns in adolescents had been associated more during watching movie. This is consistent with the study carried out by Gopal et al. (2012).Over weight and obesity are significantly linked to unhealthy dietary pattern, physical inactivity and misperception of body image (Hoque et al. 2016). An important finding in this study was that the Majorityof students were not knowledge about balanceddiet, similar result fund by thamarai et al. (2015). Vaida et al. (2013) stated that taste attract maximum percent of respondents while going to fast food. Our result confirmed that 78 % prefer the fast foods based on the taste, 9% choose because of time, 5% opted for changing life style and 5% elect because of advertisement. This is consistent with numerous study the food advertisement affect food choices, preferences, attitude and nutritional knowledge (Storey and French, 2004). In this study 62 % of respondents ate junk food once or twice on an average per week. Those who ate fast food more than twice a week were more likely to gain weight and develop insulin resistance (Vartanian et al. 2007). Our study showed that only 7 % of students were aware of the chemical present and its safety

levelwhich is considerably a low level. Thus our study revealed that among the sample population many individual are unaware about the chemicals added to the junk foods.Phosphate – containing soda drinks can affect functionality of different organ system, as was first reported more than a century ago (Haig, 1989). Surprisingly, only 21.5% had the habit of seeing the list of nutrient. Thus, considerably lower percentage of population (n=224) knew about food facts. Our findings showed that about 40% of individuals agreed that junk food consumption makes person to eat more calorie as suggested by Gopal et al. (2012). The inclusion of junk food as replacement for regular meal in their dietary plan is suggested by the fact that 61% (which is a high percentage) of respondents said that sometimes they consume junk food products.Sze Pui Pamela et al. (2011), stated that breakfast skipping was associated with gaining weight, obes and addicted to unhealthy dietary habits including more frequent junk foods. Therefore, in order to promote healthy food, the food manufacturer should produce healthy foods with good taste and an attractive presentation. Students will need to acquire the knowledge skills regarding the food habits.

Conclusion :- This study concluded that the students partly aware about food quality, balanced diet, nutrients fact label, and harmful effects of excessive consumption of junk foods. The present study on survey on college going girls revealed that there is a gap between the awareness pertaining to a nutritious diet and the practice of consuming. This study highlights the need for interventional steps and educational program to raise the awareness of the health risk produced by intense consumption of such foods and also increase the knowledge of a balance diet. Colleges should provide nutritionists who impose dietary guidelines for students to raise the awareness of the risk posed by dietary items with hidden ingredients which will affect the health of the society.

		Frequency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid	Bsc	206	91.6	92.0	92.0
	Bcom	7	3.1	3.1	95.1
	BA	10	4.4	4.5	99.6
	MSC	1	.4	.4	100.0
	Total	224	99.6	100.0	
Missing	System	1	.4		
Total		225	100.0		

REFERENCES :

1. Ashkiran and R. deepthi, 2012. Fast Food nadtheirImpact on health. JKIMSU 1(2): 7-15
2. Barre, L. K., J. C. Ferron, K. E. Devis and R. Whytley, 2011. Healthy eating in person with serious mental illness: understanding and barrier. PsychiatrRehabil J. 34(4): 304-310
3. Bowman, S.A. nd B.T. Vinyard, 2004. Fast food consumptiom of U.S. adults : Impact onenergy and nutrient intakes and overweight status. Am CollNutr 23(2): 163-8 (Cross ref)
4. Brendan, O Neill, 2006. Is this what you call junk food? (internet) (last update: 30 november 2006, 18:48 GMT) Available from http://news.bbc. Co.uk/2/hi/uk_news/magazine/6187234.stm
5. Cocores, J.A. and M.S. Gold, 2009. The Salted Food Addiction Hypothesis may explain overeating and the obesity epidemic. Medical Hypotheis 73 (3):892-899 (cross ref)

6. Egner, R., R. Oza-Frank and S. A. Cunningham, 2014. The school breakfast program: a view of the present and preparing for the future- a commentary. Journal of School Health 84(7): 417-420

7. Giovannini, M., C. Agostoni, R. Shamir, 2010. Symposium overview: do well al eat braekfast6 and is it important? Critical Review in food science and Nutrition. 50(2):97-99 (cross ref)

8. Gourdet, C. K., J. F.Chriqui, E. Piekarz, Q. Dang and F. J. Choloupka, 2014. Carrot and sticks: compliance provision in state competitive food law- examples for state and local implementation of the update USDA standard. Journal of School Health 84(7):466-471

9. Haig, A., 1989. Influence of phosphate of soda on the excreation of uroc acid and some of the condition which prevent its action. Med Chir Trans 72:399-406 (cross ref)

10. Hoque, K. E., M. A. Kamaluddin, A. Z. A. Rajak and A. A. A. Wahid, 2016. Building healthy eating habits in childhood: a study of the the attitude, knowledge and dietary habits of school children in Malaysia. Peer J DOI 10.7717/peerj.2651

11. Hu, F.B. and V. S. Mallik, 2010. Sugar sweetened beverages and risk of Obesity and Type 2 Diabetes: Epidemiological evidence. Physiolbeha (1):47-54

12. Kestan, J. M., N. Cameron and P. L. Griffiths, 2013. Assessing community readiness for overweight and obesity prevention in pre-adolescent girls: a case study. BMC Public Health 13(1):1205- (cross ref)

13. Larson, N., D. Neumark-Sztainer, M. N. Laska and M. Story, 2011. Young Adult and Eating Away from Home: Association with Dietary Intake Pttern and Weight Status Differ by Choice of Restaurant. Journal of American Dietetic Association. 111(11): 1696-1703.

14. Phillips, S. M., L. G. Bandini and N. Naumova, 2004. Energy- Dense snacks foods intake in Adolscence : longitudinal relationship to weight and fatness . Obes Res 3 : 461-472

15. Steffi , S. and R. Marry Josephine, 2013. A case study on trend of food style among college Students. IJAPBC 2(1): 103-107

16. Storey, M. and S. French, 2004. Advertising and Marketing Directed at children and Adolscentes in US. Inetrnational Journal of Behavioral Nutrition and Physical Activity 1(3):1-17 (cross ref)

17. Sullivan, C., S. Srilekha, and B. Janeen, 2009. Effect of food Additive on Hyperphophatemia among patients with end –stage renal disease: a randomized controlled trial. JAMA 301(6): 629-635

18. Sze Pui Pamela, T. I. N., H. O. Sai Yin, M. A. K. , kwok Hang, F. H. K. C. C. M. Leung WAN, H. K. C. Paed and H. K. A. M. Tai Hing LAM a, 2011. Lifestyle and socioeconomic of breakfast skipping in Hong Kong primary4 school children. Prev Med 52 :250-253(cross ref)

19. Vaida, N. 2013. Prevalence of fast food intake among Urban Adolescents Students. The Inetrnational Journal of Engineering and Science 2(1):353-359

20. Vartanian, L. R. , M. B. Schwaetz and K. D. Brownell, 2007. Effect of soft drink consumptiom on nutrition and health: A systematic review and meta-analysis. Am J Public Health 97:667-675 (cross ref)

21. Vinay Gopal,J., S. Sriram, K. Kannabiran and R. Seenivasan, 2012. Student's perspective on junk foods. Sudanese Journal of Public Health 7(1):21-25

22. World Health Organization. 2013. Factsheets. Geneva:WHO Media Centre (cross ref).

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

छत्तीसगढ़ राज्य में संचालित महिला विकास योजनाएँ

प्रस्तुतकर्ता, डॉ. दुर्गा महेश्वरी (सोनी), अतिथि सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र
संत गुरू घासीदास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय कुरूद, जिला – धमतरी (छ.ग.)

शोध सारांश :– नारी हमेशा से ही समाज के लिए एक प्रेरक तत्व रही है। इतिहास साक्षी है कि पुरूष ने जीवन के प्रगति पथ पर अग्रसर होने के लिए किसी न किसी रूप में नारी से सहायता व प्रेरणा आवश्य ली है। नारी समाज की धुरी है। नारी के बिना समाज की कल्पना ही नही की जा सकती। आज समाज के हर क्षेत्र में महिलाओं का सकिय योगदान देखा जा सकता है।

प्रस्तुत अध्ययन छ.ग. राज्य में संचालित महिला विकास योजनाओं पर आधारित है। इन योजनाओं का महिलाओं के विकास पर क्या प्रभाव पड़ रहा है इसका अध्ययन किया गया है। ये योजनाएँ महिलाओं के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। महिलाओं में चेतना जाग्रत हो रही है। सरकार द्वारा किये जाने वाले व्यय का वर्णन भी है।

शब्द कुंजी :– महिला विकास योजनाएँ छ.ग. राज्य।

प्रस्तावना :– किसी भी राष्ट्र के निर्माण में महिलाओं का योगदान काफी महत्व रखता है। समृध्द व सशक्त समाज की कल्पना सशक्त नारी के बिना नही की जा सकती। राष्ट्र की आर्थिक प्रगति व विकास में महिलाओं की भूमिका बहुत महत्व रखती है। महिलाओं की सकिय उपस्थिति जीवन के हर एक क्षेत्र में परिलक्षित हो रही है। छत्तीसगढ़ राज्य के गठन के पश्चात् प्रदेश सरकार ने अनेक फैसले लिये। प्रदेश की महिलाओं की हितो की रक्षा व उनका संरक्षण करने के लिए अनेक योजनाओं का संचालन किया ताकि उन्हें विकास के समान अवसर मिल सके। महिलाओं के संवैधानिक हितों के संरक्षण तथा उनके सर्वांगिण विकास और कल्याण के उद्देश्य से उनके विकास और कल्याण से संबंधित योजनाओं और कार्यकमों को सुव्यवस्थित ढंग से कियान्वित करने एवं गति देने के लिए रायपुर जिले मेंमहिला एवं बाल विकास विभाग का गठन किया गया है।

संचालनालय महिला एवं बाल विकास विभाग का गठन अगस्त 1986 में हुआ। इसके पूर्व विभिन्न पोषण आहार योजनाओं का संचालन आदिवासी क्षेत्रों में आदिम जाति कल्याण विभाग एवं अन्य शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों में पंचायत एवं समाज कल्याण विभाग द्वारा किया जाता था। सितम्बर 1988 में पृथक से महिला एवं बाल विकास विभाग बनने के बाद ये योजनाएँ इस संचालनालय के अधीन नवगठित विभाग का अंग बन गयी। वर्तमान समय में यह विभाग महिलाओं के विकास के लिए अनेक योजनाएँ व कार्यकम चला रहा है।

अध्ययन का उद्देश्य :– उद्देश्यविहीन अध्ययन निरर्थक होता है। निश्चित उद्देश्य के साथ किसी भी लक्ष्य को आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्य निम्न है :–

1. महिला विकास कार्यकमों का अध्ययन करना।
2. महिला विकास में उनकी पर्याप्तता व कुशलता को आंकना।
3. सरकार द्वारा महिलाओं के विकास पर किये गये व्यय के प्रभाव का अध्ययन करना।
4. महिला विकास कार्यकम की जॉच करना।
5. महिला विकास हेतु आवश्यक व उपयोगी सझाव प्रस्तुत करना।

अध्ययन का क्षेत्र :– प्रस्तुत अध्ययन का क्षेत्र छत्तीसगढ़ राज्य है।

शोध परिकल्पना :– प्रस्तुत अध्ययन में हमने यह परिकल्पना मानी है कि सरकार महिलाओं के विकास के लिए जो खर्च कर रही है तथा उनके विकास के लिए जो योजनाएँ चला रही है उनका सार्थक प्रभाव उन पर पड़ रहा है।

शोध प्रविधि :–

1. आकड़ो का संग्रहण – प्रस्तुत अध्ययन में सूचनाओं को प्राप्त करने के लिए द्वितियक आकड़ो का सहारा लिया गया है।
2. आकड़ो का विश्लेषण – आकड़ो के विश्लेषण के लिए वर्गीकरण, सारणीयन, प्रतिशत, माध्य तथा औसत का प्रयोग किया गया है।

छ.ग. राज्य में संचालित महिला विकास योजनाएँ :–

1. समेकित बाल विकास सेवा योजना (आई.सी. डी.एस.)

कुपोषण, शिशु मृत्यु दर, मातृ मृत्यु दर के स्तर में कमो लाने, बच्चों में मानसिक बौद्धिक विकास की नींव डालने के उद्देश्य से 02 अक्टूबर 1975 को समेकित बाल विकास सेवा परियोजना प्रारंभ किया गया।

समेकित बाल विकास सेवा के उद्देश्य :– समेकित बाल विकास सेवा परियोजना के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित है :–

- ❖ बच्चों में उचित मानसिक (मनोवैज्ञानिक) शारीरिक तथा सामाजिक विकास की नींव डालना।
- ❖ 0 से 6 वर्ष तक की आयु के बच्चों में पोषण व स्वास्थ्य की स्थिति को सुधारना।
- ❖ मातृ मृत्यु दर, शिशु मृत्यु दर, कुपोषण, रूग्णता और बीच में स्कूल छोड़ने की प्रवृत्ति में कमी लाना।
- ❖ बाल विकास को बढ़ावा देने हेतु विभिन्न विभागों में नीति निर्धारण और कार्यकम लागू करने में प्रभावकारी तालमेल कायम करना।
- ❖ उचित सामुदायिक शिक्षा के माध्यम से बच्चों में सामान्य स्वास्थ्य पोषण तथा विकास संबंधी आवश्यकताओं की देखभाल के लिए माताओं की क्षमता बढ़ाना।

समेकित बाल विकास परियोजना की सेवायें :–

समेकित बाल विकास सेवा परियोजना के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए हितग्राहियों को निम्नलिखित छः सेवायें प्रदान की जाती है :–

क.	सेवा	हितग्राही
1	टीकाकरण	आंगनवाड़ी केन्द्र के सेवाक्षेत्र के समस्त गर्भवती महिलाएँ, किशोरी बालिकाएं एवं 0–6 वर्ष तक के समस्त बच्चे।
2	स्वास्थ्य जॉच	आंगनवाड़ी केन्द्र के सेवाक्षेत्र के समस्त गर्भवती महिलाएं, धात्री माताएं, 0–6 वर्ष तक के बच्चे तथा किशोरी बालिकाएं।
3	संदर्भ सेवाएँ	आंगनवाड़ी केन्द्र के सेवाक्षेत्र के 0–6 वर्ष तक के गम्भीर कुपोषित बच्चे, विकलांग बच्चे, जोखिम वाले बच्चे, बीमार बच्चे, खतरे के लक्षण वाली गर्भवती महिलाएं/शिशुवती माताएं।
4	पूरक पोषाहार	आंगनवाड़ी केन्द्र के सेवाक्षेत्र के समस्त गर्भवती महिलाएं, शिशुवती मातायें, 06 माह से 06 वर्ष तक के बच्चे।
5	स्वास्थ्य, पोषण एवं शिक्षा	आंगनवाड़ी केन्द्र के सेवाक्षेत्र के समस्त 15–45 साल की महिलाएं, गर्भवती महिलाएं, धात्री माताएं एवं किशोरी बालिकाएं।
6	शाला पूर्व शिक्षा	आंगनवाड़ी केन्द्र के सेवाक्षेत्र के 03–06 वर्ष तक के समस्त बच्चे।

छत्तीसगढ़ राज्य में बाल विकास सेवाओं का विस्तार :– आई.सी.डी.एस. कार्यकम का विस्तार करते हुए सुदूर अंचलों में स्थित बसाहटों में भी आंगनवाड़ी केन्द्र संचालित किए जा रहे है। राज्य में चरणबद्ध तरीके से स्वीकृत परियोजनाओं एवं केन्द्रों की स्थिति निम्नानुसार है :–

क.	केन्द्र / परियोजना	छत्तीसगढ़ गठन के पूर्व स्वीकृत	प्रथम चरण विस्तार अन्तर्गत स्वीकृत (2005–06)	द्वितीय चरण विस्तार अन्तर्गत स्वीकृत (2007–08)	तृतीय चरण विस्तार अन्तर्गत स्वीकृत (20010–11) एवं 2011–12	कुल स्वीकृत	वर्तमान में संचालित
1	बाल विकास परियोजना	152	06	05	57	220	220
2	आंगनवाड़ी केन्द्र	20289	9148	5500	8826	43763	43591
3	मिनी आंगनवाड़ी केन्द्र	836	0	1483	4229	6548	6387
	योग (2+3)	21125	9148	6983	13055	50311	50198

2. आंगनवाड़ी गुणवत्ता उन्नयन अभियान

आंगनवाड़ी केन्द्रों की सेवाओं से जन–जन को जोड़ते हुए कुपोषण के स्तर में कमी लाने का एक जनअभियान इस कार्यकम के माध्यम से आरंभ किया गया है। अभियान का उद्देश्य आंगनवाड़ी केन्द्रों की सेवाओं में गुणवत्ता उन्नयन करना तथा इस अभियान के माध्यम से कुपोषण के स्तर में कमी लाने के लिए जन सहभागिता सुनिश्चित करना है। यह अभियान 04 जनवरी, 2016 को प्रारंभ हुआ है आरंभ तिथि से 13 जनवरी, 2016 तक अभियान अंतर्गत सघन गतिविधियां की गई है जिन्हें आगे निरंतर रखा जा रहा है।

3. फुलवारी योजना

प्रदेश में जिला सरगुजा में प्रारंभिक तौर पर 300 फुलवारी केन्द्रों का संचालन आरंभ किया गया था। फुलवारी केन्द्र के संचालन का मुख्य उद्देश्य यह है कि दूरस्थ अंचल की ऐसी बसाहटों में जहां के हितग्राही आंगनवाड़ी केन्द्र तक नहीं पहुंच पाते हैं वहां फुलवारी केन्द्र खोला जाये। प्रारंभिक तौर पर इस योजना का संचालन पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग द्वारा किया जा रहा था एवं सरगुजा जिले के 300 केन्द्रों के अलावा प्रदेश के 85 आदिवासी विकासखण्डों में प्रति विकासखण्ड 30 केन्द्र स्वीकृत किये गये थे। इस प्रकार अब प्रदेश में 2850 फुलवारी केन्द्र स्वीकृत हैं। वर्ष 2015 से इन फुलवारी केन्द्रां का संचालन महिला एवं बाल विकास विभाग को सौंप दिया गया है। विभाग द्वारा इस संबंध में विस्तृत मार्गदर्शी निर्देश प्रसारित किये गये हैं तथा संचालन हेतु कुल उपलब्ध बजट 30 करोड़ रूपये में से 12 करोड़ रूपये माह अप्रैल में ही जिलों को आबंटित कर दिये गए हैं।

4. समेकित बाल विकास सेवा योजना में पूरक पोषण आहार की व्यवस्था

6 माह से 3 वर्ष आयु के सामान्य बच्चों को 135 ग्राम, 6 माह से 3 वर्ष आयु के गंभीर कुपोषित बच्चों को 211 ग्राम तथा गर्भवती व शिशुवती महिलाओं को 165 ग्राम प्रतिदिन (सप्ताह में 6 दिवस हेतु) रेडी–टू–ईट फूड प्रदाय किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त सामान्य बच्चों को 20 ग्राम का मुर्रा लड्डू, इसी आयु के गंभीर कुपोषित बच्चों को (सप्ताह में 6 दिवस हेतु) 40 ग्राम के मुर्रा लड्डू एवं गर्भवती शिशुवती माताओं को भी 40 ग्राम मुर्रा लड्डू प्रतिदिन के मान से दिया जाता है। रेडी–टू–ईट फूड का निर्माण एवं प्रदाय का कार्य महिला स्व सहायता समूहों द्वारा किया जा रहा है। पूरक पोषण आहार कार्यकम के अंतर्गत वर्तमान में 6 माह से 3 वर्ष के लगभग 11.59 लाख बच्चों, 3 वर्ष से 6 वर्ष के लगभग 8.

83 लाख बच्चों तथा लगभग 4.94 लाख गर्भवती व शिशुवती महिलाओं को इस प्रकार लगभग कुल 25.36 लाख हितग्राहियों को लाभांवित किया जा रहा है।

5. सबला योजना

सबला योजना राज्य के 10 जिलों क्रमशः रायपुर, गरियाबंद, बलौदाबाजार, रायगढ़, राजनांदगांव, कोण्डागांव, बस्तर, सूरजपुर, बलरामपुर एवं सरगुजा में संचालित है। यह योजना 11 से 18 वर्ष की किशोरी बालिकाओं के लिए हैं।

योजना के दो प्रमुख भाग हैं :-

- किशोरी बालिकाओं को पूरक पोषण आहार प्रदाय – इसके अंतर्गत 11 से 14 वर्ष आयु की शाला त्यागी एवं 14 से 18 वर्ष आयु की सभी किशोरी बालिकाओं को पूरक पोषण आहार दिया जाता है।
- पूरक पोषण आहार के अतिरिक्त सेवाएं – इसके अन्तर्गत किशोरी बालिकाओं की स्वास्थ्य जांच, आई.एफ.ए. टेबलेट प्रदाय, स्वास्थ्य एव पोषण शिक्षा, परिवार कल्याण, किशोरी प्रजनन एवं यौन स्वास्थ्य (।त्भ्), बाल देखरेख पद्धतियां, गृह प्रबंधन, जीवन कौशल शिक्षा विषय पर प्रशिक्षण, एक्सपोजर विजिट (स्वास्थ्य केन्द्रों, बैंकों, डाकघरों, पुलिस थाना, पाठशाला, पंचायती राज संस्था, सरकारी कार्यालय सार्वजनिक परिवहन सुविधाओं इत्यादि का एक्सपोजर विजिट), किशोरी दिवस आयोजन, शिक्षा की मुख्य धारा में शामिल करना तथा व्यवसायिक प्रशिक्षण शामिल हैं। योजना अंतर्गत सर्वेक्षित बालिकाओं की संख्या वर्ष 2015–16 में 6.65 लाख है।

6. किशोरी शक्ति योजना

सबला योजना संचालित 10 जिलों के अतिरिक्त शेष जिलों में किशोरी शक्ति योजना संचालित हैं। (योजनांतर्गत सबला योजना की तरह ही किशोरी बालिकाओं को राज्य की निधी से पोषण आहार प्रदाय किया जा रहा है।) योजना के तहत प्रशिक्षण एवं अन्य गतिविधियों के लिये प्रति परियोजना 300 बालिकाओं का चयन कर लाभान्वित किया जाता है। योजना अंतर्गत लक्षित बालिकाओं की संख्या 27600 है जिन्हें प्रशिक्षित किया जा रहा है।

7. मुख्यमंत्री कन्या विवाह योजना

इस योजना का उद्देश्य निर्धन परिवारों को कन्या के विवाह के संदर्भ में होने वाली आर्थिक कठिनाईयों का निवारण, विवाह के अवसर पर होने वाली फिजूलखर्ची को रोकना एवं सादगीपूर्ण विवाहों को बढ़ावा देना, सामूहिक विवाहों के आयोजन के माध्यम से निर्धनों के मनोबल/आत्मसम्मान में वृध्दि एवं उनकी सामाजिक स्थिति में सुधार, सामूहिक विवाहों का प्रोत्साहन तथा विवाहों में दहेज के लेन–देन की रोकथाम करना है।

योजनान्तर्गत गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवार/मुख्यमंत्री खाद्यान्न योजना अंतर्गत कार्डधारी परिवार की 18 वर्ष से अधिक आयु की अधिकतम दो कन्याओं को 11500 रूपये तक की आर्थिक सहायता सामग्री के रूप में, 1000.00 रूपये बैंक ड्राफ्ट के रूप में दिए जाते है तथा सामूहिक विवाह आयोजन पर प्रति कन्या राशि रूपये 2500.00 तक व्यय की जा सकती है। इस प्रकार योजनान्तर्गत प्रत्येक कन्या के विवाह हेतु अधिकतम 15000 रूपये की राशि व्यय किए जाने का प्रावधान है। राज्य शासन द्वारा मुख्यमंत्री कन्या विवाह योजनांतर्गत विधवा/अनाथ/निराश्रित कन्याओं को भी शामिल किये जाने का निर्णय लिया गया है। योजनान्तर्गत वित्तीय वर्ष 2014–15 में 6197 कन्याओं को लाभान्वित किया गया है तथा वित्तीय वर्ष 2015–16 में कुल वित्तीय लक्ष्य 13.00 करोड़ रूपये का बजट आबंटन उपलब्ध है। उक्त आबंटन के विरूध्द जनवरी 2016 तक 1384 कन्याओं को लाभान्वित किया गया है।

8. महिला जागृति शिविर

ग्राम पंचायत, जनपद एवं जिला स्तर पर महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा महिला जागृति शिविरों का आयोजन किया जाता है। इसका उद्देश्य महिलाओं को उनके कानूनी अधिकारों, प्रावधानों के प्रति जागृत करना, विभिन्न योजनाओं की जानकारी देकर उन्हें

जागरूक एवं सक्रिय बनाना तथा विभिन्न सामाजिक कुप्रथाओं के विरूध्द महिलाओं को जागृत व संगठित करना है। वर्ष 2015–16 में माह जनवरी 2016 तक 1781 शिविर आयोजित कर 354528 हितग्राहियों को लाभान्वित किया गया है।

9. सखी (वन स्टॉप सेन्टर – One Stop Centre) रायपुर

महिलाओं के विरूध्द हिंसा को समाप्त करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 1993 में अन्तर्राष्ट्रीय समझौता पत्र तैयार किया गया था जिसे सीडा (The Convention on the Elimination of all Forms of Doscrimination against Women (CEDAW)) कन्वेशन के नाम से जाना जाता है। महिलाओं के विरूध्द हिंसा को समाप्त करने/संरक्षण के लिए अनेक वैधानिक प्रावधान उपलब्ध है। इसके बाद भी घरेलू हिंसा, लैंगिक हिंसा, बलात्कार, दहेज, इज्जत के लिए हत्या (honour killing) एसिड अटेक, डायन/टोनही, कार्यस्थल पर लैगिक उत्पीड़न, अवैध मानव व्यापार, बाल विवाह, लिंग चयन व भ्रूण हत्या, सती प्रथा इत्यादि के रूप में हिंसा समाज में विद्यमान है।

उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए भारत शासन, महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा राज्य सरकार की सहायता से प्रदेश के मुख्यालय रायपुर में भारत का प्रथम वन स्टॉप सेन्टर प्रारंभ किया गया है। वन स्टॉप सेन्टर में सभी वर्ग, धर्म, सम्प्रदाय की विवाहित/अविवाहित/विधवा/परित्यकता महिलाओं/बालिकाओं को (18 वर्ष से कम उम्र की बालिकाएं भी सम्मिलित है) सलाह, सहायता, मार्गदर्शन एंव संरक्षण प्रदाय किया जाता है। वन स्टॉप सेन्टर में उपलब्ध सुविधा व सहायता का विवरण निम्नानुसार है :–

क.	उपलब्ध सेवा का विवरण	सेवा उपलब्ध कराये जाने की प्रकिया
1	आपातकालीन सहायता एवं बचाव	वन स्टॉप सेन्टर द्वारा हिंसा/संकटग्रस्त महिला को 108 अथवा 100 अथवा अन्य माध्यम से तत्काल उस स्थान से हटाकर आवश्यकतानुसार निकटस्थ चिकित्सालय अथवा आश्रय गृह में भिजवाया जाता है।
2	चिकित्सकीय सहायता	हिंसा से पीड़िता महिला को निकट के चिकित्सालय में भेजकर उसकी चिकित्सकीय जांच तथा चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराई जाती है।
3	महिला को एफ.आई.आर./डी.आई.आर./एन.सी.आर. दर्ज करने में सहायता उपलब्ध कराना	वन स्टॉप सेन्टर द्वारा इस प्रकिया में सभी प्रकार की सहायता आवेदक महिला को दी जाती है।
4	मनोवैज्ञानिक/सामाजिक/परामर्श/सलाह व सहायता	महिलाओं की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए दक्ष परामर्शदाता की सेवाये वन स्टॉप सेन्टर में आवश्यकतानुसार उपलब्ध है।
5	विधिक सलाह/सहायता/विधिक परामर्श	हिंसा से पीड़ित महिला अथवा विधिक सहायता की जरूरतमंद महिला को सलाह, प्रकरण दायर करने में मदद तथा अभियोजन को प्रकरण की संक्षिप्त जानकारी दी जाती है।
6	आपातकालीन आश्रय सुविधा	आश्रय की आवश्यकता वाली संकटग्रस्त महिलाओं / बालिकाओं को आवश्यकतानुसार स्वाधार गृह / अल्पकालीन आवास गृह/नारी निकेतन/बालिका गृह इत्यादि में तत्काल आश्रय सुविधा उपलब्ध कराने हेतु आवश्यक कार्यवाही की जाती है। वन स्टॉप सेन्टर में 5 बेड की व्यवस्था है।

10. नोनी सुरक्षा योजना

जनगणना वर्ष 2001 में छत्तीसगढ़ में बाल लिंगानुपात 1000:975 था जो जनगणना वर्ष 2011 में घटकर 1000:964 हो गया है। राज्य में घटते बाल लिंगानुपात तथा बालिकाओं के प्रति समाज में सकारात्मक सोच बढ़ाने के लिए " नोनी सुरक्षा योजना " शीर्षक से नवीन योजना दिनांक 01.04.2014 से लागू की गई है। योजना संचालन हेतु एल.आई.सी. एवं विभाग के मध्य अनुबंध किया गया है।

योजना का उद्देश्य –

- ❖ प्रदेश में बालिकाओं की शैक्षणिक तथा स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार लाना, बालिकाओं के अच्छे भविष्य की आधारशिला रखना, बालिका भ्रूण हत्या रोकना और बालिकाओं के जन्म के प्रति समाज में सकारात्मक सोच लाना एवं बाल विवाह की रोकथाम करना है।
- ❖ छत्तीसगढ़ राज्य के मूल निवासी तथा गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवार की 1 अप्रैल 2014 के उपरांत जन्मी अधिकतम दो बालिका योजनांतर्गत लाभ की पात्र है।
- ❖ योजना के अन्तर्गत पंजीकृत बालिका का 18 वर्ष तक विवाह न होने एवं कक्षा 12वीं तक शिक्षा पूर्ण होने पर वित्तीय संस्था द्वारा 1 लाख रूपये परिपक्वता राशि दी जायेगी।

11. बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ योजना

भारत शासन द्वारा पूरे देश के 100 चयनित जिलों में बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ योजना दिनांक 22 जनवरी, 2015 से लागू की गई है। छत्तीसगढ़ में रायगढ़ जिले का चयन किया गया है। योजना का उद्देश्य निम्नानुसार है :–

- ❖ बच्चों के जन्म के समय लिंगभेद को समाप्त करना।
- ❖ बालिकाओं की उत्तरजीविका व उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करना।
- ❖ बालिकाओं की शिक्षा को सुनिश्चित करना।

12. नवा बिहान योजना

घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005 के कियान्वयन के लिए छत्तीसगढ़ शासन महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा नवा बिहान योजना संचालित की गई है। योजना के अंतर्गत पीड़ित महिला को आवश्यकतानुसार विधिक सलाह, परामर्श, चिकित्सा सुविधा, परिवहन तथा आश्रय सुविधा उपलब्ध कराने हेतु प्रावधान रखा गया है।

13. छत्तीसगढ़ महिला कोष की ऋण योजना

छत्तीसगढ़ महिला कोष द्वारा महिला स्व–सहायता समूहों को आसान शर्तों पर ऋण उपलब्ध कराने के लिए ऋण योजना का संचालन दिनांक 15.08.2003 से किया जा रहा है। योजनांतर्गत स्व–सहायता समूहों को उनकी बचत राशि का न्यूनतम 4 से अधिकतम 10 गुना अथवा अधिकतम 50000.00 रूपये तक का ऋण प्रथम बार में प्रदाय किया जाता है तथा प्रथम बार प्रदत्त ऋण की सफलतापूर्वक वापसी पर 200000.00 रूपये तक का ऋण द्वितीय बार में प्रदान किया जाता हैं। योजना के तहत छत्तीसगढ़ महिला कोष द्वारा महिला स्व सहायता समूह को 3 प्रतिशत साधारण वार्षिक ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराया जाता है। वित्तीय वर्ष 2015–16 में जनवरी, 2016 तक 1665 महिला स्व–सहायता समूहों को राशि रूपये 5 करोड़ 61 लाख से अधिक के ऋण वितरित किये जा चुके है।

विभागीय संस्थायें

विभाग द्वारा महिला एवं बच्चों को विशेष संरक्षण प्रदान करने के लिए विशेष सुविधाओं वाली शासकीय संस्थाओं का संचालन किया जाता है, विभाग द्वारा संचालित शासकीय संस्था का विवरण निम्नानुसार है :–

14. नारी निकेतन :– 16 वर्ष से अधिक आयु की अनाथ कन्याओं, विधवा, निराश्रित, परित्यक्ता, अविवाहित माताओं, तिरस्कृत व बेसहारा, समाज से प्रताड़ित महिलाओं को आश्रय व सहारा प्रदान करने तथा उनके निःशुल्क परिपालन व पुनर्वास के लिए प्रदेश में रायपुर, अम्बिकापुर एवं दंतेवाड़ा में नारी निकेतन संचालित है। संस्था में इन महिलाओं के

निःशुल्क आवास, भरण पोषण, शिक्षण, प्रशिक्षण और पुनर्वास की व्यवस्था की जाती हैं।

15. आंगनवाड़ी केन्द्र

वित्तीय वर्ष 2006–07 से 2015–16 तक विभागीय बजट/केन्द्र प्रवर्तित विभागीय मद से स्वीकृत –

वर्ष	कुल स्वीकृत आंगनवाड़ी भवनों की संख्या	कुल राशि (लाख में)
2006-07	700	1225.00
2007-08	825	1850.25
2008-09	1000	2250.00
2009-10	-	-
2010-11	666	2004.00
2011-12	1332	5244.00
2012-13	1102	4959.00
2013-14	2301	10354.5
2014-15	832	3744.00
2015-16	1416 (मनरेगा के समन्वय से)	2070.00

इस वित्तीय वर्ष में प्राप्त स्वीकृति को जोड़कर वर्तमान में प्रदेश में स्वीकृत कुल 43763 आंगनवाड़ी केन्द्रो एवं 6548 मिनी आंगनवाड़ी केन्द्रों में से कुल 37342 आंगनवाड़ी केन्द्रो एंव मिनी आंगनवाड़ी केन्द्रो के लिए स्वयं के भवन की स्वीकृति प्राप्त है।

बाल सम्प्रेक्षण गृह

- ❖ विधि विरूध्द करने वाले बच्चों को किशोर न्याय बोर्ड के ओदश पर बाल सम्प्रेक्षण गृह में रखा जाता है।
- ❖ राज्य के रायपुर, दुर्ग, बिलासपुर, अम्बिकापुर, जगदलपुर, कोरबा एवं रायगढ़ में बालकों के लिए तथा राजनांदगांव में बालिकाओं के लिए सम्प्रेक्षण गृह संचालित है।

योजनाओं/अतिरिक्त केन्द्रीय क्षेत्रीय योजना/वित्त आयोग/ग्रामोत्कर्ष योजना/बी. आर.जी.एफ. आदि से आंगनवाड़ी भवन स्वीकृत है। निम्नानुसार विभागीय स्वीकृतियॉ जारी की गई है।

- ❖ वर्ष 2015–16 में महासमुंद में 25 बालकों की क्षमता का सम्प्रेक्षण गृह स्वीकृत किया गया है। इसके साथ ही पूर्व में

स्वीकृत कोरबा, जशपुर, दंतेवाड़ा (बालक), एवं जगदलपुर तथा अम्बिकापुर

(बालिकाओं) में सम्प्रेक्षण गृह प्रारंभ किये जाने की कार्यवाही प्रकियाधीन है।

16. एकीकृत महिला सहायता केन्द्र :–

महिलाओं/किशोरी बालिकाओं को समय–समय पर आवश्यकतानुसार परामर्श, सुरक्षा, संरक्षण तथा सहयोग उपलब्ध कराने हेतु तथा मानसिक बीमार महिलाओं का समाजीकरण किये जाने हेतु एकीकृत महिला सहायता केन्द्र दुर्ग जिले में स्वैच्छिक संगठन के माध्यम से संचालित है।

लक्षित महिलायें/बालिकायें निम्नानुसार है :–

- ❖ सभी प्रकार की संकटग्रस्त तथा जरूरतमंद महिलायें/बालिकायें जो घर अथवा बाहर हिंसा की शिकार है, छेडछाड़, दहेज प्रताड़ना, दैहिक शोषण/बलात्कार, शारीरिक दुराचार अथवा किसी भी प्रकार की घटना जो महिलाओं के सुरक्षा सम्मान व संरक्षण में अवरोध उत्पन्न करती हो।

- ❖ मानसिक बीमार महिला जिन्हें तत्काल सुरक्षा व सहायता की आवश्यकता है।
- ❖ आश्रय विहीन महिला।
- ❖ महिला जिसे शारीरिक अथवा मानसिक रूप से उत्पीड़ित किया गया हो तथा स्वास्थ्य सेवा एवं सलाह की आवश्यकता है।

17. रायपुर में मानसिक बीमार महिलाओं के लिए अल्पकालीन आश्रयगृह

छत्तीसगढ़ में मानसिक बीमार महिलाओं का सामाजीकरण किये जाने हेतु मानसिक बीमार महिलाओं के लिए आश्रयगृह प्रारंभ किया गया है। आश्रयगृह का संचालन लार्ड बुध्दा एजुकेशन सोसायटी के द्वारा किया जा रहा है।

आश्रयगृह में निम्नानुसार सुविधायें उपलब्ध है –

- ❖ मानसिक बीमार महिलाओं को पुनर्वासित होने तक ट्रांजिट केयर सुविधा।
- ❖ होम में व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा आवश्यकता अनुसार स्कील ट्रेनिंग की व्यवस्था।
- ❖ मानसिक बीमार महिलाओं के परिवारों का चिन्हांकन कर परिवार के सदस्यों की क्षमता में वृध्दि हेतु प्रशिक्षण।
- ❖ मानसिक बीमारियों के चिन्हांकन के लिए बाह्य उपचार व्यवस्था, परामर्श सेवा तथा संदर्भ सेवा।
- ❖ मानसिक बीमारी से मुक्त महिलाओं का उचित पुनर्वास किया जाना।

18. कामकाजी महिलाओं के लिए महिला वसति गृह

प्रदेश में वर्तमान में 8 महिला वसित गृहों का संचालन स्वैच्छिक संगठनों के माध्यम से किया जा रहा है। जनवरी 2011 में बिलासपुर शहर में एक महिला वसित के गृह के निर्माण/स्थापना की स्वीकृति प्राप्त हुई है जिसका भवन निर्माणधीन है।

19. उज्जवला गृह/योजना

बच्चों तथा महिलाओं की ट्रैफिकिंग के निवारण तथा ट्रैफिकिंग और व्यावसायिक यौन शोषण की पीड़ितों के बचाव, पुनर्वास और उन्हे समाज में पुनः जोड़ने के लिए उज्जवला योजना प्रदेश में संचालित है। भारत शासन द्वारा राज्य में बिलासपुर, कोरबा तथा कोरिया में स्वैच्छिक संगठनों को संरक्षण एवं पुनर्वास गृह (पी एंड आर होम) संचालन की स्वीकृति प्रदान की गई है।

निष्कर्ष :– निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि महिला विकास कार्यक्रम महिलाओं के विकास में सहयोगी सिध्द हो रही है अतः हमने जो अपने अध्ययन में परिकल्पना मानी थी कि सरकार महिला विकास के लिए जो खर्च कर रही है तथा जो योजनाएँ कियान्वित कर रही है उनका सार्थक प्रभाव उन पर रहा है, सही सिध्द होती है।

प्रमुख सुझाव :– महिला विकास कार्यक्रमों को और अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए कुछ सुझाव दिये जा सकते है :–

1. महिला विकास कार्यक्रमों का गांवों में विस्तार होना चाहिए।
2. ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए।
3. कार्य करने के लिए समूह अथवा दल का निर्माण करना।
4. राज्य स्तर पर महिला निदेशालय को सशक्त करना।
5. शिक्षण/प्रशिक्षण हेतु अतिरिक्त कोष प्रदान करना।

6. समय–समय पर कार्यकमों का मुल्यांकन तथा अधिक प्रभावशाली आयोजन तथा नियमन पर बल दिया जाना आवश्यक है।
7. महिलाओं के विकास के लिए अनुसंधान केन्द्रों की स्थापना की जानी चाहिए।
8. संसाधनों का आबंटन आधारभूत क्षेत्रों में होना चाहिए जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, पीने का पानी, आवास आदि उनका 50 प्रतिशत महिलाओं पर व्यय होना चाहिए।
9. सामाजिक व आर्थिक ढ़ाचे में परिवर्तन करना।
10. स्त्रियों व पुरूषों के लिए समान नागरिक सहिताओं, नियमों एवं वेतन के लिए संगठिन आंदोलन चलाये जाए।
11. महिलाओं को व्यवसायिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाए।
12. शोषण के प्रति विरोध की क्षमता का विकास करना।
13. महिलाओं को केवल आरक्षण नहीं संरक्षण भी प्रदान किया जाए।

इस प्रकार यदि उपरोक्त सुझावों को प्रभावी ढ़ग से लागू किया जाए तो निश्चित रूप से छ.ग. राज्य में महिलाओ के विकास के लिए जो कार्यकम व योजनाएं चल रही है उनका पर्याप्त लाभ महिलाओं को मिलेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रशासकीय प्रतिवेदन – महिला एवं बाल विकास विभाग, छत्तीसगढ़ शासन 2014–15, 2015–16, 2016–17
2. प्रमुख योजना – महिला एवं बाल विकास विभाग छ.ग. शासन
3. WWW.cg.nic.in Site
4. प्रशासकीय प्रतिवेदन – छ.ग. राज्य महिला आयोग 2014–15, 2015–16, 2016–17
5. World Health organization – Women Health and Development a Report, Geneva 1965
6. छ.ग. संदर्भ – देशबंधु प्रेस द्वारा प्रकाशित Books
7. स्वामी, भगवती एवं किशोर, सविता – महिला सशक्तिकरण क्यो और कैसे ? 2008
8. गुप्ता, कमलेश कुमार – महिला सशक्तिकरण
9. मिश्र, रमेन्द्र – ब्रिटिश कालीन छ.ग. '' पुस्तक प्रकाशन '' रायपुर 1981
10. कुमार, राज & Women and work " Anmol Publication Pvt. Ltd " 2000
11. मिश्र, उर्मिला प्रकाश – प्राचीन भारत मे नारी '' मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी '' 1987

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

AN ANALYTICAL STUDY RELATING TO DEMOCRACY OF INDIA-EQUILIBRIUM BETWEEN LEGISLATURE, EXECUTIVE AND JUDICIARY

Deepali Sahoo

ABSTRACT : The democracy has acquired worldwide reorganisation in the present society. In the era of globalisation and liberalisation, it has become very crucial in bringing about development .India is the largest democratic country in the world. Democracy is defined as a government of the people, by the people and for the people. It is considered the finest form of government in which every individual participates consciously and in which the people remain the sovereign power determining their destiny. So, in democracy the people are the ultimate source of power and its success and failure depend on their wisdom, consciousness and vigilance. It is not possible for all the people in a big country like India to participate in the government. This is why they are required to exercise their franchise and elect their representatives at regular intervals. These representatives from the parliament legislate and form responsible government. Such governments can be either unitary or federal. In recent times there has been a raging debate going on in the country on India's constitutional framework and the need for a constructive equilibrium in the powers and authority exercised by the three wings of the government. One view is that, in the light of many executive omissions, commissions and failures, judicial interventions have increased so that the rule of law can prevail.

KEYWORDS : Democracy, globalisation, unitary, federal, constructive Equilibrium.

INTRODUCTION : In India we have the federal form having both a government at the centre responsible to the parliament and governments in the states elected and equally responsible to their legislative assemblies. But the people who participate in the election of their representatives must be educated enough to see what is good for them and who will be the right people to represent them. India became free only in 1947 after many years of colonial rule. In the following years India had her constitution that declared India as a democratic federal republic. To prevent the power of any one branch from being absolute, the Founding Fathers wrote the Constitution to contain a system of checks and balances. These are powers that each branch has for limiting the power of the other branches. Some scholars say the system of checks and balances actually creates a government of shared powers instead of one with separated powers. The checks and balances between the president and Congress are many. The most important are the president's power to veto, or reject, laws that Congress passes, and Congress's power to override a presidential veto. Other legislative-executive checks and balances are the executive recommendation power, the legislative appropriations power, senatorial advice and consent, the division of powers concerning war, congressional oversight work, and removal of the president and other executive officers by impeachment. This division of government is called the separation of powers. The purpose of the separation of powers is to prevent tyranny, which is arbitrary (random) or unfair government action that can result when one person has all the power to make, enforce, and interpret the laws.

SEPARATION OF POWERS : In addition to the broad separation of powers into three branches, the Constitution keeps the executive and legislative branches separate with various specific provisions. Article I, Section 6, prevents members of Congress from serving as officers of the

government in the executive branch. Article I, Section 5, says each chamber of Congress, namely the House of Representatives and the Senate, is the sole judge of who wins congressional elections and who is qualified to serve there. The same part of the Constitution gives the House and Senate sole authority to make their rules of operation. The first democratic election on the basis of universal adult franchise was held in 1952. But during that election the people of India did not really have the necessary consciousness to understand democracy. They did not have the education to choose between good and evil. More than eighty percent of these people were victims of age-old poverty, ignorance and superstitions. Many of them did not even understand the difference between the British and the new rulers. So, election for these Indian people was not a democratic process, it was like festival. Even to-day, after so many years, the people in India are not very much different, for many of them are illiterates and poverty too is still there with all its sickening and demoralizing effects. This is why Indian democracy has failed so far to bring about the desired changes and to attain the goal of regeneration. It is only natural that in the absence of conscious resistance and checks even elected representatives will be tempted to wield unbridled power, subjecting the will of the majority to the ambition of the minority. Taking advantage of the ignorance and poverty of the electorate the ambitious and the impostors are bound to worm their way through the crowds of gullible and get them elected. If, when they are elected, their electors go to sleep, they may form the government of the minority, wielding autocratic power and trampling underfoot the fundamental rights of the people. Unless there are safeguards against misuse of power and usurpation of people's authority, the people would be only helpless spectators and prisoners in their own cells, while democracy will remain a myth and a pipe dream. India is the biggest and one of the most important democratic countries on earth. Indian democracy today is as old as sixty two years and it has survived despite many countries have yielded to dictatorship and military rule. The success or failure of democracy means a lot for the future of democracy not only in India but in other countries as well. Indian democracy today is in a bad state; as a result a rampant corruption rules in every walks of nation's life. Even the democratically chosen government is said to have lost its credibility. The people in India, as well as people abroad have been raising questioning eye brows about the future of India's democracy. The aim of the doctrine of the Separation of Powers is to "bring exclusiveness in the functioning of these two organs. In principle each organ should be able to perform its function independent of the other organs and no organ should perform functions that belong to the other. While the Principle of the Separation of Power is generally admitted as valid, embodying as it does the scientific principle of differentiation, the practical difficulties in practicing it, worth for us at present. This doctrine "separation of powers" had some inherent defects when applied in real life situations. Frictions between parliaments and judiciary on many occasions provide ample proof of the fact that strict application of doctrine is not possible all the times.

EQUILIBRIUM ISSUES : The Preamble of Indian Constitution opens with the very meaningful and pregnant words, "We the People of India, having solemnly resolved to constitute India into sovereign, secular, democratic republic and to secure to all its citizens justice, equality and fraternity, enact and give ourselves this Constitution." The objective listed here point to the basic structure of the Constitution which has been elaborated in several historic rulings of the Supreme Court. Justice V.K.Krishna Iyer, in the well known Ratlam Muncipal Corporation case, rightly opined that,' Constitution is a veritable weapon to seek social justice. This comprehensive document which is the second longest Constitution in the world has detailed provisions for the rights and freedoms of the citizens and other persons, for the

principles to be followed in the matters of governance and dispensation of justice and for its republican, democratic, secular and federal character in which a balance is sought to be achieved amongst the three prime organs of the government namely, the Judiciary, the Legislature and the Executive. The traditional characteristics of a federal system are, inter alia the supremacy of the Constitution, division of powers, independent judiciary and a strict and rigid procedure for amending the Constitution. Separation of Judiciary from the Executive has been mandated in Article 50 of the Constitution. The present Chief Justice of India, Justice K.G. Balakrishnan, in a recent Joint Conference of CMs and CJs held in New Delhi has also touched upon these and other germane issues. He has stated that judicial review is one of the most "baffling of legal devices". Its application to determine the constitutionality of a law or to review executive decisions sometimes creates tensions. Such tensions, he feels are "natural and to some extent desirable". From the legislative wing these problems have been aired and discussed in house debates and outside, time and again. In a recent K.N.Ratju Memorial Lecture on "Separation of Powers and Judicial Activism", the Speaker of the Lok Sabha, Somnath Chatterji, aired his concern when he said that "of late the lines demarcating the jurisdiction of different organs of the state are getting blurred as a section of the judiciary seems to be of the view that it has authority by way of what is described as 'judicial activism' to exercise powers which are earmarked by the Constitution for the Legislature or the Executive branches". Abishekh Singh, a lawyer-parliamentarian, also has the perception that judicial over-reach "is a living reality. From the money to the dog menace, from corruption to cleaning up cities and rivers, from the comic to the divine, from the useful to the banal, India has all varieties of judicial activism on offer". The second basic truth according to him is "the existence of even greater executive abdication, legislative apathy and inactivity and a general decay of different organs of governance.

POLITICAL STYLES : However, in the last couple of decades the political landscape has been shaken up by the emergence of lower caste parties that have made their challenge to the long standing social and political hegemony of the upper caste parties the cornerstone of their political activity. While not yet fully national parties, they now dominate important regions (each of which is the size of a European country). At the same time, their national importance has grown due to the greater incidence of coalition governments in Delhi, where their support has been crucial. These newer parties have also brought a new style to democratic politics. Often commanding the loyalty of millions who place their faith in leaders who are 'one of them', the leaders of these parties have successfully challenged the patrician and insulated worlds of traditional politicians. Importantly, in at least three significant parties, these leaders are women and are currently the Chief Ministers of the populous states of Uttar Pradesh, Tamil Nadu and West Bengal. Though their backgrounds differ, they are each single women who personally command the loyalty of millions. More generally, the leaders of the newly emergent parties are no longer ashamed of not being able to speak fluent English (which still remains the coveted hallmark of being elite and educated in India) as these mass politicians seek to represent their constituencies of lower caste, illiterate and poor voters in literal terms. Their dress, their language, their gestures and their agendas are distinctively more populist and in tune with their supporters. There has thus been a huge proliferation of political styles and personalities on the stage of Indian democracy of late. Indian democracy can thus be described as made up of two spheres of politics - the 'demonic' (politicians and high politics) and the 'demotic' (the electorate), with the electorate seeing its own politics as the purer in intention and action. Demotic politics is based on hope of a better future, the need for participatory citizenship and a sense of duty, and a celebration of universal franchise. And it is for these reasons that Indians across the country emphasize the importance of

exercising this right assiduously, if only to remind those in power of their ultimate dependence on their votes. Further, the right to vote is also seen as a foundational right of each citizen that makes possible the demand for other basic rights – to food, education and security. Thus Indian voters see their electoral participation as fundamental to their other engagements with the state, and their presence on the voting list a rare official acknowledgement of their existence. People thus frequently use the word 'duty' while describing the importance of voting and engaging with the system. A typical formulation states: 'it is my right to vote and it is my duty to exercise this right. If I don't discharge this duty, it is meaningless to have this right'. Further, there is a shared sense that it is important for each individual to exercise this right, rather than defer the responsibility to others. But popular understandings of democracy also recognize that while elections are a necessary element of democracy, they are not a sufficient condition. To this end, the act of voting is seen to be the necessary first step in putting forward future demands and holding democratically elected governments to account. But political participation in non-electoral spaces is considered equally important, if more difficult to achieve. This understanding lies at the heart of a popular notion of participatory citizenship in the Indian electorate.

CONCLUSION : India's record on democracy can thus be fairly summarized as reasonably consistent. Her institutions have been mostly robust though they have also increasingly come under threat by personal greed and the collusion of powerful actors who seek to undermine the principles and robustness of these institutions. Yet, at the same time, in the wider society, ideas about democratic participation, the role of the electorate and the importance of a shared duty of citizenship are also vigorously articulated. In the end, it will be the challenges posed by this latter demotic politics of hope, mobilization, participation and justice that will need to overcome the demonic world of greed and power. India's experiments of democracy have taught the world a number of lessons: the successful workings of coalition governments, the unpredictability of voter behaviour, the importance of an autonomous and responsive electoral commission, and above all the possibility of political sophistication among the poorest people. It remains to be seen whether India can redistribute the fruits of its economic growth to the wider society and thereby serve as a unique model among the rising powers of combining economic democracy with a robust political one. In India its polity, its economy and its social structures are undergoing many changes. The basic constitutional mandate centres on democracy, rule of law, justice, liberty, equality. Being a polyglot country of practically continental dimensions, a great deal of churning is occurring in political systems, institutions, values, aspirations, behaviours and arrangements of governance. Judiciary has to bring about corrections within it but equally and much more importantly, it is executive and legislative deficiencies and failures that need to be addressed by the political and administrative classes.

REFERENCES :

1. J.N.Pandey - Constitution Of India.
2. Our Constitution - Subash Kashyap.
3. Our Judiciary - Subash Kashyap.
4. Indian Polity - M Laxmikanth.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Types of Saving Account

Neeraj Kaliya
Research Scholar, Dept. Rular Development, RDVV Jabalpur

A savings account is a great place to keep cash that you don't plan to spend right away. These accounts keep your money safe and accessible while paying you interest, but there are several different types of savings accounts to choose from. Each variation (and bank or credit union) has different features, so it's important to understand what your options are.

The most common places to stash your cash include:

1. Basic savings accounts
2. Online savings accounts
3. Money market accounts
4. Certificates of deposit (CDs)
5. Interest checking
6. Specialty accounts (student savings and goal-oriented accounts, for example)

We'll dig into the details of those accounts below.

Earning interest : All of the accounts described on this page pay interest, which helps you grow your savings — although the rate of growth may be slow. As you compare options, evaluate the interest rate, which is often quoted as an annual percentage rate (APY) to decide which account is best. You don't necessarily have to choose the account with the highest interest rate — just get a competitive rate. Especially with smaller account balances, the interest rate is not as important as other account features like liquidity and fees.

Paying fees? Fees are harmful to your savings account's health. With relatively low interest rates, any charges can wipe out your annual earnings or even cause your account balance to decrease over time.

Examine your bank's fee statement carefully before depositing money.

1. Basic Savings Accounts

In its simplest form, a savings account is just a place to hold money. You deposit into the account, earn interest, and take money out when you need it. There are some limits on how often you can withdraw funds (up to six times per month for preauthorized withdrawals – but unlimited in person), and you can add to the account as often as you like.

- More details: Why Open a Savings Account?

There's nothing wrong with using one of these plain-vanilla accounts, but there are other types of savings accounts that might be a better fit for you. Those other accounts are all variations on the traditional savings account. That said, if your needs are fairly simple, you can probably just open a savings account at a bank you're already working with and be done with it.

2. Online Savings Accounts

Highlights of online bank accounts include:

1. High interest rates on your deposits
2. Low (or no) monthly fees
3. No minimum balance requirements
4. Leading-edge technology

These types of accounts were initially available through online-only banks. But most brick-and-mortar banks now include online capabilities like online bill payment and remote deposit, and some banks have online-only options

with lower fees and high rates than their standard accounts.

Self-service : Online savings accounts are best for self-sufficient tech-savvy consumers. You can't walk into a branch and get help from a teller — you'll do most of your banking online by yourself. However, managing your account is easy, and you can always call customer service for help (note that some brick-and-mortar banks limit how often you can call customer service, and they may charge fees for getting help from a human being).

Fortunately, you can complete most requests yourself — when and where it's convenient for you.

Linked accounts : To use an online account, you usually also need a brick-and-mortar bank account (almost any checking account will do). This is your "linked" account, and that's typically the account you'll use for your initial deposit. Once your online account is up and running, you can make deposits from other sources as well — you can probably even deposit checks to the account with your mobile phone.

Spending money : If there's no physical branch, you may wonder how to spend your money if you need it quickly. Fortunately, some online banks also offer online checking accounts that allow you to write checks, pay bills online, and use a debit card for purchases and cash withdrawals. If you need to move the money to your local bank account, that transfer typically takes happens within a few business days.

Plus, some online banks allow you to order cashier's checks that go out by mail.

Variations on Savings Accounts

If you need more than a standard (or online) savings account, there are other types of accounts that pay interest while offering additional benefits.

Money market accounts (MMAs) : Money market accounts look and feel like savings accounts. The main difference is that you have easier access to your cash: You can usually write checks against the account, and you might even be able to spend those funds with a debit card. However, as with any savings account, there are limits on how many times per month you can make withdrawals. Money market accounts often pay more than savings accounts, but they may also require larger deposits. They are a good option for emergency savings because you have access to your cash, but you still earn interest. Learn more about money market accounts.

Certificates of deposit (CDs) : CDs are also similar to savings accounts, but they usually pay more. The tradeoff? You have to lock your money up in a CD for a certain amount of time (6 months or 18 months, for example). It is possible to withdraw funds early, but you'll have to pay a penalty, so CDs only make sense for cash that you won't need anytime soon. For more information, read about the basics of CDs.

Interest checking : If you really need access to your cash (and you still want to earn interest), you might get what you need from a checking account. Traditional checking accounts don't pay interest, but some types of accounts allow you to earn and spend as often as you want. Online banks offer checking accounts that pay a little bit of interest (typically less than a savings account). Reward checking accounts pay even more, but qualifying can be difficult.

Student Savings Accounts

With the exception of online banks, savings accounts can be expensive if you don't keep a large balance in your account. Banks charge monthly fees, and they pay little or no interest on small accounts. For students (who spend most of their time studying — not working), that's a problem. Some banks offer "student" savings accounts which help students to avoid fees until they get a job and can qualify for monthly fee waivers.

If you're a student, a student savings account at a brick-and-mortar bank or credit union is a great option for your first bank account. Be aware that the account may convert to a "regular" account at some point, and you'll need to be mindful of fees after that conversion.

Goal-Oriented Savings Accounts

You can save for anything — or nothing in particular — in a savings account, but sometimes it's helpful to earmark funds for a specific purpose.

For example, you might want to build up savings for a new vehicle, your first home, a vacation, or even gifts for loved ones. Some banks offer savings accounts that are specifically designed for those goals.

The main benefit of these accounts is psychological. You generally don't earn more on your savings (although some banks and credit unions offer perks to encourage regular saving), but you might be more likely to reach savings goals if a specific account is tied to something you value. If that sounds like something you'd benefit from, look for "savings club" (or similar) programs. You can also design your own program: See how to do this at SmartyPig, or you can create "subaccounts" or multiple accounts (with descriptive nicknames) at most online banks.

- More details: Why Open a Savings Account?

There's nothing wrong with using one of these plain-vanilla accounts, but there are other types of savings accounts that might be a better fit for you. Those other accounts are all variations on the traditional savings account. That said, if your needs are fairly simple, you can probably just open a savings account at a bank you're already working with and be done with it.

2. Online Savings Accounts
Highlights of online bank accounts include:

1. High interest rates on your deposits
2. Low (or no) monthly fees
3. No minimum balance requirements
4. Leading-edge technology

These types of accounts were initially available through online-only banks. But most brick-and-mortar banks now include online capabilities like online bill payment and remote deposit, and some banks have online-only options with lower fees and high rates than their standard accounts.

Self-service : Online savings accounts are best for self-sufficient tech-savvy consumers. You can't walk into a branch and get help from a teller — you'll do most of your banking online by yourself. However, managing your account is easy, and you can always call customer service for help (note that some brick-and-mortar banks limit how often you can call customer service, and they may charge fees for getting help from a human being).

Fortunately, you can complete most requests yourself — when and where it's convenient for you.

Linked accounts : To use an online account, you usually also need a brick-and-mortar bank account (almost any checking account will do). This is your "linked" account, and that's typically the account you'll use for your initial deposit. Once your online account is up and running, you can make deposits from other sources as well — you can probably even deposit checks to the account with your mobile phone.

Spending money : If there's no physical branch, you may wonder how to spend your money if you need it quickly. Fortunately, some online banks also offer online checking accounts that allow you to write checks, pay bills online, and use a debit card for purchases and cash withdrawals. If you need to move the money to your local bank account, that transfer typically takes happens within a few business days.

Plus, some online banks allow you to order cashier's checks that go out by mail.

Variations on Savings Accounts

If you need more than a standard (or online) savings account, there are other types of accounts that pay interest while offering additional benefits.

Money market accounts (MMAs) : Money market accounts look and feel like savings accounts. The main difference is that you have easier access to your cash: You can usually write checks against the account, and you might even be able to spend those funds with a debit card. However, as with any savings account, there are limits on how many times per month you can make withdrawals. Money market accounts often pay more than savings accounts, but they may also require larger deposits. They are a good option for emergency savings because you have access to your cash, but you still earn interest. Learn more about money market accounts.

Certificates of deposit (CDs) : CDs are also similar to savings accounts, but they usually pay more. The trade off? You have to lock your money up in a CD for a certain amount of time (6 months or 18 months, for example). It is possible to withdraw funds early, but you'll have to pay a penalty, so CDs only make sense for cash that you won't need anytime soon. For more information, read about the basics of CDs.

Interest checking : If you really need access to your cash (and you still want to earn interest), you might get what you need from a checking account. Traditional checking accounts don't pay interest, but some types of accounts allow you to earn and spend as often as you want. Online banks offer checking accounts that pay a little bit of interest (typically less than a savings account). Reward checking accounts pay even more, but qualifying can be difficult.

Student Savings Accounts

With the exception of online banks, savings accounts can be expensive if you don't keep a large balance in your account. Banks charge monthly fees, and they pay little or no interest on small accounts. For students (who spend most of their time studying — not working), that's a problem. Some banks offer "student" savings accounts which help students to avoid fees until they get a job and can qualify for monthly fee waivers.

If you're a student, a student savings account at a brick-and-mortar bank or credit union is a great option for your first bank account. Be aware that the account may convert to a "regular" account at some point, and you'll need to be mindful of fees after that conversion.

Goal-Oriented Savings Accounts

You can save for anything — or nothing in particular — in a savings account, but sometimes it's helpful to earmark funds for a specific purpose.

For example, you might want to build up savings for a new vehicle, your first home, a vacation, or even gifts for loved ones. Some banks offer savings accounts that are specifically designed for those goals.

The main benefit of these accounts is psychological. You generally don't earn more on your savings (although some banks and credit unions offer perks to encourage regular saving), but you might be more likely to reach savings goals if a specific account is tied to something you value. If that sounds like something you'd benefit from, look for "savings club" (or similar) programs. You can also design your own program: See how to do this at SmartyPig, or you can create "subaccounts" or multiple accounts (with descriptive nicknames) at most online banks.

References :

1. "Random House Unabridged Dictionary." Random House, 2006
2. "Savings Rate". Investopedia. Retrieved 27 August 2014.
3. "Revision Guru". www.revisionguru.co.uk. Retrieved 2016-10-12.

4. "The Concept and Measurement of Savings: The United States and Other industrialized Countries" (PDF). Federal Reserve Bank of Boston. Federal Reserve Bank of Boston. Retrieved 2016-10-11.
5. "Principles of Macroeconomics - Section 5: Main". www.colorado.edu. Retrieved 2016-10-12.
6. "Principles of Macroeconomics: Section 14". www.colorado.edu. Retrieved 2016-10-12.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Sustainable Development Stresses on Economic Development

Dr. Devendra Vishwakarma
MA (Eco. Rural development), MBA MSW, Social Science and Management Association

Abstract :- Sustainable development stresses on economic development alone with the object of conservation of environment. India is one of the twelve mega diversity countries in the world. The country possess about 8 percent of global biodiversity occupying the 10th position in terms of plant species, out of the 25 hot spots of biodiversity in the world. North- Eastern region is one of the hottest hot spots ranking 6th position among the 25 biodiversity hot spots. Rural tourism is a form of tourism which is taking place in rural areas or settlements, providing employment and income to local population, and offering individualised holiday products to consumers. Rural tourism is based on accommodation service which is complemented by additional services/facilities relying on the local social, cultural and natural resources, which are exploited according to the principles of sustainable development.While international law plays a vital role in establishing norms and offering a court of last resort for human rights violations, the reality is that most of the action to protect and fulfill rights occurs at the national level. Within countries, a constitution is the highest and strongest law, as all laws, regulations, and policies must be consistent with it. A constitution protects human rights, sets forth the obligations of the state, and restricts government powers. On a deeper level, constitutions reflect the most deeply held and cherished values of a society. Globalisation, which is partly synonymous with rising international trade, has fostered the rapid production, trade and consumption of material goods in unprecedented quantities. This has weighted the ecological footprint of human activities around the world. It is important to highlight that not only does globalization impact the environment, but the environment impacts the pace, direction and quality of globalization. This happens because environmental resources provide the fuel for economic globalization, also our social and policy responses to global environmental challenges constrain and influence the context in which globalization happens. All human beings depend on the environment in which we live. A safe, clean, healthy and sustainable environment is integral to the full enjoyment of a wide range of human rights, including the rights to life, health, food, water and sanitation. Without a healthy environment, we are unable to fulfil our aspirations or even live at a level commensurate with minimum standards of human dignity. At the same time, protecting human rights helps to protect the environment. When people are able to learn about, and participate in, the decisions that affect them, they can help to ensure that those decisions respect their need for a sustainable environment. Globalisation, which is partly synonymous with rising international trade, has fostered the rapid production, trade and consumption of material goods in unprecedented quantities. This has weighted the ecological footprint of human activities around the world. While it's still difficult to assess the impact of globalisation on the environment, it's quite obvious in some areas. Globalization places great stress on existing patterns of global governance with the shrinking of both time and space; the expanding role of non-state actors; and the increasingly complex inter-state interactions. The global nature of the environment demands global environmental governance, and indeed a worldwide infrastructure of international agreements and institutions has emerged and continues to grow. But many of today's global environmental problems have outgrown the governance systems designed to solve them. It is important to highlight that not only does globalization impact the environment, but the environment impacts the pace, direction and quality of globalization. This happens because environmental resources provide the fuel for economic globalization, also our social and policy

responses to global environmental challenges constrain and influence the context in which globalization happens. Rural tourism is a major source of revenue and employment for local communities providing a strong incentive to protect the biodiversity .This renew often translate into direct income for the local stakeholder, boosting local , national and international support for the protection of nature. The same time, revenue provides impetus for the private biodiversity conservation effort and is often channeled into capacity building programmes for local communities to manage protected areas. While the loss of biodiversity and its ecosystem services is of the global concern, it is at the rural local level that it has the greatest impact. The world's poor, especially living in rural areas, are vulnerable depending heavily on biological resources for the much of their needs .With the largest proportion of global diversity concentrated in developing countries, which are at the same time receiving an increasing share of the international tourism market ,biodiversity may well be one of their most competitive tourism advantages.

Eco-tourism activities like wildlife tourism, bird watching, trekking helps the government to improve the management of natural resources. The eco-tourist visit sites to observe the wildlife and as a result money is spent on that area. Local government and people can utilize these incentives to maintain areas in natural condition to ensure continued visit by the eco-tourist .If the carrying capacity exceeds because of increase in number of tourist visits to ecosystem will lead to destruction of rare and endangered species due to tramping, killing, disturbing the balance of breeding habit. Other important factors needs to be controlled are the development of transport routes, construction of accommodation unit which will put pressure on the ecosystem by the way of noise pollution, water pollution, vehicular emission and untreated sewage. Environment impact assessment programs have to be implemented to study effect of growing tourism. In developing and promoting eco-tourism, attention should be given on management of solid waste and waste water treatment. Increase in number of tourists at hill station like Mahabaleshwar and Matheran exerting negative impact on environment by deforestation for construction of hotels. In particular, pathway in eco-friendly manner will save endemic species which are getting destroyed by trampling. Ban on use of plastics should be strictly implemented to reduce plastic accumulation in particular .

In recent years, the recognition of the links between human rights and the environment has greatly increased. The number and scope of international and domestic laws, judicial decisions, and academic studies on the relationship between human rights and the environment have grown rapidly. As a result, in March 2012 the Human Rights Council decided to establish a mandate on human rights and the environment, which will (among other tasks) study the human rights obligations relating to the enjoyment of a safe, clean, healthy and sustainable environment, and promote best practices relating to the use of human rights in environmental policymaking. Many States now incorporate a right to a healthy environment in their constitutions. Many questions about the relationship of human rights and the environment remain unresolved, however, and require further examination. The first formal recognition of the right to a healthy environment came in the Stockholm Declaration, which emerged from the pioneering global eco-summit in 1972: 'Man has the fundamental right to freedom, equality and adequate conditions of life, in an environment of a quality that permits a life of dignity and well-being, and he bears a solemn responsibility to protect and improve the environment for present and future generations.' Since the Stockholm Declaration, the right to a healthy environment rapidly migrated around the globe. 177 of the world's 193 UN member nations recognize this right through their constitution, environmental legislation, court decisions, or ratification of an international agreement. Regional human rights agreements recognizing the right to a healthy environment have been ratified by more than 130

nations spanning Europe, Asia, the Americas, the Caribbean, Africa, and the Middle East. The Inter-American Commission on Human Rights, the Inter-American Court of Human Rights, the African Commission on Human and Peoples Rights, the European Court of Human Rights, and the European Committee on Social Rights have issued decisions in cases involving violations of this right. Do people have a right to clean air, safe drinking water, and a healthy environment? Fifty years ago, the concept of a human right to a healthy environment was viewed as a novel, even radical, idea. Today it is widely recognized in international law and endorsed by an overwhelming proportion of countries. Even more importantly, despite their recent vintage, environmental rights are included in more than 90 national constitutions. These provisions are having a remarkable impact, ranging from stronger environmental laws and landmark court decisions to the cleanup of pollution hot spots and the provision of safe drinking water.

A Right to an Environment of a Particular Quality :- The protection of the environment is 'a vital part of contemporary human rights doctrine and a sine qua non for numerous human rights, such as the right to health and the right to life'. Many human right conventions are present which are relevant to the situation of people whose way of life comes under threat from climate change. States have a responsibility under these instruments to take action to remedy the direct and indirect threats to these rights posed by climate change.

The Right to Life :- The right to life is protected by UDHR. UDHR provides 'everyone has the right to life, liberty and security of person'. This right shall be protected by law. No one shall be arbitrarily deprived of his life'. The right to life of children also receives specific protection in article 6 of the CRC. Climate change can have both a direct and indirect impact on human life. The effect may be immediate, as in the aftermath of climate-change induced extreme weather, or may appear gradually, as deterioration in health, diminishing access to safe drinking water and susceptibility to disease increases.

The Right to Health: Article 25 of the UDHR states that 'everyone has the right to a standard adequate for the health and well-being of himself and his family'. Climate change poses significant risks to the right to health. A 2003 joint study by the World Health Organisation and the London School of Hygiene and Tropical Medicine states that global warming may already be responsible for more than 160,000 deaths a year from malaria and malnutrition; a number that could double by 2020 Climate change will have many impacts on human health. It will affect the intensity of a wide range of diseases – vector-borne, water-borne and respiratory. In the Pacific, changes in temperature and rainfall will make it harder to control dengue fever.

Human Security :- Climate change also has the potential to exacerbate existing threats to human rights in the region and around the globe. Rising global temperatures will jeopardise many people's livelihoods, increasing their vulnerability to poverty and social deprivation. This is particularly problematic in weak states with poorly performing institutions and systems of government that are unable to manage competition over diminishing resources. In these conditions climate change is likely to overwhelm local capacities to adapt, which will reinforce the trend towards general instability in these countries.

The Rights of Indigenous Peoples :- Indigenous people don't see the land as distinct from themselves in the same way as maybe society in the south-east (of Australia) would. If they feel that the ecosystem has changed it's a mental anxiety to them. Indigenous people have the right to practice and revitalize their cultural practices, customs and institutions There is an intrinsic link between indigenous culture and land.

Conclusion :- Applying a human rights-based approach, decision-makers should be guided by the core minimum human rights standards when weighing competing demands on limited resources. The content of some of the key human rights affected by climate change are articulated in the General Comments of the UN human rights treaty bodies, which provide one basis for

developing the standards and measures to apply when evaluating whether a particular policy meets its human rights requirements. Decision-makers must avoid the presumption that all efforts to address the impact of climate change will be utilitarian and thus result in an evenly distributed net benefit. Thus, when a climate change policy is proposed, decision-makers would identify its likely impact on the most disadvantaged or vulnerable, with data disaggregated as far as possible according to the prohibited grounds of discrimination, e.g., race, colour, sex or national origin. This could be achieved by requiring that all new legislative-based policies concerning climate-change adaptation be accompanied by a human rights compliance statement. Where either the policy or enabling legislation does not meet recognised human right norms, for example by disproportionately impacting indigenous people, the statement must identify and explain the reasons for the shortcoming and the policy should be reconsidered. Global interactions facilitate exchange of environmental knowledge and best practices. Environmental consciousness increases with emergence of global environmental networks and civil society movements. Globalization facilitates the spread of existing technologies and the emergence of new technologies, often replacing existing technologies with more extractive alternatives; greener technologies may also be spurred. Tourism has an increasingly important role to play in raising awareness of biodiversity issues and motivating people to change long-established practices and behaviours. With millions of people travelling across e globe each year, tourism is an ideal vehicle to spread awareness of the importance of biodiversity to all of our lives and the urgent need for its conservation. Biodiversity related tourism activities must be undertaken within the framework of specific development plans and strategies so that the tourism product develops in tandem with sustainable environmental practices, community involvement and socio-economic development.

Protecting biodiversity is an issue of critical national and international importance. Many countries and destinations already have strategies and policies for tourism and biodiversity. However, the integration between them may often need to be strengthened.

REFERENCES :-

1. Australian Labor Party, Our Drowning Neighbours (Labor's policy discussion paper on climate change in the Pacific, January2006).Brown, Oli and Crawford, Alec, Natural Disasters and Resource Rights - Building resilience, rebuilding lives (International Institute for Sustainable Development Agency Survey, 2006)

2. Byrne, Marc and Iljadica, Marta, There goes the neighbourhood (Uniya Occasional Paper 12, May 2007)Fidler, David, 'Disaster Relief and Governance after the Indian Ocean Tsunami: what role for International Law?' (2005) 6 Melbourne Journal of International Law 458

3. Norman Myers, 'Environmental Refugees in a globally warmed world', (1993) 43(11) BioScience 752

4. McDonald, Jan, 'A risky climate for decision-making: the liability of development authorities for climate change impacts' (2007) 24 Environmental Planning Law Journal 405

5 Stern, Nicholas, et al, The Economics of Climate Change (The Stern Review, 2006) Zagor, Matthew and Prest, James, The Case for Environment Related Human

6. Rights (Submission to the ACT Attorney-General for consideration in s43, Review of Operation of the Human Rights Act 2004 (ACT), June 2005)

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

उत्तराखंड में क्षेत्रीय राजनीति – समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ० नीता आर्या
असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, कुमाऊँ विश्वविद्यालय नैनीताल

9 नवंबर 2000 को अंततः देश के सत्ताईसवें राज्य के रूप में उत्तराँचल (तदन्तर परिवर्तित नाम उत्तराखंड) की स्थापना से पूर्व कुमाऊँ गढ़वाल के इस पर्वतीय इलाके की अपने मातृप्रदेश उत्तर प्रदेश के वृहत्तर भूभाग से भौगोलिक सामाजिक सांस्कृतिक परिस्थितियां सर्वथा अलग होने के दृष्टिगत अलग राज्य की मांग का लम्बा इतिहास रहा है।

राष्ट्रीय स्तर पर इस क्षेत्र की विशिष्ट स्थिति को रेखांकित करते हुए ब्रिटिश भारत में श्रीनगर गढ़वाल में सन 1938 में आयोजित कांग्रेस अधिवेशन में पंडित जवाहर लाल नेहरु ने पहले पहल यहाँ के निवासियों के अपनी परिस्थितियों के अनुसार निर्णय लेने और सांस्कृतिक विरासत के आन्दोलन का समर्थन किया था.

बद्रीदत्त पांडे ने 1940 में क्षेत्र के लिए विशेष दर्ज़ा, अनुसूया प्रसाद बहुगुणा ने कुमाऊ गढ़वाल अलग इकाई और १९५४ में इंद्र सिंह नयाल ने क्षेत्र के लिए में अलग विकास योजना की मांग की. १९५५ में फज़ल अली आयोग द्वारा राज्य अलग पर्वतीय राज्य के गठन की संस्तुति की गयी थी.

वेबसाइट कंट्री–डाटा डॉट कॉम में प्रकाशित लेख के अनुसार, The residents of hill districts have felt themselves lost in the large state of Uttar Pradesh and their needs ignored by the politicians more concerned with wider regional issues- There has been almost no development of industry or higher education] although the 1962 border war with China resulted in some infrastructure development] particularly roads] which also were eÛtended to make the more remote pilgrimage sites more accessible-

Men of the region are forced to leave their families in the hills and seek employment in the plains] where they mostly find menial positions as domestic servants] which they consider undignified and inappropriate to their caste- Students must also go to the plains for higher education- All find the heat of the lowlands very oppressive

(विशाल उत्तर प्रदेश राज्य में पहाड़ के निवासी अपने आप को खोया हुआ और दूसरे मसलों पर ज़्यादा तवज्जो देने वाले राजनीतिज्ञों द्वारा की उपेक्षा का शिकार महसूस करते थे, इस क्षेत्र में उद्योग, उच्च शिक्षा का विकास लगभग शून्य था. हालाँकि 1962 के भारत चीन युद्ध के बाद क्षेत्र में आधारभूत ढांचे का थोड़ा बहुत विकास हुआ, जिसमें मुख्यतः सड़कों का निर्माण किया गया, इससे उत्तराखंड के दूरस्थ धार्मिक पर्यटन स्थलों तक भी आवागमन कुछ सुगम हो सका.

उत्तराखंड के लोगों को अपने परिवारों को छोड़ कर रोज़गार के लिए मैदानी इलाकों को जाना पड़ता है, जहाँ उन्हें घरेलू नौकरों जैसे छोटे काम करने पड़ते हैं, जो उनके लिए असम्मानित और उनकी जातियों के प्रतिकूल हैं, विद्यार्थियों को भी उच्च शिक्षा के लिए मैदानों की तरफ जाना पड़ता है, पहाड़ी पृष्ठभूमि के कारण उनके लिए निचले क्षेत्रों की गर्मी असह्य होती है)

उपरोक्त कथन अविभाजित उत्तर प्रदेश में पर्वतीय क्षेत्र की जनता की उपेक्षित व क्षेत्रीय विकास की लचर स्थिति का परिचायक है.

26 जुलाई 1979 को डी डी पन्त, काशी सिंह ऐरी, विपिन चन्द्र त्रिपाठी, इन्द्रमणि बडोनी आदि ने पृथक उत्तराखंड राज्य की स्थापना के उद्देश्य से मसूरी में उत्तराखंड क्रांति दल नामक राजनैतिक दल की स्थापना की. क्षेत्र की जनता का व्यापक समर्थन इस दल को प्राप्त हुआ, रानीखेत और पिथौरागढ़ से इस दल के विधायक अविभाजित उत्तर प्रदेश विधान सभा के लिए चुने गये, किन्तु राज्य स्थापना के लिए आन्दोलन उग्र और निर्णायक चरमोत्कर्ष पर मंडल आयोग की सिफारिशें लागू किये जाने के विरुद्ध खड़े हुए आन्दोलन के राज्य आन्दोलन में बदल जाने से पंहुचा.

वेबसाइट कंट्री–डाटा डॉट कॉम में प्रकाशित एक लेख के अनुसार, The first demand for a separate Uttarakhand state was voiced by P-C- Joshi] a member of the Communist Party of India (CPI)] in 1952- However] a movement did not develop in earnest until 1979 when the Uttarakhand Kranti Dal (Uttarakhand Revolutionary Front) was formed to fight for separation- In 1991 the Uttar Pradesh legislative assembly passed a resolution supporting the idea] but nothing came of it- In 1994 student

agitation against the state's implementation of the Mandal Commission report increasing the number of reserved government positions and university places for lower caste people (the largest caste of Kumaon and Garhwal is the high&ranking Rajput Kshatriya group) Ûpanded into a struggle for statehood- Violence spread on both sides] with attacks on police] police firing on demonstrators] and rapes of female Uttarakhand activists- In 1995 the agitation was renewed] mostly peacefully] under the leadership of the Uttarakhand Samyukta Sangharsh Samiti ¼Uttarakhand United Struggle Association] a coalition headed by the Uttarakhand Kranti Dal

(पृथक उत्तराखंड राज्य की प्रथम मांग कामरेड पी सी जोशी (सीपीआई) ने 1952 में उठाई थी. हालाँकि 1979 में अलग राज्य की लड़ाई के लिए उत्तराखंड क्रांति दल की स्थापना तक कोई प्रभावी आन्दोलन खड़ा नहीं हुआ. 1991 में तत्कालीन उत्तर प्रदेश विधान सभा द्वारा इस मांग के समर्थन में प्रस्ताव पारित किया गया, किन्तु इसका परिणाम कुछ नहीं निकल सका. 1994 में सरकार द्वारा निम्न जातियों के लिए सरकारी नौकरियों और शिक्षा में सीटें बढाने की मंडल आयोग की सिफारिशें लागू किये जाने के विरुद्ध (उत्तराखंड की बहुसंख्यक आबादी उच्च जाति वाली राजपूत क्षत्रिय है) खड़ा हुआ, आन्दोलन पृथक राज्य आन्दोलन में परिणत हो गया. दोनों ओर से हिंसा हुई, पुलिस पर हमले हुए, पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर गोलियां चलायीं, महिला आन्दोलनकारियों के बलात्कार हुए. 1995 में इस आन्दोलन को उत्तराखंड संयुक्त संघर्ष समिति द्वारा पुनर्जीवित किया गया, जो उत्तराखंड क्रांतिदल की अगुआई में मुख्यतः एक शांतिपूर्ण आन्दोलन था.)

15 अगस्त 1996 को प्रधानमंत्री एच डी देवगौड़ा ने लालकिले से उत्तराखंड राज्य की घोषणा की. 27 जुलाई 2000 को उत्तर प्रदेश पुनर्गठन विधेयक लोकसभा में प्रस्तुत किया गया, 1 अगस्त 2000 को यह लोकसभा में तथा 10 अगस्त 2000 को राज्य सभा में पारित हो गया. 28 अगस्त को इसे महामहिम राष्ट्रपति द्वारा स्वीकृति दी गयी और 9 नवम्बर 2000 को उत्तराखंड राज्य अस्तित्व में आया.

राज्य स्थापना के बाद हुए पहले विधान सभा चुनाव में ही क्षेत्रीय दल 'उत्तराखंड क्रांति दल' ने क्षेत्रीय जनता का प्रतिनिधित्व खो दिया कुल 70 में से उसे मात्र 4 सीटें प्राप्त हुईं. 2007 के चुनाव में यह दल 3 सीट, 2012 में मात्र 1 और 2017 के चुनाव में तो एक भी सीट नहीं जीत सकी. इस अवधि में राज्य में कांग्रेस और भाजपा की सरकारें क्रमशः आती रहीं. 2009 और 2014 के लोकसभा चुनावों में भी बारी बारी कांग्रेस और भाजपा ने सभी पांच सीटों पर विजय प्राप्त की उत्तराखंड क्रांति दल अपनी कोई विशेष उपस्थिति दर्ज करने में असफल रहा.

वर्ष 2000 में ही बिहार से पृथक होकर अस्तित्व में आये झारखंड राज्य में क्षेत्रीय दल 'झारखण्ड मुक्तिमोर्चा' का वहां की सत्ता में निर्णायक दखल है. जबकि उत्तराखंड में न तो आन्दोलनकारी उक्रांद अपना अस्तित्व बचा सका है और न ही अन्य किसी क्षेत्रीय शक्ति का उभार हुआ है. सत्ता बारी बारी दो प्रमुख राष्ट्रीय दलों में बंटी रही है, उक्रांद कांग्रेस और भाजपा की सरकारों में भागीदार बनने के बाद आपसी कलह और क्षेत्रीय मुद्दों पर जनता का प्रतिनिधित्व कर पाने में असफल होने के चलते शून्य हो गया. क्षेत्रीय हितों के लिए आन्दोलन के फलस्वरूप अस्तित्व में आये राज्य की राजनीति क्षेत्रीय मुद्दों के उचित प्रतिनिधित्व के अभाव में राष्ट्रीय मुद्दों पर ही सिमटने को विवश हुई है. जबकि पर्वतीय क्षेत्र में आधारभूत ढाँचे, शिक्षा, चिकित्सा, उद्योग, रोज़गार, पलायन के अतिरिक्त अनेक बांध परियोजनाओं के चलते पलायन और भूकंप, भूस्खलन बहुल क्षेत्र पहाड़ पर अस्तित्व बचाने का संकट है.

सन्दर्भ –

1 : http://www.country-data.com/cgi-bin/query/r-6037.html
2 : https://www.hindi.nyoooz.com/news/dehradun/uttarakhand-foundation-day-regional-parties-on-margins-in-the-state_150544/
3 : https://www.livehindustan.com/uttarakhand-election/party-uttarakhand-kranti-dal-1

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

दलित चेतना के विविध आयाम का साहित्यक अध्ययन

डॉ0 रामलाल साकेत
हिन्दी विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

सारांश :– दलित साहित्य के प्रतिष्ठित रचनाकार मोहनदास नैमिशराय का कहना है – ''दलित कविता एक सामाजिक आन्दोलन का सामाजिक प्रतिफलन है। अन्य काव्यधाराओं और साहित्यिक परम्पराओं की अपेक्षा उसका सीधा संबंध जीवन की जमीन में है।''[1]

हजारों साल के ऐतिहासिक परिदृश्य में दलितों ने जो सामाजिक उत्पीड़ना सहा है, विषमाताएँ झेली है, भेदभाव और शोषण ने उसके मस्तिष्क पर जो गहरी रेखाएँ खींची है, ऐसी वर्ण व्यवस्था से उपजी विषमताओं और विसंगतियों को दृष्टि में रखकर ही दलित साहित्य का विश्लेषण करके, सौन्दर्यशास्त्र और साहित्यिक मूल्यांकन के अध्ययन की दिशा में आगें बढ़ सकते है। साहित्य सृजन दलित जीवन के यथार्थ को प्रतिबिम्बित करने के साथ ही उसे पहचानने का भी एक साधन है। साहित्य और कला के प्रति यह दृष्टिकोण सामाजिक व्यवस्था में साहित्य के महत्व का उचित मूल्यांकन भी है। दलित साहित्य में दलित जीवन का यथार्थवादी चित्रण यथार्थ की मात्र नकल नहीं है, बल्कि साधारण परिस्थितियों में साधारण चरित्रों का वास्तविक पुनर्सृजन है। इस कार्य में दर्शन और कलात्मक पांडित्यपूर्ण प्रदर्शन की आवश्यकता कतई नहीं है – पाठक की चेतना और अनुभूति को प्रभावित करने वाले गहन संवेदना से ही यह संभव है।

प्रविधि :– इस शोध पत्र में **दलित चेतना के विविध आयाम का साहित्यक अध्ययन नामक** विषय पर द्वितीय शोध सामग्री का संकलन किया गया है। इसके साथ–साथ विद्वानों का मार्गदर्शन, पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से शोध पत्र का निर्माण किया गया है।

शोध पत्र का उद्देश्य :– दलित साहित्य में मानवीय मूल्यों का अध्ययन करना।

- सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक मूल्यों का अध्ययन करना।
- दलित साहित्य में मूल्य चेतना का अध्ययन करना।

समाज की स्वतंत्र सत्ता नहीं है, समाज केवल व्यक्तियों से मिलकर ही बनता है। व्यक्तियों के आपसी मेल–मिलाप तथा संबंध को समाज कहते है। समाज में रहकर व्यक्ति उन्नति कर सकता है।

'धरती धन न अपना' में दलितों के सामाजिक अन्याय का यथार्थ चित्र है, जहॉ शोषितों द्वारा सही जाने वाली – अनेक विषमताओं का चित्रण है। पुरातन काल से समाज में चला आ रहा वर्ग संघर्ष, 'घोड़ेवाहा' गॉव में भी उसी रूप में व्याप्त है। उच्च जाति के लोग स्वभाव से अहंकारी है। हर भू–स्वामी का अपना चमार होता है। धन के अभाव में ये चौधरियों की ज्यादतियों को सहने के लिए विवश है। चमारों के साथ गाली–गलौज करना, उन्हें पीटना उनके लिए मामूली बात है। मानवता नाम की चीज से वे बिल्कुल अनजान है। काली की चाची के इन शब्दों से उनकी सामाजिक स्थिति का आभास होता है, ''तू चौधरियों के लड़कों के साथ कबड्डी क्यों खेलने गया था। उसने तो एड़ी मार दी। गरीब की चाहे जान चली जाये। चमार घूरकर भी देख ले तो चौधरियों को ताव आ जाता है। आप चाहे चमार को जान से भी मार दे तो कोई पूछने वाला नहीं है।''[2]

उपयोगिता :– इस उपन्यास में एक तरफ काली चौधरियों के अन्याय को हनीं सहता, दूसरी तरफ मंगू चमार जैसे लोग उनके दरवाजों पर कुत्तों की तरह पड़े रहते है और उनका जूठन चाटते है। दलितों का अपना कोई अस्तित्व नहीं है। उनकी स्त्रियों के साथ दुर्व्यवहार किया जाता है।

काली अपनी सामाजिक नियति से अनजान है। उसके ज्ञानों के साथ प्रगाढ़ प्रेम संबंधों का अन्त अत्यन्त दुःखद होता है। उनका अपना समाज उनके मन को कुचल देता है। ज्ञानों को जहर देकर मार दिया जाता है।

दलितों से सहानुभूति रखते हुए लेखक ने उस समाज के अमानवीय पक्षों को उघाड़ा है। काली और ज्ञानी का दुखान्त चौधरियों के कारण नहीं, वरन् दलित समाज के अपने सांस्कृतिक ढॉचे के कारण है।

'नरक कुण्ड में वास– में लेखक भूमिहीन और दलित व्यक्ति की समाज में क्या स्थिति है, उसका विविध आयामों से चित्रण करता है। काली की नियति

व्यक्ति की नहीं, सर्वहारा व्यक्ति की है। जिसे न गॉव सम्मान का जीवन दे रहें है। और न शहर, वह नरक दर नरक महक रहा है। काली और उसे साथी गंदे वातावरण में रहने और काम करने के लिए विवश है। करने को तो ये सभी आजाद देश के नागरिक हैं, लेकिन इन्हें क्या मिला? लेकिन लगता है। आजादी सेठो, अफसरों और बड़े–बड़े चौधरियों की कोठियों और हवेलियों में ही फॅसकर रह गयी है। उसे छोटी–छोटी गलियों और कच्चे मकानों का रास्ता नहीं मिला,,, साले कितना बड़ा धोखा है।[3]

समाधान :– डॉ. देवेन्द्र चौबे अपने आलेख 'दलित का अर्थ' में कहते हैं – ''इस (भारतीय) संस्कृति में ऐसी कई अवधारणाऍ है, जो मनुष्य के बीच भेद करती है। उस अवस्था को अपना आदर्श रूप मानती है, जिसमें दमन के खिलाफ विद्रोह और प्रतिशोध अपना सामाजिक अपराध (की तरह) माना जाता है। दलित समाज का साहित्य वर्चस्व की संस्कृति से जुड़े इन सारे सवालों को उठाता है, और उनसे संवाद करते हुए टकराने की कोशिश करता है।''[4]

डॉ. सी.वी. भारती – दलित साहित्य की सौन्दर्य दृ"ट में होता है। उत्पीड़न, पीड़ा व उसके विस्तार का निरपेक्ष आकलन, धार्मिक पाखंडों व निहित स्वार्थवश निर्मित शोषण के उपादानों के प्रति घृणा एक सजग मानवीय अस्मिता, समत्व बोध, सामाजिक अन्यायके प्रति प्रतिकार का सामर्थ्य सामाजिक परिवर्तनों के प्रति अडिग आस्था व परम्परागत घृणित व्यवस्थाओं के विच्छेदन की सफलता का विश्वास। आगे वे कहते है, ''दलित साहित्य के सौन्दर्य में काल्पनिक रोमांटिक रंगीनियॉ नहीं, अपितु घटनाओं का खुदरापन अपने यथार्थ रूप में प्रस्फुटित होता है।[5]

इसी प्रकार 'कभी न छोड़े खेत' में गॉव में एक खेतिहर मजदूरों और नीच जाति के लोगों का भी है जो अपने अस्तित्व के लिए जाटों पर निर्भर है। ये न केवल दिन–रात मेहनत मशक्कत करते हैं अपितु जाटों की गालियॉ, घुड़कियॉ भी बर्दाशत करते है, इनके लिए झूठी गवाहियॉ देते है। बल्कि उनके लिए जेल भी जाते है। इनकी औरतों को जाटों की भोग्या भी बनना पड़ता है। यदि वे इन्कार कर दे ंतो उन्हें लालच या डर से काबू में लाने की कोशिश की जाती है, क्योकि सभी समझते है कि, ''गरीब आदमी का हक उसके यौवन की तरह लम्बे समय तक नहीं रहता।''[6]

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है, कि आज भी समाज में दलितों को बराबरी का अधिकार नहीं है। आज भी दलित को आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक, शैक्षणिक हर क्षेत्र में स्थिति अत्यन्त दयनीय है। दलितों के साथ छुआछूत का व्यवहार किया जाता है। उनकी नारियों का शारीरिक और मानसिक दोनों तरह का शोषण किया जाता है। समाज में इन्हें ऊपर उठाने की बडी–बडी दलीलें दी जाती है। लेकिन अन्दर से उच्च वर्ग सदैव यही चाहता है, कि यह वर्ग हमेशा ही कमजोर और आर्थिक रूप से पिछड़ा ही रहे, ताकि उच्च वर्ग निम्न वर्ग से अपना काम चलाता रहे।

'दलित विशेषण' वस्तुतः समाज के सबसे निचले स्तर के सम्पूर्ण उपेक्षित जन–समूह पर लागू होता है। संविधान के अन्तर्गत परिगणित जातियों को अनुसूचित जाति की संज्ञा दी गयी, परन्तु इस सूची के बनाने के कई दशक पूर्व अछूत समझी जाने वाली जातियों को 'हरिजन' शब्द से सम्बोधित किया गया। 'हरिजन' ' ाब्द का प्रयोग महात्म गॉधी ने सहानुभूति दर्शाने के लिए नहीं बल्कि अछूत समझी जाने वाली अनेक जातियों को एकता के सूत्र में बांधने के लिए किया था।

गॉधी जी ने अछूतों को हरिजन कहकर पुकारा है, उनके अनुसार, ''अछूतों का जन्म समाज के ऊॅचे वर्गो की तरह है। ऊॅचे वर्गो ने ही उन्हें यह निम्नतम स्थान दिया है, न कि ईश्वर ने बताया है। यह समाज की गिरी और दलित भावना का परिणाम है। न कि ईश्वर की कृति है या किसी विधान की देन है।''[7]

प्रबुद्ध लोगों ने 'हरिजन' के बदले 'दलित' शब्द का प्रयोग करना आरंभ कर दिया। समाज के दबे, कुचले, असहाय, अकिंचन लोगों को दलित की संज्ञा दी गयी।

आर्थिक रूप से दलित प्राचीन काल से समाज का उत्कर्ष मनुष्य के आर्थिक जीवन की सम्पन्नता और समुन्नति पर निर्भर करता रहा है। आर्थिक विपन्नता से ग्रस्त समाज विकास की ओर अग्रसर नहीं हो सकता। आर्थिक विपन्नता समाज को खोखला एवं जर्जर बना देती है और ऐसे समाज में व्यक्ति का जीवन बद से बदतर हो जाता है।

जगदीशचन्द्र ने धरती धन न अपना शीर्षक के माध्यम से काफी हद तक दलित वर्ग की नियति को भी इंगित किया है। पुरातन काल से समाज में चला आ रहा वर्ग संघर्ष, 'छोड़ेवाहा' गॉव में भी उसी रूप में व्याप्त है। चौधरियों और चमारों का रिश्ता शोषक और शोषित का रिश्ता है। इसलिए चमार (दलित) दारिद्रय से पूर्ण नारकीय जीवन जीने को विवश है। आर्थिक रूप से चमार इतनी बुरी हालत में है, कि जब काली छह

साल बाद अपने गॉव वापिस आता है तो गॉव को पहले जैसी हालत में देखकर सोचता है कि वापिस शहर चला जाय। लेखक ने गॉव की तस्वीर इस प्रकार खींची–गोबर की तेज बदबू ने उसे चमादड़ (हरिजनों की बस्ती) के निकट ही होने का संकेत दिया, कुछ ही देर में चमादड़ीके बाहर कुँए पर पहुँच गया। कुँए के गिर्द गन्दे पानी और कीचड की छपड़ी बनी हुई थी। वह कुछ क्षणों के लिए रूक गया और सामने छोटे–छोटे कच्चे मकानों को देखने लगा।''[8]

डॉ. धर्मवीर भारती ने कविता में आर्थिक विपन्नताओं का जो चित्र उकेरा है, वह उल्लेखनीय है –

शोषण की अमर वेल, दमन की महागाथा,

यातना का पिरामिड, उत्पीड़न की गंगोत्री,

ऋणों के पहाड़, ब्याज के सागर,

निरक्षरों के मस्तिष्क, महाजनों की बही,

रुक्को रे अँगूठों की छाप उटपटॉग

जोड़ घटा, गुणा–भाग, देना सब एक[9]

तमाम आर्थिक, अवसादों, विभिन्नताओं के बावजूद दलित रचनाकार अपने समाज को अज्ञानता, दरिद्रता, हीनता से लड़ने की अदम्य इच्छा रखते हुए साहित्य सृजन करता है। उसके अनुभव ही उसकी अभिव्यक्ति हैं और जीवन के कठोरतम क्षणों में सृजित शब्द उसके लिए महत्पूर्ण है। मानवीय सरोकरों सें जुड़े तमाम विचार उसे मान्य है, वे विचार जो मनुष्य को सम्मान से जीना सिखाते है।

शहरों में गरीबों और दलितों की गॉव से भी बदतर हालत हैं। गॉव में कम से कम रोटी तो नसीब होती है, शहर में वह भी मुमकिन नहीं। 'नरक कुंड में वास' नामक उपन्यास का अगला हिस्सा है। इसमें 'धरती धन न अपना' उनन्यास की कहानी को ही आगें बढाया गया है। इस उपन्यास में दलित जीवन की आर्थिक स्थिति की भयावह तस्वीर दिखाई देती है। जब काली गॉव छोड़कर शहर जाता है। तो उसे वहॉ पर दो वक्त की रोटी भी कमाने के लिए रेढ़े में बैल की जगह लगना पड़ता है। काली को छिब्बू नामक पात्र शहर की परिस्थितियों से परिचित कराता है और अपनी और काली की स्थिति का उसे आभास दिलाता है। ''मेहनत मसक्कत करके आदमी दो टैम की रोटी तो कमा ही लेता है। लेकिल मेहनत के हिसाब से मजदूरी नहीं मिलती। गरजमंद को झुकना ही पड़ता है।''[10]

निष्कर्ष :–

कान्ति मोहन अपने निष्कर्षो से यह सिद्ध करने का प्रयास करे हैं कि दलित समस्या सामाजिक एवं धार्मिक नहीं, आर्थिक है। उनका कहना है –''अछूत प्रथा भूमि पर व्यक्तिगत स्वामित्व के संबंध स्थापित होने के बाद ही अस्तित्व में आई होगी। सामाजिक ऊँच–नीच का भय अभिन्न रूप से आर्थिक ऊँच–नीच के भाव से जुड़ा है। और आर्थिक ऊँच–नीच के भाव के मूल में भूमि का स्वामित्व और भूमिहीनता है।

कान्ति मोहन केक इन निष्कर्षो के पीछे एक सोच और दृष्टि है, जो दलित समस्याओं के उन बिन्दुओं को लगातार अनदेखा करती रही है जो सामाजिक और धार्मिक व्यवस्था के द्वारा निर्मित हुए है। दलितों को सम्पत्ति जमा करने के अधिकार से वंचित किया गया। आर्थिक प्रतिबंध लगाए गए। दंड, विधान में दोहरे नियम रखे गए वर्ण व्यवस्था एवं सामन्ती व्यवस्था, बेगार–प्रथा के तहत दलितों की आर्थिक विपन्नता निम्न से निम्नतर होती चली गयी।[11]

सन्दर्भ :–

1. मोहनदास नैमिशराय, दलित साहित्य का समाजशास्त्र, पृ. 25
2. जगदीशचन्द्र, धरती न धन न अपना, पृ. 141
3. जगदीशचन्द्र – नरक कुण्ड में वास, पृ. 155
4. डॉ. देवेन्द्र चौबे – साहित्य में पवित्रता ओर उत्कृष्टता का सवाल, राष्ट्रीय सहारा 30 अगस्त 1998, पृ. 14
5. डॉ. सी. वी. भारती – दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, हंस 11, अंक 1, 1996, पृष्ठ 70, 72
6. जगदीश चन्द्र – गभी न छोड़े खेत, पृ. 57
7. डॉ. वीरेन्द्र नाथ सिंह – भारतीय सामाजिक चिंतन, पृष्ठ 120
8. जगदीशचन्द्र – धरती धन न अपना, पृ. 10–11
9. डॉ. धर्मवीर – हीरामन, शेष साहित्य प्रकाशन, शाहदरा दिल्ली, पृ. 55
10. जगदीश चन्द्र – नरक कुंड में वास, पृ. 115
11. कान्ती मोहन – प्रेमचन्द्र और अछूत समस्या, जनसुलभ साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ 5

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

बैंक से ऋण प्राप्त करने वाले कृषकों की समस्याएँ

नरेन्द्र कुमार वासनिक
विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

प्रस्तावना : प्रदेश के कृषको एवं ग्रामीणजनों को सहकारिता के माध्यम से साख प्रदान करने हेतु सन् 1957 में मध्यप्रदेश राज्य सहकारी बैंक का गठन किया गया था। मध्यप्रदेश राज्य सहकारी बैंक एक शेड्यूल बैंक है जो प्रदेश की अल्पकालीन सहकारी साख संरचना की सर्वोच्च कड़ी है। पूर्व में बैंक का प्रधान कार्यालय जबलपुर में स्थित था, परन्तु सुविधा कि दृष्टि से इसका मुख्यालय 7 अप्रैल 1975 को राजधानी भोपाल में स्थानांतरित किया गया। प्रदेश में भीर्श बैंक की 10 संभागीय/उपसंभागीय शाखाएँ हैं। प्रदेश में कृषि एवं अकृषि ऋणों की साख पूर्ति सहकारी साख संस्थाओं के माध्यम से सम्पादित की जा रही है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में सहकारी बैंकों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सहकारी संस्थाओं की संगठनात्मक संरचना निम्नानुसार त्रि–स्तरीय होती है–

1. राज्य स्तर पर – मध्य–प्रदेश राज्य सहकारी बैंक (अपेक्स बैंक)
2. जिला स्तर पर – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक
3. ग्राम स्तर पर – प्राथमिक साख समितियॉ।

राज्य सहकारी बैंक, जिला सहकारी बैंकों की संघीय संस्था है तथा इसके ऊपर जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक और प्राथमिक सहकारी समितियों के माध्यम से आम ग्रामीण और कृषकों में साख आपूर्ति की व्यवस्था करने का उत्तरदायित्व है। प्रदेश में कृषि उत्पादन और ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए शीर्ष बैंक अमानत संकलन के अतिरिक्त उच्च वित्तदायी संस्थाओं के ऋणार्जन भी करता है। इन वित्तीय संस्थाओं का उपयोग मुख्यतः 38 जिला सहकारी बैंकों की 835 शाखाओं एवं 5,873 प्राथमिक सहकारी समितियों के माध्यम से 72 लाख कृषक सदस्यों को अल्पकालीन एवं मध्यकालीन ऋण सुविधा उपलब्ध कराने में होता है। इनमें कुल जमा रकम लगभग 3,500 करोड़ रूपये है तथा 7 लाख खातेदार है। बैंक द्वारा राज्य स्तरीय सहकारी संस्थाओं एवं अशासकीय निगमों को भी उनके व्यावसायिक कार्यकलापों के लिए साख सुविधा प्रदान की जाती है। शीर्ष बैंक द्वारा विगत वर्षो में अपनी गतिविधियों को व्यापक बनाते हुये प्रदेश के सहकारिता के क्षेत्र में भाक्कर कारखानें, सोयाबीन सयंत्रों की स्थापना एवं संचालन हेतु शीर्षस्थ संस्थाएँ जैसे– तिलहन संघ, लघु वनोपज संघ, उपभोक्ता संघ, दुग्ध महासंघ, हाथ करधा एवं बुनकर संघ, भूमि विकास बैंक, म. प्र. बीज निगम आदि को भी साख सुविधाएँ प्रदान की जा रही है।

भारतीय कृषकों की अनेक समस्याएँ हैं। जिनमें से प्रमुख समस्या कृषि वित्त है, जो वर्षों से कृषकों के साथ जुड़ी हुई है। सरकार ने समय–समय पर कृषि नीति बनायी, बजट में भी कृषि के लिए प्रॉवधान किया, लेकिन इस समस्या का समाधान आज तक कोई भी सरकार नहीं कर पायी है। शोध के दौरान बैंक से ऋण प्राप्त करने वाले कृषक–वर्ग को कृषि वित्त से सम्बंधित आने वाली समस्याओं को निम्नानुसार अनुभव किया गया है –

1. ऊँची ब्याज दर – वर्ष 1994 से पूर्व में जिला सहकारी बैंक द्वारा अंतिम हितग्राही से वसूली जाने वाली ब्याज दर रिजर्व बैंक/नाबार्ड द्वारा निर्धारित की जाती थी, परन्तु वर्ष 1994 से जिला सहकारी बैंकों को ब्याज दर निर्धारण की छूट प्रदान कर दी गई। परिणामतः जिला सहकारी बैंक अपनी ब्याज दर निर्धारित कर रहे हैं। साथ ही ऋण के एक निश्चित अनुपात में ऋणी से अंशपूँजी में भी धनराशि लगानी पड़ती है, जिससे ऋण की लागत अपेक्षाकृत अधिक होती है। दूसरी ओर व्यावसायिक/ग्रामीण बैंकों द्वारा कम ब्याज दर पर बिना अंशपूँजी प्राप्त किये ऋण वितरित किया जाता है। परिणामस्वरूप जिला सहकारी बैंक ऋण वितरण में उत्तरोत्तर वृद्धि नहीं कर पा रही है। जिला सहकारी केंद्रीय बैंक, कृषकों को कई वर्षों से कृषि के लिए वित्त प्रदान कर रही है, लेकिन वर्तमान में जो ऋण प्रदान कर रही है, उसकी ब्याज दर अधिक है। सर्वेक्षण प्रश्नावली के दौरान 81 प्रतिशत कृषकों ने बैंक की ब्याज दर को अधिक बताया हैं।

2. ऋण वितरण नीति – कृषि सम्बंधी कार्यों के लिए कृषकों को अल्पकालीन व मध्यकालीन कृषि साख का अनुमान नाबार्ड द्वारा स्वीकृत फसल ऋण प्रणाली के अनुसार जिले में गठित तकनीकी समूह द्वारा लगाया जाता है। ऋण सीमा का निर्धारण वर्तमान में जिस प्रकार किया जाता है, उससे कृषकों को ऋण सम्बंधी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो पाती। अल्पकालीन ऋणों की अधिकतम सीमा 1,00,000 रूपये हैं, जिसमें 50,000 रूपये नकद तथा भोश वस्तु ऋण होता है। कृषकों की शिकायत है कि वस्तु ऋण के रूप में दी

जाने वाली सामग्री की गुणवत्ता ठीक नहीं होती। यदि कृषकों को ऋण लेना है तो बैंक द्वारा इस हेतु मार्जिन मनी, अमानत के तौर पर जमा कराई जाती है। कृशकों को इस राशि की व्यवस्था अन्य साधनों से ऋण लेकर करनी पड़ती है। इसके अतिरिक्त जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक द्वारा कृषि कार्यों के लिए जो ऋण दिये जाते हैं, सर्वेक्षित प्रश्नावली से ज्ञात होता है कि कृषकों द्वारा इन ऋणों का उपयोग कृषि कार्य में न करके अनुत्पादक कार्यों में व्यय कर दिया जाता है, जिससे ऋण वितरण का उद्देश्य भी पूरा नहीं होता है और इनकी वसूली भी समय पर नहीं हो पाती है जिससे बैंक को वित्तीय कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

3. फसल बीमा के प्रचलित स्वरूप की समस्या – बैंक/समितियों के माध्यम से जो कृषक ऋण लेते हैं, उसमें फसल बीमा अनिवार्य होता है। अध्ययन से ज्ञात हो पाया है कि प्रचलित प्रणाली के तहत् कृषकों को नाममात्र का फायदा मिलता है क्योंकि पूरी तहसील के कृषकों की फसल नष्ट हो जाने पर इसका लाभ मिलता है। इसमें व्यक्तिगत कृषक की फसल का कीटनाशक व प्राकृतिक आपदा के कारण नष्ट हो जाती है तो व्यक्तिगत रूप से इसकी क्षतिपूर्ति नहीं हो पाती है और कृषकों को इस प्रणाली का सही लाभ नहीं मिलता है, जबकि फसल बीमा की राशि व्यक्तिगत रूप से ही ली जाती है।

4. ऋण राशि का दुरूपयोग – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक द्वारा अल्पकालीन मध्यकालीन व दीर्घकालीन ऋण कृषि कार्य हेतु प्रदान किये जाते हैं। कई प्रकरणों में देखा गया है कि किसान द्वारा उन ऋणों का कृषि कार्यों में उपयोग न करते हुए अनुत्पादक कार्यों में व्यय कर दिये जाते है, जिससे कि जहॉ एक ओर इन ऋणों के वितरण का उद्देश्य पूर्ण नहीं हो पाता है, वहीं दूसरी ओर इन ऋणों की अदायगी समय पर नहीं हो पाती है, परिणामस्वरूप बैंक को वित्तीय कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

5. उचित मार्गदर्शन का अभाव – बैंक/समितियों द्वारा कृषकों को कृषि वित्त हेतु ऋण प्रदान किया जाता है, लेकिन इसके साथ उनके लिए ऋण के उपयोग के लिए उचित मार्गदर्शन का अभाव है, जिसके कारण कभीं–कभीं कृषक ऋण का सही उपयोग नहीं कर पाते हैं।

6. कृषकों की निरक्षरता एवं अज्ञानता – भारत की अधिकांश जनता गांवों में रहती है एवं उसका बहुत बड़ा भाग निरक्षरता की श्रेणी में आता है, जिसके कारण निरक्षर किसान बैंक की कल्याणकारी योजनाओं से अनभिज्ञ रहते हैं। परिणामस्वरूप बैंक ऋण योजनाओं का सही समय पर उपयोग नहीं कर पाते है। यदि सही समय पर ऋण प्राप्त कर भी लेते है तो उसका कुशल प्रबंध नहीं कर पाते। सर्वेक्षित कृशको में अशिक्षित एवं प्राथमिक तक शिक्षा प्राप्त करने वाले कृषक 44 प्रतिशत है। अज्ञानता की वजह से ऋणों की समय पर अदायगी नहीं कर पाते हैं जिससे बैंक को भी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

7. उत्पादित फसल का उचित मूल्य नहीं– कृषकों की सबसे बड़ी समस्या उनकी कृषि उपज का सही मूल्य नहीं मिलना है, जिसके कारण इन्हें आर्थिक परेशानियों का सामना करना पड़ता है। इस स्थिति को व्यापारी अच्छी तरह से शॉपकर इन्हें कृषि उपज का उचित मूल्य न देकर कम मूल्य पर खरीद लेते है।

8. बिजली की समस्या – बिजली की परेशानी, आज कृषकों की सबसे बड़ी समस्या बनती जा रही है। इसका सही एवं पर्याप्त मात्रा में न मिलने के कारण कृषकों को अतिरिक्त कृषि उत्पादन लागत उठानी पड़ रही है। इससे कृषि उत्पादन कम हो रहा है साथ ही कृषको की आर्थिक स्थिति भी प्रभावित हो रही है।

9. उचित नेतृत्व का अभाव – बैंक/समितियों में संचालक मंडल होता है, जो कृषक सदस्यों में से चुना जाता है। सर्वेक्षित कृशकों के मतानुसार बैंक समितियों में कई वर्षों से वही संचालक चुने जा रहे है जो पहले भी संचालक थे जिसके कारण नये नेतृत्व को अवसर नही नहीं मिल पाता है। जो पुराने संचालक होते हैं वे बैंक के माध्यम से किसी राजनैतिक दल के रूप में राजनीति करने लग जाते है और सहकारिता के सिद्धांतों एवं उद्धेश्यों को भूल जाते है।

बैंक ऋणों की वसूली की स्थिति

किसी भी वित्तीय संस्था के लिए ऋणों की वसूली रीढ़ की हड्ड़ी के समान है। जब तक सहकारी संस्थाओं द्वारा ऋण की वसूली नहीं होती है, तब तक संस्थाओं की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ नहीं हो सकती। ऋण वसूली की स्थिति जितनी मजबूत होती है वह संस्था भी उतनी ही अधिक सशक्त एवं सक्षम होती है।

साख की आवश्यकता की सतत् पूर्ति बनाये रखने के लिए ऋणों की वसूली समयानुसार होना आवश्यक है। ऋणों की सामयिक वसूली वित्तदायी संस्थाओं के लिए महत्वपूर्ण कार्य है, क्योंकि ऋणों की वसूली एक निर्धारित स्तर से कम होने का प्रतिकूल प्रभाव संस्था की समुचित अर्थव्यवस्था पर पड़ता है।

वर्तमान में सहकारी संस्थाओं की कृषि उत्पादन कार्यक्रम में महत्वपूर्ण भागीदारी है। कृषि साख उपलब्ध कराने में जिले की प्रमुख इकाई के रूप में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक अपनी प्रमाणिकता सिद्ध कर चुकी है। कृषि साख की आवश्यकता की लगातार पूर्ति बनाये रखने के उद्दे" य से राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) द्वारा रियायती दर पर साख प्राप्त करना अनिवार्य है जिसमें से प्रमुख रूप से मौसमी अनुशासन की पूर्ति, अकालातीत आवरण एवं वसूली का न्यूनतम प्रतिशत बनाये रखना आवश्यक है। सहकारी संस्थाओं के कार्यकलापों में गुणात्मक सुझार लाने तथा ग्रामीण कृषको को नियमित साख प्रदान करने के लिए अत्यन्त आवश्यक है कि सहकारी ऋणों की सामयिक रूप से नियमित वसूली होती रहें।

ऋणों की अदायगी हेतु देय तिथि का निर्धारण –

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा द्वारा अल्पकालीन व मध्यकालीन ऋणों की देय तिथि का निर्धारण एवं अल्पकालीन ऋणों के अन्तर्गत खरीफ एवं रबी की फसल हेतु वितरित ऋणों की देय तिथि का निर्धारण निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है

तालिका
ऋणों की अदायगी हेतु देय तिथि का निर्धारण

क्र.	फसल	सदस्य से समिति स्तर पर	समिति से बैंक स्तर पर
1	खरीफ फसल हेतु	15 मार्च	मार्च माह का अंतिम भुक्रवार
2	रबी फसल हेतु	15 जून	जून माह का अंतिम भुक्रवार
3	गन्ना एवं सन्तरा हेतु 12 माह ड्यू डेट होती है।		

स्त्रोतः– जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा 'बैंक की ऋण नीति' वर्श 2009–10

सदस्यों को प्रत्येक फसल हेतु नगद ऋण एक बार ही दिया जा सकेगा, जिसकी अदायगी तिथि इन्हीं तिथियों में से सदस्यों द्वारा अधिक मात्रा में उत्पादन की जाने वाली प्रमुख फसल के लिए ऋण अदायगी की अवधि 15 माह की होगी, उपरोक्त निर्धारित देय तिथि ही मध्यकालीन कृषि ऋण हेतु देय तिथि रहेगी। खरीफ फसल में सोयाबीन हेतु जो ऋण सदस्यों को वितरित किया जायेगा, उस ऋण की अदायगी सोयाबीन की फसल से सदस्यों को करनी होगी। जो सदस्य किसी एक फसल से दोनों फसल का ऋण चुकाएगें उन्हें रबी फसल का नगद ऋण खरीफ के नगद ऋण के साथ वितरित किया जा सकेगा, किन्तु ऐसे ऋण की ड्यू डेट स्वीकृत साख सीमा के अनुसार होगी अर्थात् खरीफ फसल ऋण सीमा के लिए मार्च एवं रबी फसल ऋण के लिए सीमा जून माह होगीं।

कृषि से सम्बंधित उपकरण एवं अन्य कार्यो जैसे–कुआॅ, थ्रेशर, पम्प सेट आदि के लिए दिये गये ऋण की देय तिथि उपरोक्तानुसार खरीफ/रबी की फसल के साथ की जावेगी किन्तु देय तिथि निर्धारण के समय इस बात का ध्यान रखा जायेगा कि विनियोजन का लाभ कृषक को कब से प्रारम्भ होना चालू हुआ हैं? उसी के अनुरूप ही अदायगी तिथि का निर्धारण किया जायेगा।

वर्तमान में सहकारी समितियों में जो स्थिति प्रचलित है, उसके अनुसार समितियों को ऋण वितरण करने के पश्चात् अपने ऋणों की वसूली करने में बहुत अधिक प्रयास करना पड़ता है एवं वसूली में पूरे स्टॉफ को लगातार छः माह तक संघर्ष करना पड़ता है। इसके बावजूद भी ठीक से वसूली नहीं हो पाती है। वर्तमान में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा की यह स्थिति है कि बैंक द्वारा पिछले पॉच वर्शो में औसतन 52.57 प्रतिशत तक ही वसूली हो पाई है। इस प्रकार कालातीत ऋणों की बकाया राशि में निरन्तर वृद्धि होते जाना चिन्ता का विषय है। इससे संस्था की ऋण अदायगी क्षमता तथा ऋण असंतुलन बढ़ता चला जा रहा है। ऋणों की वसूली की वर्तमान पद्धति का परीक्षण करने पर पाया गया है कि प्राथमिक समितियॉ एक सुव्यवस्थित कार्यक्रम के तहत् वसूली कार्यक्रम नहीं चला पा रही है। अतः प्राथमिक सहकारी समिति एवं जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक को एक सुव्यवस्थित वसूली समयबद्ध कार्यक्रम बनाकर ही वसूली की जानी चाहिए।

ऋणों की वसूली से सम्बंधित समस्याऍ–

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक के ऋणों की वसूली से सम्बंधित समस्याऍ निम्नांकित हैं–

1. ऋणों की वसूली पर्याप्त न होना – वर्तमान में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, छिन्दवाड़ा के ऋणों की वसूली स्थिति काफी चिंताजनक है। बैंक के विगत पॉच वर्शों के समंको का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि बैंक के ऋणों की वसूली औसतन 52.57 प्रतिशत तक ही सीमित रही है, जिससे कालातीत ऋणों में लगातार

वृद्धि हो रही है और बैंक के सामने अपने कारोबार को संचालित करने में संकट पैदा होता जा रहा है।

वसूली के विभिन्न स्तरों में व्यवधान के कारण अपेक्षित वसूली नहीं हो पाने से समितियॉ, जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक को एवं जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, अपेक्स बैंक को देय राशियों का भुगतान समय पर नहीं कर पाती है, जिससे ओव्हरड्यू की राशि के लिये एवं वसूली योग्य ब्याज के लिये प्रॉवधान करना पड़ता है, जिससे बैंक की हानि बढ़ जाती है और बैंकिंग रेग्युलेशन की धारा 11(1) का पालन करने में असमर्थ हो गई है।

2. कालातीत ऋणों में वृद्धि– किसानों को वितरित किये गये ऋणों की अदायगी तिथि पर ऋणों की वसूली नहीं हो पाती है तो वह ऋण कालातीत ऋणों की श्रेणी में आ जाता है। यह जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक व प्राथमिक साख समितियों के लिए ज्वलंत समस्या ही है कि बैंक के कालातीत ऋणों की राशि बढ़ती ही जा रही है। वर्ष 2005–06 में यह राशि 2750.51 लाख रूपये थी जो 2009–10 में बढ़कर 11905.95 लाख रूपये हो गई है। कालातीत ऋण की वजह से जिला सहकारी बैंक, सहकारी समितियों एवं सदस्यों को हानि वहन करनी होती है। सदस्यों को दण्ड़स्वरूप 3 प्रतिशत ब्याज देना पड़ता है। जहॉ संस्था का वैधानिक कार्यवाही करने से दावा फीस और अवार्ड़ फीस पर व्यय होता है, वहीं जप्ती व नीलामी में सदस्यों की वस्तुऍ घाटे में बिक जाती है।

3. ऋण वसूली की कागजी खानापूर्ति – कागजी लेन–देन की तकनीक ने सहकारिता को काफी क्षति पहुॅचाई है। कृशक जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक व प्राथमिक कृषि साख समितियों के माध्यम से ऋण लेते है, जिसे निर्धारित समयावधि में नहीं चुका पाते है तो उससे बकाया ऋण राशि से कुछ अधिक राशि के ऋण हेतु आवेदन–पत्र ले लिये जाते हैं और इसे स्वीकृति दे दी जाती है। स्वीकृत राशि में से सबसे पहले पूर्व के बकाया ऋण की राशि जमा कर ली जाती है। इस प्रकार बैंक/संस्था द्वारा ऋण वसूली की कागजी खानापूर्ति की जाती है।

4. बैंक के संचालक मण्ड़ल का अपेक्षित सहयोग – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक के संचालक मण्ड़ल के सदस्य विभिन्न राजनैतिक दलों से जुड़े होते है एवं अपनी रानैतिक प्रभुत्ता को बनाये रखने के लिये विभिन्न लोगों को ऋण वितरित करवाते है। जिस तरह से ऋण वितरण में सक्रिय भूमिका निभाते है, उतनी सक्रियता ऋणों की वसूली में नहीं दिखाते हैं, बल्कि कई प्रकरणों में वसूली की कार्यवाही में हस्तक्षेप करते हुए वसूली को प्रभावित करते हैं। बैंक के अन्य विकास कार्यों में जिस प्रकार का सहयोग अपेक्षित है, वह भी नही मिल पाता है। संचालक मण्ड़ल की विभिन्न बैठकों में भाग लेकर मात्र औपचारिकताऍ ही पूरी करते हैं।

5. उचित समय पर सम्पर्क नहीं – बैंक के अधिकांश ड़िफाल्टर सदस्यों से फसल आने के समय सम्पर्क नहीं किया जाता है, जिसके कारण कृषक सदस्य फसल को बाजार में बेचकर साहूकारों का चुकारा तथा शादी–ब्याह, सामाजिक एवं धार्मिक कार्यों पर खर्च कर ड़ालता है। अतः संस्था/बैंक की अपेक्षित वसूली नहीं हो पाती है।

6. वसूली हेतु वैधानिक कार्यवाही – कृषकों द्वारा ऋण अदायगी तिथि पर ऋणों की अदायगी नहीं की जाती है तो वह ऋण कालातीत ऋण की श्रेणी में आ जाता है। भारतीय सहकारिता अधिनियम 1960 की धारा 84 व 85 के तहत ऋणों की वसूली के लिये वैधानिक कार्यवाही की जाती है, परन्तु यह देखा गया है कि संस्थाओं एवं शाखाओं में कर्मचारियों की उदासीनता एवं लाफरवाही के कारण निर्धारित समयावधि में प्रकरण दर्ज नहीं किये जाते है एवं कई वर्षों तक लंबित पड़े रहते है, जिससे वसूली सही समय पर नहीं होती है, परिणामस्वरूप बैंक को वित्तीय कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है।

References :

1. World Bank, *India Sustaining Reform Reducing Poverty* (New Delhi, 2003)
2. Rakesh Mohan, "Agricultural Credit in India", *Economic and Political Weekly*,
3. March 18, 2006Government of India, *Economic Survey* 2004-05 (Delhi, 2005)
4. Union Budget- 2008-09, Speech of the Finance Minister, *Business Standered,*
March 1, 2008

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भारतीय स्टेट बैंक एवं इलाहाबाद बैंक द्वारा लघु, कुटीर एवं मध्यम उद्योगों में ऋण का अध्ययन

डॉ. नमिता सोनी, सहायक प्राध्यापक
श्री गुरू तेगबहादुर खालसा महाविद्यालय जबलपुर म.प्र.
प्रो. नन्दिनी भारिल्ल
स्वशासी मानकुंवरबाई महिला महाविद्यालय जबलपुर म.प्र.

प्रस्तावना : सरकार की आर्थिक उदारीकरण नीतियों के तहत् वित्तीय क्षेत्र में सुधारों को लागू करने के बाद वाणिज्यिक बैंकों के लिए यह अनिवार्य हो गया कि वे अपनी लाभप्रदता को बढ़ाएं जिससे कि आगे चलकर वे अपने आपको आत्मनिर्भर बना सकें। इसके अतिरिक्त भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा विवेकपूर्ण लेखा विधि एवं पूंजी पर्याप्तता मानदंड लागू करने के बाद बैंकों के लिए यह भी आवश्यक हो गया कि वे बैंक के ऋण पोर्टफोलियो में आस्तियों की गुणवत्ता को बनाए रखें। समय के साथ ही बैंक ने भारतीय रिजर्व बैंक के दिशानिर्देशों को ध्यान में रखकर ऋण पोर्टफोलियो को कवर करते हुए नीतियाँ बनायी व वर्तमान ऋण नीति को संशोधित कर अब उसे अद्यतन किया गया है। जिसका अनुपालन परिचालनात्मक मैनुअल/अनुदेशों के माध्यम से किया जा सकता है।[1]

उद्देश्य : आधुनिक औद्योगिक कांति के पूर्व राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में लघु एवं कुटीर उद्योगों का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान था। देश इन उद्योगों के लिये विश्व विख्यात था। ये राष्ट्रीय आय और रोजगार के प्रमुख स्त्रोत थे। और विदेशी व्यापार मे इसका स्थान बहुत उंचा था। ब्रिटिश काल में अनेक कारणों से इसका तेजी से पतन हुआ लेकिन यह पूरी तरह से नष्ट नहीं हुये अपितु शनैः शनैः चलते व बढ़ते रहे। द्वितीय विश्व युद्ध के काल में इनमें तेजी से विस्तार हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से राष्ट्रीय सरकार इनकी संवृद्धि के लिये तरह तरह से कदम उठा रही है। फलस्वरूप देश की वर्तमान अर्थव्यवस्था में इनका स्थान फिर से उंचा व महत्वपूर्ण हो गया है। जैसे रोजगार में लगे लोगों की दृष्टि से खेती के बाद लघु एवं कुटीर उद्योगों का ही स्थान आता है। छटवीं पंचवर्षीय योजना के अनुसार इसमें लगे लोगों की संख्या 1980 मे 236 लाख थी इसमें से कोई 133 लाख लोग परंपरागत उद्योगों तथा खादी उद्योग, हाथकरघा उद्योग में लगे हुये थे। सातवीं पंचवर्षीय योजना के अनुसार लघु एवं ग्रामीण उद्योग में लगे लोगों की संख्या केवल 1984–85 में 315 लाख थी। यह कुल औद्योगिक रोजगार का लगभग 80 प्रतिशत थी।

ऋण वितरण प्रक्रिया –

प्रत्येक देश के आर्थिक जीवन में बैंक का महत्वपूर्ण स्थान है। देश के आर्थिक विकास को गतिमान करने हेतु बैंकों की प्रभावी भूमिका होती है। सामान्यतया बैंक लोगों की बचतों को जमा के रूप में स्वीकार करते हैं, और बचतों को प्रोत्साहित करते हैं। जनसामान्य की बचत से साख का सृजन कर बचत के विनियोगों में परिवर्तित करने का कार्य बैंकों द्वारा किया जाता है। बैंकों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में ऋण सुविधा प्रदान की जाती है। राष्ट्रीयकरण से पूर्व वाणिज्यिक बैंकों का कार्य कुछ क्षेत्र में उधार देने तक ही सीमित था, राष्ट्रीयकरण के पश्चात् उसमें क्रमशः विस्तार होता जा रहा है और बैंक व्यवस्था विकास प्रेरित बनती जा रही है। बैंकों के राष्ट्रीयकरण का उद्देश्य देश का सुनियोजित विकास करने हेतु प्राथमिकता वाले क्षेत्रों, सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों के लिए ऋण उपलब्ध कराना था, इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु बैंकों ने अपनी स्वीकृत नीति में परिवर्तन करके उक्त क्षेत्रों को अधिक ऋण सुविधा उपलब्ध कराई है।

ऋण स्वीकृति प्रक्रिया – ऋण प्रस्तावों की प्रोसेसिंग, स्वीकृति, संवितरण करने की प्रक्रिया निम्नानुसार होगी : स्वीकृति पूर्व–

- ✓ उधारकर्ता से निर्धारित प्रारूप पर ऋण सुविधा प्राप्त करने के लिए आवेदन पत्र प्राप्त करना।
- ✓ वर्तमान बैंकरों की हैसियत के बारे में सूचना प्राप्त करना (नये खातों के लिए विशेषतः) स्वीकृति से पहले अथवा कम से कम संवितरण से पहले।
- ✓ फर्म/कंपनी/निदेशकों/साझेदारों आदि से आस्तियों एवं देयताओं की विवरणी प्राप्त करना एवं आयकर रिटर्न, संपत्ति कर रिटर्न, बिक्री कर रिटर्न आदि के साक्ष्यों को सत्यापित करना।

- ✓ ऋणों के क्रियाकलाप के क्षेत्र में पूर्ववर्ती ज्ञान एवं अनुभव, ईमानदारी, स्थायित्व आदि के बारे में उधारकर्ता की प्रारंभिक जाँच करना।
- ✓ ऋणी द्वारा प्रस्तुत की गई वित्तीय विवरणी एवं अन्य सूचना की छानबीन करके प्रस्ताव की संभाव्यता तकनीकी वित्तीय एवं आर्थिक क्षमता को सुनिश्चित करना।
- ✓ यह सुनिश्चित करना कि क्या प्रस्ताव बैंक की उधारी नीतियों के अंतर्गत है।
- ✓ पार्टी से चर्चा करके अतिरिक्त जानकारी हासिल करना।

मूल्यांकन – पार्टी से प्राप्त किये गए सभी ऋण प्रस्तावों का शाखा स्तर पर उधारकर्ता की ऋण योग्यता पर विचार करते हुए उसके व्यावसायिक अनुभव एवं क्रियाकलाप, उधारकर्ता के वित्तीय अनुपात, ऋण की आवश्यकता तथा ऋण देने के औचित्य को देखते हुए मूल्यांकन करना चाहिए।

उद्देश्य एवं प्रकार –

बैंक द्वारा ऋण प्रदान करने का मुख्य उद्देश्य क्षेत्र का संतुलित आर्थिक विकास होता है जिसके अंतर्गत निम्न उद्देश्यों हेतु ऋण प्रदान किए जाते हैं –

- ✓ व्यापार एवं उद्योगों की स्थापना व प्रोत्साहन हेतु।
- ✓ कृषि विकास एवं कृषि आधारित अन्य व्यवसायों की वृद्धि हेतु।
- ✓ सूक्ष्म, लघु, कुटीर एवं वृहत् उद्योगों के विकास हेतु ऋण प्रदान किए जाते हैं।
- ✓ ऋण कार्यों से संबंधित मुख्य मापदंडों की विस्तृत रूपरेखा तैयार करना।
- ✓ अग्रिम प्रस्तावों का उचित रूप से मूल्यांकन करना व निपटाना।
- ✓ प्रस्तावों को शीघ्रता से निपटाने और प्रभावी रूप से विनियोजन।
- ✓ उत्पादकता बढ़ाने हेतु निधियों के प्रवाह को बनाये रखना।
- ✓ ग्रामीण क्षेत्रों के विकास हेतु।
- ✓ आर्थिक विकास के क्षेत्र, परिवहन, संचार शिक्षा, गृह निर्माण आदि के लिए।
- ✓ अनुसूचित जाति, जनजाति, महिलाओं व अल्पसंख्यक समुदायों के उन्नयन हेतु विविध योजनाओं में ऋण प्रदान किए जाते हैं।[2]

ऋणों के प्रकार –

इलाहाबाद बैंक एवं स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा जबलपुर जिले के विकास हेतु भिन्न–भिन्न योजनांतर्गत विभिन्न प्रकार के ऋण प्रदान किए जाते हैं जो निम्न प्रकार के होते हैं–

1. **अल्पकालीन ऋण** – अल्पकालीन ऋण वह ऋण है जो कृषकों को मौसमी लागत को पूरा करने के लिए प्रदान किये जाते हैं। अन्य शब्दों में अल्पकालीन ऋण ऐसे वार्षिक आगतों को खरीदने के लिए प्रदान किए जाते हैं जिनकी एक वर्ष की अवधि के अंदर पूरी अदायगी की जाती है। अल्पकालीन ऋण एक वर्ष की अवधि में परिपक्व हो जाते हैं, परंतु इनकी भुगतान की अवधि 15 माह की होती है।
2. **मध्यकालीन ऋण** – मध्यकालीन ऋण स्थायी परिसम्पत्तियों के सृजन के लिए प्रदान किया जाता है। कृषकों को फार्म औजार खरीदने, कुआँ गहरा करने, भूमि सुधार, कुओं पर मोटर लगाने व बाड़ लगाने आदि कार्यों के लिए मध्यकालीन ऋण दिया जाता है। मध्यकालीन ऋण की अवधि एक से अधिक वर्ष की होती है परंतु अधिकतम 5 वर्ष की होती है। मध्यकालीन ऋणों का भुगतान दो या दो से अधिक मौसमों में किश्तों के रूप में किया जाता है।
3. **दीर्घकालीन ऋण** – दीर्घकालीन ऋण कृषकों को स्थायी परिसंपत्तियों के सृजन के लिए दिया जाता है। इसे भूमि क्रय करने खाद्यान्न संग्रहण के लिए, गोदाम बनवाने, पशुपालन हेतु पशुशाला भवन का निर्माण करने, कुआँ बनवाने एवं फार्म पर बिजली लगाने आदि कार्यों के लिए स्वीकृत किया जाता है। इन कार्यों में पूँजी निवेश से कृषकों को आय अनेक वर्षों तक प्राप्त होती रहती है, जिससे ऋण का भुगतान लंबे समय में ही हो पाता है। दीर्घकालीन ऋण के भुगतान की अवधि सामान्यतः 5 से 20 वर्ष की होती है।

सारिणी क्रं. 1
जबलपुर जिले में लघु उद्योगों की संख्या व नियोजित व्यक्ति

वर्ष	संख्या	नियोजित व्यक्ति	नियोजन लाख रू.
2008–09	642	1267	176.55
2009–10	587	1079	228.98
2010–12	29	273	228.09
2011–12	65	383	218.09
2012–13	72	373	209.59
स्त्रोत – जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2013 से संग्रहित			

सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों को बैंक द्वारा विशेष व्यवसाय मानकर ऋण प्रदान किया जाता है। सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम को प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र में ऋण प्रदान हेतु रखा गया है। इस क्षेत्र में ऋण देना बैंकों के लिए भी लाभप्रद व्यवसाय है। यह इकाईयां आर्थिक विकास में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों का देश के विनिर्माण आमद में रोजगार एवं निर्यात में महत्वपूर्ण योगदान है। इस क्षेत्र का योगदान 2006–07 में विनिमय आमद्र का लगभग 45 प्रतिशत तथा देश के कुल निर्यात का लगभग 42 प्रतिशत है जिसमें समूचे देश की अनुमानित 2600 लाख उद्यम इकाईयों से अधिक में लगभग 5944 लाख लोगों को रोजगार प्राप्त है। इस क्षेत्र की इकाईयों के अंतर्गत 6000 उत्पादों से अधिक का निर्माण होता है। इसमें 22 प्रतिशत खाद्य उत्पाद, 12 प्रतिशत रसायन, 16 प्रतिशत धातु, आधारित उद्योग, 8 प्रतिशत धातु उत्पाद, 6 प्रतिशत रबर एवं प्लास्टिक उत्पाद, 6 प्रतिशत इलेक्ट्रिकल्स एवं मशीनरी पार्ट्स तथा 30 प्रतिशत अन्य आदि आते हैं। इस क्षेत्र का योगदान कुल घरेलू उत्पादन में 2007–08 में 8 प्रतिशत दर्ज किया गया है। इस क्षेत्र में रोजगारों की संख्या 2004–05 में 282.75 लाख थी एवं उद्यम इकाईयों की संख्या 2004–05 में 118.59 लाख से बढ़कर 2008–09 में 285.16 लाख दर्ज की गई। ये सभी उपलब्धियां यह दर्शाती हैं कि देश में जैसे जैसे तेज गति से संख्या बढ़ रही है उसी तरह लघु प्रक्रम के क्षेत्र में भी निरंतर प्रगति हो रही है।[3]

प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र में ऋण –

ऋण का स्त्रोत पूर्व में साहूकार/महाजन होते थे जो अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते थे। सहकारी संस्थाएं, संस्थागत वित्त का सर्वप्रथम एवं सबसे पुराना स्त्रोत बनी जो वित्तपोषण के क्षेत्र में 1904 में प्रविष्ट हुई। 1955 में इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया के रूपान्तरण के पश्चात् अस्तित्व में आई भारतीय स्टेट बैंक, बैंकों में प्रथम थी जिसने ग्रामीण वित्त के क्षेत्र में प्रवेश किया। शहरी एवं ग्रामीण विकास के क्षेत्र में बैंकों की भूमिका, 1968 में प्रारंभ सामाजिक बैंकिंग की अवधारणा के साथ प्रभावी रूप से शुरू हुई।

सामाजिक नियंत्रण प्रारंभ होने से पूर्व बैंकें लघु उद्योग इकाईयों, व्यवसाय (Small Scale Industries/Business-Now termed SME) एवं कृषि वित्त की ओर बहुत कम ध्यान देती थी। अर्थव्यवस्था के इन क्षेत्रों को उपेक्षित किये जाने के प्रमुख कारण थे – बैंकों को दी जाने वाली प्रतिभूति की अनुपलब्धता। ये क्षेत्र असंगठित थे और लोग अशिक्षित थे। बैंकों की ग्रामीण शाखों नहीं थी और बैंक के कर्मचारी शहरी क्षेत्रों के होने के कारण उनका रवैया व्यावसायिक था और ग्रामीण क्षेत्रों की ओर रूझान का अभाव था।

प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को वित्तपोषण बढ़ाने का अगला कदम था जुलाई 1969 में 14 मुख्य बैंकों का राष्ट्रीयकरण। बैंकिंग कंपनी अधिनियम 1970 की प्रस्तावना में स्पष्ट रूप से उल्लेखित मुख्य उद्देश्य था – अर्थव्यवस्था की ऊंचाई को नियंत्रित करना और प्रगतिबद्ध रूप से प्राप्त करना और अर्थव्यवस्था के विकास की आवश्यकता को राष्ट्रीय नीति और उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में पूर्ण करना और उससे संबंधित प्रकरणों पर ध्यान देना।

संदर्भ ग्रंथ :

1. परांजपे अरविन्द, सबनानी प्रहलाद : बैंकिंग अपडेट, बेस्ट फ्रेन्ड पब्लिकेशन इन्दौर म.प्र., वर्ष 2013 पेज नं. 220
2. सिन्हा, डॉ. वी.सी. : भारतीय बैंकिंग प्रणाली, एसबीपीडी पब्लिशिंग हाऊस, आगरा, 2011 पृ. 119
3. 152 योजना, 15 अक्टूबर 2000 पृ. 15
4. 152 योजना, 15 अक्टूबर 2000 पृ. 38
5. योजना दिल्ली, म.प्र.सन्देश (पाक्षिक पत्रिका) भोपाल, लघु उद्योग समाचार पत्रिका, नई दिल्ली, उद्योग व्यापार पत्रिका, नई दिल्ली।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

बजट का अर्थ एवं उसके प्रकार

कैलाश कुमार गोन्हेरे
विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

प्रस्तावना : "बजटन" उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति हेतु ही किया जाता है। 'बजट' प्रबन्धन का एक उपयोगी तरीका है, जिससे भावी क्रियाओं की योजना बनाई जाती है। एक उत्पादक, उत्पादन, क्रय, विक्रय एवं व्यय आदि की योजना बनाकर समस्त क्रिया कलापों का निर्धारण करता है, साथ ही साथ उस समय के लिए आवश्यक पूँजी, श्रम, भवन, सामग्री, मशीन आदि का भी अनुमान लगाकर उपयुक्त व्यवस्था की जाती है ताकि वह कठिनाईयों पर विजय पा सके तथा व्यवसाय की अनिश्चितताओं को दूर करके व्यावसायिक लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को प्राप्त कर सके।

जॉन जी. ग्लोवर तथा **कोलमन एल. मेज** (John G. Glover and Coleman L. Maze) ने बजट के उद्देश्य बताते हुए लिखा है कि बजट का प्रमुख उद्देश्य विधिवत् नियोजन तथा कम्पनी की क्रियाओं को समय–समय पर नियन्त्रित करने में मदद देना होता है। यह मुख्यतः संदेशवाहन का श्रेष्ठ साधन है तथा बजट के ही माध्यम से प्रबन्ध व प्रशासन अपनी नीतियों को काम करने वालों तक पहुँचाने में सफल होता है।

फ्लोयड एच. रोलेन्ड तथा **रॉबर्ट ई. नोडल** ने बजट के निम्नलिखित उद्देश्य बताएँ हैं –

1. व्यावसायिक नियोजन का स्पष्टीकरण
2. विभिन्न विभागों की क्रियाओं में समन्वय की व्यवस्था
3. कार्यक्षमता का मापन और नियन्त्रण की व्यवस्था
4. व्यावसायिक अर्थ प्रबन्धन में सहायता तथा
5. व्यवसाय की योजना से सम्बन्धित पक्षों को आवश्यक सूचना पहुँचाना।

व्यावसायिक बजट तथा बजटिंग : किसी भी व्यावसायिक संस्था की लाभदायकता व शोध्यक्षमता बनाये रखने के लिए उसके प्रबन्ध को भावी वित्तीय आवश्यकताओं के सम्बन्ध में योजना बनानी चाहिए। भावी वित्तीय आवश्यकताओं के सम्बन्ध में योजना बनाने की विधि को बजटिंग (Budgeting) कहते हैं और योजना को औपचारिक ढंग से लिखित रूप में प्रस्तुत करने का 'बजट' कहते हैं। व्यावसायिक परिस्थितियों के सम्बन्ध में बजटिंग का अर्थ बजट–योजना व तैयारी, बजटरी नियन्त्रण व अन्य
सम्बन्धित विधियों से होता है। बजटिंग वास्तव में एक प्रबन्धकीय विधि है और एक व्यावसायिक बजट ऐसी लिखित योजना है, जिसमें भविष्य की एक निश्चित अवधि के सम्बन्ध में व्यवसाय संचालन के सभी पहलुओं को शामिल किया जाता है। यह किसी संस्था के उच्चस्तरीय प्रबन्ध द्वारा भविष्य के सम्बन्ध में अपनाई गई नीति, योजना, उद्देश्य और गंतव्य का औपचारिक कथन मात्र है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि बजट एक औजार है जिसके आधार पर प्रबन्ध एक निश्चित अवधि के लिए अपने क्रियाकलापों का नियोजन करता है। इसके अन्तर्गत विक्रय, उत्पादन और समस्त परिव्ययों, उपरिव्ययों सहित विधि खर्चों का पूर्वानुमान शामिल होता है। साथ ही उस अवधि के लिये वांछित कार्यशील पूँजी, भवन, मशीन, सामग्री तथा श्रम आदि को भी ध्यान में रखा जाता है।

परिभाषा :

"बजट एक अनुमान होता है जो किसी विशिष्ट भावी अवधि के लिए पहले से बनाया जाता है।"

– क्लेरेन्स एल. वान सिकिल

"बजट एक तैयार माल है। वे भविष्य के क्रियाकरण और सम्भावित परिणामों के औपाचारिक कार्यक्रम हैं। बजटन पहले से सोचने तथा नियोजन का परिणाम है।"

– हेरी एल. वायली

"बजट एक प्रबन्धकीय क्रिया है। व्यावसायिक बजट एक निश्चित अवधि के लिए व्यवसाय के समस्त क्रिया–कलापों से सम्बद्ध योजना होती है। समूचे उद्योग अथवा उसके प्रत्येक विभाग के लिए उच्च–स्तरीय प्रबन्ध के द्वारा निर्धारित नीतियों, योजनाओं, उद्देश्यों और लक्ष्यों का औपचारिक रूप बजट होता है। एक निश्चित अवधि के लिए प्रबन्ध के मार्गदर्शन हेतु बनाई गई योजनाओं व नीतियों के औपचारिक लेखे को बजटन कहते हैं।"

– ग्लेन ए वेल्च्य

बजट के प्रकार एवं उनका वर्गीकरण

विभिन्न आधारों पर बजट विभिन्न प्रकार के हो सकते हैं। बजटों का वर्गीकरण निम्नानुसार किया जा सकता है :

(अ) समय के आधार पर

दीर्घकालीन बजट – ये बजट मुख्य रूप से संस्था की दीर्घकालीन नीतियों एवं उद्देश्यों से सम्बन्धित होते हैं तथा इनमें दीर्घकालीन अवधि अर्थात् 5 से 10 वर्ष की योजनाओं के लिये वर्णन किया जाता है। सामान्यतः इन बजटों के अन्तर्गत भौतिक सम्पत्तियों अर्थात् स्थायी विनियोग से सम्बन्धित यथा भूमि, भवन, मशीन, यन्त्र आदि के बजट आते हैं। इन बजट में यह भी विचार किया जाता है कि कौन–कौन से यन्त्र घिसकर बेकार हो गए हैं तथा कौन–कौन से यन्त्र अनुपयोगी अथवा अप्रचलित हो गये हैं तथा कौन–कौन से यन्त्र अभी भी उपयोगी हैं। अनुपयोगी एवं अप्रचलित यन्त्रों को हटाकर नवीन संयन्त्रों की स्थापना पर होने वाले व्ययों तथा भवन में विस्तार आदि के सम्बन्ध में कितना व्यय होगा आदि तथ्यों पर इस बजट में विचार किया जाता है। इस बजट में यह भी विचार किया जाता है कि उपर्युक्त व्ययों की व्यवस्था लाभ के पुनर्विनियोजन (Ploughing back of profit) द्वारा की जावेगी या पूँजी की मात्रा को बढ़ाकर की जावेगी ?

1. **अल्पकालीन बजट** – ये बजट सामान्यतः एक या दो वर्ष की अवधि के होते हैं जिसमें व्यवसाय की अल्पकालीन आवश्यकताओं के सम्बन्ध में योजना रहती है।

2. **चालू बजट** – ये बजट अल्पकालीन बजटों का ही एक रूप होते हैं। इनकी अवधि एक माह या इससे अधिक होती है। ये बजट अल्पकालीन बजट के अनुसार आवश्यक समायोजन करके बनाये जाते हैं। कुछ व्यावसायिक संस्थाएँ मासिक बजट बनाती हैं। कुछ संस्थाएँ सम्पूर्ण वर्ष के 52 सप्ताहों को 4–4 सप्ताहों की 13 अवधियों में बाँट देती हैं तथा बजट बनाती हैं। ऐसे बजट को "तेरह अवधियों का बजट" भी कहा जाता है। चूँकि प्रत्येक माह में एक समान दिन नहीं होते अतः इस विधि से सभी अवधियों में समानता आ जाती है।

(ब) लोचता के आधार पर

1. **स्थिर या स्थैतिक बजट** – इस प्रकार के बजट में व्यावसायिक संस्था अपने उद्देश्य एवं लक्ष्य स्थिर एवं ठोस रखती है तथा उसमें किसी भी प्रकार का परिवर्तन करना उचित नहीं समझा जाता। ये बजट सामान्यतः बजट अवधि से 3 माह पूर्व तैयार किये जाते हैं। इस प्रकार के बजट में बजट एवं वास्तविक आँकड़ों की तुलना करीब 12 माह के अन्तर से ही हो पाती है जिसके बीच अनेक घटनाओं के घटित होने से यह तुलना कार्य व्यर्थ हो जाता है। स्थिर वस्तुतः सैद्धान्तिक दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता। यह बजट केवल उसी स्थिति में बनाना चाहिये जबकि विक्रय एवं लागत के सम्बन्ध में किये जाने वाले अनुमान पूर्ण शुद्धता से निर्धारित किया जाना सम्भव हो।

2. **लोचपूर्ण बजट** – वर्तमान समय में व्यवसाय की परिस्थितियाँ कुछ ऐसी हो गई जिसके अन्तर्गत स्थिर बजट बनाना उपयुक्त नहीं रहता। अतः लोचपूर्ण बजट बनाया जाता है। लोचपूर्ण बजट वह बजट होता है जिससे व्यवसाय के विभिन्न क्रियाशील स्तरों (Activity levels) पर लागत, विक्रय एवं लाभों की स्थिति दर्शायी जा सके तथा इन विभिन्न क्रियाशील के स्तरों पर विक्रय एवं उत्पादन मात्रा मापी जा सके। लोचपूर्ण बजट के द्वारा किसी भी क्रियाशीलता के स्तर के लिए बजट अनुमान प्रस्तुत किया जाता है।

यदि संस्था में प्रमाप लागत लेखांकन प्रणाली की व्यवस्था हो तो लोचपूर्ण बजट से अधिक लाभ प्राप्त किये जा सकते हैं तथा लागत नियन्त्रण तकनीकों को अपनाया जाना सरल हो जाता है।

लोचपूर्ण बजट का निर्माण :

लोचपूर्ण बजट चूँकि उत्पादन के विभिन्न स्तरों से सम्बन्धित होता है अतः उत्पादन के विभिन्न स्तरों पर उत्पादन क्या होगी तथा इस स्तर पर विक्रय में कितना लाभ प्राप्त होगा, यह लोचपूर्ण बजट में प्रदर्शित किया जाता है। लोचपूर्ण बनाते समय सम्पूर्ण लागत को स्थिर, समपरिवर्तनीय एवं परिवर्तनीय लागत में बाँट दिया जाता है एवं विभिन्न उत्पादन स्तरों पर लागत का प्रदर्शन किया जाता है।

(स) सीमा के आधार पर

1. **पूर्ण बजट** – जब व्यावसायिक संस्था अपने सम्पूर्ण व्यवसाय या उद्योग के प्रत्येक अंग के लिए बजट बनाती है एवं इस बजट में उद्योग या व्यवसाय के किसी अंग को छोड़ा नहीं जाता है, तब इसे पूर्ण बजट कहा जाता है।

2. **आंशिक बजट** – जब व्यवसाय या उद्योग के सम्पूर्ण अंगों के लिए बजट न बनाकर उसके केवल कुछ अंगों के लिए बजट बनाया जाता है तब इसे आंशिक बजट कहा जाता है। आंशिक बजट का निर्माण सामान्यतः उस समय किया जाता है जबकि उत्पादन के कुछ अंगों की कार्यक्षमता अनिश्चित होती है।

(द) क्रियाओं के आधार पर

1. **मास्टर बजट** – यह बजट सभी विभागीय क्रियाओं के आधार पर बनाये गये विभिन्न बजटों के सारांश के रूप में होता है। आई.सी.डब्ल्यू.ए. इंग्लैंड के अनुसार "मास्टर बजट के अन्तर्गत विभिन्न सहायक क्रियात्मक बजटों का सारांश होता है।"

विभिन्न विभागाध्यक्षों द्वारा प्रस्तुत सहायक बजटों के आधार पर निर्मित मास्टर बजट, बजट अधिकारी द्वारा बनाया जाता है तथा बजट समिति के समक्ष अनुमोदन हेतु प्रस्तुत किया जाता है। बजट समिति के अनुमोदन के बाद यह अन्तिम अनुमोदन के लिए संचालक मण्डल के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। अन्तिम अनुमोदन प्राप्त हो जाने के बाद यह उच्च प्रबन्धकों को नियन्त्रण हेतु सौंप दिया जाता है तथा प्रत्येक क्रियात्मक विभाग को इसके सहायक बजटों की एक प्रति लिखित रूप में भेजी जाती है, जो विभागाध्यक्षों को उसके विभाग के सम्बन्ध में किये जाने वाले व्ययों के लिए अधिकृत करती है। मास्टर बजट में बजट अवधि से सम्बन्धित समस्त व्यावसायिक क्रियाओं का समावेश होता है। सामान्यतः मास्टर बजट में निम्न क्रियाओं से सम्बन्धित तथ्यों के अलावा लेखा–अनुपात (Accounting Raios) भी सम्मिलित किये जाते हैं। सामान्यतः मास्टर बजट में निम्नलिखित सूचनाएँ सम्मिलित की जाती हैं – (1) विक्रय, (2) उत्पादन, (3) लागत – (अ) प्रत्यक्ष सामग्री, (ब) प्रत्यक्ष श्रम, (स) प्रत्यक्ष व्यय, (द) कारखाना उपरिव्यय, (य) प्रशासन एवं कार्यालय उपरिव्यय, (र) विक्रय एवं वितरण उपरिव्यय, (ल) सकल विक्रय, (4) लाभ, (5) लेखा अनुपात और (6) लाभ नियोजन।

2. **सहायक बजट** – सहायक बजटों को कार्यकारी बजट भी कहा जाता है। **केलर** तथा **फरेरा** के अनुसार **"कार्यकारी बजट एक कम्पनी की किसी बजट अवधि की क्रियाओं की समन्वित योजना है।"** यह बजट आगामी अवधि के लिए व्यवसाय–गृह द्वारा नियोजित क्रियाओं की रूपरेखा प्रस्तुत करता है। कार्यकारी बजट दो रूपों में बनाए जाते हैं –

- **कार्यक्रम बजट** – जिसमें बजट अवधि में पूर्ण किये जाने वाले कार्यक्रमों की योजना रहती है, तथा
- उत्तरदायित्व बजट जिसमें संस्था के विभिन्न कार्यों के लिए प्रत्येक व्यक्ति के उत्तरदायित्व निर्धारण की योजना होती है।

सहायक बजटों में निम्न प्रकार के बजटों का समावेश होता है –

(अ) विक्रय बजट

विक्रय बजट दो प्रकार के बनाये जाते हैं –

1. **प्रामाणिक या दीर्घकालीन बजट** – जो मुख्यतः एक वर्ष की अवधि के होते हैं, तथा
2. **अल्पकालीन बजट** – जो एक वर्ष से कम की अवधि के होते हैं।

विक्रय बजट का विश्लेषण उत्पादित वस्तुओं के आधार पर, भौगोलिक आधार पर, विक्रेता तथा एजेन्टों के आधार पर, ग्राहकों के आधार पर किया जाता है। विक्रय की मात्रा वास्तव में उत्पादन पर आधारित होती है तथा विक्रय की प्राप्त रोकड़ राशि से ही अनुमान लगाना पड़ता है, जिसके आधार पर अन्य योजनाएँ समायोजित की जाती हैं। विक्रय बजट में विक्रय की राशि तथा विक्रय व्ययों का पूर्ण विवरण रहता है। विक्रय बजट बनाते समय पिछले परिणाम, बाजार तथा लाभ का विश्लेषण किया जाता है तथा निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

(ब) उत्पादन बजट

उत्पादन बजट मुख्यतः बिक्री की मात्रा पर आधारित होता है। विक्रय के परिणाम के अनुसार उत्पादन करना अधिक अच्छा रहता है। पिछले विश्वसनीय आँकड़ों के आधार पर श्रम, सामग्री, व्यय आदि को ठीक से समायोजित करना चाहिए तथा पिछले आनुपातिक आँकड़ों को प्राप्त करके उसका वर्गीकरण भी करना चाहिये। उत्पादन कार्य में भूमि, भवन, यन्त्र, मशीन आदि की क्षमता को भी ध्यान में रखना आवश्यक होता है।

(स) लागत बजट

लागत बजट के अन्तर्गत दो प्रकार के बजट आते हैं –

1. **उत्पादन लागत बजट** – जब उत्पादन बजट बन जाता है तब निर्धारित उत्पादन की लागत को ज्ञात करने के लिए उत्पादन लागत बजट बनाया जाता है जो निर्धारित उत्पादन की अनुमानित लागत को प्रदर्शित करता है। इस बजट को विभिन्न प्रकार के उत्पादों के अनुसार, विभागों के अनुसार या अवधि के अनुसार वर्गीकृत किया जा सकता है। इस बजट के अन्तर्गत प्रत्यक्ष सामग्री, प्रत्यक्ष श्रम, उत्पाद के विभिन्न व्यय तथा कारखाना के प्लाण्ट के सम्बन्ध में अलग–अलग बजट बनाये जाते हैं।
2. **अन्य लागत बजट** :

अन्य लागत बजटों में निम्न बजटों का समावेश किया जाता है –

(अ) विक्रय एवं वितरण लागत बजट :

विक्रय एवं वितरण लागत बजट के अन्तर्गत विक्रय एवं वितरण से सम्बन्धित विविध व्ययों का समावेश किया जाता है। विक्रय एवं वितरण व्यय बजट विक्रय बजट के आधार पर ही बनाया जाता है। बाजार

में प्रतियोगिता की स्थिति, वस्तु के उपभोक्ताओं की माँग तथा बाजार की दशाओं आदि के आधार पर ही विक्रय बजट बनाया जाता है तथा इस निर्धारित विक्रय मात्रा को प्राप्त करने के लिए किये जाने वाले विविध व्ययों का ब्यौरा ही विक्रय एवं वितरण बजट में रहता है।

विक्रय एवं वितरण व्यय बजट बनाने के लिए विक्रय प्रबन्धक ही उत्तरदायी होता है जो विज्ञापन प्रबन्धक, वितरण प्रबन्धक, विक्रय कार्यालय प्रबन्धक आदि की सहायता एवं सहयोग से बजट बनाता है तथा बजट अधिकारी के समक्ष इसे प्रस्तुत करता है।

विक्रय एवं वितरण व्यय बजट के अन्तर्गत सम्पूर्ण व्ययों को निम्न 4 भागों में विभाजित करके दिखाया जाता है–

(अ) प्रत्यक्ष विक्रय व्यय, (ब) वितरण व्यय,
(स) विक्रय कार्यालय व्यय तथा
(द) विज्ञापन व्यय।

(ब) प्रशासन लागत बजट :

इस बजट के अन्तर्गत प्रशासनिक व्यय आते हैं। कितने प्रशासनिक व्यय स्थायी होंगे कितने व्यय अस्थायी होंगे तथा किस समय कितने व्यय होंगे आदि तथ्यों पर विस्तृत विचार इसमें किया जाता है। उत्पादन के घटने–चढ़ने पर व्ययों के घटने और बढ़ने की क्या प्रवृत्ति होती है, आदि सब समस्याएँ भी इस बजट में आती हैं।

उद्योग के अन्तर्गत प्रशासनिक व्यय बहुत महत्व रखते हैं। प्रशासनिक व्यय की मात्रा का लागत पर बहुत प्रभाव पड़ता है। अतः इस सम्बन्ध में बजट बना लेना लाभप्रद ही रहता है।

(स) शोध एवं विकास बजट :

वर्तमान वैज्ञानिक युग में उत्पादन के नवीन से नवीन उपाय खोजना आवश्यक है, क्योंकि इनसे उत्पादन लागत कम होती है तथा प्रतिस्पर्धा का अधिक अच्छी प्रकार सामना किया जा सकता है। यही कारण है कि उत्पादन शोध एवं विकास की सम्भावना पर विचार करके शोध एवं विकास बजट बनाया करते हैं। इस बजट में निम्न बातें सम्मिलित की जाती हैं –

- अनुसन्धान या शोध की किस्म,
- अनुसन्धान के लिए आवश्यक सामग्री,
- अनुसन्धान हेतु व्यक्तियों की योग्यता,
- अनुसन्धान पर होने वाला व्यय और,
- अनुसन्धान से होने वाला लाभ।

अनुसन्धान में यद्यपि अधिक व्यय होते हैं तथापि जब अनुसन्धान में सफलता प्राप्त हो जाती है तो व्यवसाय के विकास में बहुत सहायता मिलती है। इसके परिणामस्वरूप उत्पादन क्षमता में जो मात्रात्मक एवं गुणात्मक वृद्धि होती है वह उस पर होने वाले व्यय की तुलना में काफी अधिक लाभप्रद होती है।

(द) वित्तीय व्यय बजट :

व्यवसाय में कुछ ऐसे व्यय होते हैं जो वस्तु की लागत से सम्बन्धित नहीं होते हैं। इसलिए इनका लेखा लागत लेखांकन में नहीं किया जाता है। इन व्ययों के कुछ उदाहरण हैं – कर की छूट, अप्राप्त ऋण आदि। ये तथ्य प्रमुख लेखापाल से ज्ञात करके इनका पृथक से बजट भी बनाया जा सकता है।

(इ) वित्तीय बजट :

वित्तीय बजट के अन्तर्गत व्यवसाय की वित्तीय आवश्यकताएँ, आय आदि से सम्बन्धित समस्याओं का समावेश किया जाता है। दूसरे शब्दों में, इस बजट का उद्देश्य कार्यशील पूँजी का अनुमान लगाना होता है जो वास्तव में पूर्व अनुमानित स्थिति–विवरण तथा लाभ–हानि लेखा के रूप में होता है। यह बजट चूँकि व्यवसाय के वित्तीय पहलुओं को प्रस्तुत करता है और यह बतलाता है कि दैनिक उपयोग के लिए पर्याप्त रोकड़ है या नहीं ? इसलिए इसका सम्बन्ध प्रायः सभी विभागों से रहता है। वित्तीय बजट के निर्माण के समय अनेक विभागों से सम्बन्धित सूचनाओं की आवश्यकता होती है जो विभिन्न बजटों से प्राप्त होती है।

(फ) अनुपूरक बजट :

बजट की राशि एक बार निर्धारित कर देने के बाद जब उस राशि से काम नहीं चलता तो व्यय के लिए अतिरिक्त राशि अर्थात् पूरक राशि की जरूरत होती है। पूरक राशि की आवश्यकता की पूर्ति के लिए जो बजट बनाये जाते हैं उसे अनुपूरक बजट कहा जाता है। अनुपूरक बजट इसलिए आवश्यक होता है कि–

1. मूल/पुराने बजट की राशि अपर्याप्त होने पर अनुपूरक बजट द्वारा अतिरिक्त राशि की आवश्यकता को पूरा किया जा सकता है जिससे उत्पादन कार्य नहीं रूकता।
2. अनुपूरक बजट के पास करने के पूर्व उनका विस्तृत विश्लेषण किया जाता है, इससे अपव्यय नहीं हो पाते हैं।
3. बिना अनुपूरक बजट के कुछ विभागाध्यक्षों के पास व्यय का अधिकार नहीं होता है, फलतः विभागों पर कड़ा नियन्त्रण रहता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :

1. Agrawal, J.K., Agrawal, R.K. Sharma, Dr. M.L. Management Accounting, Rameshchand Book Depot, Jaipur, Eleventh edition.
2. Agyris, Chris, Human Problems with Budget, Havard Business Review, Jan.-Feb. 1953, Page : 97-110.
3. Anthony, Robert B., The Trouble With Profit Maximization, Havard Business Review, 38, Nov.-Dec. 1960, Page 126-34.
4. C. Jensen, Micheal, Corporate Budgeting is Broken – Let's Fix it, Havard Business Review, November 2001.
5. Gupta, Dr. S.P., Management Accounting, Sahitya Bhawan Publication, Agra, Ninth edition.
6. Forseman and Co., 1988, Page : 78.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

मध्यप्रदेश में प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना – एक मूल्यांकन

डॉ. उपमा श्रीवास्तव
सहा. प्राध्यापक (गेस्ट फैकल्टी), शा. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

सारांश : देश के आर्थिक ग्रामीण विकास हेतु भारत सरकार द्वारा अनेक कार्यक्रमों का निर्माण कर उसे क्रियान्वित किया गया। ये योजनाएं कुछ हद तक तो अपने उद्देश्यों में सफल रहे हैं लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों का सर्वागीण विकास करने में असफल सिद्ध हुये है। यह अनुभव किया गया कि देश की अधिकांश ग्रामीण बसावट सड़क संपर्कता से वंचित है, यही वह प्रमुख कारण है, जिसके कारण ग्रामीणजनों को अपनी बुनियादी आवश्यकताओं के साथ–साथ सामाजिक, आर्थिक एवं विकास के नये–नये अवसरों सुविधाओं तक पहुँच से वंचित रहना पड़ता है। अतः ग्रामीण निवासियों को विकास की मुख्यधारा में शामिल करने के उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा 25 दिसम्बर 2000 को ''प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना'' का शुभारम्भ किया गया। ताकि देश की संपर्क विहीन बसावटों को बारहमासी सड़क उपलब्ध कराकर उन्हें शिक्षा, चिकित्सा, रोजगार तथा आदि के सुअवसर प्रदान कर ग्रामीण क्षेत्रों के विकास का मार्ग प्रशस्त किया जा सके। यह योजना अपने प्रारम्भ वर्ष 2000–01 से अब तक (मार्च 2012 तक) ग्यारह चरणों में क्रियांवित की जा चुकी है, अपने जिन उद्देश्यों को लेकर इस योजना को प्रारम्भ किया गया, काफी हद तक यह इसमें सफल रही है।

शोध अध्ययन से प्राप्त आंकड़ों एवं सूचनाओं के अवलोकन एवं विश्लेषण से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि यह योजना ग्रामीण आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है, लेकिन इसके मार्ग में अभी भी बाधाएं एवं समस्यायें हैं। इन समस्याओं के समाधान हेतु जो सुझाव प्रस्तुत किए गए है, यदि उन्हें भारत सरकार, राज्य सरकार जनप्रतिनिधि, स्थानीय कार्यकर्ताओं द्वारा अमल में लाया जाए तो इन समस्याओं को काफी हद तक कम कर योजना को अधिक प्रभावी एवं सफल बनाया जा सकता है।

संकेत शब्द : सड़क संपर्कता, बसावट, बारहमासी सड़क।

प्रस्तावना : ''प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना'' भारत सरकार द्वारा संचालित भारतीय ग्रामीण विकास से संबंधित योजना है, जो शत प्रतिशत केन्द्र द्वारा पोषित है। भारत सरकार का उद्देश्य सम्पूर्ण भारत के ग्रामों तथा उसके निवासियों को सामाजिक, शैक्षणिक तथा आर्थिक विकास की धारा में सम्मिलित करना है, अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये भारत सरकार ने भारत के प्रत्येक राज्य में यह योजना संचालित की है। मध्यप्रदेश में भी इस योजना का क्रियान्वयन किया जा रहा है। मध्यप्रदेश में ''प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना'' के क्रियान्वयन एवं संचालन के लिये योजना के निर्देशानुसार म.प्र. ग्रामीण सड़क विकास प्राधिकरण की स्थापना की गयी, जिसका मुख्यालय विंध्याचल भवन भोपाल में है।

मध्यप्रदेश में ''प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना'' के क्रियान्वयन का उद्देश्य मध्यप्रदेश के ऐसे सभी ग्रामीण बसावट जिनकी आबादी 500 या उससे अधिक (पहाड़ी इलाकों में 250 या उससे अधिक) हो, बारहमासी सड़क संपर्क उपलब्ध कराना है, ताकि उन ग्रामीण क्षेत्रों के निवासियों को भी वे सभी सुविधायें (शिक्षा, चिकित्सा, प्रशासनिक) प्राप्त हो सकें जो शहरी क्षेत्रों के निवासियों को प्राप्त होती है।

अपने जिन उद्देश्यों को लेकर इस योजना को प्रारम्भ किया गया है, यह इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है, परन्तु इस विस्तृत एवं बहुआयामी योजना के प्रभाव एवं उपलब्धियों, उसके कार्यान्वयन का विश्लेषण या आधारित मूल्यांकन से सम्बन्धित तथ्यपरक एवं क्रमबद्ध अध्ययन कर इस कार्य के वास्तविक प्रभाव को मालूम करना प्रस्तुत अध्ययन का अभीष्ट है।

विषय का औचित्य : चूंकि देश के अर्थव्यवस्था के बहुमुखी विकास में ग्रामीण क्षेत्रों का आर्थिक विकास एक महत्वपूर्ण घटक है ग्रामीण अर्थव्यस्था तथा ग्रामीणों का विकास करके ही भारत की अर्थव्यवस्था का समुचित विकास सम्भव है। यह योजना ग्रामीण आर्थिक विकास से संबंधित है अतः इसकी इसी महत्वपूर्णता को ध्यान में रखकर इसे अध्ययन का विषय बनाया गया।

शोध प्रविधि : प्रस्तुत अध्ययन में तथ्यों व निष्कर्षो का प्रतिपादन मुख्यतः द्वितीयक समंको के आधार पर ही किया गया है, लेकिन योजना के प्रभावों का मूल्यांकन एवं उससे संबंधित समस्याओं को जानने हेतु प्रत्यक्ष एवं

व्यक्तिगत अनुसंधान भी प्रश्नावलियों व अनुसूचियों के माध्यम से स्थापित किये गये है।

उपकल्पना :

1. योजना का क्रियान्वयन सफलतापूर्वक किया जा रहा है।
2. ग्रामीण आर्थिक विकास में योजना महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

सामान्यतः अनुभव किया जाता है कि ''प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना'' को जिन आधारभूत उद्देश्यों को लेकर प्रारम्भ किया गया था, उन्हें प्राप्त करने में काफी सीमा तक इस योजना ने सफलता पायी है, लेकिन जितनी सफलता एवं कार्यकुशलता की अपेक्षा की गयी थी उसे पूर्ण रूप से प्राप्त करने में अनेक कठिनाइयां है, उन्हीं का अध्ययन कर उनकी समस्याओं का समाधान कर इस योजना की भूमिका को और अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है तथा प्रदेश एवं देश की अर्थ व्यवस्था के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया जा सकता है।

मध्यप्रदेश में ''प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना'' के क्रियान्वयन का उद्देश्य मध्यप्रदेश के ऐसे सभी ग्रामीण बसावट जिनकी आबादी 500 या उससे अधिक (पहाड़ी इलाकों में 250 या उससे अधिक) हो, बारहमासी सड़क संपर्क उपलब्ध कराना है, ताकि उन ग्रामीण क्षेत्रों के निवासियों को भी वे सभी सुविधायें (शिक्षा, चिकित्सा, प्रशासनिक) प्राप्त हो सकें जो भाहरी क्षेत्रों के निवासियों को प्राप्त होती है।

म.प्र. में ''प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना'' के निर्धारित प्रारंम्भिक लक्ष्य या उद्देश्य निम्नलिखित है :–

(1) 500 आबादी (आदिवासी एवं पहाड़ी क्षेत्रों में 250 या उससे अधिक आबादी वाली बसावटों को 2009 तक सड़क सम्पर्क प्रदान करना।
(2) 'राज्य में 7832 ग्राम बसावटों को 27562 कि.मी. लम्बाई की नवीन सड़कों का निर्माण कर सम्पर्कता प्रदान करना।
(3) 18627 कि.मी. से अधिक लम्बाई की सड़कों का उन्नयन।

उपरोक्त उद्देश्यों की प्राप्ति तथा योजना के क्रियान्वयन एवं संचालन हेतु म.प्र. ग्रामीण सड़क विकास प्राधिकरण की स्थापना की गयी, जिसका उद्देश्य निम्नलिखित है –

1. म.प्र. के ग्रामों को सड़कों से जोड़ने से संबंधित कार्यक्रमों का क्रियान्वयन करना।
2. उद्देश्य की प्राप्ति के लिये विदेशी सहायता सहित अतिरिक्त संसाधनों की व्यवस्था करना।
3. ग्रामीण सड़कों से संबंधित प्रशिक्षण एवं भाोध की व्यवस्था करना एवं इस हेतु राज्य स्तरीय, राष्ट्रीय स्तर एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रशिक्षण एवं शोध संस्थाओं से समन्वय करना।
4. ग्रामीण सड़कों के निर्माण से संबंधित नीतिगत निर्णयों हेतु राज्य स्तर पर शीर्ष संस्था के रूप में कार्य करना।

योजना का क्षेत्र : म.प्र. में ''प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना'' के क्रियान्वयन का क्षेत्र सम्पूर्ण मध्यप्रदेश है। इस योजना के क्षेत्र के अन्तर्गत मध्यप्रदेश के उन सभी ग्रामीण बसावटों को सम्मिलित किया जायेगा जिनकी आबादी 500 या उससे अधिक (पहाड़ी क्षेत्रों में 250 या उससे अधिक है) तथा वे सड़क सम्पर्क से नहीं जुड़े हैं।

म.प्र. के ग्रामों की उनकी आबादी के अनुसार विवरण निम्न सारणी द्वारा स्पष्ट है –

म.प्र. में बसावटो की संख्या
(दिसम्बर 2000)

क्रम संख्या	आबादी सीमा	बसावटों की संख्या
1	1000 या उससे अधिक	14366
2	500 से 999 तक	16277
3	250 से 499 तक	12141
4	250 से कम	9333
	योग कुल ग्राम	52117

स्रोतः आर्थिक एवं सांख्यकी संचालनालय एवं राजस्व विभाग–बल्लभ भवन भोपाल (म.प्र.)

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि म.प्र. में कुल बसावटों की संख्या 52117 है तथा 500 से 999 तक आबादी के बसावट सबसे अधिक 16277 है तथा 250 से कम आबादी वाले बसावट सबसे कम 9333 हैं।

भौतिक प्रगति :

स्वीकृत सड़कों की लम्बाई तथा कुल पूर्ण सड़कों की लम्बाई
(मार्च 2012 तक)

क्रमांक	वर्ष	स्वीकृत सड़कों की लम्बाई (किमी.) में	कुल पूर्ण सड़कों की लम्बाई
1	2000-01	1726.60	1734.05
2	2001-02	4048.40	4029.03
3	2003-04	2897.10	2803.66
4	2004-05	3584.00	3465.63
5	2005-06	2698.73	2606.00
6	2006-07	5652.60	9395.00
7	2007-08	4934.90	4245.00
8	2008-09	15017.41	10787.00
9	2009-10	418.47	130.82
10	2010-11	45.75	45.75
11	2011-12	1662.89	16.35
	कुल योग	43386.85	39247.49

स्रोत – म.प्र. सड़क विकास प्राधिकरण विन्धयांचल भवन भोपाल।

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि इस योजना के अन्तर्गत मार्च 2012 तक कुल 43386.85 किमी. सड़के स्वीकृत की गयी है, जिसमें से 39247.49 किमी. सड़क का निर्माण कार्य पूर्ण कर लिया गया है। सबसे अधिक स्वीकृति 2008–09 में किया गया जिसकी लम्बाई 15017.41 किमी. हैं।

लाभान्वित बसावटे : म.प्र. में ''प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना'' के अन्तर्गत विभिन्न वर्षो में लाभान्वित बसवटों की संख्या निम्न सारणी के अनुसार स्पष्ट है –

सारणी क्रमांक
लाभान्वित बसावटे_(अप्रैल 2012 तक)

क्रम सं.	वर्ष	लाभान्वित बसावटों की संख्या
1	2000.01	622
2	2001.02	1369
3	2003.04	956
4	2004.05	1178
5	2005.06	868
6	2006.07	3069
7	2007.08	1247
8	2008.09	3576
9	2009.10	170
10	2010.11	23
11	2011.12	581
	कुल योग	13659

स्रोत : म.प्र. सड़क विकास प्राधिकरण द्वारा प्रकाशित

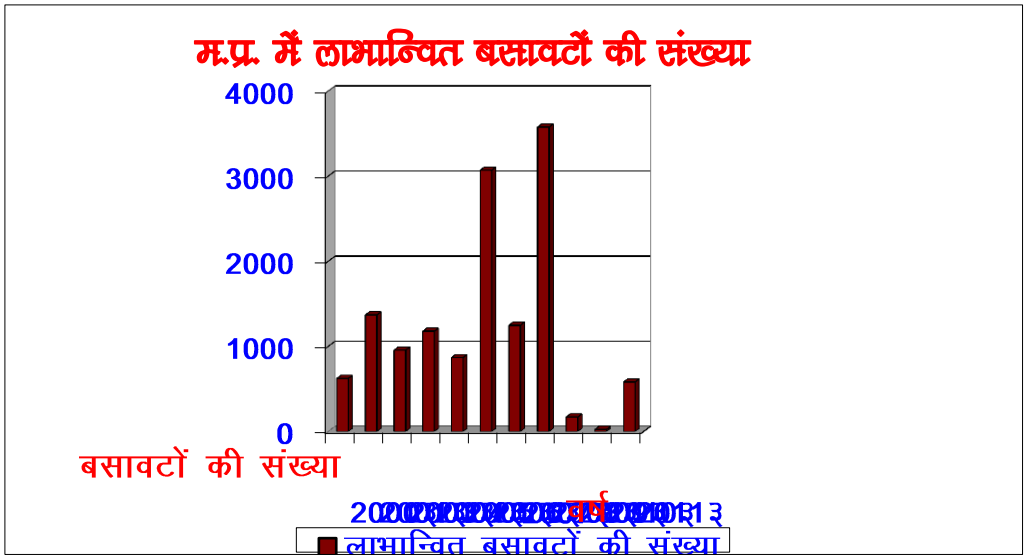

ग्रामोण आर्थिक विकास में भूमिका : म.प्र. में ग्रामीण आर्थिक विकास में योजना की भूमिका का मूल्यांकन करने हेतु विभिन्न जिलों मे स्थानीय व्यक्तियों से प्रत्यक्ष व्यक्तिगत संपर्क स्थापित कर जो सूचना एकत्र किए गए उसके आधार पर प्राप्त मूल निष्कर्ष निम्न है –

- ❖ कृषि उपज में वृद्धि एवं बाजार की उपलब्धता।
- ❖ शैक्षणिक सुविधाओं में वृद्धि।
- ❖ रोजगार के अवसरों में वृद्धि।
- ❖ स्वास्थ्य सुविधाओं में वृद्धि।
- ❖ परिवहन सुविधाओं में वृद्धि।
- ❖ आय स्तर में वृद्धि।
- ❖ ग्रामीण भूमि के मूल्य में वृद्धि।
- ❖ लघु एवं ग्रामीण उद्योगों को लाभ।
- ❖ महिलाओं का सशक्तिकरण।
- ❖ गाँव से पलायन में अंकुश।

समस्यायें :

1. भूमि अर्जन से संबंधित समस्यायें ।
2. बसावटों के चयन से संबंधित समस्यायें।
3. योजना तैयार करने से संबंधित समस्यायें।
4. योजना के क्रियान्वयन से संबंधित समस्यायें।
5. सड़कों मरम्मत एवं रखरखाव से सम्बन्धित समस्यायें।
6. लागत से संबंधित समस्यायें।
7. पर्यावरण से संबंधित समस्याय।
8. वित्तीय भुगतान से संबंधित समस्यायें।

सुझाव :

उपरोक्त समस्याओं के अवलोकन एवं विश्लेषण करने के पश्चात् योजना के प्रभावी संचालन हेतु निम्न सुझाव दिये जा सकते है –

- ❖ योजना के प्रभावी क्रियान्वयन एवं संचालन हेतु पर्याप्त संख्या में योग्य एवं दक्ष व्यक्तियों की नियुक्ति शीघ्र अतिशीघ्र किया जाना चाहिये।
- ❖ तकनीकी, प्रबंधन, लेखा तथा पर्यवेक्षण की योग्यता रखने वाले नवयुवकों एवं नवयुवतियों की नियुक्ति कर युवाओं की प्रतिभा, योग्यता, ऊर्जा एवं उत्साह का उपयोग योजना का प्रभावशाली क्रियान्वयन किया जा सकता है।
- ❖ भूमि के बदले में प्रदान किये जाने वाले मुआवजे का वैधानिक रूप से स्पष्ट व्यवस्था की जानी चाहिये, ताकि इससे संबंधित विवादों का शीघ्र समाधान कर कार्य समय सीमा में पूर्ण किया जा सके।
- ❖ विभाग के कार्मिकों एवं अधिकारियों के नियमित समय सारणी के अनुसार प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिये। राष्ट्रीय सड़क विकास एजेन्सी के द्वारा जो प्रशिक्षण की व्यवस्था है, वह पर्याप्त नहीं है, अतः राज्य सरकार से अनुरोध किया जाता है कि इस हेतु अलग से स्थानीय स्तर पर प्रशासनिक निधि से प्रशिक्षण की व्यवस्था आयोजित किये जायें।
- ❖ बसावटों की पात्रता का निर्धारण जनगणना 2011 के आधार पर किया जाये, ताकि सभी पात्र बसावटों को योजना का लाभ प्राप्त हो।

- ठेकेदारों को कार्य स्वीकृत करने से पहले यह सुनिश्चित कर लिया जाये कि उनकी वित्तीय स्थिति सुदृढ़ है तथा निर्माण कार्य के लिये आव" यक मशीनरी एवं प्लांट अच्छी हालत में हैं, तथा पर्यावरण सुरक्षा के मापदण्ड के अनुसार हैं।

निष्कर्ष : शोधार्थी द्वारा म.प्र. में योजना के क्रियान्वयन एवं प्रगति के संबंध जो शोध अध्ययन किया गया है, उसके आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि यह योजना म.प्र. के ग्रामीण आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं, लेकिन अपेक्षित लक्ष्य प्राप्त करने में असफल रही हैं। अभी भी योजना के मार्ग में अनेक बाधायें एवं समस्यायें है। शोध अध्ययन के दौरान योजना के जो समस्यायें एवं कमियां उभर कर आयी उनके समाधान हेतु सुझाव भी प्रस्तुत किए गए है।

शोध अध्ययन से प्राप्त आंकड़ों एवं सूचनाओं के अवलोकन एवं विश्लेषण से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि यह योजना ग्रामीण आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है, लेकिन इसके मार्ग में अभी भी बाधाएं एवं समस्यायें हैं। इन समस्याओं के समाधान हेतु जो सुझाव प्रस्तुत किए गए है, अमल में लाया जाए तो इन समस्याओं को काफी हद तक कम कर योजना को अधिक प्रभावी एवं सफल बनाया जा सकता है।

संदर्भ :

1. आर्थिक विकास एवं नियोजन नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।
2. वार्षिक रिपोर्ट (2010–11) ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार।
3. आर्थिक समीक्षा (वार्षिक–2008) वित्त मंत्रालय भारत सरकार।
4. भारतीय कृषि एवं ग्रामीण विकास प्रतिवेदन 2008
5. www.pmgsy.nic.in
6. www.mprrda.com
7. Indian Journal of commerce & management studies (January 2012)

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

स्वामी विवेकानन्द का सामाजिक चिन्तन

डॉ. सीमा त्रिवेदी
अतिथि विद्वान, राजनीति विज्ञान, शहीद भगतसिंह शासकीय महाविद्यालय, आष्टा

भूमिका : स्वामी विवेकानन्द ने देखा कि देश की समृद्ध संस्कृति तथा आध्यात्मिक परम्परा की जकड़ तो भारतीय जनमानस पर प्रबल और सुदृढ़ थी, किन्तु देश में गरीबी, निर्धनता, दारिद्रा तथा इसके कारण उत्पन्न सामाजिक बुराइयाँ एवम् निर्बलता भी व्यापक रूप से विद्यमान थी।[1] उनके विचार में जनमानस में आत्मविश्वास जगाने की आवश्यकता थी। इसके साथ ही अस्त–व्यस्त हो रहे सामाजिक ढॉचे को दुरूस्त करने के लिए बुराईयों को दूर करने की आवश्यकता थी। विवेकानन्द के जन्मकाल से ही हिन्दुओं में सुधार का आन्दोलन प्रारम्भ हो गया था। अतः तत्कालीन समय का स्वामी जी पर गहरा प्रभाव पड़ा। स्वामी विवेकानन्द ने अपने समाज की अवनति का प्रमुख कारण आम जनता का दारिद्रय माना था। वे कहते थे कि पुरोहित और विदेशी नेताओं ने सैकड़ों साल उनकों पैरों तले कुचला है और इसका यह परिणाम हो गया कि हम भी इन्सान है। यह बात भारत के गरीब लोग भूल ही गए।[2] स्वामी विवेकानन्द के सामाजिक चिन्तन में वसुदैव कुटुम्बकम् की भावना और समूची मानव जाति का विकास निहित है, वे मानव जाति की धर्म आधारित संकीर्णता को लाँघ कर पारम्परिक एकता एवम् शांतिप्राप्ति के जीवन के हिमायती रहे। उन्होंने भारत भूमि को दर्शन आध्यात्मिकता नीतिशास्त्र इत्यादि का ऐसा पुण्यधाम बताया जो पशुत्व के विरूद्ध विश्राम स्थल है। उनके अनुसार भारत वह देश है जो धर्म को व्यवहारिक एवं सच्चा रूप प्राप्त हुआ। भारत में मानव अन्तःकरण का विस्तार इतना अधिक हुआ कि उसमें संपूर्ण मानव जाति समा गई तथा प्रकृति को भी स्थान मिल गया।

प्रविधि : इस शोध पत्र **स्वामी विवेकानन्द का सामाजिक चिन्तन** नामक शोध पत्र में द्वितीय शोध सामाग्री संकलन का प्रयोग किया गया है। इसके साथ–साथ विद्वानों का मार्गदर्शन, पत्र–पत्रिकाओं आदि का भी अध्ययन किया गया है।

शब्द कुन्जी :– भारत, वत्स, रूढ़िवाद, राष्ट्रीयता, नीतिशास्त्र।

उद्देश्य :–

- सामाजिक चिन्तन का अध्ययन करना।
- सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक मूल्यों का अध्ययन करना।
- आध्यात्मिक मूल्यों का अध्ययन करना।

स्वामी विवेकानन्द समाज के सर्वांगीण विकास के लिए समाज के सभी वर्गों को शिक्षित करना चाहते थे। उनके विचार में सामाजिक सुधारों के लिए लोगों को शिक्षा दिलाना अत्यंत आवश्यक है। वह प्राथमिक कार्य है और उसकी पूर्णता तक हमें प्रतीक्षा करनी होगी। विगत शतक में सामाजिक सुधार के लिए जो आन्दोलन खड़े हुए है। उनमें से अधिकांश केवल शोभा देने वाले सिद्ध हुए है। यह आन्दोलन पहले दो उच्च वर्णों से ही सम्बन्धित थे और अन्य वर्णों से कभी उनका सम्बन्ध आया ही नहीं। सुधार के बारे में प्रत्येक बात के मूल तक जाकर आपको सोचना चाहिए।[3]

उपयोगिता :–

वे भारत की ऊँच नीच के इतने आलोचक थे कि एक बार उन्होंने कहा था कि पहले पाखंडी पंडितों को अपने देश से निकाल दो, फिर देखों किस तरह अन्य देश आगे बढ़ रहे है, हम भी उसी प्रकार आगे बढ़ेगें। उन्होंने हिन्दू धर्म की ऐतिहासिक कारणों से उत्पन्न बुराईयों पर कड़ा प्रहार कर देश के विकास के लिए उसे अतिशीघ्र दूर करने की जरूरत बताई। उन्होंने हिन्दू धर्म की ऐतिहासिक कारणों से उत्पन्न बुराईयों पर कड़ा प्रहार कर देश के विकास के लिए उसे अतिशीघ्र दूर करने की जरूरत बताई। उन्होंने कहा कि धर्म का सही स्वरूप सार्वभौम, आध्यात्मिक, सर्जनात्मक एवम् कल्याणकारी है। किन्तु हिन्दू धर्म में उसके रूढ़िवादी, पाखंडी पंडितों एवम् पुरोहितों ने ढोंग, दम्भ एवम् संकीर्ण स्वार्थों के कारण इसे कलंकित कर दिया है। उनके अनुसार ये दोष धर्म का नहीं उसके पाखंडी प्रचारकों का है। इन बुराईयों को दूर करके सच्चे हिन्दू धर्म के मूल तत्वों की प्रतिष्ठा करना। स्वामी विवेकानन्द का मूल उद्देश्य था।

वे गरीबों और शोषितों के प्रति मानवीय भावनाओं का ध्यान रखने का आह्वान करते थे। "हे वत्स, दुःखी, गरीब, अज्ञानी लोगों के बारे में करूणा का भाव रखों हृदय इतना व्याकुल होने दो, मन और प्राण इतने पिघलने दो कि उसके कारण हृदय की गति थम

जाएगी और सर ऐसा चकराने लगेगा कि हम पागल तो नहीं हो जाएंगे, ऐसा आपको लगने लगेगा।"[4]

समाधान :–

स्वामी विवेकानन्द ने गेरूएँ वस्त्र धारण करने का कारण बताते हुए एक व्यक्ति से कहा था कि "यदि मैं साधारण मनुष्य की भाँति सुन्दर वस्त्रादि पहनकर भ्रमण करूं तो दरिद्र भिक्षुक मुझे धनवान जानकर मुझसे भिक्षा माँगेगे और मैं तो स्वयं एक दरिद्र हूँ। न तो मेरे पास पहनने के वस्त है न देने को पैसा, यदि मैं भी गेरूआ वस्त्र पहन लूँ तो मुझे भी वे अपनी तरह भिक्षुक समझ कर भिक्षा न माँगेगे। "इस महान देश भक्त की गेरूएँ वस्त्र और भिक्षुक की अवधारणा में राष्ट्रीय एकता, साहिष्णुता, सुधार, नवनिर्माण, सर्वधर्म समभाव और संतों की एकात्मता के भाव जीवनभर सन्निहित रहे और उनके विचारों में भी प्रतिबिम्बित होते हैं।

स्वामी विवेकानन्द में शारीरिक शक्ति, मानसिक शक्ति और इच्छा शक्ति का समावेश था। वे युवाओं में ऐसी ही शक्ति देखना चाहते थे। वास्तव में स्वामी विवेकानन्द के बारे में यह भी धारणा बना दी गयी की वे हिन्दू धर्म के प्रचारक और प्रणेता रहे, लेकिन उनके जीवन मूल्यों के आदर्श इतने महान रहे की वे सच्चे अर्थों में धर्म निरपेक्ष भारतीय ही रहे। शिकागों धर्म सभा में उन्होंने कहा कि मुझे गर्व है कि मैं ऐसे राष्ट्र का सदस्य हूँ जिसने संसार के सभी धर्मों और सभी देशों के उत्पीड़ित शरणार्थियों को शरणस्थान दिया है। मुझे ऐसे धर्म का होने का गौरव है जिसने सहिष्णुता एवम् सभी धर्मों का सम्मान करने की शिक्षा दी है। हम सभी धर्मों के प्रति केवल सहिष्णुता ही नहीं दिखाते अपितु सभी धमों की सीखों को साम्य मन कर धारण भी करते हैं।

निष्कर्ष :–

यदि हम स्वामीजी के सामाजिक चिन्तन का निरूपण करना चाहे तो उसमें भारतीयों के गौरव और स्वाभिमान का बोध कराने की भावना है। स्वामी ऐसे राष्ट्र की रचना करना चाहते थे। जिसकी मांसपेशियाँ लोहे की और शिराएँ इस्पात की बनी हो और उसके अंदर वज्र के समान मस्तिष्क हो। वे अपने देशवासियों के अन्दर शक्ति पौरूप और ब्रह्मतेज का विकास करना चाहते थे। अब स्वामी जी नहीं है, लेकिन उनके विचार उस भारत में गूँज रहे है जहाँ भाईचारे के प्रतीक गेरूएँ वस्त्र पहनकर कथित स्वामी एकता और अखंडता को चुनौती पेश कर रहे हैं। ऐसे समय में उस महान देश भक्त सन्यासी को हम सब याद करते हैं। उन्होंने कहा था "हम इतने संन्यासी है जो केवल भ्रमण कर रहे है और तत्व मीमांसा के उपदेश दे रहे हैं– यह निरी मूर्खता है। भूखे पेट के लिए धर्म निरर्थक है। अपने अज्ञान के कारण ये निर्धन लोग जंगलियों की तरह जीवन जी रहे हैं। यदि हम में से कुछ निस्वार्थी संन्यासी, जो लोगों का भला करना चाहते हैं, गाँव–गाँव जाकर शिक्षा का प्रसार करें और उनके जीवन को सुधारने का प्रयत्न करें। क्या ये संभव हैं।" स्वामी विवेकानन्द के सपनों के भारत में मानवतावादी अपेक्षाऐं रही और उसकी स्थापना के लिए वे सदैव प्रयत्नशील रहें।

सन्दर्भ :–

1. समकालीन भारतीय दर्शन, ***बसंत कुमार लाल,*** मोतीलाल बनारसीदास पब्लिकेशन्स, दिल्ली, पृष्ठ 1
2. मेरा भारत, अमर भारत– ***स्वामी विवेकानन्द,*** रामकृष्ण मठ, पृष्ठ 21
3. भारत का पुनर्जागरण– ***स्वामी विवेकानन्द,*** रामकृष्ण मठ, पृष्ठ 29
4. स्वामी विवेकानन्द– ***रमेश पतंगे,*** विवेकानन्द केन्द्र प्रकाशन, जोधपुर, पृष्ठ 69

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

THE STATUS OF PRESENT CROPPING PATTERN IN RAISEN DISTRICT MADHYA PRADESH

Dr. SANSKRITI SAMAIYA

Department of General and Applied Geography
Dr. H. S. Gour University, Sagar (M.P.) 470 003 India

Agriculture is the largest employer of the persons and modifier of natural landscape. Man has been extracting goods and services of his utility from land through farming. The attributes of land resources influence the production of these products. In spite of several strides in agricultural development technology, farming is still heavily dependent technology; farming is still heavily dependent on natural conditions and provides livelihood for majority of humanity. Thus, as Found generalizes, the rural land use patterns can be seen to reflect an areas natural endowments, such as soil quality or climate, but also some of its tangible assets, such as economic structure, culture and inspirations of its people (Found 1971, ix).the history of the resource use shows that the increasing demand and capacity of people resource have stretching and their efficiency been has been improving (Zobler, 1962, P. Verma 1966). This is true in the case of agricultural resources also. Agriculture has been extended not only on new lands of marginal productivity but also many physical disturbances have come up with the use of modern technology. Modern agriculture is capable of defying the physical limits of cultivation. Thus agriculture can be taken as an index of capacity of resource utilization by the local people.

Cropping pattern means the proportion of area under various crops at a point of time. The present cropping patterns have been evolved by farmers after centuries of experience. Historically these cropping patterns were based on the principle of self sufficiency in all commodities in a village where the means of communication were very poor and dependence on marketing agencies was very much limited. It changed with the improvement in technology and economic factors. It gradually leads to the increasing use of modern technologies and commercialization of farming.

PRESENT CROPPING PATTERN

Total cropped area is 506.38 thousand hectares in 2005-06 in this district. The cropping pattern is dominated by foodgrains. More than three-fourths (81.39%) of the total cropped area is under these crops (Table 1). These are mainly grown for domestic consumption. In food grains major share is of pulses occupying 43.53 % of total cropped area. Remaining 37.87 % is under pulses. Total fruits and vegetables occupy 0.93 per cent of total cultivated area.

Table 1 : Raisen District: Area under Major Crops, 2005-06

Crops	Area		% Share		% Change
	1985-86	2005-06	1985-86	2005-06	
Wheat	165039	178044	36.27	35.09	7.88
Rice	6328	8299	1.39	1.64	31.15
Jowar	10725	1458	2.36	0.29	-86.41
Maize	2315	3400	0.51	0.67	46.87
Total Cereals & Millets	186019	192131	40.88	37.87	3.29
Gram	92800	133074	20.39	26.23	43.40
Tur	18506	22280	4.07	4.39	20.39
Total Pulses	179691	220844	39.49	43.53	22.90

Total Foodgrains	365711	412975	80.36	81.39	12.92
Sugarcane		1761	0.00	0.35	
Total Food Crops	367174	417676	80.68	82.32	13.75
Soyabean		70566		13.91	
Total Oilseed	64116	76044	14.09	14.99	18.60
Fodder Crops	23606	13599	5.19	2.68	-42.39
Total non-food crops	87908	89708	19.32	17.68	2.05
Gross cropped Area	455082	507384	100.00	100.00	11.49

Source: Department of Land Records & settlement, District Raisen.

Oilseeds occupy 14.99 % of total cropped area. This proportion is much lower than the state average. Total non- food crops occupy 17.68 per cent of GCA. This proportion is much lower than the state average of 24.0 %.

Commercialization of farming has set motion in this region also. It is evident from the direction of changes in area under different crops. Area under food grains is increasing because of increasing area under pulses.

Pulses occupied 39.49 % of gross cropped area in 1985-86 which reached to 43.53 % in 2005-06. Another point of view is that millets and rough grazing are loosing their significance.

DISTRIBUTION OF MAJOR CROPS

Wheat

Wheat is a rabi crop and is grown under a variety of soil and climatic conditions. It does not require high rainfall but the soil moisture should be sufficient for the unchecked plant growth. Wheat is the first ranking food grain and valuable forage crop in the district. It occupies 178044 hectares (35.09% of gross cropped area) in this district in 2005-06. This proportion is much higher by the state average of 20.69 %. But high yielding variety of wheat covers only 130007 hectares. The area of wheat cultivation has increased from 165039 in 1885-86 to 178044 hectares in 2005-06. Thus the growth of area under wheat is 7.88 %.

Table : 2

Raisen District: Tahsil wise Area under Cereals, 2005-06

Tahsil	Wheat		Rice		Jowar		Maize		Total Cereals	
	Area	%	Area	%	Area	%	Area	%	Area	%
Raisen	33565	42.12	788	0.99	440	0.55	912	1.14	35705	44.805
Gairatganj	22925	39.22	294	0.50	59	0.10	158	0.27	23439	40.104
Begamganj	21387	32.95	765	1.18	299	0.46	382	0.59	22985	35.409
Goharganj	32956	45.74	2205	3.06	83	0.12	1374	1.91	36618	50.817
Bareli	42896	39.65	3500	3.23	31	0.03	147	0.14	46574	43.045
Silwani	13253	23.04	627	1.09	312	0.54	403	0.70	15351	26.686
Udaipura	11062	16.62	120	0.18	234	0.35	24	0.04	11459	17.218
District	**178044**	**35.09**	**8299**	**1.64**	**1458**	**0.29**	**3400**	**0.67**	**192131**	**37.867**

Source: Department of Land Records & settlement, District Raisen.

Rice or Paddy (Oryza sativa)

Rice has the highest nutritive value per unit area (i.e. can support more people per unit area) of all the tropical cereals, can grow largely irrespective of the fertility of the soil, and is not normally associated with problems of soil erosion (Hodder, 1971). It grows well in low-lying areas of heavy clays or heavy loam, clayey loamy soils. Sandy soils are not suited due to the absence of clay pan leading to excessive seepage.

Rice is the cereal crop of the district through it is sown on 8299 hectares, which constitutes only 1.65 % of total cropped area in 2005-06. Area under rice has increased from 6328 hectares in 1985-86. Thus the growth of rice cropped area during this period is 31.15 %. Proportion of area under rice varies from 0.18 % of total cropped area in Udaipura tahsil to 3.23 % in Bareli tahsil. Concentration in rice cultivation is in two tahsils of the Narmada valley. These tahsils are Bareli and Goharganj where 68.7 % of total rice cropped area of district confined.

OTHER CEREALS AND MILLETS

Jowar ranks third in importance among cereals and is grown on 1458 hectares which constitutes only 0.29 % part of total cropped area in this district in 2005-06.It is pertinent to mention that jowar cropped area declined very rapidly after the introduction of soyabean in the district. For instance in 1985-86 total jowar cultivation area was 10725 hectares Thus the jowar cropped area declined by -86.41 % during last two decades. Its share in cropped area varies from 0.03 % in Bareli tahsil to 0.55 % in Raisen tahsil.

Maize covers only 0.67 % of total cropped area of the district. This is sown in 3400 hectares area in the district in 2005-06. It covered 2315 hectares of area in 1985-86. This crop is sown in combination with the soyabean.

PULSES

Pulses are cheap but good sources of vegetable proteins and are a good substitute of the animal protein. They are rich in carbohydrates and starch; besides, they also contain a small amount of fat. Pulses are major source of protein in the diet of vegetarian population in India. They are nutritious not only for human beings but for livestock too. They are leguminous crops and enhance soil fertility by fixing atmospheric nitrogen. Pulses as a group generally need less moisture and may survive when others are dying. They are grown in both kharif and rabi seasons. *Tur* (pigeonpea), *urd* (black gram), *moong* (green gram), *moth* (brown gram) are major kharif pulses and gram, peas, *teora, masoor* (lentil) and *urd* are rabi pulse crops.

All pulses are grown on 220844 hectares, constituting 43.53 % of total cropped area in 2005-06 in this district, which is almost double than the state average (22.08%). Area under pulses increased rapidly, by 22.90 %, from 179691 hectares in 1985-86 to 220844 hectares in 2005-06. Major pulses grown in the district are gram, urad, tur pea and lentil (Table 3). Moong-moth and kulthi are other minor pulses grown in the district.

The proportion of total pulses varies from 25.78 % in Goharganj tahsil to 72.07 % in Udaipura tahsil. The low proportion area under total pulses is the western and south-western part of the

Table : 3

Raisen District: Tahsil wise Area under Pulses, 2005-06

Tahsil	Gram		Lentile		Tur		Pea		Total Pulses	
	Area	%	Area	%	Area	%	Area	%	Area	%
Raisen	18082	22.7	3122	3.9	661	0.8	744	0.9	23710	29.8
Gairatganj	14829	25.4	5298	9.1	722	1.2	929	1.6	22567	38.6
Begamganj	13828	21.3	8393	12.9	1339	2.1	980	1.5	25307	39.0
Goharganj	13879	19.3	2457	3.4	578	0.8	771	1.1	18574	25.8

Bareli	27978	25.9	6321	5.8	7437	6.9	790	0.7	44910	41.5
Silwani	22529	39.2	7065	12.3	3007	5.2	2582	4.5	37811	65.7
Udaipura	21949	33.0	8919	13.4	8536	12.8	4955	7.5	47965	72.1
District	133074	26.2	41575	8.2	22280	4.4	11751	2.3	220844	43.5

Source: Department of Land Records & settlement, District Raisen.

district, which is constituted by Goharganj (25.78%) and Raisen (29.75%) tahsils. The central part of the district has moderate proportion of area under total pulses which is made up by Bareli (41.51%) and Gairatganj (38.61%) tahsils. Begamganj also has low proportion of pulse cropped area (38.99%). Contrary to it southeastern part of district has high proportion of total cropped area under pulse crops, which are 72.1 % of total cropped area in Udaipura and 65.7 % in Silwani tahsil in 2005-06.

Gram *(Cicer arietinum,* chick-pea)

Gram is the principal food pulse grown for cash returns in the district. Its consumption as a human food is, however, much less than other food cereals and food millets. Gram is a leguminous pulse used by all classes of people as a vegetable in green form and as a pulse in dry form.

Its flour mixed with wheat, jowar, or bajra is used by the poor class of people. It has high industrial importance also.

Gram thrives on well-drained sandy or medium loams. It can be raised on clay-loams also, provided good irrigation is given. On the whole, major bulk of the crop is matured without irrigation. Gram ranks second among crops of the district and is major pulse crop. It is sown on 133074 hectares in 2005-06, which constitutes 26.2% of total cropped area of the district. Area under gram increased phenomenally from 92800 hectares in 1985-86, recording growth of 43.40% during two decades.

Proportion of area under gram varies from 19.26 % in Goharganj tahsil to 39.16 % in Silwani tahsil. Along with Goharganj, Begamganj (21.30%) tahsil is another low gram cultivation area. Contrary to it Udaipura (33.98%) and Silwani (39.16%) have proportion of gram cropped are higher than the district average. These tahsils have more than 30 % of total cropped area under gram cultivation. Adjoining Bareli and Gairatganj tahsils have more than one-fourth of cropped area under this crop. Thus, gram cultivation is concentrated in the central and southeastern part of the district.

Lentile (Ervem lence - Masoor)

Lentile is second important pulse crop in the district which is sown on 41575 hectares area, constituting 8.19 % of total cropped area in the district in 2005-06. Lentile is widely sown in the district. Proportion of lentil cropped area varies from 3.41 % in Goharganj tahsil to 13.40 % in Udaipura tahsil in 2005-06. Its concentration is in the eastern and south eastern parts of the district where Udaipura (13.4 %), Begamganj (12.9%), Silwani (12.3%) and Gairatganj (9.1%) tahsils have higher proportion of area under this crop in 2005-06. The proportion of lentil cropped area low is in western and south-western parts of the district, constituted by Goharganj, Raisen and Bareli tahsils.

Tur

It is also known as 'arhar' and is an annual crop, which is sown in the kharif season and harvested in rabi season. It is grown on 22280 hectares, which is 4.37 % of total cropped area of the district in 2005-06. This proportion is much higher than the state average of 1.57 % in the same year. It was 18506 hectares area under the tur cultivation in 1985-86. Thus the growth is of 20.39 % during 1985-2006.

Its proportion varies from 0.80 % in Goharganj tahsil to 12.83 % in Udaipura tahsil in all tahsils total cropped area of the district. Udaipura (12.8%), Bareli (6.9%) and Silwani (5.2%) tahsils have higher proportion of area than the district average under this crop. Gairatganj and Begamganj tahsil have low proportion of this crop and it is negligible in Goharganj and Raisen tahsils.

Pea

Pea is one of the important pulse crops of rabi season in district. It covers 11751 hectares (2.32 % of total cropped area). Proportion of area under pea is varies from 0.73 % in Bareli tahsil to 7.45 % in Udaipura tahsil. Bareli and Raisen tahsils have low proportion of pea cropped area. Goharganj, Begamganj and Gairatganj tahsils have moderate proportion of this crop which is 1.07%, 1.51% and 1.59% of gross cropped area respectively. Proportion of pea crop cultivation area is high in southeastern part of the district. Silwani (4.49%) and Udaipura (7.45%) tahsils are located in this area.

OILSEEDS

Now a days oil derived are used both for edible and industrial purposes. Vegetable oils are increasingly used as lubricants, in soap making and in varnish and paint industry. The residue after the extraction of oil which forms oilcake, serves as a food for cattle or fertilizer for the soil. Oilseeds are an important item in the rural economy of India and constitute a valuable group of cash crops.

Table : 4

Raisen District: Tahsil-wise Area Oilseeds 2005-06

Tahsil	Soyabean		Sesame		Total Oilseeds	
	Area	%	Area	%	Area	%
Raisen	18035	22.6	69	0.1	18489	23.2
Gairatganj	9255	15.8	8	0.0	10039	17.2
Begamganj	8700	13.4	79	0.1	12003	18.5
Goharganj	15533	21.6	135	0.2	15737	21.8
Bareli	14242	13.2	46	0.0	14307	13.2
Silwani	1147	2.0	8	0.0	1663	2.9
Udaipura	3654	5.5	00	0.0	3806	5.7
District	**70566**	**13.9**	**345**	**0.1**	**76044**	**15.0**

Source: Department of Land Records & settlement, District Raisen.

All oilseeds cover 76,044 hectares in the district which is 14.99% of total cropped area in 2005-06. This proportion is much lower than the state average of 29.46 % in same year. Area under all oilseeds increased by 18.6 % during 1985-2006. Among oilseeds, soyabean (13.9% of total cropped area) is the first ranking oilseed. Others oilseed crops constitute only 1.0 % of total cropped area.

Soyabean

Soyabean is the first ranking oilseed crop in the district. It is sown on 70566 hectares in 2005-06, which is 13.9 % of total cropped area of the district. Thus it constitutes 92.79 % of total area under all oil seeds. Among tahsils, land under soyabean ranges from 1.99 % in Silwani tahsil to 22.63 % in Raisen tahsil. Concentration of soyabean is on the medium to deep black soil possessing high fertility. It occupies less undulating and more level land. Tahsils with high proportion of area under soyabean are located in the northern and southwestern part of the district. They are Raisen (22.63%) Goharganj (21.3%) and Gairatganj (15.8%). Begamganj (15.4) and Bareli (13.2%) also have high proportion under soyabbean. Silwani and Udaipura are poor in this respect.

Reference :

Chandravanshi, S.K. (1992): ***Determinates of Agricultural Productivity in Chhatisgarh Basin M.P.*** Unpub. Ph.D. Thesis of Dr. H.S. Gour Vishwavidyalaya Sagar (M.P.).

Chatterjee, Nandini, (1986):"Impact of Irrigation on Agriculture in Southern West Bengal", ***Geographical Review of India***, Vol-48, No-1, 72-81.

Govt. of M.P. (2001): ***Agriculture and Livestock Statistics 2000-01***. Bhopal, Directorate of Eco. and Statistics.

Kalwar, S.C. and Lakwani, R. (1990): "Irrigation and Cropping Characteristics in Saline and Alkaline Soils" Pp. 69-80 in Ram Kumar Gurjar, ed.,***Geographical Perspectives on Irrigation.*** Jaipur: Rawat Publication.

Mishra, B.N. (1990): "Water Management in Irrigated Area Agriculture of Dry Zone in India, Pp. 46-56 in Ram Kumar Gurjar, ed. ***Geographical Perspectives on Irrigation***. Jaipur: Rawat Publication.

Mishra, C.B. (1977): ***Changing Pattern of Resource Use in the Eastern Satpura Region***. Unpublished Ph.D. Thesis of University of Saugar. Sagar.

Misra V.C. and S.K. Sharma (1983) "Population Growth and Agricultural Changes in MP: Spatial analysis of their correlates" ***Nat. Geogr.*** XVIII. 2: 141-152.

Sharma, S.K. (1980): "Agricultural Productivity and Density of Rural Population in M.P., A Correlation" ***Geog. Rev. Ind***., *Kolkata* Vol. 42-1.Pp 21-30.

Sharma, S.K. (2003a) "Agricultural Innovations and their impact on Agricultural Productivity in Madhya Pradesh", ***The Deccan Geographer***, Vol. 41 No. 2, Pp 49-64.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

सर सैय्यद अहमद खा का प्रतिक्रियावादी एवं साम्प्रदायवादी स्वरूप

शबाना अंजुम
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

मुस्लिम साम्प्रदायवाद और पृथक्करण की भावना के जन्मदाता के रूप में :– मुस्लिम साम्प्रदायवाद और पृथक्करण की भावना को समझने के पूर्व राष्ट्रीयता, इस्लाम और मुसलमान के संबंध में कुछ बातों को समझ लेना जरूरी है कारण यह ह कि स्वतंत्र भारत में मुस्लिम साम्प्रदायवाद और पृथक्करण की विचारधारा को जिस प्रकार उदरित किया गया उससे न केवल हिन्दू और मुसलमानों में दूरियां बढ़ी हैं बल्कि यह खाई निरन्तर बढ़ती ही जा रही है, जिसे पाटना कभी–कभी असम्भव सा प्रतीत होता है। इसी संदर्भ में डॉ. इकबाल ने लिखा है कि –

राष्ट्रीयता का अर्थ यदि देशवासियों से प्रेम करने और देश की स्मिता पर प्राण न्यौछावार करने से है तो, ऐसी राष्ट्रीयता मुसलमान के ईमान का महत्वपूर्ण अंग है। राष्ट्रीयता इस्लाम से उस समय टकराती है ज बवह एक राजनैतिक दर्शन बन जातो है और इंसान से इंसान को जोड़ने का बुनियादी सिद्धान्त होने का दावा करती है और यह आह्वान करती है कि इस्लाम व्यक्तिगत विश्वास के परिपेक्ष्य में चला जाये और राष्ट्रीय जीवन में एक जीवनदायी अंश की भांति शेष न रहने पाये। तुर्की, ईरान औश्र दूसरे मुस्लिम देशो में राष्ट्रीयता कभी एक समस्या का रूप धारण नहीं करती। राष्ट्रीयता की समस्या मुसलमानों के केवल उन देशों में है, जहां वह अल्पसंख्यक हैं और जहां राष्ट्रीयता का अर्थ यह लिया जाता हैं कि वह अपनी पहचान को बिल्कुल मिटा दें, मुस्लिम बहुसंख्यक देशों में इस्लाम राष्ट्रीयता से सामंजस्य स्थापित कर लेता है। क्योंकि व्यवहारिक रूप में वहां इस्लाम और राष्ट्रीयता एक ही हैं। जिन देशों में मुसलमान अल्पसंख्यक हैं, वहां उनकी यह कोशिश जायज होगी कि सांस्कृतिक आधार पर उन्हें स्वयं निर्णय लेने का अधिकार प्राप्त हो।

प्रायः ऐसा देखने में आया है कि सामाजिक कियाऐं अपने विरोधाभास के बावजूद साथ–साथ चलती रहती है। जिनसे समाज, परिवार और व्यक्तिगत सिद्धान्तों की रचना होती है यदि इनमें सामंजस्य स्थापित न हो तो कभी–कभी टकराव की स्थिति पैदा हो जाती है। यही कारण है कि दुनिया के सभी धर्म सहनशीलता, प्रेम और आपसी भाईचारा और सद्भाव स्थापित करने पर जोर देते है। धर्म कभी भी इन्सान को इन्सान से युद्ध करने, द्वेष और हिंसा फैलाने की शिक्षा नहीं देता। वैचारिक मतभेदों को राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिये मूर्तरूप देना भी उसे पसन्द नहीं है, परन्तु मनुष्य अपने निजी स्वार्थ और भौतिक लाभ को धार्मिक सहिष्णुता पर कुर्बान करना पसंद नही करता जिससे टकराव की स्थिति निर्मित हो जाती है।

वस्तुतः मुसलमान इस्लाम को जीवन का आधार समझते हैं। कारण यह है इस्लाम का शाब्दिक अर्थ ''अमन और शांति'' है और वह प्राकृतिक धर्म होने का दावा भी करता है। सर्वधर्म जियो और जीनो दो का अर्थ भी वह जानते है।' कुरान में यह स्पष्ट आदेश दिया जाता है कि तुमको तुम्हारा धर्म प्यारा, हमको हमारा धर्म, यहां विवाद की कोई गुजांइश नहीं बनती। समान नागरिक आचार संहिता के अन्तर्गत इस्लनाम कभी भी किसी की धार्मिक भावनाओं और धार्मिक संस्कृति को नुकसान पहुंचाना भी गुनाह समझता है। यहां इस्लाम को साक्षी बनाकर भारत के मुस्लिम शासकों की धार्मिक नीमियों को उदाहरणार्थ प्रस्तुत किया जा सकता है, परन्तु हमे इतिहास को उसके पुराने संदभों में ही समझना होगा। समयानुसार परिस्थितियां निर्मित होती हैं और कभी–कभी आशाओं के विपरीत भी परिणाम निकलते है। परन्तु समझदार व्यक्ति उनसे भ्रमित नही होते क्योंकि आवश्यकतानुसार मनुष्य की भावना में परिवर्तन आता रहता है। ''हिरोशिमा'' और ''नागाशाकी'' पर द्वितीय विश्व युद्ध में अमेरिका द्वारा गिराये गये एटम बम की तबाही को भूलकर ही जापान उन्नति के शिखर पर पहुंचा है।

सन् 1857 ई0 की क्रान्ति के असफल होने के पश्चात् विशेषकर भारतीय मुसलमानों पर

अंग्रेज सरकार ने अपना दमन चक तेज कर दिया और शहर के शहर, गांव के गांव वीरान कर दिये गये। पण्डित सुन्दर लाल लिखते है कि –

''शहंशाह बहादुर शाह की गिरफ्तारी के बाद बहादुर शाह के दो बेटे, मिर्जा मुगल और मिर्जा अख्तर सुलतान और एक पोता मिर्जा अबू–बकर हुमायुं के मकबरे में बाकी रह गये थे। मिर्जा इलाही बक्श ने ''हड़सन'' को खबर दी कि यह लोग अभी एक मकबरे में मौजूद है। परिणाम स्वरूप तीनों शहजादों को बन्दी बना लिया गया। शहजादों को रथों में सवार कराकर हड़सन अपने सवारों समेत शहर की और चल दिया। शहजादों के सिर काटकर शहंशाह बहादुर शाह के सामने लाये गये। सिरों को पेश करते हुए हड़सन ने बहादुर शाह से कहा – ''कम्पनी की और से आपकी भेंट, जो वर्षों से बंद थी।''

शहंशाह बहादुर शान ने जवान बेटों और जवान पोते के कटे हुए सिर देखे तो आश्चर्यचकित रह गये और अपनी सहनशीलता का परिचय देते हुए मुंह फेर लिया और कहा – 'अलहमदो लिल्लाह'' (अल्लाह का शुक है) तैमोर की औलाद ऐसे ही गौरवान्वित होकर बाप के सामने आया करती हैं।''

1857 ई0 की क्रान्ति की असफलता के पश्चात् अंग्रेज अफसरों ने हजारों मर्द, औरतों और बच्चों तक को गोलियों से उड़ा दिया। लाहौर छावनी और आसपास के क्षेत्रों में इतनी भयानक तबाही मचायी कि जिसे पढ़कर इन्सान का हृदय विलाप करने लगता है। मनुष्यों को जिन्दा जलाना, तोपों से उड़ा देना बहुत साधारण सी बात थी। मरने वाले क्रान्तिकारियों के घरों को लूटकर आग लगा दी जाती थी सारा उत्तरी भारत अंग्रेजी साम्राज्य क पैरों तले कुचला जा रहा था। इस आग और खुन की होली में मुसलमान बर्बाद हो रहे थे, उनके आंसू पोछने वाला भी कोई नही था, सबको अपनी–अपनी पड़ी हुई थी। सर सैय्यद अहमद खां ने ऐसी विषम परिस्थितियों में यह अच्छी तरह समझ लिया था कि इस क्रान्ति ने उत्तरी भारत के मुसलमानों को बुरी तरह से प्रताणित किया था और जब तक अंग्रेज सरकार का गुस्सा शांत नही हो जाता, तब तक किसी न्याय की उम्मीद नहीं की जा सकती थी। यही कारण था जिसने उन्हें ''असबाब बगावते हिन्द'' लिखने के लिये प्रेरित किया ताकि अंग्रेजों की मुस्लिम विरोधी मानसिकता को उग्र होने से रोका जा सके। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं समझा जाना चाहिए कि सर सैय्यद अहमद खां किसी जाति या धर्म विशेष के विरोधी थे।

सर सैय्यद अहमद खां एक बड़ समाज सुधारक, लेखक और शिक्षा शास्त्री थे। उन्हें यह मालूम हो गया था कि भारतीयों के लिये आधुनिक विज्ञान और यूरोपीयन सहित्य को समझना बहुत जरूरी है। परन्तु वह यह भी जानते थे कि यह ज्ञान उन्हें देशी भाषा के माध्यम से दिया जाये, जिसके लिये उर्दू से बढ़कर कोई देशी भाषा नहीं थी। 1825 ई0 में सारे राजकाल की भाषा उर्दू ही थी। इसलिये सर सैय्यद अहमद खां यह चाहते थे कि शिक्षा का सारा ज्ञान उर्दू में ही दिया जाये। सरकार ने उनकी इस बात को काफी हद तक स्वीकार कर लिया था और सर सैय्यद अहमद खां का प्रभाव सरकार में काफी बढ़ गया था और यही वजह थी कि साम्प्रदायवादी शक्तियों ने अंग्रेजी सरकार में सर सैय्यद अहमद खां के इस बढ़ते हुए प्रभाव को कम करने के उद्देश्य से ही उन पर साम्प्रदयिकता फैलाने का आरोप लगाना प्रारंभ किया। जैसे – अग्रेजी भाषा को सीखना, अंग्रेजी शिक्षा पद्धति को स्वीकार करना, हिन्दुओं और अंग्रेजों के साथ मेलजोल रखना इत्यादि। यह सभी बातें उन्हें स्वीकार्य न थीं, इसलिये मुसलमानों का एक वर्ग सर सैय्यद अहमद खां के सामाजिक आंदोलन के विरूद्ध आवाज उठा रहा था। उनके खिलाफ ''फतवे'' दिये जा रह थे। जिसका लाभ नियिचत रूप से साम्प्रदायिक शक्तियां उठा रही थीं।

''जाहिदे खुश्क ने मुझे काफिर जाना

काफिर यह समझा के मुसलनां हूं में''

(खुश्क मिजाज मुल्ला ने मुझे काफिर (नास्तिक) जाना और नास्तिक यह जाना कि मुसलमान हूं मैं)

सर सैय्यद अहमद खां के मन में ''भाषा'' को लकर कोई विरोध नहीं था, जिसकी झलक उनके भाषणों में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है –

अब हिन्दुस्तान ही हम दोनों का वतन है। हिन्दुस्तान ही की हवा से हम दोनों जीते हैं। पवित्र गंगा, यमुना का पानी हम दोनों नीते हैं।

हिन्दुस्तान की जमीन की पैदावार हम दोनों खाते हैं। मरने और जीने में दोनों का साथ है। हिन्दुस्तान में रहते–रहते दोनों का खून एक हो गया, दोनों की रंगत एक सी हो गई। मुसलमानों ने हिन्दुओं की सैकड़ों आदतें ले लीं, यहां तक कि हम दोनों आपस में मिले और एक ऐसी भाषा ''उर्दू'' पैदा की, जो न हमारी भाषा थी और न उनकी।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के संबंध में सर सैय्यद अहमद खां के विभन्न मत :– मौलाना अल्ताफ हुसैन हाली ने कांग्रेस के संदर्भ में सर सैय्यद अहमद खां के विचारों को सर सैय्यद अहमद खां के जीवन पर आधारित विश्वविख्यात पुस्तक ''हयाते जावेद'' में प्रस्तुत किया है, कुछ अंशों का हिन्दी अनुवाद निम्नलिखित है –

सर सैय्यद अहमद खां के जीवन में कांग्रेस का विरोध करना एक ऐसी घटना है जिसका असर हिन्दुस्तान से लेकर इंग्लिस्तान तक आश्चर्यजनक रूप से और विभिन्न सम्प्रदाय क लोगों पर अनेक प्रकार से हुआ है। इसलिए हम इस घटना का विस्तृत विचरण के साथ उल्लेख कर रहे है। मई 1884 ई0 में बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने हिन्दुस्तान के विभिन्न अंचलो में इस उद्देश्य से भ्रमण किया था कि हिन्दुस्तान के शिक्षित लोगों तथा विभिन्न संस्थाआं का ध्यान इस और आकृष्ट किया जाये कि ब्रिटीश सरकार ने सिविल सर्विस के उम्मीदवारों की आयु जो 21 वर्ष से घटकर 19 वर्ष कर दी है, उसकी गवर्नमेन्ट से दरख्वास्त करं कि 21 वर्ष का नियम जो उपरोक्त परीक्षार्थियों के लिए पहले से निर्धारित था, वही अब फिर जारी किया जाये और तमाम हिन्दुस्तानी मिलकर एक फण्ड जो नेशनल फण्ड के नाम से जाना जावे, में राशि जमा करें जाकि जब कभी उनको भारत सरकार या ब्रिटीश सरकार में कोई दरख्वास्त या शिकायत पेश करने की जरूरत हा तो उस फण्ड की आमदनी में से खर्च किया करें।

इस समय उन्होंने अलीगढ़ में भी दौरा किया और जो सभा इस उद्देश्य के लिये अलीगढ़ में हुई थी, उसमें सर सैय्यद अहमद खां जो अन्जुमन के अध्यक्ष थे, वहां उपस्थित थे। यहां तक कि जो दरख्वास्त सिविल सर्विस की आयु बढ़ाने के लिये विलायत भेजी गई थी, उसके भेजने में सर सैय्यद अहमद खां भी शामिल थे। मेरा विचार है इसी सन् में बंगालियों ने कलकत्ता में एक संस्था स्थापित की, जिसका पहला नाम बंगाल नेशनल लीग रखा गया था और जिसका उद्देश्य संक्षेप में यह था कि गवर्नमेन्ट ने जिन अधिकारों को देने का हिन्दुस्तानियों से वादा किया है उनकी मांग की जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. असगर, अब्बास – सर सैय्यद की सहाफत, अन्जुमन तरक्की उर्दू हिन्द 1975

2. अग्रवाल, अर.सी. – भारतीय संविधान का विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन, एस. चन्द्र एण्ड कम्पनी प्रा. लिमिटेड, रामनगर, नई दिल्ली, 1977

3. अहमद, सैय्यद तुफैल – मुसलमानों का रोशन मुस्तकबिल मकतवा, मकतब जामुल लिमिटेड

4. अवस्थी, लीला – भारतीय स्वधीनता संग्राम के नेता, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, 1971

5. गुप्त, मन्मथनाथ – राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास, शिवकाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी प्राईवेट लिमिटेड, आगरा, 1962

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

महिला साख सहकारी सोसायटियों के स्वरूप

डॉ. ममता ए. त्रिपाठी
सहायक प्राध्यापक अर्थशास्त्र, श्री उमिया कन्या महाविद्यालय, इन्दौर

देश व प्रदेश में महिला साख सहकारी सोसायटियॉ दो स्वरूप में पाई जाती है :–

1. महिला साख सहकारी समिति

2. महिला नागरिक सहकारी बैंक

उपरोक्त दोनों स्वरूप की सहकारी सोसायटियॉ, बैंक व संस्थाएं तकनीकी तौर पर भी व उद्देश्य की दृष्टि से भी समान है। दोनों का ही पंजीयन पंजीयक सहकारी सोसायटियां, मध्यप्रदेश द्वारा किया जाता है व पंजीयन के पश्चात् दोनें ही सहकारी सोसायटी के नाम से संबोधित किये जाते है। दोनों का प्रबंध व नियमन मध्यप्रदेश सहकारी सोसायटी अधिनियम 1960 के प्रावधानों के अनुसार होता है। दोनों का अंकेक्षण व प्रशासन सहकारिता विभाग द्वारा किया जाता है। दोनों प्रकार की सोसायटी में सदस्यों से होने वाले किसी भी विवाद का निपटारा समान रूप से सहकारी न्यायालय में होता है। ऋण वसूली की प्रक्रिया भी समान है। दोनों ही सहकारी संरचना में कडीबद्ध है। दोनों ही सहकारी आंदोलन का अंग है व सहकारी आंदोलन के सिद्धांतों के प्रति आस्था रखते है और उनका सम्मान करते है। दोनों ही गैर सदस्यों को ऋण नही देते है। दोनों सोसायटियां वास्तव में समान उद्देश्य के लिए कार्य करती है। दोनों का उद्देश्य अपने सदस्यों में बचत की भावना पैदा करनाव आवश्यकता होने पर उनको ऋण उपलब्ध कराना है।

कुछ ही समय पूर्व तक सांख्यिकीयों में दोनों प्रकार की सोसायटियों के समंक एक साथ दिये जाते थे। इनका पृथक्करण तो बहुत बाद में हुआ जब सहकारी बैंकों की बैंकिंग व्यवसाय में अहम् भुमिका उभर कर सामने आई तब यह आवश्यकता महसूस की गई कि सहकारी बैंकों को भी बैंकिंग कम्पनीज् एक्ट 1949 की परिधि में लाया जावे। सहकारी बैंक अन्य व्यवसायिक बैंक्स की तरह न तो कम्पनियां है, न ही ज्वाइंट स्टॉफ कम्पनियां है। अतः बैंकिंग कम्पनीज् एक्ट 1949 के नाम में परिवर्तन करते हुए बैंकिंग रेग्युलेशन एक्ट 1949 से पठनीय मान्य किया गया व 1 मार्च 1966 से यह अधिनियम प्रभावशाली किया गया व इसके पीछे कुछ प्रावधान सहकारी बैंकों पर लागू हुए। इसके लागू होने के पश्चात् ही नागरिक सहकारी बैंकों की पृथक पहचान स्थापित हो सकी।

इस अधिनियम के अनुसार एक प्राथमिक सहकारी समिति जिसकी प्रदत्त अंशपूंजी आरक्षित निधि एक लाख या अधिक है और उसका उद्देश्य बैंकिंग व्यवसाय करना है तो वह स्वतः नागरिक सहकारी बैंक की श्रेणी में आ जाती है। इसके प्रावधानानुसार नागरिक बैंक्स प्राथमिक सहकारी बैंक्स कहे जावेंगे व कृषि साख समिति से भिन्न सहकारी समिति के रूप में परिभाषित किये जावेंगे। उनकी अंशपूंजी व कोष एक–एक लाख रूपये से कम नहीं होंगे तथा उनके उपनियम में किसी अन्य सहकारी संस्था को सदस्य बनाने का प्रावधान नहीं होगा। इन बैंकों में वे प्राथमिक सहकारी समितियां भी शामिल हो गई थी जो इन प्रावधानों की पूर्ति करती थी एवं गैर सदस्यों से अमानत प्राप्त करती थी। ऐसी समिति में यह आवश्यक था कि प्राथमिक सहकारी बैंक के रूप में गठित हो जाने के तीन माह की समयावधि में रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया से बैंकिंग व्यवसाय करने हेतु लायसेंस प्रदाय करने का आवेदन करें।

सन् 1983 में नागरिक सहकारी बैंकों के संदर्भ में सलाह देने के लिए रिजर्व बैंक ने एक 'स्टेंडिंग एडवाइजरी कमेटी' का गठन किया। फरवरी 1984 में रिजर्व बैंक में एक स्वतंत्र 'नागरिक सहकारी बैंक विभाग' की स्थापना की। सन् 1991 में नये नागरिक सहकारी बैंकों को लायसेंस दिये जाने के संबंध में मराठे कमेटी का गठन किया। इसकी 1992 में प्रस्तुत रिपोर्ट को लगभग पूर्ण रूप से मान्य कर लिया गया व नये बैंकों के गठन हेतु प्रमाप बनाए गए।

साख सहकारी समिति व नागरिक सहकारी बैंकों में फर्क मात्र इतना है कि साख समितियां बैंकिंग व्यवसाय नहीं करती मगर बैंक करते है। इसलिए उनको रिजर्व बैंक से बैंकिंग लायसेंस लेना पडता है। यहां यह भी स्पष्ट करना उचित होगा कि एक सामान्य सहकारी बैंक/सोसायटी में व महिला बैंक/सोसायटी की कार्यप्रणाली में भी कोई अंतर नहीं है। सिवाय इसके कि महिला बैंक/सोसायटी में सदस्यता केवल महिलाओं को दी जाती है जबकि सामान्य सहकारी सोसायटी में सदस्यता महिला व पुरूषों दोनों के लिए

खुली रहती है। मगर यह महसूस किया गया कि एक महिला सहकारी बैंक या समिति महिलाओं की कठिनाई बेहतर ढंग से समझ सकती है व महिलाएं इन बैंकों/समितियों से सहजता व सरलता से व्यवहार कर सकती है। अतः इनका पृथक से गठन किया। हम यह भी कह सकते है कि महिला बैंक/समितियों के सामाजिक उद्देश्य सामान्य बैंक/समितियों की अपेक्षा अधिक व्यापक है।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति

कुमारी माया उसरेठे
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

प्रस्तावना : किसी भी राष्ट का विकास तभी संभव है जब वहां की महिला विकसित हों यही कारण है कि आज की बदलती परिस्थिति में भारतीय नारी प्रत्येक व्यावसायिक पाठयकम में पुरूषों के साथ प्रवेश ले रही। इनकी संकीर्ण धारणाओं में परिवर्तन आया है। पहले की अपेक्षा अब उनका व्यावसायिक दष्टिकाण अत्यंत स्पष्ट हो गया है। व्यावसायिक क्षेत्र में अब ऐसा कोई स्थान नहीं रह गया है जहां नारी का प्रवेश न हो। अब प्रत्येक क्षेत्र में स्त्रियां पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रही हैं। यद्यपि कुछ दशकों पूर्व स्त्री की स्थिति कुछ विशेष व्यवसायों तक ही सीमित थी। उसका कार्यक्षेत्र घर परिवार तक ही सीमित था। लेकिन आज की शिक्षित स्त्री किसी भी क्षेत्र में पीछे नहीं है।

प्रशिक्षित महिला ही अपने ज्ञान एवं कौशलों का उपयोग करके अपने व्यवसाय में अग्रणी हो सकते है व्यावसायिक क्षेत्र में पुरूषों के समकक्ष खडी हो सकती है तथा अपने परिवार की बढती हुई जिम्मेदरियों को भलीभांति निभा सकती है। इस प्रकार घर की आर्थिक स्थिति को नियंत्रित करके एंव राष्ट्र के विकास में अपना योगदान देकर स्वयं भी आत्मसन्तुष्टि प्राप्त कर सकती है। महिला केवल घरेलू कार्यों पति–सेवा एवं बच्चों के लालन–पालन तक ही अपने को सीमित रखे। उसे भी आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्र में आगे आने का अधिकार है।

महिलाओं की स्थिति : हिन्दू समाज में नारी को ज्ञान, शक्ति और सम्पत्ति का प्रतीक माना जाता है। इनके रूप में सरस्वती, दुर्गा एवं लक्ष्मी की पूजा की जाती है। नारी को समाज ने पुरूष का आधा हिस्सा माना है और अर्द्धांगिनी के रूप में स्थान दिया है। किसी भी कर्तव्य की पूर्ति इसके बिना नहीं हो पाती है। नारी के वास्तविक महत्व की इस प्रकार व्याख्या की गयी है– "नारी परिवार की नींव हैं परिवार समुदाय की तथा समुदाय राष्ट्र की।" इससे स्पष्ट है कि नारो की राष्ट्र की नींव है। जिस देश में स्त्रियों का यथाचित सम्मान होगा वह राष्ट्र एक आदर्श राष्ट्र होगा। प्रारंभ में महिलाओं को काफी अधिकार और सम्मान प्राप्त थे लेकिन उत्तर/वैदिक काल तथा वैदिक काल के बाद समाज की मौलिक व्यवस्थाओं व्दारा रूढियों का रूप ग्रहण करने के फलस्वरूप वे अधिकार और सम्मान कम होते चले गये। पुरूष स्त्रियों के अधिकारों को छीनता गया। उनका शोषण करता गया जिससे उसकी स्थिति में गिरावट आती गई।

विभिन्न युगों में भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति

1. वैदिक युग : वैदिक काल में भारतीय समाज में नारी को पुरूषों के समान शिक्षा, धर्म, राजनीतिक और सम्पत्ति में आकिार प्राप्त थे। वैदिक साहित्य से पता चलता है कि उस समय का आदर्श, नारी पुरूष की प्रकृति है, रहा था, जिसके बिना उसका जीवन संभव न थी। पत्नी के रूप में उसकी स्थिति बहुत ऊँची थी। ऋग्वेद के मतानुसार नारी ही घर है। अथर्ववेद में कहा गया है कि "नववधु, तू जिस घर में जा रही है, वहां की तू साम्राज्ञी समझते हुये तेरे शासन में आनन्दित हैं।" यजुर्वेद से स्पष्ट होता है कि नारी को संध्या करने तथा उपनयन संस्कार के अधिकार प्राप्त थे। इस काल में महिला को शिक्षा एंव साहित्य के अध्ययन करने की पुरूषों के समान स्वतंत्रता थी। धर्म एवं अनुष्ठान के कार्य बिना नारी के पूरे नहीं किये जा सकते थे।

अतः वैदिक काल में महिलाओं को पुरूषों के बराबर अधिकर थे वे पुरूषों की तरह शिक्षा ग्रहण करती थीं उन्हें सम्पत्ति का और विधवाओं को पुनः विवाह कराने का अधिकार प्राप्त था।

2. उत्तर–वैदिक काल : वैदिक काल में महिलाओं को जो सम्मान एवं बराबर का दर्जा प्राप्त था, वह उत्तरोत्तर कम होता चला गया। उत्तर–वैदिक काल में धर्मसूत्रों में बाल–विवाह का निर्देश कराया गया, जिसके फलस्वरूप स्त्रियों को शिक्षा में बाधा पहुंची एंव शिक्षा का स्तर गिरता चला गया। उनके लिए वेदों का ज्ञान असंभव हो गया। उत्तर–वैदिक काल में महिलाओं को

धार्मिक एवं सामाजिक अधिकारों से वंचित करने के दो निम्नलिखित प्रमुख कारण थे :–

- कर्मकाण्ड जटिलता और पवित्रता की धारणामें वृध्दि, जिसकी वजह से यह विश्वास किया जाने लगा कि मंत्रों के उच्चारण में तनिक सी भूल भी अनिष्टाकारक होती है। इसलिए नारी वर्ग को उनके अध्ययन से अलग कर दिया गया।
- दूसरा कारण अन्तर्जातीय विवाह था। आर्यों ने अपने समुदाय में महिलाओं की कमी को पूरा करने के लिए अनार्यों से विवाह किया, जो विधि–विधान आदि से विपरीत थीं। इस कारण इनको धार्मिक, सामाजिक क्षेत्र से दूर रखना उचित समझा गया। विवाह, स्त्रियों के लिए अनिवार्य कर दिया गया, विधव–विवाह पर निषेध जारी किया गया। बहुपध्त्नी–प्रथा का प्रचलन और बढा। इन सब प्रमाणों से पता चलता है कि उत्तर–वैदिक काल में अन्त में सैध्दांतिक रूप से महिलाओं के अधिकारों पर पाबन्दी लग गई थी, परंतु व्यावहारिक रूप से महिलाओं के अधिकारों का उपयोग करती रही थीं।

3. मध्यकालीन काल : 16वीं शताब्दी से 18वीं शताब्दी तक का समय मध्यकाल कहलाता है। इस युग में विशेषकर मुगल साम्राज्य की स्थापना के पश्चात् महिलाओं की स्थिति जितनी तीव्र गति से पतन की ओर अग्रसर हुई, वह हमारे सामाजिक इतिहास में कलंक के रूप में सदैव याद रहेगा। 11वीं शताब्दी के प्रारंभ से ही भारतीय समाज पर मुसलमानों का प्रभाव बढने से हमारी संस्कृति की रक्षा करना जरूरी हो गया था इसलिए ब्राह्मणों ने संस्कृति की रक्ष, महिलरओं के सतीत्व तथा रक्त की शुध्दता बनाए रखने के लिए महिलाओं संबंधी नियमों को कठोर बना दिया।

मध्यकाल तक महिलाओं की स्थिति में वास्तविक रूप से बिगाड आया इसी समय दहेज प्रमुख संस्था बनी व अनेक सामाजिक बुराईयों से स्त्रियों की सामाजिक स्थिति में गिरावट आई।

स्वतंत्रता से पूर्व महिलाओं की स्थिति

'स्वतंत्रता से पूर्व' से हमारा अभिप्राय 18वीं शताब्दी के अंतिम वर्षों से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक है, जब अंग्रेज लोग यहां शासन किया करतेम थे। इस काल में भारतीसयों व्दारा समय–समय पर समाज सुधार के अनेक प्रयास किये गये, लेकिन अंग्रेजी सरकार व्दारा इन सुधारों को विशेष एवं व्यावहारिक सहयोग प्राप्त नहीं हुआ। महिलाओं का शोषित बना रहना ही उनके प्रशासन के हित में था, अतः महिलाओं की स्थिति में 20वीं शताब्दी के पूर्वाद्ध तक कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

स्वतंत्रता पूर्व महिलाओं की निम्न स्थिति के कारण

उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट होता है कि वैदिक काल के पश्चात् महिलाओं का सामाजिक स्तर निरंतर गिरता चला गया। महिलाओं के स्तर में इस अकल्पनीय गिरावट के निम्नलिखित कारण है:–

1. अशिक्षा : अशिक्षा से महिलाओं से महिलाओं का जीवन स्तर अपने परिवार तक सीमित हो गया। पति एवं परिवार द्वारा दिए गए धार्मिक उपदेश ही उनकी एकमात्र शिक्षा थी। इन रूढिवादी उपदेशों के प्रभाव से महिला अपना अस्तित्व भूलती गई। पुत्र एवं पति की सेवा करना ही उसका एकमात्र धर्म निर्धारित किया गया, जिसके फलस्वरूप सामाजिक व्यवस्था एकपक्षीय होक गई, जिसमें पुरूषों के अधिकार बढते चले गये व महिलाओं की स्थिति निध्म्नतम हो गई।

2. पुरूषों पर आर्थिक निर्भरता : उत्तर वैदिक काल के बाद से जब महिलाओं के सम्पत्ति संबंधी अधिकारों समाप्त हो गए, तो वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पूर्णरूपेण पुरूषों पर आश्रित हो गई। इस स्थिति में महिलाओं का शोषण होने पर भी वे परिवार की सदस्यता नहीं छोड सकती थीं। अशिक्षा ने भी उन्हें इस स्थिति में सहयोग दिया, अशिक्षा के कारण उनका आर्थिक क्रिया करना संभव नहीं रहा, तो उन्हें पति की ओर ही आर्थिक सहयो के लिए समर्पण करना पडा। उसकी प्रभुता को स्वीकारा, जिनके कारण पुरूषों की प्रभुता उन पर अवश्यम्भावी थी। इस प्रभुता को हिन्दू परंपरा ने एक आदर्श रूप प्रदान किया। आदर्श पतिव्रता महिला सीता ने पति को देवता मानते हुए, मानने के कारण की

व्याख्या करते हुए कौशल्या को स्पष्ट किया कि "पिता परिमित धन देता है। भाई और पुत्र भी सीमित राशि प्रदान करते हैं। ऐस स्थिति में अपरिमित धन देने वाले पति की कौन स्त्री पूजा न करें।"

3. संयुक्त परिवार व्यवस्था : के.एम. पणिक्कर का कहना है कि संयुक्त परिवार प्रणाली के कारण भी महिलाओं की सामाजिक स्थिति निम्न है। संयुक्त परिवार प्रणाली में महिलाओं को सम्पत्ति संबंधी अधिकार प्रदान करके इसे सुरक्षित नहीं रखा जा सकता, इसीलिए यह जरूरी हो जाता है कि महिला को घर में दबाकर रखा जाएं।

4. बाल विवाह : बाल विवाह प्रथा का अत्यधिक प्रचलन महिलाओं की स्थिति के पतन में महत्वपूर्ण कार रहा है। छोटी उम्र में विवाह हो जाने के कारण महिलाओं की शिक्षा का स्तर निम्न रहा, फलस्वरूप अज्ञानता बढी, जिससे वह समाज की मौलिक स्थिति को समझकर समाज से अपने अधिकारों की मांग न कर सकी।

5. वैवाहिक कुरीतियाँ : अनेक वैवाहिक कुरीतियों, जैसे– अन्तर्विवाह, कुलीन–विवाह, दहेज–प्रथा, विधावा–विवाह पर नियंत्रण आदि ने भी समाज में महिलाओं की स्थिति गिराने में काफी योगदान दिया। इन प्रथाओं के कारण महिलाओं को समाज और परिवार में एक भार के रूप में समझा जाने लगा।

6. मुसलमानों के आक्रमण : मुसलमानों के आक्रमण ने भी भारतीय नारी के सामाजिक स्तर को प्रभावित किया। इन आक्रमणों के फलस्वरूप देश में महिलाओं का सामाजिक स्तर गिरता, यद्यपि इससे पहले ही महिलाओं को अधिकारों से वंचित किया जा चुका था, फिर भी महिलाओं की स्थिति इतनी निम्न नहीं थी। मुसलमानों में महिलाओं के अभाव के कारण वे यहां की स्त्रियों एवं विधवाओं से भी विवाह करने का पूरा प्रयत्न करने लगे, जिससे धर्म के ठेकेदारों ने समाज को अधिक कठोर बना दिया।

स्वतंत्रता के पश्चात् महिलाओं की स्थिति

भारतीय समाज में स्वतंत्रता के पश्चात् महिलाओं की सामाजिक स्थिति में उल्लेखनीय परिवर्तन हुये हैं। इसका प्रमुख कारण है कि स्त्रियों ने आज हिन्दू जीवन के परंपरागत सिध्दांतो को केवल अस्वीकार ही नहीं किया है, अपितु उसे एक चुनौती दी है। वह भी इस रूप में कि उन सिध्दांतों को परिवर्तित करके रहेंगी, जो उनकी सामाजिक स्थिति में सहयोगी सिध्द होते है। इसके परिणमस्वरूप आज महिलाओं की सामाजिक स्थिति में अनेक परिवर्तन हुए हैं और आगे होते रहेंगे। स्वतंत्रता के पश्चात् आज जो स्त्रियों के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में परिवर्तन देखने को मिलते हैं। इसके साथ ही शिक्षा के प्रसार तथा औद्योगीकरण ने उन्हें आर्थिक जीवन में प्रवेश करने अवसर दिये हैं।

1. महिलाओं में शिक्षा का पसार : महिलाएँ जिस तेजी के साथ शिक्षा के क्षेत्र में उन्नति कर रहीं हैं, इसकी 50 वर्ष की कल्पना भी नहीं की गई थी। स्वतंत्रता से पूर्व जबकि न तो शिक्षा की समुचित सुविधाएं उपलब्ध थीं, न ही माता–पिता चाहते थे कि उनकी लडकीयां शिक्षा ग्रहण करें, इसके विपरीत स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात् इस क्षेत्र में व्यापक प्रगति हुई है सरकार की ओर से इस दिशा में व्यापक कदम उठाये गये।

2. आर्थिक जीवन में बढती हुई स्वतंत्रता :रूढिवादो लोग आज भी महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता के विरूध्द हैं। वे इसे अच्छा नहीं समझते, परंतु स्वतंत्रता प्राप्ति क पश्चात् शिक्षा, औद्योगिकीकरण और नवीन विचारधारा के कारण पुरूषों पर से महिलाओं की आर्थिक निर्भरता लगातार कम होती जा रही है निम्न वर्ग की बहुत सी महिलाएं स्वतंत्रता से पूर्व भी उद्योगों एवं अन्य कार्यों के द्वारा जीविका उपार्जित करती थीं, लेकिन उस समय मध्यम और उच्च वर्ग की स्त्रियों व्दारा कोई आर्थिक क्रिया करना उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा के विरूद्ध था। वर्तमान में बडी संख्या में मध्यम वर्ग की महिलाओं ने शिक्षा प्राप्त करके आर्थिक क्षेत्रों की ओर बढ़ना प्रारंभ कर दिया है। आजकल शिक्षा, स्वास्थ्य, चिकित्सा, समाज–कल्याण, मनारंजन, उद्योग और कार्यालयों में स्त्री कर्मचारियों की संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है।

3. राजनीतिक चेतना में वृद्धि : आज राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति में जिस प्रकार उन्नति हो रही है और यह जिस तेजी से ऊंची उठ रही है, वह एक आश्चर्य का विषय है।

यहां एक ओर 1937 में 41 सुरक्षित सीटों पर सिर्फ 10 महिलाएं ही चुनाव में आगे आईं थीं, जबकि विधानसीभा में 1957 में 105 महिलाएं विधानसभा सदस्यों के रूप में निर्वाचित हुई। 1977 में आम चुनाव के पश्चात् लोकसभा एवं राज्यसभा में कुल मिलाकर 42 महिलाएं थीं।

4. सामाजिक जागरूकता : स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् महिलाओं के सामाजिक जीवन में काफी परिवर्तन हुए हैं। आज उन परिवारों में भी महिलाएं खुली हवा में श्वास ले रही हैं, जहां कुछ वर्ष पूर्व तक महिलाओं को पर्दे में रहना जरूरी था। मध्यकाल की उन रूढ़ियों के प्रति उदासीनता निरंतर तेजी से बढ रही है जिन्हें महिलाएं कभी अज्ञानता के वशीभूत होकर आदर्श माना करती थीं। हिन्दू महिलाओं व्दारा स्थापित संघों की संख्या तथा उनमें सदस्यों की संख्या निरंतर तीव्र गति से बढ रही है। आज महिलाएं इन प्रगतिशील संघों की सदस्य बनने में अपना हित महसूस करती हैं। के.एम. पणिक्कर के अनुसार, "कुछ मेघावी महिलाओं ने जो उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है, वह भारत के लिए उतनी महत्व की बात नहीं हैं, जितनी कि यह बात कि कट्टरपंथी एवं पिछडे समझे जाने वाले ग्रामीण व्यक्तियों के विचारों में भी अब परिवर्तन होने लगा है।"

निष्कर्ष : मानव समाज में स्त्री पुरूष दोनों गाडी के दो पहियों के समान हैं, दोनों को विकास हेतु अधिकाधिक क्षेत्रों में लगभग समान रूप से अवसर भी प्राप्त है। शिक्षा ने महिलाओं को उनके अस्तित्व का बोध कराया है तथा उनकी भूमिका व कार्यो में परिवतन किया है। भारत के स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय संविधान में स्त्री शिक्षा को आधारभूत महत्व का विषय मानते हुये विभिन्न अनुच्छेदों में इस संदर्भ में प्रावधान लिए गए।

स्वतंत्रता के पश्चात् विभिन्न संवैधानिक प्रावधानों के द्वारा महिलाओं के प्रति सम्मानजनक बनान का प्रयास किया गया। सरकारी कार्यक्रमों के द्वारा शिक्षा के माध्यम से महिलाओं को सक्षम बनाने का प्रयास किया गया।

संदर्भ सूची :

1 योगेश कानवा, सुरेन्द्र कटारिया "भारत में निर्धनता आर्थिक विकास एवं मीडिया" आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स जयपुर 2006

2 डॉ. आशुरानी "महिला विकास कार्यक्रम" इनाश्री पब्लिशर्स जयपुर 1999

3 जे.एन. कांसोटिया "उद्यमिता विकास केन्द्र" मध्यप्रदेश (सेडमेप) 2005–06

4 डॉ. राजकुमार "महिला एवं विकास", अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2003

5 Ambedkar B.R. (1996) : The Rise and fall of Hindu Women (21th ed.) Bheempatrika Publication, Jalandhar.

6 Malahy, R. (1996) "women Employment" in Role of Women in the Twenty First Century (ed.) Anmol Publication Pvt. Ltd. New Delhi.

7 Susan Harton (ed. 1996) Women and Industrialisation in Asia (Rowlkdge Studies, London).

8 Chattopathyay, Arundhati (2005) Women and Entrepreneurhsip, Yojana, Vol. 49, January 2005.

9 Desai, Vasant (1992) Dynamics of Entreprenurial Development and Management Principles, Project, Policies and Programmes, Himalaya Publishing House, Bombay.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भारतीय बैंकिंग विकास

श्रीमती प्रज्ञा दुबे
श्रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर म.प्र.

प्रस्तावना : किसी भी देश का विकास तभी है जब वहां पूंजी निवेश हो यह निवेश ही विकास रूपी रथ का क्षेत्र होता है। इस निवेश का तेजी और निरतरता से तभी कुशलतापूर्वक उपयोग हो सकता है जब निवेशकों की पैठ बाजार में हो। भारतीय अर्थव्यवस्था विश्व की सबसे तीव्र गति से बढ़ रही अर्थव्यवस्थाओं में से एक है।

भारत में बैकिंग व्यवस्था की महत्वपूर्ण भूमिका का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि दश में कुल आपूर्ति का लगभग 75 प्रतिशत भाग बैंक जमाओं के रूप में है, जो सकल घरेलू उत्पाद के 50 प्रतिशत भी अधिक है विकासशील देशों में यह अनुपात अधिक होता है अर्थव्यवस्था चाहे विकसित हो या विकासशील, बैंकों का स्थायी महत्व होता है। यदि बैंकिंग व्यवस्था एक बार असफल हो जाये तो देश आर्थिक विकास की दृष्टि से दशकों पीछे चला जायेगा।

विगत कुछ वर्षो से विश्वस्तरीय बैंकिंग एवं वित्तीय परिवेश में जटिलताओं में वृद्धि हो रही है। वित्तीय क्षेत्र में मुक्त बाजार पर चर्चा हो रही है। विगत दो दशकों में भारतीय आर्थिक एवं वित्तीय परिवेश में भी कांतिकारी परिवर्तन आये है। शाखा विस्तार जमाओं एवं ऋणों की मात्रा में वृद्धि के फलस्वरूप बैंकों की परिचालनगत प्रणालियों और संरचनाओं में भी वृहद स्वरूप में बदलाव आया है भारत सरकार की उदारीकरण की नीति के अनुरूप बंकिंग में विश्व व्यापारीकरण की प्रवृत्ति बढ़ रही है। विश्वस्तर की बैंकिंग प्रणाली के अनुरूप अपने आपको तैयार करने की आवश्यकता के परिप्रेक्ष्य में बैंकों के भी लिए प्रकियागत सुधार किया है। दूसरी तरफ देश के आर्थिक उत्थान की प्राथमिक एवं अग्रगामी आवश्यकताओं की पूर्ति करना भी भारतीय बैकिंग उद्योग का राष्ट्रीय उत्तरदायित्व है।

देश के सामाजिक और आर्थिक विकास के द्विआयामी उत्तरदायित्वों के निर्वहन के लिए भी बैकों के लिए भी बैंकों ने अपनी परिचालनगत लाभप्रदता बढ़ायी है। इसके लिए दक्षता प्रभावशीलता और उत्पादकता में बढ़ोत्तरी के लिए अपनी प्रकियाओं में लचीलापन लाकर उन्हें परिष्कृत किया है।

बैंकिंग अवधारणा : बैंक शब्द का प्रयोग एक लंबे समय से किया जा रहा है इस शब्द की उत्पत्ति इटालियन भाषा के शब्द बैंकों का बदलता हुआ नाम अंग्रेजी भाषा में बैंक हो गया है। बैंकों का अभिप्राय बैच से है। एक अन्य धारणा के अनुसार बैंक शब्द की उत्पत्ति जर्मन भाषा के बैंक शब्द से हुई। जिसका तात्पर्य मिले जुले या शामिलाती शब्द का वास्तविक आशय एक ढेर होता है अर्थात् यह शब्द अनेक व्यक्तियों द्वारा एकत्र किये गये एक सामूहिक कोष को सूचित करता है परंतु यह असंदिग्ध रूप से कहा जा सकता है कि आधुनिक बैंकों का आरंभ यूरोप से हुआ और बाद में ये धीरे–धीरे सारी दुनियां में फैल गये।

बैंकिंग विकास : ब्रिटिश राज में भारत में आधुनिक बैकिंग की शुरूआत हुई। 19 वीं शताब्दी के आरंभ में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने 3 बैंकों की शुरूआत की –

1. बैंक ऑफ बंगाल 1809 में,
2. बैंक ऑफ बॉम्बे 1840 में,
3. बैंक ऑफ मद्रास 1843 में

लेकिन बाद में इन तीनों बैंकों का विलय एक नये बैंक इंपीरियल बैंक में कर दिया जिसे सन् 1955 में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में परिवर्तित कर दिया गया। इलाहाबाद बैंक भारत का पहला खुद का बैंक था। रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया सन् 1935 में स्थापित किया गया था और भारतीय रिजर्व बैंक का स्वाधीनता के पूर्व दिनों का समृद्धशाली इतिहास रहा है। भारत के लिए केन्द्रीय बैंकिंग संस्था का प्रश्न रॉयल कमीशन एवं विधान मंडल द्वारा हिल्टन–यंग कमीशन के समक्ष विचाराधीन था, जिन्होंने 1926 में यह सिफारिश की थी कि भारत के वित्तीय ढांचे को पूर्णरूप देने के लिये रिजर्व बैंक का गठन किया गया। 1914 में जारी चेंबरलेन कमीशन की रिपोर्ट में एक सदस्य जॉन मेनार्ड द्वारा प्रस्तुत व्यापक ज्ञापन भी था जिसमें

यह प्रस्ताव किया गया था कि तीन प्रेसीडेंसी बैंकों का एक केन्द्रीय बैंक में विलय कर देना चाहिए इसकी वजह से रिजर्व बैंक के गठन का मार्ग प्रशस्त हुआ, जिसकी शुरूआत 1927 में हुई थी।

सात वर्षो की अवधि के पश्चात् मार्च 1934 में यह अधिनियम बन पाया। इस तरह से रिजर्व बैंक की यात्रा 01 अप्रैल 1935 से प्रारंभ हुई। भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना पहले शेयर धारक बैंक के रूप में हुई थी। उसके बाद इसका राष्ट्रीयकरण 1949 में हुआ। राष्ट्र निर्माण में भारतीय रिजर्व बैंक का प्रयास राष्ट्र की नियति एवं निर्माण के साथ–साथ चलता रहा। वर्ष 1949 में बैंकिंग विनियमन अधिनियम बनाया गया जिसके अंतर्गत भारत में बैंक विनियमन का व्यापक एवं औपचारिक ढांचा तैयार किया गया था।

भारत की आजादी के पहले दो दशकों में बैंकिंग, शहरों और कस्बों में केन्द्रित थी। बड़े पैमान पर ग्रामीण क्षेत्र इस सुविधा से वंचित रह गये थे। इस कमी के चलते ग्रामीण बचत का दोहन नहीं हो पाया तथा ऋण संबंधी ग्रामीण आवश्यकताएं भी पूरी नहीं हो पाई। भारत ने 1962 में चीन के साथ लड़ाई लड़ी तथा इसके तुरंत बाद 1965 में पाकिस्तान केसाथ युद्ध हुआ। देश ने मानसून के तीन खराब वर्ष भी देखे देश की आर्थिक स्थिति बेहद खराब थी तथा 1966 में मुद्रा का अवमूल्यन भी करना पड़ा आर्थिक समस्याएं बढ़ रही थी तथा बढ़ती कीमतों आवश्यक वस्तुओं तथा सेवाओं की कमी मूल्य वृद्धि तथा बढ़ती बेरोजगारी में यह तथ्य परिलक्षित हो रहा था। इस परिदृश्य के मद्देनजर तत्कालीन केन्द्रीय वित मंत्री ने वाणिज्य बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण की वकालत की थी।

भारतीय बैंकिंग विकास के इतिहास को निम्नलिखित दो भागों में बांटा गया है –

1. स्वतंत्रता के पूर्व बैंकिंग विकास

2. स्वतंत्रता के पश्चात् बैंकिंग विकास।

स्वतंत्रता के पूर्व बैकिंग विकास :

प्रथम अवधि (सन् 1806) – ब्रिटिश शासनकाल के पूर्व भारत में बैकिंग का कोई आर्थिक विकास नहीं हुआ था। बैकिंग कार्य प्रायः महाजनों एवं साहूकारों द्वारा संपन्न किया जाता था, परंतु ब्रिटिश शासन में इन महाजनों एवं साहूकारों के व्यवसाय में बहुत कमी हो गई थी इसका प्रमुख कारण यह था कि अंग्रेजी भाषा एवं ब्रिटिश बैकिंग का विकास होने लगा। 18वीं शताब्दी में ईस्ट इंडिया कंपनी ने बम्बई एवं कलकत्ता में कुछ एजेन्सी गृहों की स्थापना की थी। एजेन्सी गृह आधुनिक बैंको की भांति कार्य किया करते थे। इनके मुख्य कार्य ईस्ट इण्डिया कंपनी को सैनिक आवश्यकताओं के लिये रूपया उधार देना, कृषि उपज की बिक्री के लिये ऋण देना, कागजी मृद्रा का निर्गमन करना तथा रूपया निक्षेप के रूप में स्वीकार करना था। ये अपने बैंकिंग व्यवसाय के लिये अग्रेजी अधिकारियों एवं व्यक्तियों से निक्षेप स्वीकार किया करते थे। अपने द्वारा दिये ऋणों पर ये एजेन्सी गृह 10 से 12 प्रतिशत तक ब्याज लिया करते थे। इस प्रकार से सन् 1806 में से पूर्व भारत में बैंकों का कार्य इन एजेन्सी गृहों द्वारा ही किया जाता था।

दूसरी अवधि (सन् 1806 से 1860 तक) – सन् 1813 में ईस्ट इंडिया कंपनी के वाणिज्य अधिकार समाप्त हो गये। परिणामतः एजेन्सी ग्रहों का भी पतन आरंभ हो गया था। इसके बाद तीन प्रेसीडेन्सी बैंकों की स्थापना की गयी थी सन् 1806 में बैंक ऑफ बंगाल सन् 1840 में बैंक ऑफ बाम्बे तथा सन् 1843 में बैंक ऑफ मद्रास की स्थापना की गयी। ये तीनों बैंक निजी शेयर होल्डरों के बैंक थे। इनके अधिकांश शेयर विदेशियों के हाथ में थे, परंतु इन तीनों बैंकों की शेयर पूंजी में सरकार का भी कुछ हिस्सा था और इसी नाते सरकार इन बैंकों पर अपना नियन्त्रण रखती थी साधारणतः इन बैंकों के उच्च अधिकारी भारतीय सिविल सर्विस के सदस्य ही हुआ करते थे। सन् 1862 से पूर्व इन बैंकों को नोट जारी करने का भी अधिकार हुआ करता था परंतु इस वर्ष के बाद भारत सरकार ने यह अधिकार उनसे वापस करता था परंतु इस वर्ष के बाद भारत सरकार ने यह अधिकार उनसे वापस ले लिया था। सरकारी बैंक होने के नाते सरकार के द्वारा इनके कार्यो पर कुछ प्रतिबंध भी लगाये गये थे। सन् 1921 में इन तीनों बैंकों को मिलाकर इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना की गयी और 1 जुलाई 1955 को राष्ट्रीयकरण के उपरांत इसका नाम बदलकर स्टेट बैंक ऑफ इंडिया रख दिया गया था।

तृतीय अवधि (सन् 1860 से 1913 तक) – सन् 1860 में भारत सरकार ने एक बैंकिंग कानून पास किया था। इसके अंतर्गत बैंकों का सीमित देयता के आधार पर गठन किया गया। इस कानून के कारण भारत में मिश्रित पूंजी वाले बैंकों की स्थापना में बहुत सहायता मिली। परिणामतः देश में अनेक मिश्रित पूंजी बैंक स्थापित हो गये थे।

इस अवधि में जिन महत्वपूर्ण बैंकों की स्थापना हुई वे इस प्रकार है –

बैंको का स्थापना वर्ष

बैंक का नाम	स्थापना वर्ष
इलाहाबाद बैंक	1865
एलाइन्स बैंक ऑफ शिमला	1881
दि पंजाब नेशनल बैंक	1894
पिपिल्स बैंक ऑफ इंडिया	1904

स्रोत : बैंकिंग चिंतन–अनुचिंतन आरबीआई

यद्यपि भारत में सन् 1900 तक बैंकिंग की विशेष प्रगति नहीं हो सकी परंतु 1906 के बैंकिंग का देश में बड़े पैमाने पर विस्तार हुआ। स्वदेशी आंदोलन के दौरान लोगो ने अंग्रेजी बैंकों का बहिष्कार करके भारतीय बैंकों के साथ व्यवसाय करना आरंभ किया जिससे भारतीय बैंकों को बहुत प्रोत्साहन मिला। इस अवधि में स्थापित होने वाले बैंक थे –

1. दि सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया
2. दि बैंक ऑफ बड़ोदा
3. दि बैंक ऑफ इण्डिया
4. दि बैंक ऑफ मैसूर।

चौथी अवधि (सन् 1913 से 1939 तक) – इस अवधि को भारत में बैंकिंग संकट का काल माना गया। स्वदेशी आंदोलन के कारण देश में अनेक छोटे–छोटे बैंक किये गये जो अपने दैनिक कार्य में बैंकिंग के आधारभूत सिद्धांतों की अवहेलना की उस समय भारतीय मुद्रा बाजार ठीक ढंग से संगठित नहीं हुआ था और न ही मुद्रा एवं साख प्रणाली लोचपूर्ण थी। परिणामतः संकट के समय बैंक एक दूसरे से सहायता प्राप्त करने में असमर्थ थे।

ब्याज की दरें बढ़ने और बैंकों ने अधिक लाभ कमाने क प्रलोभन में अपने निक्षेपों के पीछे अपर्याप्त नकद–कोष रखने आरंभ कर दिये गये। इन अपर्याप्त नकद कोषों के कारण ही वे सकंट के समय निक्षेपधारियों की मांग को संतुष्ट करने में असमर्थ रहे।

पंचवी अवधि (सन् 1939 से 1946 तक) – यह अवधि भारतीय बैंकिंग के विस्तार की अवधि थी इस काल में बैंकिंग का बड़े पैमाने पर विस्तार हुआ। देश में प्रचलित मुद्रा स्फीति के कारण लोगों के पास अधिक धन आया। देश में प्रचलित मुद्रा स्फीति के कारण लोगों के पास अधिक धन आया। फलतः बैंको के निक्षेपों में महान वृद्धि हुई। जिसे संतुलित करने के लिए रिजर्व बैंक ने उदार साख नीति का अनुसरण किया।

पुराने बैंकों द्वारा नये–नये स्थानों पर शाखाओं व बैंकों की स्थापना, बैंकिंग का असंतुलित विकास, बैंकों की निवेश नीति में परिवर्तन, इस प्रकार से बैंकों को अधकाधिक मात्रा में जरूरतमंद व्यापारियों को ऋण देने के लिए प्रोत्साहित किया।

स्वतंत्रता के पश्चात् बैंकिंग विकास –

स्वतंत्रता के समय : सन् 1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ–साथ राष्ट्र के विभाजन का बैंकिंग व्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ा। पंजाब तथा बंगाल का विभाजन होने के कारण वहां के बैंकों का भी शरणार्थियों के भांति भारत में शरण लेनी पड़ी थी, परिणाम स्वरूप बहुत से बैंक फेल हो गये जिससे जमाकर्ताओं को भारी क्षति हुई। जो बैंक विभाजन के आघात से बच गये उन्हें बहुत हानि उठानी पड़ी। उनकी बहुत सी पूंजी, परिसम्पत्ति पाकिस्तान में रह गई। फलस्वरूप भारतीय बैंकों को पाकिस्तान में स्थापित अपनी शाखाओं को बंद करना पड़ा इन बैंकों की अधिकांश शाखायें पाकिस्तान में रह गई जिसके फलस्वरूप उन्हें विशेष आर्थिक क्षति उठानी पड़ी।

विभाजन के प्रतिकूल प्रभावों से बैंकों को बचाने के लिये रिजर्व बैक ऑफ इंडिया ने एक नई योजना चालू की। इस योजना के अंतर्गत अनुसूचित बैंकों को स्वीकृत प्रतिभूतियों के आधार पर रिजर्व बैंक से ऋण लेने की सुविधा प्रदान की गई। इसके अतिरिक्त शरणार्थी बैंकों के पुनर्वास के लिये भारत सरकार ने 1 करोड़ रू. की सहायता प्रदान की थी। इसके साथ ही एक सरकारी आदेश के अंतर्गत दिल्ली तथा पूर्वी पंजाब में स्थित बैंकों के विरूद्ध तीन महीने तक कोई कानूनी कार्यवाही नहीं की जा सकती थी।

इस प्रकार इस योजना से कई शरणार्थी बैंकों को फेल होने से बचा लिया था। सन् 1947 से ही 30 बैंक असफल हुये। विभाजन के तुरंत बाद बैंकों की जमाराशियों में बहुत कमी हो गयी थी और इसके साथ ही साथ बैंकों से ऋणों की मांग बहुत बढ़ गई थी परंतु धीरे–धीरे उद्योगों तथा व्यापार के विकास के कारण बैंकों की जमा राशियों में वृद्धि होनी आरंभ हो गई थी।

तालिका

1950 तक देश में बैंकिंग संस्थाओं की असफलता व प्रदत्त पूंजी (वर्ष 1950 तक)

अवधि	असफल बैंकों की संख्या	प्रदत्त पूंजी (लाखों में)
1913–20	181	198.9
1921–30	143	557.1
1931–41	598	193.5
1941–46	285	54.4
1947–50	180	523.3

स्रोत : भारतीय बैंकिंग प्रणाली, टी.एन.जैन एवं पी.सी. माथुर, 1986

निष्कर्ष : स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में कुल वाणिज्यिक बैंकों की संख्या 471 रह गई, जिसमें 93 अनुसूचित बैंक तथा 378 गैर अनुसूचित बैंक थे। स्वतंत्रता के पूर्व तक देश की बैकिंग अवस्था यथावत् ही बनी रही। उसमें कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं हुये। देश में बिलों के सीमित प्रयोग के कारण बिल बाजार का समुचित विकास नहीं हुआ। इसके अतिरिक्त बैकिंग संस्थाओं प्रभावी नियंत्रण एवं नियमन हेतु अलग से कोई बैंकिंग विधान पारित नहीं किया जा सका। इस प्रकार रिजर्व बैंक की स्थापना के बावजूद भारतीय बैंकिंग व्यवस्था में अनेक दोष बने रहे। देश में न केवल बैंकिंग विकास की गति धीमी थी। अपितु विकास भी दिशाहीन था।

संदर्भ :

1. दीपक अग्रवाल, मुद्रा बैंकिंग एवं लोक वित्त, हिमालया पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली
2. अग्रवाल, वी.पी. भारत में बैंकिंग विधि एवं व्यवहार, साहित्य भवन पब्लिकेशन, 2012–13
3. द्विवेदी, श्याममोहन, मिश्रा एच.एन. एवं जैन शैलेष कुमार, भारत में सेवा क्षेत्र अध्ययन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स नई दिल्ली 2007
4. भारत में बैकिंग प्रवृत्ति एवं प्रगति संबंधी रिर्पोट 2009–10 से 2011–12 भारतीय रिजर्व बैंक, मुंबई।
5. सिन्हा, पी.सी. भारत में अधिकोषण, एस. बी.पी.डी. पब्लिशिंग हाउस आगरा 2010
6. वार्ष्णेय पी.एन., बैंकिंग विधि एवं व्यवहार, सुलतान चन्द एण्ड सन्स नई दिल्ली 2009

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना

सुश्री प्रियंका तिवारी
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर म.प्र.

प्रस्तावना :– रोजगार गारंटी योजना लोगों को रोजगार देने की गारंटी तो दे रही है वहीं ग्रामीणों की सहूलियत के सार्वजनिक निर्माण भी इसके माध्यम से हो रहे हैं। आजादी से लेकर अभी तक कच्चे रास्ते से गुजरना लोगो के लिये मुश्किल भरा काम था, लेकिन रोजगार गारंटी के तहत कांक्रीट रोड बन जाने से भारी सहूलियते हुई है। इतनी विशाल जनसंख्या के लिए रोजगार उपलब्ध कराना न केवल एक चुनौती है वरन् एक कठिन कार्य है।

सिर्फ पूंजी पर नजर रखना और समाज की अनदेखी करना नैतिकता के साथ–साथ आर्थिक विकास की दृष्टि से भी गलत है। देश में जब से आर्थिक सुधार अपनायें गये है तभी से लगातार यह गलती दोहराई जाती रही है। यह कितनी बड़ी विडम्बना है कि देश में उद्योग, सेवा, परामर्श और बैंकिंग आदि के क्षेत्र में लगातार वृद्धि हो रही है, रोजगार के नये–नये अवसर सृजित हो रहे है फिर भी बेरोजगारी बढ़ती जा रही है।

विश्व–व्यापी वित्तीय संकट व आर्थिक मंदी के दौर में भी भारतीय अर्थव्यवस्था का बेहतर प्रदर्शन महागुणक की क्रियाशीलता की पुष्टि करता है। मनरेगा से प्राप्त आय के कारण कामगारों की क्रय शक्ति बढ़ी है।

देश के कई मजदूर संगठन कई वर्षों से रोजगार की गारण्टी हेतु कानून बनाने की मॉग करते रहे हैं। हमारे संविधान में सबको जीने का अधिकार है। जीने के लिए काम का होना जरूरी है इसलिए काम के अधिकार की भी मॉग होती रही हैं। लम्बे संघर्ष व विभिन्न विरोधों के बाद भारतीय संसद द्वारा ऐसा अधिनियम बनाया जा सका, जिसमें काम के अधिकार की गारण्टी हो। महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना 2005 ग्रामीण मजदूरों के सशक्तीकरण का मजबूत साधन है। रोजगार की गारण्टी के परिणामस्वरूप ग्रामीण संगठित होकर अपने अधिकारों के लिए लड़ भी सकते हैं।

सन् 1952 में ग्रामीण सामुदायिक विकास कार्यक्रम की शुरूवात की गई, इस कार्यक्रम का उद्देश्य था गरीबी व अशिक्षा को दूर करना साथ ही रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाना प्रारंभ में लोगो को सूखा क्षेत्र मरुस्थल विकास आदि योजनाओं के अंतर्गत कार्य दिया जाता था। 1976 में इन्दिरा गॉधी सरकार ने अपने 20 सूत्रीय कार्यक्रम में गरीबी हटाने पर ध्यान केन्द्रित किया। 1980 के दशक से ही रोजगार पूरक योजनाओं का प्रारंभ हुआ, 1989 में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना, 2000 में प्रधानमन्त्री ग्रामीण रोजगार योजना, 2003 में स्वर्ण जयन्ती स्वरोजगार योजना, इन योजनाओं का मुख्य उद्देश्य सीमित अवधि या कार्यानुरूप रोजगार उपलब्ध करवाना।

ग्रामीण विकास की राष्ट्रीय योजनाओं के क्रियान्वयन में अग्रणी स्थान, गांव–गांव तक फैलता सड़कों का जाल और विकास की मुख्यधारा से जुड़ते दूर–दराज के गांव, शिक्षा, स्वास्थ्य का प्रसार, सड़क और बिजली उपलब्ध होने के कारण कम्प्यूटर, टी.व्ही, फोन आदि के माध्यम से वैश्विक गति से जुड़ते हमारे गांवों में निश्चित रूप से एक ऐसी सुबह का आगाज हो चुका है जिसकी किरणें चारों और उजाला फैलाने को आतुर हैं।

10 वीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक भी गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारो में कमी नहीं आई है। वहीं आज भी 60 प्रतिशत आबादी असंगठित क्षेत्रों में कार्यरत है इन लोगों को सरकार द्वारा निर्धारित रोजगार नहीं मिल पा रहा है। इसी बात को ध्यान में रखते हुये एक ऐसी योजना की आवश्यकता महसूस की गई, जो व्यक्ति को रोजगार उपलब्ध करवाने के साथ–साथ उन्हें इस बात का आश्वासन दे सके कि जब उन्हें रोजगार की आवश्यकता होगी हम सरकार से मांग सकते हैं और इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुये फरवरी 2005 में आंध्रप्रदेश के अनंतपुर जिले से प्रधानमन्त्री डॉ. मनमोहन सिंह ने इस योजना की शुरुवात की और आज यह योजना भारत के सम्पूर्ण जिलों में लागू है, यही इसके कुछ सकारात्मक एवं नकारात्मक तथ्य उभरकर सामने आ रहे हैं मेरे चुनाव का आधार इस योजना की वास्तविक तस्वीर प्रस्तुत करना है।

हमारे देश में अकुशल श्रमिकों की अधिकता तथा कुशल तकनीकी एवं वैज्ञानिक कर्मचारियों की कमी के निवारण हेतु मानव श्रम शक्ति नियोजन अपना कर

मानवीय साधनों का अधिकतम उपयोग किया जा सकता है।

महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम 2005 लोकसभा में 23 अगस्त 2005 को ध्वनिमत से पारित हुआ। 02 फरवरी 2006 को यह देश के 200 जिलों में लागू किया गया, और फरवरी 2007 से इसमें 130 और नये जिले शामिल हो गये। 01 अप्रैल 2008 से इसे देश के सम्पूर्ण भारत में लागू किया गया है। 2 अक्टूबर 2009 को गॉधी जी की 14वीं जयंती पर प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने इसका नया नामकरण किया। अब नरेगा को राष्ट्रपिता महात्मा गॉधी के नाम पर महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना (मनरेगा) के नाम से जाना जाता है।

महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना एक ऐतिहासिक और क्रांतिकारी कदम है, ऐतिहासिक इन अर्थों में कि देश ग्रामीण विकास के इतिहास में पहली बार रोजगार के हक को कानूनी और वैधानिक दर्जा मिल रहा है। क्रांतिकारी इन अर्थों में कि ग्रामीणों के रोजगार के हक को विधिक मान्यता प्रदान की गयी है। इस वचनबद्धता को स्पष्ट किया गया है कि मांगने पर उन्हें रोजगार मिलेगा और अगर ऐसा नहीं होता तो उन्हें बेरोजगारी भत्ता दिया जायेगा। इतना ही नहीं इस अधिनियम में श्रमिकों की सुविधा का ध्यान रखते हुए उनकी मांग पर रोजगार उनके निवास के 05 किमी. दूर कार्य उपलब्ध कराये जाने की स्थिति में 10 प्रतिशत अतिरिक्त मजदूरी आने–जाने पर व्यय हेतु दी जायेगी। मनरेगा का मूल ''गारण्टी'' शब्द में समाहित है कि ग्रामवासियों को :–

1. रोजगार अधिकार स्वरूप प्राप्त होगा।
2. रोजगार निहितार्थ मांग पर उन्हें दिया जायेगा ।
3. इस दिशा में किसी भी कमी की स्थिति में शिकायत का हक है।
4. यदि अधिनियम के प्रावधानों की अनदेखी कर उन्हें उनके हक से वंचित किया जा रहा है तो वहां कानूनी कार्यवाही की व्यवस्था है।
5. इसमें सूचना का अधिकार योजना भी सम्मिलित है।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना एक राष्ट्रीय कार्यक्रम है। कार्यक्रम के देशव्यापी होने के कारण इसमें कई तरह के समस्याओं का उत्पन्न होना स्वाभाविक है तथा मनरेगा के द्वारा बेरोजगारी समस्या का काफी स्तर तक हल हो सका है तथा व्यक्तियों के पलायन में कमी आयी है। कृषि, आत्मनिर्भरता, सड़क, जल संरक्षण, भूमि संरक्षण आदि में भी सफलता मिली है। दूसरी ओर अन्य विशेषज्ञ सुझाव देते हैं कि भूमि संबंधी कार्य भी टिकाऊ हो सकते हैं, यदि वे उपयुक्त योजना, आकार द्वारा निर्मित किए जाएं।

महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की आवश्यकता :–

भारत एक विकासशील देश है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् यह विकास की ओर अग्रसर हुआ है। यहां निर्धनता और रहन सहन के निम्न स्तर की समस्या पाई जाती है क्योंकि भारत की अधिकांश जनसंख्या गांवों में रहती है और ग्रामीण क्षेत्र अनेकानेक समस्याओं से ग्रसित हैं।

''मध्यप्रदेश में वर्ष 2004–05 में 38.3 प्रतिशत जनसंख्या (2.49 करोड़ लोग) गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रही है। वहीं ग्रामीण जनसंख्या का 36.9 प्रतिशत भाग अर्थात् 33.77 लाख परिवारों के 1.75 करोड़ लोग गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे हैं। प्रति व्यक्ति आय को देखें तो (वर्ष 1999–2000) के स्थिर मूल्य पर) जो वर्ष 1999–2000 में 12384 रूपया थी, से आठ वर्षो में मात्र 20.46 प्रतिशत (अर्थात् औसतन 2.55 प्रतिशत वार्षिक की दर से) बढ़ोत्तरी के साथ वर्ष 2008–09 में 14918 रूपया हो पायी है''।

ग्रामीण क्षेत्र में अज्ञानता व अशिक्षा भी पाई जाती है। लोगो को रोजगार व व्यवसाय से संबंधित सुविधायें भी उपलब्ध नहीं हैं। यहां कृषि में लोगो को वर्ष भर पूरा काम करने को भी नहीं मिलता है। इसीलिये ग्रामीण व्यक्ति ज्यादातर बेरोजगार रहते है। बेकारी के कारण भरपेट भोजन भी नहीं मिलता है एवं पहनने के लिये ठीक तरीके से वस्त्र भी नहीं मिलता हैं एवं रहने के लिये मकान आदि की समस्याओं से ग्रसित रहते है।

सरकार द्वारा ग्रामीण जनता की इन समस्याओं को देखकर राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम का नियोजन कर क्रियान्वयन किया जिससे व्यक्तियों को कृषि कार्य के पश्चात् खाली समय में 100 दिन का रोजगार उपलब्ध कराना, जिससे ग्रामीण व्यक्तियों की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके।

महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का अधिनियम :–

लोकतंत्र का सार जनता की सहभागिता एवं नियंत्रण में निहित है। लोकतंत्र का आधार शासन में स्वरूप पंचायती राज व्यवस्था है। लोकतंत्र के अर्थ को स्पष्ट करते हुये गांधी जी ने कहा लोकतंत्र का अर्थ में यह समझता हूं कि इस तंत्र में नीचे से नीचे तथा

आदमी को आगे बढ़ने का समान अवसर मिलना चाहिये।

गांधी जी ने अपने अंतिम लेख वसीयतनामा में लिखा है सच्ची लोकशाही केन्द्र में बैठे 10–20 आदमी नहीं चला सकते वह तो नीचे से गांव के हर आदमी द्वारा चलाई जानी चाहिये। पंचायती राज संस्थान लोकतंत्र की आधार शिला है। पंचायती राज में ग्रामीणजनों की सक्रिय भूमिका एवं सशक्तिकरण का सर्वप्रथम कदम है। विकास आज अर्द्ध–विकसित अथवा विकासशील देशों की एक प्रमुख प्रक्रिया है। भारत भी स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् विकास की ओर अग्रसर हुआ हैं। यहां निर्धनता और रहन–सहन के निम्न स्तर की समस्या पाई जाती है। ग्रामीण क्षेत्र अनेकानेक समस्याओं से ग्रस्त है। कृषि पिछड़ी हुई अवस्था में है और यहां प्रति एकड़ उत्पादन की मात्रा अन्य देश की तुलना में काफी कम है। ग्रामीण क्षेत्रो में अज्ञानता व अशिक्षा भी पायी जाती है। लोगो को रोजगार या व्यवसाय संबंधित सुविधायें उपलब्ध नहीं है। यहां कुटीर उधोगो को पुनः पनपने की आवश्यकता है ताकि लोगो को वर्ष भर काम मिल सके। यदि यह कहा जाये कि ग्रामीण क्षेत्रो में सभी लोगो को भरपेट भोजन प्राप्त नहीं होता, पूरे वस्त्र नही मिल पाते और रहने के लिए समुचित मकानो की व्यवस्था नही हैं तो इसमें किसी प्रकार की कोई अतिश्योक्ति नहीं है ।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का परिचय :–

भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम सितंबर माह 2005 में पारित किया गया था। इस अधिनियम के अंतर्गत प्रावधानित कार्यक्रम ग्रामीण रोजगारी के सृजन और सुदृढ़ ग्रामीण अधोसंरचना की स्थापना की दिशा में एक अत्यंत महत्वपूर्ण पहल है। योजना का उद्देश्य अकुशल मानव श्रम करने के इच्छुक प्रत्येक ग्रामीण परिवार को एक वर्ष में सौ दिवसीय विधिमान सुनिश्चित रोजगार उपलब्ध कराना है तथा गरीबी उन्मूलन की दिशा में अभिनव प्रयास के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में स्थाई सार्वजनिक परिसंपत्तियों का निर्माण एवं सृजन करना है ताकि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को और अधिक सशक्त एवं गतिशील बनाया जा सके। मध्यप्रदेश पंचायत राज एवं ग्राम स्वराज अधिनियम 1993 की धारा 7 क के तहत् ग्राम सभा द्वारा तदर्थ समितियों के गठन का प्रावधान किया गया है। इसके साथ राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम मध्यप्रदेश की धारा 6,5,21 के अनुसार प्रत्येक ग्राम के अंतर्गत सतर्कता एवं मूल्यांकन समिति के कार्यों की मॉनीटरिंग गठित किये जाने का प्रावधान रखा गया है। उक्त प्रावधानों के अनुपालन में ग्राम स्तर पर समिति का गठन किया गया है। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम मध्यप्रदेश में जिस तरह से अपना कार्य कर रही है उससे निश्चित ही गरीब परिवारो को सहारा मिला है । मजदूरो के पलायन जैसी घटनायें भी कम हो रही हैं। आजीविका की सुरक्षा और बुनियादी जरूरतों की पूर्ति से उनके जीवन में नयी आशा का संचार हो रहा है।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की आवश्यकता :–

भारत एक अर्धविकसित देश है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् यह विकास की ओर अग्रसर हुआ है। यहां निर्धनता और रहन सहन के निम्न स्तर की समस्या पाई जाती है क्योंकि भारत की अधिकांश जनसंख्या गांवों में रहती है और ग्रामीण क्षेत्र अनेकानेक समस्याओं से ग्रसित हैं। कृषि पिछड़ी हुई अवस्था में है और यहां उत्पादन की मात्रा अन्य देशों की तुलना में काफी कम है। ग्रामीण क्षेत्र में अज्ञानता व अशिक्षा भी पाई जाती है। लोगो को रोजगार व व्यवसाय से संबंधित सुविधायें भी उपलब्ध नहीं हैं। यहां कृषि में लोगो को वर्ष भर पूरा काम करने को भी नहीं मिलता है। इसीलिये ग्रामीण व्यक्ति ज्यादातर बेरोजगार रहते है। बेकारी के कारण भरपेट भोजन भी नहीं मिलता है एवं पहनने के लिये ठीक तरीके से वस्त्र भी नहीं मिलता हैं एवं रहने के लिये मकान आदि की समस्याओं से ग्रसित रहते है। सरकार द्वारा ग्रामीण जनता की इन समस्याओं को देखकर राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम का नियोजन कर क्रियान्वयन किया जिससे व्यक्तियों को कृषि कार्य के पश्चात् खाली समय में 100 दिन का रोजगार उपलब्ध कराना। जिससे ग्रामीण व्यक्तियों की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी विधेयक 2005 का उद्देश्य ग्रामीण इलाकों में गरीबों की आजीविका सुरक्षा की वृद्धि के लिये प्रत्येक वित्तीय वर्ष में प्रत्येक परिवार में जिसका एक वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक श्रम करने को तैयार हो, को कम से कम 100 दिन का गारण्टी वेतन रोजगार उपलब्ध कराना है, कार्य का विभाजन परिवार के वयस्क सदस्यों के मध्य किया जा सकता है। इसी अधिनियम के तहत् वर्ष 2006–07 के बजट में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी स्कीम प्रारंभ की गई, इसके लिये 2007–08 के बजट में कुल 12,000 करोड़ रूपये की राशि आवंटित थी, चूंकि NREGA अधिनियम में रोजगार की कानूनन गारण्टी दी गई है। अतः आवश्यकतानुसार इसके लिये अधिक राशि उपलब्ध कराने के बात भी 2007–08 के बजट में

कही गई , 2009–10 के बजट में इसके तहत् 39100 करोड़ रूपये का आवंटन 2008–09 के बजट आवंटन की तुलना में 144 % अधिक ।

यहां मौलिक प्रश्न यह उपस्थित होता है कि रोजगार गारंटी योजना का क्या उद्देश्य है ? इस योजना की अवधारणा से जनता को क्या लाभ है। राष्ट्रीय ग्रामीण गारंटी योजना के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

1 रोजगार की सुनिश्चितता।

2 स्थाई परिसम्पत्तियों का सृजन।

3 आर्थिक एवं सामाजिक विकास करना। मजदूरों का पलायन रोकना।

4 पर्यावरण की सुरक्षा।

5 स्थानीय ग्रामीण निर्धन, अकुशल श्रमिकों को रोजगार उपलब्ध कराना। ग्रामीण बेकारी को दूर करना।

6 लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाना। ग्रामीण समुदाय का सर्वांगीण विकास करना।

''राष्ट्रीय ग्रामीण नियोजन गारंटी अधिनियम 2005 देश के ग्रामीण क्षेत्रों में गृहस्थियों की आजीविका की सुरक्षा को, प्रत्येक वित्तीय वर्ष में, प्रत्येक ग्रहस्थियों को जिसके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक कार्य करने के लिए स्वेच्छा से आगे आते हैं, कम से कम सौ दिनों का गारंटीकृत मजदूरी नियोजन उपलब्ध कराकर, वर्धित करने तथा उससे संयुक्त या उसके आनुसंगिक विषयों का उपबन्ध करने के लिए अधिनियम। भारत गणराज के छप्पनवें वर्ष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियम है''।

''महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम के प्रावधानों के सफल क्रियान्वयन हेतु भारत शासन द्वारा अलग से महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी परिषद स्थापित किया गया है। जिसके माध्यम से भारत शासन द्वारा राज्यों को राशि प्रदान की जायेगी''।

महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के माध्यम से ''काम के अधिकार'' को बल मिला है निश्चित तौर पर ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार अंसुतलन की स्थिति को बहुत हद तक महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के लागू हो जाने के बाद नियंत्रण में लाया गया है, लेकिन यह बात भी सच है कि हर व्यक्ति पूरे वर्ष रोजगार चाहता है और ना कि सिर्फ ग्रामीण बल्कि शहर में रहने वाले गरीब आदमी भी आर्थिक विषमता से उतना ही पीड़ित है। रोजगार की आवश्यकता सभी को है और महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना ग्रामीण क्षेत्र में काफी उपयोगी है।

महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के उद्देश्य :–

''ग्रामीण क्षेत्रों में निवासरत ग्रामीण परिवारों के वयस्क व्यक्तियों को, जो अकुशल मानव श्रम करने हेतु तैयार है, एक वित्तीय वर्ष में एक परिवार को कम से कम 100 दिवस का रोजगार उपलब्ध कराकर आजीविका सुनिश्चित करना एवं ग्रामीण क्षेत्रों में स्थायी परिसम्पत्तियों का सृजन''।

यहां मौलिक प्रश्न यह उपस्थित होता है कि महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का क्या उद्देश्य है, इस योजना की अवधारणा से जनता को क्या लाभ है। महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के निम्नलिखित उद्देश्य है :–

स्थाई परिसम्पत्तियों का सृजन।

रोजगार की सुनिश्चितता।

मजदूरों का पलायन रोकना।

ग्रामीण महिलाओं को रोजगार गारंटी योजना में प्राथमिकता देना।

पर्यावरण की सुरक्षा।

स्थानीय ग्रामीण निर्धन, अकुशल श्रमिकों को रोजगार उपलब्ध कराना।

ग्रामीण बेकारी को दूर करना।

लोगों के जीवन स्तर में सुधार करना।

ग्रामीण समुदाय का सर्वांगीण विकास करना।

निष्कर्ष : कार्यक्रम ने ग्रामीण श्रम भागीदारी की दर को बढ़ाया है। इसने श्रम बल में उन लोगों को भी आकर्षित किया है जो सक्रिय श्रमिक नहीं थे और आकर्षक और सुविधाजनक कार्य अवसरों तक उनकी पहुंच को सरल बनाया है। परंतु यह भी तर्क दिया जाता है कि योजना ने आवासीय श्रम बाजार के एक

बड़े समूह को हटा कर श्रमिकों की कमी उत्पन्न कर दी है ।

मनरेगा के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में मजदूरी की दर और कार्य दिवस की संख्या में वृद्धि से ग्रामीण परिवारों की आमदनी बढ़ी हैं। जिसके फलस्वरूप ग्रामीण परिवारों की क्रय–शक्ति में वृद्धि हुई जिसका फलस्वरूप स्वास्थ्य के देखरेख की क्षमता में बढ़ोत्तरी हुई है। इस योजना के अंतर्गत जल संरक्षण व सिंचाई संबंधी कार्यो के अच्छे परिणाम जिले है शुष्क व ऊष्म क्षेत्रों में इसका अच्छा प्रभाव पड़ेगा। मनरेगा के कारण पंचायती राज संस्थायें सक्रिय हो गई है। इस योजना की मुख्य समस्या भ्रष्टाचार है जिसे हर हाल में प्रत्येक स्तर पर रोकना होगा। इस हेतु सरकार को कुछ कठोर कदम उठाना होगा ।

संदर्भ :

1. पंचायत प्रतिनिधि प्रशिक्षण पुस्तिका,दिशा सोसायटी जबलपुर(म.प्र.)

2. दास.बी.सी. एवं नाथ.आर.के. (जुलाई,सितम्बर 2011):''ए स्टेडी ऑफ फाइनेंनशियल इनक्लूजन इन राजस्थान''.

3.करवाल, डॉ. प्रकाश.(1995.): ''गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों की उपादेयता'' मध्य प्रदेश की रायगढ़ जिलें में क्रियान्वित जवाहर रोजगार योजना का विशेष अध्ययन) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर के वाणिज्य संकाय (व्यावहारिक अर्थशास्त्र एवं व्यवसाय प्रबंध) के अंतर्गत डॉक्टर ऑफ फिलासकी उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध – प्रबंध .

4.शर्मा, डॉ. रामरतन .आहुजा, डॉ. कन्हैया .जैन, डॉ. सुभाषचन्द्र. (2010) : ''जनसंख्या (मानवीय संसाधन) का विकास आर्थिक प्रगति के लिये बाधक'', भारत में मानव संसाधन विकास, जनरल ऑफ म.प्र. एकानामिक्स एसोसिएशन वाल्यूम, XXi ,

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Impact of Perceived Justice and Stress on Job Satisfaction and on Commitment of Artisan Cluster in Unorganized Sector

Naveen Sharma
Dr. Gangotri Mishra

Abstract : *Perceived justice defines that artisan's perception for the justice of the action. Perceived justice is a multi-dimensional concept comprising three dimensions: distributive, procedural, and interactional justice. The main objectives of the present study are to investigate the impact of the three dimensions of justice on artisan satisfaction and their commitment for the art, to investigate the impact of level of stress on artisan satisfaction and their commitment for the art and to examine to what extent justice theory can significantly explain how artisan evaluate their handling of their complaints. It was found from the study that honesty in work explanation of the work on casual account empathy for the work politeness and courtesy in the working conditions and finally the efforts of the workplace is very much required at the workplace for the artisians of chanderi Gwalior. This implies that the in order to ensure smooth running of the artisan the honesty, explanation (causal account), empathy, politeness and effort are very vital for delivering the satisfaction and commitment. Effort is closely associated with how hard the employer or the job giver tries to resolve the problem of the artisans. So the if you need to get the work done from the artisans of Chanderi efforts have to be put to make sure that the worker feel that the problems are heard and easily resolved.*

Keywords: *Distributive, Procedural, and Interactional Justice*

Introduction

Perceived justice defines that artisan's perception for the justice of the action. Perceived justice is a multi-dimensional concept comprising three dimensions: distributive, procedural, and interactional justice. Despite the recent advances concerning the effects of perceived justice on post-recovery satisfaction, there is still room to learn how a service provider's recovery efforts affect subsequent artisan's recovery satisfaction. There is still a need for solid empirical research regarding the impact of responses to a artisan's complaint.

The five elements of interactional justice identified for this study are: honesty, explanation (causal account), empathy, politeness and effort. Honesty is defined by Clemmer in 1988 as the accuracy of the information the service provider's personnel communicate to the customer (Tax, 1993). The measure was operationalzed in terms of beliefs about the truthfulness of communications. Politeness or courtesy in service delivery is defined as "a continuum of polite-rude behavior provided by service personnel" (Tax, 1993, p. 118). Behavior which is disrespectful, rude or annoying would be associated with a low score on courtesy or politeness aspect of interactional justice. Explanation aspect of interactional justice can be defined as "explanations for behaviors or occurrences" (Tax, 1993, p. 118). Explanations may be in the form of justifications or excuses (Tax, 1993). In this study, explanation aspect was viewed as the provision of a reasonable cause for the service problem. Empathy is defined as "showing understanding and concern for the problems experienced by the customer" (Tax, 1993, p. 119). Parasuraman et al., 1985 pointed to the importance of this aspect and investigated empathy as a component of service quality. In addition to showing concern, empathy reflects a considerate approach to deal with customer complaints (Tax, 1993). Effort is defined as "the amount of energy put into a behaviour or series of behaviors" (Tax, 1993, p. 119). Effort is closely associated with how hard the service provider tries to resolve a complaint.

The three indicators of procedural justice that were measured in the questionnaire include: timing, flexibility and accessibility. Timing can be defined as the interval or the period of time taken to resolve the complaint (Tax, 1993). This aspect is

somewhat related to the issues of responsiveness and reliability which have been linked to service quality and satisfaction (Parasuraman et al., 1985). A number of studies have cited the negative emotional states and resulting dissatisfaction caused by the perceived unfairness of waiting long in service situations (Blodgett et al., 1997). Time loss is seen as both annoying and expensive to the people working in diverse stream. Waiting appears to be especially frustrating when the workforce is angry and believes that the service provider has some control over the delay (Taylor, 1995). Flexibility refers to "whether or not procedures are adaptable to the particular circumstances facing the complainant) (Tax, 1993, p. 121). Flexibility is mentioned to be associated with positive reactions to service encounters (Bitner et al., 1990). Accessibility is defined as " the ease/difficulty of engaging the complaint process" (Tax, 1993, p. 121). Accessibility is particularly related to the ease of determining who to register the complaint with. It has been observed that failed service encounters can be even more disturbing when it is difficult to access the person in charge to resolve the problem (Bitner et al., 1990).

At least seventeen distributive rules have been identified in justice literature. The three most predominant principles are equity, equality and need. Each of these principles can be relevant to consumers' evaluations of complaint outcomes (Tax et al., 1998). Equity can be defined as "provision of outcomes proportional to inputs to an exchange" (Tax., 1998, p. 63). Marketing research focuses almost on the equity principle. Equality principle refers to the provision of equal outcomes regardless of contributions to an exchange (Tax et al., 1998). Need aspect of distributive justice refers to outcome based on requirements regardless of contributions (Tax et al., 1998). Items used in the study questionnaire to measure the distributive construct reflected these broad evaluations of outcomes.

Moreover, according to Maxham and Netemeyer, (2002), there is a paucity of empirical research regarding the effects of complainants' perceptions of justice on satisfaction and intent. Therefore, there is interest in continuing to explore the relative influence of the dimensions of perceived justice on recovery satisfaction (del Río-Lanza et al., 2009). Besides, Chebat and Slusarczyk (2005) observe that the specific effects of the three justice dimensions on individuals' loyalty are quite different from each other. But work analyzing whether the justice dimensions also affect satisfaction with service recovery differently is absent for the literature. Maxham and Netemeyer (2002) analyzed the effects of perceived justice on satisfaction with service recovery, but they did not examine the relative effects of the justice dimensions. Moreover, del Río-Lanza et al., (2009) state that since not all the dimensions of justice have the same relative importance in explaining satisfaction, they suggest the need to analyze the dimensions of perceived justice separately rather than in an aggregate form. McCollough (1992) found that the impact of recovery on customer satisfaction was nonlinear, in other words, high recovery might not lead to high satisfaction while low recovery might not lead to low satisfaction. Del Río-Lanza et al., (2009) recommends considering moderating factors in the relationships between perceived justice and satisfaction. In this regard, the purpose of this study is to bridge these gaps in the literature by examining dimensions of perceived justice and level of stress on job satisfaction and on commitment of artisan cluster engaged in unorganized. The current study was conducted in India. The present study was conducted Madhya Pradesh. The respondents of the study are the artisans working in unorganized sector. This piece of research would be useful for researchers, academicians, marketers, merchandisers etc.. This study was having managerial implications and academic implications too.

Objectives of the study

The main objectives of the present study are:

- To investigate the impact of the three dimensions of justice on artisan satisfaction and their commitment for the art.

- To investigate the impact of level of stress on artisan satisfaction and their commitment for the art.

- To examine to what extent justice theory can significantly explain how artisan evaluate their handling of their complaints.

Research Methodology :

Data was collected from 700 artisans working in various districts of Madhya Pradesh (India). The sample was collected from the artisans located in various districts of Madhya Pradesh in unorganized sector and has experience of more than one year. Non-Probability Purposive Sampling Technique was adopted for collection of data. The nature of the study calls for collection of primary data and secondary data. The same shall be collected with the help of standard instruments. Where ever required secondary data was used to in support of primary data. The data would be collected through standardized self-administered questionnaire. A Standardized self-administered questionnaires was utilized for collecting data from the respondents. The responses of the artisans were recorded on five point Likert type scale.

Data Analysis

(SEM) was employed in this study to test proposed model and hypotheses and used AMOS as the analysis instrument. For parameter estimation, maximum likelihood method was adopted. Measurement model and structural model test were used to test fitness of the model. To assess direct and indirect relationships among the studied variables the researchers have followed a two-step procedure using confirmatory factor analysis and structural equation modeling (Anderson & Gerbing, 1988). Amos has been used to perform these analyses. *In the Model, all paths from effect of perceived justice and level of stress on job satisfaction and on commitment of artisan have been examined.* Confirmatory factor analysis (CFA) was conducted to have a more rigorous interpretation of effect of perceived justice and level of stress on job satisfaction and on commitment of artisan. The CFA model or Measurement model was employed to identify and determine the relationships of variables within the model. To evaluate the goodness-of-fit of model several measures of indices are used as suggested by Hair et al. (1998), Iacobucci (2010), Schumacker (1992): Chi-square/degrees of freedom ($\chi\surd$/df) ratio, root mean-square error of approximation (RMSEA), goodness of fit index (GFI), normed fit index (NFI),comparative fit index (CFI), incremental fit index (IFI).

Goodness of Fit

To estimate the goodness-of-fit of model, a number of measures of indices are used as suggested by **Hair et al. (1998), Iacobucci (2010), Schumacker (1992):** Chi-square/degrees of freedom ($\chi\surd$/df) ratio, root mean-square error of approximation (RMSEA), Tuck Willis index (TLI), normed fit index (NFI),comparative fit index (CFI), incremental fit index (IFI).

Tests of Absolute Fit

The chi-square test of full model fit is marked Discrepancy in this output. Its value is 2280.310 with 593 degrees of freedom, returning a probability value of less than .000 that a chi-square value large or larger will be attained by chance if the null hypothesis that the model fits the data is correct.

The 593 degrees of freedom tells the level of over identification of the model. As the probability value of the chi-square test is less than the 0.05 used by principle, we would not accept the null hypothesis that the model is fit.

Tests of Relative Fit

As the chi-square test of total model fit is responsive to sample size and not normal in the primary distribution of the key variables, researcher often go for various descriptive fit statistics to find the full fit a model to the data. In this structure, a model may not be accepted on an absolute basis, still a researcher can still say that a model outperforms few other baseline model by a considerable amount. In other words, the case researchers make in this context is that their taken model is considerably less wrong than a baseline model, specially the independence model. A model that is economically, and yet performs well in contrast to other models may be of considerable interest. For instance, Tucker-Lewis Index (TLI) and Comparative Fit Index (CFI) checks the

absolute fit of the said model to the absolute fit of the Independence model. The higher the discrepancy in the overall fit of the two models, the bigger the values of these descriptive statistics. A different block of the output shows stiff adjusted fit statistics. These fit statistics are similar to the adjusted R^2 in multiple regression analysis: the parsimony fit statistics penalize large models with many estimated parameters and few leftover degrees of freedom.

The fit output contains a large array of model fit statistics. All are designed to test or describe overall model fit. Each researcher has his or her favourite collection of fit statistics to report. Commonly reported fit statistics are the chi-square (labeled *Discrepancy* in the output shown above), its degrees of freedom (*DF*), its probability value (*P*), the Tucker-Lewis Index (*TLI*), and the Root Mean Square Error of Approximation (*RMSEA*) and its lower and upper confidence interval boundaries. There is also a Standardized Root Mean Residual (*Standardized RMR*), but it is important to note that this fit index is only available for complete datasets (it will not be printed for databases containing incomplete data).

Various rules of thumb for each of these fit statistics exist. These rules of thumb change as statisticians publish new simulation studies that further document the behaviour of various measures of fit. The chi-square test is an *absolute* test of model fit: If the probability value (*P*) is above .05, the model is accepted.

As the RMSEA = 0.063, GFI = 0.931, CFI = 0.879, and IFI = 0.880. All measures fulfill the suggested values. Therefore, model can be said as a good fit model.

Model Fit Summary

CMIN

Model	NPAR	CMIN	DF	P	CMIN/DF
Default model	132	3087.422	771	.000	4.004
Saturated model	903	.000	0		
Independence model	42	20048.294	861	.000	23.285

RMR, GFI

Model	RMR	GFI	AGFI	PGFI
Default model	.091	.828	.798	.707
Saturated model	.000	1.000		
Independence model	.556	.153	.112	.146

Baseline Comparisons

Model	NFI Delta 1	RFI rho 1	IFI Delta 2	TLI rho 2	CFI
Default model	.846	.828	.880	.865	.879
Saturated model	1.000		1.000		1.000
Independence model	.000	.000	.000	.000	.000

Parsimony-Adjusted Measures

Model	PRATIO	PNFI	PCFI
Default model	.895	.758	.787
Saturated model	.000	.000	.000
Independence model	1.000	.000	.000

NCP

Model	NCP	LO 90	HI 90
Default model	2316.422	2149.103	2491.216
Saturated model	.000	.000	.000
Independence model	19187.294	18729.718	19651.241

FMIN

Model	FMIN	F0	LO 90	HI 90
Default model	4.139	3.105	2.881	3.339
Saturated model	.000	.000	.000	.000
Independence model	26.874	25.720	25.107	26.342

RMSEA

Model	RMSEA	LO 90	HI 90	PCLOSE
Default model	.063	.061	.066	.000
Independence model	.173	.171	.175	.000

AIC

Model	AIC	BCC	BIC	CAIC
Default model	3351.422	3367.570	3960.742	4092.742
Saturated model	1806.000	1916.467	5974.307	6877.307
Independence model	20132.294	20137.432	20326.169	20368.169

ECVI

Model	ECVI	LO 90	HI 90	MECVI
Default model	4.493	4.268	4.727	4.514
Saturated model	2.421	2.421	2.421	2.569
Independence model	26.987	26.374	27.609	26.994

HOELTER

Model	HOELTER .05	HOELTER .01
Default model	203	210
Independence model	35	36

Execution time summary

Minimization: .089
Miscellaneous: 2.215
Bootstrap: .000
Total: 2.304

Summary Table-CFA

The Normed Fit Index (NFI)	0.846	The Normed Fit Index Exceeds 0.90 (Byrne, 1994) or 0.95 (Schumacker & Lomax, 2004)
Incremental fit index, IFI	0.880	IFI should be more than or equal to 0.90 to accept the model
the Tucker-Lewis Index (TLI)	0.865	Tucker-Lewis Index (TLI) must be nearer to one
The Comparative Fit Index	0.879	CFI exceeds 0.93 (Byrne, 1994)
The Goodness of Fit Index	0.828	The Goodness of Fit Index (GFI) exceeds .90 (Byrne, 1994)
RMSEA	0.063	the RMSEA (good models < .08)

Regression Weights: (Group number 1 - Default model)

			Estimate	S.E.	C.R.	P	Label
SA	<---	PJ	.304	.073	4.145	***	
SA	<---	PDJ	-.436	.112	-3.897	***	
SA	<---	PPJ	.272	.072	3.807	***	
ST	<---	PJ	-.101	.083	-1.205	.228	
ST	<---	PDJ	1.429	.174	8.223	***	
ST	<---	PPJ	-.546	.105	-5.185	***	
CO	<---	PJ	-.552	.097	-5.705	***	
CO	<---	PDJ	1.155	.175	6.590	***	
CO	<---	PPJ	.801	.119	6.728	***	

The probability of getting a critical ratio as large as 4.145 in absolute value is less than 0.001. In other words, the regression weight for **PJ** in the prediction of **SA** is significantly different from zero at the 0.001 level (two-tailed). This implies that there is a significant association between perceived interactional justice and satisfaction of artisan cluster engaged in unorganized sector.

The probability of getting a critical ratio as large as 3.897 in absolute value is less than 0.001. In other words, the regression weight for **PDJ** in the prediction of **SA** is significantly different from zero at the 0.001 level (two-tailed). This implies that there is a significant association between perceived distributive justice and satisfaction of artisan cluster engaged in unorganized sector.

The probability of getting a critical ratio as large as 3.807 in absolute value is less than 0.001. In other words, the regression weight for **PPJ** in the prediction of **SA** is significantly different from zero at the 0.001 level (two-tailed). This implies that there is a significant association between perceived procedural justice and satisfaction of artisan cluster engaged in unorganized sector.

The probability of getting a critical ratio as large as 1.205 in absolute value is 0.228. In other words, the regression weight for **PJ** in the prediction of **ST** is not significantly different from zero at the 0.05 level (two-tailed). This implies that there is no significant association between perceived interactional justice and stress of artisan cluster engaged in unorganized sector.

The probability of getting a critical ratio as large as 8.223 in absolute value is less than 0.001. In other words, the regression weight for **PDJ** in the prediction of **ST** is significantly different from zero at the 0.001 level (two-tailed). This implies that there is a significant association between perceived distributive justice and stress of artisan cluster engaged in unorganized sector.

The probability of getting a critical ratio as large as 5.185 in absolute value is less than 0.001. In other words, the regression weight for **PPJ** in the prediction of **ST** is significantly different from zero at the 0.001 level (two-tailed). This implies that there is a significant association between perceived procedural justice and stress of artisan cluster engaged in unorganized sector.

The probability of getting a critical ratio as large as 5.705 in absolute value is less than 0.001. In other words, the regression weight for **PJ** in the prediction of **CO** is significantly different from zero at the 0.001 level (two-tailed). This implies that there is a significant association between perceived interactional justice and commitment of artisan cluster engaged in unorganized sector.

The probability of getting a critical ratio as large as 6.59 in absolute value is less than 0.001. In other words, the regression weight for **PDJ** in the prediction of **CO** is significantly different from zero at the 0.001 level (two-tailed). This implies that there is a significant association between perceived distributive justice and commitment of artisan cluster engaged in unorganized sector.

The probability of getting a critical ratio as large as 6.72 in absolute value is less than 0.001. In other words, the regression weight for **PPJ** in the prediction of **CO** is significantly different from zero at the 0.001 level (two-tailed). This implies that there is a significant association between perceived procedural justice and commitment of artisan cluster engaged in unorganized sector.

Hypothesis Testing

There is a significant association between perceived interactional justice and satisfaction of artisan cluster engaged in unorganized sector. ***Accepted***

There is a significant association between perceived distributive justice and satisfaction of artisan cluster engaged in unorganized sector. ***Accepted***

There is a significant association between perceived procedural justice and satisfaction of artisan cluster engaged in unorganized sector. ***Accepted***

There is significant association between perceived interactional justice and stress of artisan cluster engaged in unorganized sector. ***Not Accepted***

There is a significant association between perceived distributive justice and stress of artisan cluster engaged in unorganized sector. ***Accepted***

There is a significant association between perceived procedural justice and stress of artisan cluster engaged in unorganized sector. ***Accepted***

There is a significant association between perceived interactional justice and commitment of artisan cluster engaged in unorganized sector. ***Accepted***

There is a significant association between perceived distributive justice and commitment of artisan cluster engaged in unorganized sector. ***Accepted***

There is a significant association between perceived procedural justice and commitment of artisan cluster engaged in unorganized sector. ***Accepted***

Findings and Implications

- It was found from the study that honesty in work explanation of the work on casual account empathy for the work politeness and courtesy in the working conditions and finally the efforts of the workplace is very much required at the workplace for the artisians of chanderi Gwalior. This implies that the in order to ensure smooth running of the artisan the honesty, explanation (causal account),

empathy, politeness and effort are very vital for delivering the satisfaction and commitment. Effort is closely associated with how hard the employer or the job giver tries to resolve the problem of the artisans. So the if you need to get the work done from the artisans of Chanderi efforts have to be put to make sure that the worker feel that the problems are heard and easily resolved.

- It was also found that there is a significant association between perceived distributive justice and satisfaction of artisan cluster engaged in unorganized sector. The three most predominant principles are equity, equality and need. It implies that at the work place of artisans in order to ensure satisfaction amongst the artisans there should be equality, equity and need is the very important. This would relieve them from stress leading to satisfaction and commitment towards the work.
- It was also found that there is a significant association between perceived procedural justice and satisfaction of artisan cluster engaged in unorganized sector The three indicators of procedural justice that were measured in the questionnaire include: timing, flexibility and accessibility. This implies that timing flexibility and accessibility leads to satisfaction and organizational commitment and relieves the stress.
- There is significant association between perceived interactional justice and stress of artisan cluster engaged in unorganized sector but it was significant for satisfaction and commitment. This implies that that the in order to ensure smooth running of the artisan the honesty, explanation (causal account), empathy, politeness and effort are very vital for delivering the satisfaction and commitment but this doesn't lead them from stress. Effort is closely associated with how hard the employer or the job giver tries to resolve the problem of the artisans may lead to satisfaction and commitment but it is not relieving them from the stress. So in order to relieve them from stress they have to work in different direction in case of the artisans of Chanderi Gwalior.

Scope for further Research

The limitations of this study were the geographical area that was not representative of the population i.e. India. Due to limited budget and time, the respondents were, or were identified by, individuals known to the researcher. Additionally, the research showed that very few respondents were less aware of the Perceived justice in this study.

The artisans of Chanderi were taken into consideration for the present research the research can also be conducted taking other group of artisan in India. The area of the study was only confined to Gwalior other places of MP can generated wider results. The study also confined the unorganised sector to the Chanderi artisans, though there are nay unorganised sectors can be considered for further research.

This study used judgmental sampling technique for data collection. Thus the findings cannot be generalized because the majority of the sample size is Chanderi Artisans. The other unorganised sector are not relatively new in India, and probably mature, therefore, further research is needed to identify additional factors that facilitate more awareness and viability in this country. Moderating variables like age, education, and experience may also add more insight to the findings of future studies.

The area of the unorganised sector if considered for India or for that matter only the artisans of similar type are considered may generate new results.

References

- Blodgett Jeffrey., Hill Donnaj. And Tax Stephen S, (2012). "The Effects of Distributive, Procedural, and Interactional Justice on Postcomplaint Behavior"., *Journal of Retailing, Vol. 73(2). 185-210*
- Dixit Varsha & Bhati Monika (2012), "A Study about Employee Commitment and

its impact on Sustained Productivity in Indian Auto-Component Industry", *European Journal of Business and Social Sciences, Vol. 1(6), 34-51*

- Dundar Tugba and Tabancali Erkan (2012), "The relationship between organizational justice perceptions and job", *Procedia - Social and Behavioral Sciences, Vol. 46*
- Farshad Aliasghar, Montazer Saideh, Monazzam Mohammad Reza, Eyvazlou Meysam & García-Izquierdo Antonio L., Moscoso Silvia and Ramos-Villagrasa Pedro J. (2012), "Reactions to the Fairness of Promotion Methods: Procedural justice and job satisfaction", *International Journal of Selection and Assessment, Vol. 20(4), 394-403*
- Gaurav , GM Krushna & AA Trivedi (2013), "Stress among unorganized sector workers in Vadodara city", *International Journal of research & development of Health, Vol 1(4), 183-190.*

  Jafari Parivash and Bidarian Shabnam (2012). "The relationship between organizational justice and organizational citizenship behavior", *Procedia - Social and Behavioral Sciences, Vol.47 , 1815 – 1820*
- Mehta Mita, Kurbetti Aarti & Dhankhar Ravneeta (2014), "Study on Employee Retention and Commitment", *International Journal of Advance Research in Computer Science and Management Studies, Vol. 2(2),154-164*
- Mirkazemi Roksana (2014), "Heat Stress Level among Construction Workers ", *Original Article Iranian J Publ Health, Vol. 43(4), 492-498*
- Mohanraj P& Manivannan L (2013**)**, "Occupational stress among migrated workers in unorganised sector" *IRACST-International Journal of Research in Management & Technology Vol. 3.(1), February, 13-20*
- Oluwakemi Ayodeji Owoyemi, Michael Oyelere & Tunde Elegbede (2011), "Enhancing Employees' Commitment to Organisation through Training", *International Journal of Business and Management, Vol. 6(7), 280-286*
- Ritumani Haloi (2014), "Stress Environmental Disease and Status of Women in Service Sector: An Empirical Study in Assam", *International Research Journal of Social Sciences, International Science Congress Association 38, Vol. 3(11), 38-41*
- Schmitt manfred & Doerfel Martin (1999), "Procedural injustice at work, justice sensitivity, job satisfaction and psychosomatic well-being",*Received 24 February 1997 European Journal of Social Psychology,Vol. 29, 443-453*
- Thomas Princy & Nagalingappa G (2012), "Consequences of perceived organizational justice: An empirical study of white-collar employees", *Journal of Arts, Science & Commerce, International Refereed Research Journal, Vol.3(2), 54-63*
- Wesolowski Mark A & Mossholder Kevin W (1997)' "Relational demography in supervisor subordinate dyads: Impact on subordinate job satisfaction, burnout, and perceived procedural justice", *Received 28 February 1994 Journal of organizational behavior, Vol. 18, by John Wiley & Sons, Ltd, 351-362*

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

GST– अप्रत्यक्ष कर संरचना में एक व्यापक परिवर्तन

डॉ. श्रीमती नीमा सिंह
अतिथि विद्वान

शोधसार : 1 जुलाई 2017 को भारत ने अप्रत्यक्ष कर के एक नये युग में प्रवेश किया है। भारत के इतिहास में अब तक का यह सबसे बड़ा कर सुधार लागू हुआ है जिसके कारण देश अप्रत्यक्ष कर की अनेक जटिलताओं से मुक्त हुआ है। GST लागू करने वाला भारत 161 वाँ देश है। 17 तरह के टैक्स और 23 तरह के सेस को मिलाकर एक जी.एस.टी. निश्चित की आजादी के बाद भी सबसे बड़ी कर क्रांति है। वस्तु एवं सेवा कर को तीन भागों में विभक्त किया गया है– केन्द्रीय सेवा एवं वस्तु कर, राज्य सेवा एवं वस्तु कर एवं अंतरराज्यीय सेवा एवं वस्तु कर। GST लागू होने से सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को लागू होगा कर भार कम होगा कीमतो में गिरावट आएगी, कर अपवंचन पर नियंत्रण लगेगा, कर भुगतान में सरलता के साथ पारदर्शिता आएगी, करो का दोहराव सामाप्त होगा एवं देश में एक कर, एक बाजार अवधारणा विकसित होगी भारतीय अर्थव्यवस्था तीव्र विकास के मार्ग पर अग्रसर होगी।

शोध अध्ययन का उददेश्य :–

प्रस्तुत शोध के प्रमुख उददेश्य निम्न प्रकार है–

1. भारतीय अर्थव्यवस्था में जी.एस.टी. के प्रभावो का अध्ययन करना।
2. जी.एस.टी. की अवधारणा का अध्ययन करना।
3. जी.एस.टी. के अवसर एवं चुनौतियो का अध्ययन करना।
4. जी,एस.टी. कैसे क्रियाशील होता है इसका अध्ययन करना।
5. भारत में GST की भुमिका का परीक्षण करना।

' शोध निम्न मान्यताओ पर आधारित है :–

- वर्तमान में सरकार के दायित्वो में वृद्धि हुई है इसकी पूर्ति हेतु शासन की आय में वृद्धि आपेक्षित है।
- अप्रत्यक्ष कर संरचना में परिवर्तन में तीव्रता आएगी जिसमें पूँजी निर्माण एवं आर्थिक विकास में वृद्धि होगी।
- जी.एस.टी. लागू होने से कर भुगतान प्रक्रिया सरल एवं पारदर्शी होगी एवं कर अपवंचन में नियंत्रण लगेगा।

शोध प्रविधि : प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक समंको पर आधारित है द्वितीयक समंको का संकलन विभिन्न प्रकार के शोध पत्रों, जर्नल्स, समाचार पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से किया गया है।

प्रस्तावना : वर्तमान में करारोपण राजस्व प्राप्ति के साथ–साथ अर्थव्यवस्था को नियंत्रित करने के साथ ही तीव्र विकास की ओर प्रेरित करने का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है। भारत सरकार प्रयासरत् है कि कर संरचना ऐसी निर्मित की जाए जिससे स्थिरता के साथ सभी क्षेत्रों में सुधार एवं विकास में तीव्रता आ सके। कर संरचना में सुधार कि इसी प्रक्रिया के तहत देश में वस्तु एवं सेंवा कर (GST) 1 जुलाई 2017 से लागू किया गया इसमें केन्द्र एवं विभिन्न राज्व सरकारों द्वारा भिन्न–भिन्न दरों पर लगाए जा रहे विभिन्न करों को हटाकर पूरे देश में एक ही अप्रत्यक्ष कर प्रणाली लागू की गई जिससे भारत को एकीकृत साझा बाजार बनाने में सहायता मिलेगी। GST लागू होने से एक्साइज ड्यूटी, सीमा शुल्क, सर्विस टैक्स, वैट, मनोरंजन कर, विक्रय कर, लक्जरी कर आदि समाप्त हो जाऐगे।

अप्रत्यक्ष कर सुधार प्रक्रिया के तहत GST लागू करना एक बहुत ही महत्वपूर्ण एवं सराहनीय कदम है इसमें बहुत अधिक संख्या में केन्द्र व राज्यों में लागू विभिन्न करों का एक कर के रूप में एकीकरण होगा एवं कर भार के प्रतिकूल प्रभावों को कम किया जा सकेगा। साझा राष्ट्रीय बाजार का मार्ग प्रशस्त होगा। GST के आगमन से हमारे उत्पादों को घरेलू व अंतर्राष्ट्रीय बाजार में प्रतिस्पर्धा का अवसर प्राप्त होगा। इसके तहत आर्थिक गतिविधियों में वृद्धि हुई है तथा सभी वर्गो को लाभ प्राप्त हो रहा है।

GST एक गंतव्य एवं उपभोग आधारित कर है अर्थात् यह कर उस राज्य के द्वारा वसूल किया जाएगा जहाँ वस्तुओं व सेवाओं का उपभोग किया जाएगा न कि उस राज्य के द्वारा जहाँ पर वस्तु व सेवाएँ निर्मित होगी।

जी.एस.टी. की कार्यविधि : जी.एस.टी. परिषद ने इस नए कर व्यवस्था को तीन वर्गों में विभाजित किया है।

1. सी.जी.एस.टी. (केन्दीय सेवा एवं वस्तु कर)
2. एस.जी.एस.टी. (राज्य सेवा एवं वस्तु कर)
3. आई जी.एस.टी. (अंतर्राज्यीय सेवा एवं गुड्स टैक्स) अर्थात् इंटीग्रेटेड GST।

जी.एस.टी. दरें : 1 जुलाई 2017 से लागू GST के अंतर्गत अलग–अलग वस्तुओं एवं सेवाओं पर अलग–अलग GST की दरें निधारिंत की गयी है इसमें वस्तुओं व सेवाओं को पाँच कैटेगरी में रखा गया 0 %, 5%, 12%, 18%, 28%, टैक्स।

1. जी.एस.टी.(0 %):–

गेहूँ, चावल, खुला खाद्य अनाज, ताजी सब्जियाँ, बिना मार्का आटा, बिना मार्का मैदा, बिना मार्का बेसन, गुड़, दूध, अण्डे, दही, लस्सी, खुला पनीर, बिना मार्का प्राकृतिक शहद, प्रसाद, खजूर का गुड़, नमक, काजल, फूल भरी झाड़ू, बच्चों की ड्राइंग और रंग की किताबें, शिक्षा सेवाएं स्वास्थ्य सेवाएं, पापड़, ब्रेड, चूड़िया काँच एवं प्लास्टिक की, मुरमुरे, समाचार पत्र–पत्रिकाएँ, श्रवण पत्र, श्रवण यंत्र, संरक्षित स्मारको के टिकिट, बिना भुने कॉफी के दाने,।

2. जी.एस.टी. (5 %):–

नारियल, चीनी, चायपत्ती, कॉफी के भुने दाने, खाद्य तेल व मसालें, स्किम्ड दूध पाउडर, शिशुओं के लिए दूध का आहार, पैक्ड पनीर, काजू, किशमिश पीडीएस केरोसीन, घरेलू एलपीजी, कोयला, जते–चप्पल (500 तक), कपड़े (1000 तक), अगरबत्ती, कॉयर मैट, चटाई और फ्लोर कवरिंग, रेवड़ी, रवाजा, चिकी,रेस्तरां बिल मेंहदी कोन, मिठाईयाँ।

3. जी.एस.टी. (12 %):–

मक्खन, घी, बादाम, फ्रूट जूस, पैक्ड नारियल पानी, सब्जियाँ, फलों, नट्स एवं पौधों के अन्य भागो से निर्मित खाद्य पदार्थ जैसे कि आचार, सॉस मुरब्बा, चटनी, जैम और जैली, छाता, मोबाइल, पास्ता, करी पेस्ट, स्याही, जूट व कॉटन बैग, बाँस के फर्नीचर, दूध पाउडर, एलईडी, सिलाई मशीन, बायोडिजल, मैट्रो रेल प्रोजेक्ट कंडेस्ड मिल्क।

4. जी.एस.टी. (18 %):–

केश तेल, टूथेपस्ट, साबुन, कॉर्न फ्लैक्स, सूप, आइसक्रीम, टॉयलेट्रीज, कम्प्यूटर प्रिंटर, वाटर पार्क, थीम पार्क, एल्यूमीनियम फॉइल, इंस्टैटं कॉफी, चॉकलेट, कॉस्मैटिक्स समान, लेदर गुड्स, कुकर, कटलरी, एलपीजी स्टोव, सेकैण्ड हैण्ड कार एस.यू.वी., पंखे, पम्प, बैटरी, सी.सी.टी.वी. कैमरा हैल्मेट।

5. जी.एस.टी. (28 %):–

सीमेंन्ट, एम्बूलेंस, पान मसाला, पेन्ट, शेविंग क्रीम, शैम्पू, सनस्क्रीन, टाइल्स, वॉटर हीटर, वॉशिंग मशीन, एटीएम, ऑटोमोबाइल।

GST के लाभ :–

1. लघु व मध्यम वर्ग के व्यापारियों को व्यापार करने में आसानी होगी।
2. मूलभूत आवश्यकता वाली वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्य में कमी होगी।
3. सरकार के राजस्व प्राप्ति में वृद्धि होगी।
4. कर अपवंचन पर नियंत्रण स्थापित हो सकेगा।
5. किसानों एवं निम्न मध्यम वर्ग को लाभ होगा।
6. लघु उघमियों हेतु नई संभावनाएँ और अवसर प्राप्त होंगें।
7. उत्पाद विशेष पर कर भी दर समान है इसलिए प्रत्येक राज्य में एक ही कीमत होगी। टैक्स का आकलन भी आसान हो गया है।
8. GST लागू होने से कर का दोहराव समाप्त होगा कीमतों में गिरावट आयेगी जिसका लाभ भारत की आम जनता को मिलेगा, कर भार में कमी होगी।
9. चेक पोस्ट रहित व्यवस्था में माल का सुगम आवगमन होगा।
10. जी.एस.टी. लागू होने से पंजीकरण, रिटर्न भुगतान आदि सभी कर सेवाएँ ऑनलाइन उपलब्ध होगी जिससे उनका अनुपालन सरल, सुविधाजनक व पारदर्शी हो जाऐगा।

जी.एस.टी. का वैश्विक परिदृश्य : GST की शुरूआत विश्व में पहली बार फ्रांस ने 1954 मे की थी। भारत में GST का कनेडियन मॉडल लागू है।

GST लागू करने वाले प्रमुख देश।

देश	वर्ष	दरें % में
फ्रांस	1954	19.6%
न्यूजीलैंड	1986	15%
जापान	1989	8%
रूस	1991	18%
कनाडा	1991	5%
सिंगापुर	1994	7%
चीन	1994	17%
ऑस्ट्रेलिया	2000	10%

पाकिस्तान	2013	17%
मलेशिया	2015	6%
बांग्लादेश	––	15%
नेपाल	––	13%
श्रीलंका	––	12%
ईरान	––	5%

स्त्रोत् :–

- रोजगार और निर्माण, पृष्ठ 35–38, 07/08/2017– 13/08/2017।
- Courtesy by GST seva.com

निष्कर्ष:–

वस्तु एवं सेवा कर एक अप्रत्यक्ष कर है जो कि भारत सरकार द्वारा 1 जुलाई 2017 से लागू किया गया। GST से पूर्व कर व्यवस्था में जनता पर कर के दोहराव का बोझ पड़ रहा था। आम उपभोग की वस्तुएँ अनावश्यक रूप से मंहगी हो रही थी GST प्रणाली लागू होने से करों का दोहराव समाप्त हो जाएगा। कीमतों में गिरावट आएगी जिसका सीधा लाभ भारत की आम जनता को होगा। आम जनता की दैनिक जरूरतों की अनेक वस्तुओं को कर से छूट दी गयी है।

अप्रत्यक्ष कर संरचना में यह व्यापक परिवर्तन भारत के इतिहास में अब तक का सबसे बड़ा कर सुधार है एक देश, एक कर, एक बाजार की अवधारणा का स्वपन सकार हो रहा है जी.एस.टी. लागू होने के साथ ही भारत GST लागू करने वाला 161 वाँ देश हो गया है जहाँ अप्रत्यक्ष कर की GST आधारित विश्व की आधुनिकतम कर प्रणाली लागू है।

संदर्भ सूची

- WWW.GSTINDIA.COM OR GST SEVA. COM.
- GST INDIA (2015) Economy and Policy.
- Kirorimal : Goods and Service tax - its impact on Indian economy, CASIRJ: VOL. 5, issue 3, 2014 ISSN 2319-9202.
- Neha Kanosia : A study on good and service tax in India, The international journal research publication, Research journal of social science and management, ISSN 2251-1571.
- रोजगार और निर्माण :– वस्तु एवं सेवा कर, पृष्ठ 35–38
  दिनाँक 07/08/2017–13/08/2017
- दैनिक भास्कर में 01/07/2017 से वर्तमान तक जारी भारत सरकार द्वारा जारी सुचना अनुसार।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

दूधनाथ सिंह की कहानियों में मानवीय संवेदना और जीवन मूल्य

प्रीति गुप्ता
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा म. प्र.

मानवीय संवेदना :– मानवतावाद का स्वरूप वैदिक काल से लेकर बीसवी शताब्दी के प्रथम चरण तक भिन्न–भिन्न रूपों में दृष्टिगोचर होता है। वैदिक काल उच्च आदर्शो का प्रतीक होने के कारण उसमें समष्टि के कल्याण की कामना की गयी है तथा सार्वजनिक मानवतावाद की प्रतिष्ठा हुई है। तद्युगीन साहित्य में व्यक्त की गयी मानव–कल्याण की भाावना विश्व साहित्य में अप्रतिम है।

वैदिक साहित्य के पश्चात् पुराणो में धर्म को मानवताावाद की उच्च भावभूति के रूप में वर्णित किया गया है। पौराणिकों ने धर्म को मानवता का अजस्त्र स्रोत माना तथा व्यवहारिक क्षेत्र में उसकी उपादेयता सिद्व की। उनके अनुसार धर्म सामाजिक विसंगतियों को दूर कर जगत मं सुख शांति का प्रसार करता है। इसीलिए उन्होने धर्म का पालन करना, प्रत्येक मानव का कर्तव्य बताया है। इसी प्रकार रामायण, श्रीमद्भागवत गीता, महाभारत, मनुस्मृति आदि धर्मग्रंथों में धर्म का प्रतिपादन करते हुए मानव की सेवा–सहायता तथा उसके प्रति सहानुभूति को सर्वाधिक महत्वपूर्ण और ईश्वरोपासना का प्रतिरूप माना गया है। संस्कृत साहित्य की तरह हिन्दी साहित्य में भी मानवतावाद का विभिन्न स्तरो पर उद्घाटन हुआ है। वीरगाथा काल में तलवारो की खनक और नूपुरों की झनक एक साथ सुनायी पडती है। अतः उस काल में मानवता की पृष्ठभूमि संकुचित होकर रह गयी है। किंतु भक्तिकाल में उसके विकास का संभावना पुनः बढ़ गयी है। इस काल की सबसे बडी बिडम्बना यह थी कि मानव–मानव में भेदभाव की भावना प्रबल हो गयी थी। हिन्दू जाति के लोग अपने में ऊँच–नीच का भेदभाव मानते थे। ब्राम्हण वर्ग शूद के हाथ का न तो पानी पीता था और न ही समाज में उसे सम्मान देता था। सन्तकालीन कवियों ने इसका तीव्र विरोध किया तथा सभी जाति–पाति , धर्म के लोगों को समान रूप से महत्व दिया।

मनुष्य का सबसे बड़ा सौभाग्य और कौशल यही है कि मानवी गरिमा के साथ जुडी हुई विशिष्टताओं को समझे तथा उन्हें अपने जीवन में उतारने का प्रयास करे। वह अपने चिंतन और चरित्र को प्राथमिकता दे। निःसंदेह इससे मानवता का उत्कर्ष होगा। मानव में यह भावना तभी पनपती है। जब उसके हृदय में उदारता का समावेश हेाता है। तथा विश्वबंधुता की भावना का प्रसार बढता है। इसके लिए पग–पग पर कल्याण और जनहित का ध्यान रखना पडता है। व्यक्ति को स्वार्थो में कटोती करनी पडती है। तथा दुष्टप्रवित्तियों पर अंकुश लगाना पडता है। यहां तक पहुचकर संपूर्ण प्राणियों के साथ उसका रागात्मक संबंध स्थापित हा जाता है। विश्व के सुख–दुःख से उसका हृदय आंदोलित होने लगता है। इसी की प्राप्ति मानवता का चरमोत्कर्ष लक्ष्य है। प्राचीन काल में हमारे ऋषियों–मुनियो ने इस सार्वजनिक, चिरंतन तथा सार्वभौमिक मानवता की अभिव्यक्ति करते हुए सबके सुखी, नीरोग तथा कल्याणदर्शी हाने की कामना की है–

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद दुःखमाप्नुयात्।

आज अंतर्राष्ट्रीय मान्यताओं और समस्याओं का युग है इसलिये मानवता को भी अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक पहुचाने और प्रसार करने की महती आवश्यकता है। इस समय मानव ने शांति, आत्मसंतोष और सहृदयता की भावना लुप्त होती जा रही है। विज्ञान का चमत्कार सभी को चमत्कृत कर रहा है। मानव चंद्रलोक की यात्रा कर मंगल ग्रह की उडान भरने की तैयारी में है। इसी के साथ उसने विश्व संहारक विविध प्रकार के प्रक्षेपास्त्र बना लिये है। इतना होने पर भी उसे वृत्ति नही है। उसकी अति बुद्विवादी भौतिकता विश्व को निगलने का उपकम कर रही है। ऐसी स्थिति में मानवतावादी का व्यापक दृष्टिकोण ही उसके नापाक इरादे तथा साहसभरी चुनौती को नापाक कर सकता है।

दूधनाथ सिंह कृत रक्तपात में कटाव, अलगाव और निर्वासन चरम सीमा पर पहुंच गया

है। उनकी कहानियां अनायास ही इस विचार को जन्म देती है कि जहां एक समय ऐसा था, जब आदर्श चरित्र निर्मित होत थे, दूसरा समय ऐसा आया जब प्रामाणिक चरित्र निर्मित किये जाने लगे वही एक समय यह भी है जब अभिशप्त चरित्रों की सृष्टि होने लगी है।

दूधनाथ सिंह ने आधुनिक बोध कहानियां लिखी है। इनकी कहानियों में सामान्यतः स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तित्व के चित्र आंके गये है। यहा तक कि दूधनाथ सिंह की कहानियों मेंसेक्स के संबंधो मे भी इन्हें कोई झिझक और रोमानी संकोच नही है। सामाजिक, राजनीतिक परिवेश में जों अराजकता की स्थिति और मूलयहीनता आने लगी थी, उसकी प्रतिकिया स्वांतत्र्योत्तर युगीन सातवे दशक में शुरू हो गई थी । कथाकार दूधनाथ ने अस्वीकार नकार अस्वीकृति, अब अकेलेपन आदि को खारिज करते हुए कहानी कला को स्वीकारोन्मुखी बनाया। दूधनाथ सिंह की कहानियों में युवा विद्रोह की जो लहर आई उसके फलस्वरूप बेलाग और दो दूक बात करने की प्रवृत्ति को बल मिला। पुरानी व्यवस्था के विरोध में एक प्रकार का बौद्धिक राजनैतिक आंदोलन ही चल पडा। इस युग के कथाकारो में दूधनाथ सिंह एक ऐसे कथाकार थे जिन्होने कहानी की आंतिरिक संरचना और बनावट में तेजी से परिवर्तन उपस्थित किया।

दूधनाथ की कहानियों की चेतना मानव संघंर्षो की नई तड़प और सूझ पैदा की है। डॉ. हरदयाल के शब्दों में – नई पीढी के कथाकारो ने परंपरा को नये बोध से समझा, ऊपर से छीला और साफ किया तथा उसे अपनी रचनात्मक जरूरतो के अनुकूल ढाल कर ग्रहण किया। उसमें नये मानव–संघंर्षो की नयी तडप और सूझ पैदा की। परिणामतः इन कहानीकारो में कई तरह की स्थितियों के प्रति आक्रोश है,खीझ है, चीख है, प्रश्नाकुलता है, आत्ममंथन है, आत्मालोचन है, आत्मसाक्षात्कार का निर्भय भाव है। और जीवन की विद्रूपताओ, विसंगतियों, संत्रासो, यंत्रणाओ में भी डट कर जी पाने की साहसिकता का भाव है। पिछली पीढी की तरह यह तकलीफो से भोगते नही है, उन्हे काबू में ला कर भोगते है। अब इस कहानी का स्वर अस्तित्ववादी न रह कर मानवतावादी हो गया है।

मानवीय संवेदना के चित्र और चरित्र को उद्घाटित करते हुए कथाकार दूधनाथ सिंह का कथन है– साहस ही वह पस्त पड गया और जाकर तख्त पर ढह गया। उसके ऊपर सवार हो गया। उसके हटते ही वह उठा। एक बार उसने बडे जोर की जम्भाई ली और फिर उछलकर उसके ऊपर सवार हो गया। उसे लगा वह धीरे–धीरे डूब–सा रहा है। बेहोश हो रहा है.... तिरोहित हो रहा है।उसने देखा कि वह दीवारो पर अंधेरे में अपनी छाप लगा रहा है। खिडकी की सलाखें पकड झूम रहा है। गलियों, मकानों, चौराहो, सडको के मोडो और भरे बाजारो में है।.. .....। तभी उसके जबडे को कसने वाला तार शायद टूट गया। उसे लगा कि उसने उसका सिर बीच से दो टुकडे कर दिया है। फिर उसे लगा कि वह अपना थूथन, फिर पंजे और फिर धड़ उसके फटे हुए सिर के बीच घुसेड रहा है.....। एक भयानक चिघाड उसे बहुत दूर से आती सुनाई दी.....।

जीवन मूल्य :– डॉ. लाल चन्द्र गुप्त 'मंगल' ने हिन्दी कहानी का इतिहास में जहां महत्वपूर्ण कहानी आंदोलनों की चर्चा की है, वहां कुछ गौण आंदोलनों का संकेत भी दिया है। इनमें सहज साहित्यिक जनवादी, लघु कहानी को लिया ह।

आजादी के बाद देशवासियों की अभीष्ट लक्ष्य प्राप्त नहीं हुआ। लोगों में असंतोष की भावना उमड़ पड़ी और यह विस्फोटक बनकर प्रत्यक्ष हुई। इसी के परिणाम स्वरूप ''सन् 1982 ई. में दिल्ली में जनवादी लेखक संघ की स्थापना हुई और 13–14 फरवरी को सम्पन्न इसके राष्ट्रीय अधिवेशन के पश्चात् कलम कथन, उत्तरगाथा, उत्तरार्ध और कंक आदि पत्रिकाओं में जनवादी कहानी पर चर्चा होने लगीतथा अब तक समानान्तर कहानी और सकिय कहानी के झण्डे तले बैठकर लिखने वाले अधिकतर कहानीकार इस नये आन्दोलन से जुड़ गये।

दूधनाथ सिह इसी कोटि के कथाकार है, उन्होंने अपनी कहानियों में जीवन मूल्य को स्थापित किया है। उन्हें कथा और शिल्प की नई चिंताएं आज भी सता रही है। उनका मानना है कि कहानियों में विचार विम्ब की अर्थछाया नई परिकल्पनाएं समस्याएं आज के प्रत्येक कथाकार के अन्तर्मानसिकता को घेरकर घुमड़ रही हैजहां एक और प्राचीन जीवन मूल्यों को तरास कर नए

जीवन मूल्यों को पुर्नस्थापित करने की होड़ लगी हुई है। रूढ़िवादियों की परंपरा से पुरानी परंपरा के कशमकश में प्राणी घुटता जा रहा है। समाज में रूढ़िवादी बेड़ियां हर व्यक्ति को जकड़े हुई है। इसी अंतर्द्वन्द्व के बीच आज के कथाकारों ने नए जीवन मूल्यों को तलाशने का स्तव्य प्रयास किया। मानव मन को घुटन, अवसाद, उहापोह से उबारने की परिधि में प्रोफेसर दूधनाथ सिंह ने अपनी कहानियों में जन साधारण की भावदशाओं, आकांक्षाओं, प्रेरणाओं और समस्याओं का यथा अवसन चित्रण एवं निदान किया है। कथाकार दूधनाथ सिंह की कहानियों में रचनात्मक जिजिविषा का सृजनात्मक उत्साह व्यापक रूप से प्रकट हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 737, डॉ. नगेन्द्र
2. कथा समग टोपी वाले, पृष्ठ 445, दूधनाथ सिंह
3. सपाट चेहरे वाला आदमी–रीछ, पृष्ठ 29, दूधनाथ सिंह
4. सुखान्त–उत्सव, पृष्ठ 66, दूधनाथ सिंह
5. धर्मक्षेत्रे कुरूक्षेत्रे–आखिरी छलांग, पृष्ठ 48–49, दूधनाथ सिंह
6. माई का शोक गीत–हुंडार, पृष्ठ 29, दूधनाथ सिंह
7. माई का शोक गीत–जार्ज मेकवान, पृष्ठ 42, दूधनाथ सिंह

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Social issues in the play's of Girish Karnad

Dr. Ajmer Singh Baghel
Govt. Excellence Boys H.S. School Kukshi

Abstract :- Girish Karnad is one of the most influential playwrights of time and his plays have become a byword for imagination, innovation and craftsmanship. He has been honoured with the Padma Bhushan and was conferred the prestigious Jnanapith Award. He also received sahitya Akademi award. Girish Karnad wanted to be a Poet, but he was destined to be a playwright.Basically Karnad belong to the Rannade theatre. Since 1980s,there has been considerable work done in the field of Drama. And especially with the emergence of dramatist like Girish Karnad, Vijay Tendulkar, Mohan Rakesh, Badal Sarkar and a few more on the scene, dramas written in India have started attracting international importance. The present Paper researchers on social realism and social issues in the plays of Girish Karnad.

Keywords :- Indian Sensibility, philosophy, sociology, psychology, history, myths and religious beliefs.

Girish karnad is a playwright who has been deeply involved in social issues of his period. No writer can remain insulated from the influences of his times and Girish Karnad was also influenced by this. One of the perennial social problems that has troubled people all over the world has been the age –old Caste problem. the caste system in india can be described as an elaborately stratified social hierarchy distinguishing Indias social structure from any other nation. Its history is multifaceted and complex. caste is a term, which is used to specify a group of people having a specific social rank and dates back to 1200 BCE. The Indian term for caste is jati, and generally designates a group that can vary in size from a handful to many thousands.

There are thousands of Jatis each with its own rules and customs. The various Jatis are traditionally arranges in hierarchical order and fit into one of the four basic varnas the(Sanskrit word for "colours")

According to Rig Veda, the primal man-purush destroyed himself to create a human society. The different varnas were created from, different part of his body. The Brahmans were created from his head. The kshatrias from his hands, the vaishias from his things and the sudras from his feet.

The Biological theory claims that all existing things, animates and inanimate have them in herent three qualities in different proportions. Sattva qualities include wisdom, intelligence, honesty, goodness and other positive qualities.

The social historical theory explains the creation of the varnas, Jatis and of the untouchable.

According to this theory, the caste system began with the arrival of the Aryans in india. The Aryan arrived in India around 1500 BC. The fair skinned Aryans arrived in India from south Europe and north Asia.

Yayati is the first play of Girish karnad in which the playwright consciously used a myth for the structure of his play. Yayati karnad's first play, was written in 1961 and won the mysore state Award in 1962.

Tughlaq, the next play, was wrriten by Girish karnad in 1964 in Karnnada. It was first produced in Kannad in 1965 and it was an instant success on the stage. It was first produced in Kannad in 1965 and in 1970 there was an English production in Bombay which was a major success. The next play of Girish Karnad Hayavanada 1972 was also highly successful on the stage and in Print. The plot of this play comes from Kathasaritsagara, an ancient compilation of stories in Sanskrit.

Girish Karnad's next play, Bali: The sacrifice 1980 was inspired by somadeva suri's Yashastilaka written in 950 AD, and centre on the Jain abhorrence of violence in any from – particularly of value-less blood sacrifices. Girish Karnad's next play, Naga-Mandala 1988 is based on two oral tales from Karnataka.

Tale – Danda 1990 is next play by Girish Karnad. It was originally written in the kannada and than translated in English by the playwright himself. The playwright draws paralled between the socio-religious political and economic conditions of existing times and southern India in 12th century A.D. during the Bhakti movement.

References :-

1. Karnad, Girish:, "Yayati, " New Delhi, Oxford university press,1961.
2. Karnad, Girish:, "Tale - Danda" Delhi: Oxford university press,1995.
3. Karnad, Girish:, "Dream of Tippu sultan " Delhi: Oxford university press, 2004.
4. Karnad, Girish:, "Bali The sacrifice " Delhi: Oxford university press, 2004.
5. Karnad, Girish:, "Hayavadana" New Delhi: Oxford university press, 2012

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Ethical Concerns in John le Carré's *Tinker Tailor Soldier Spy*

Ms. Ashima Pandey
Research Scholar, Rani Durgavati Vishwavidyalaya Jabalpur
Dr. Pratibha Kumar
Associate Professor, Govt. Mahakoshal arts & Commerce Colllege Jabalpur

Abstract : John le Carré, is one of the most preeminent contemporary British novelists, originally known for disillusioned suspenseful spy novels based on a wide knowledge of international espionage. The spy genre was formerly dominated by Ian Fleming's escapist James Bond books has been used by John le Carré to write his novels. Le Carré's exploration of central, political, ethical dilemmas of the present times elevate the significance of his work well which is beyond the limitations of the conventional spy genre. He made the popular form carry a serious weight. He portrays examples of how to deal with conflicting personal and institutional loyalties. He gives insight into the infinite complexity of human nature and the extreme difficulty of mutual communication and understanding.

He deals with very serious ideas-including the consequences of the dominant international political myth of the era of the Cold War. In *Tinker Tailor Soldier Spy* , a Soviet double agent has revealed some of the best agents in the English spy network. Smiley is forced to accomplish his goals not only without the help of his superiors but also often despite their interference. Control has died and is replaced by the weird Percy Alleline. Control had suspected that the Soviets had placed a double agent, or mole, in the higher echelons of the Circus. He had therefore sent Jim Prideaux, one of the Circus's best agents, to Czechoslovakia to uncover evidence about the mole's identity, but a trap is laid, resulting in the wounding and torture of Prideaux.

Keywords :- Spy/espionage fiction Contemporary British novelists, Ethical dilemmas.

John le Carré considered the premier espionage novelist writing in English is acknowledged to be one of the best writers today in the league of Graham Greene, Ludlum, Ian Fleming, Tom Clancy, Alistair Maclean etc. Adorned with many prestigious awards like the British Crime Novel and Somerset Maugham award, and honorary degrees from various prestigious Universities le Carré published his first novel *Call for the Dead* in 1961, he gained popularity after the publication of his third book *The Spy who Came in from the Cold* in 1963. His novels have been adapted as films and became popular. Le Carré is that rare popular author who commands significant regard among critics, many of whom view him as an earnest successor to Joseph Conrad in making the novel of intrigue the vehicle for narrative invention and refined treatment of complex themes.

Espionage novels set around the World War II period suddenly became popular and authors, such as John Lawton and Philip Kerr, established several good series based in the 1940s and '50s. Espionage / spy fiction literature is considered as a serious writing and a subset of *intelligence gathering.* It is based on great human values cherished by humanity. Its foundation can be traced to the great writers such as Christopher Marlowe, Ben Johnson to Daniel Defoe to the modern day writers, such as Graham Greene, Ian Fleming John Dickson Carr, Anthony Burgess, Joseph Conrad, Maxim Gorky Somerset Maugham, Alec Waugh, Eric Ambler, John Steinbeck and Ted Allbeury.

John le Carré is writer of suspenseful spy novels based on international espionage. His novels full of literary symbols. In his works, he has explored the moral problems of patriotism, and espionage. His famous fictional character is George Smiley who is an intelligence officer working for MI6. His novels are widely read and analyzed at

various levels — authenticity, political slant, and even literary symbolism.

Tinker Tailor Soldier Spy (1974)

John le Carré's novel *Tinker Tailor Soldier Spy* is the first novel of *The Karla Trilogy* the other two being *The Honourable Schoolboy* (1977) and *Smiley's People* (1979). The novel presents the story of a mole hunt inside the British Secret Service, as former spy George Smiley is brought out of enforced retirement to hunt a traitor, a highly placed double agent within the Circus who has been spying for the Soviets for decades.

The novel was inspired by real events involving Harold "Kim" Philby, a talented and charming intelligence officer who had risen to the highest echelons of the British espionage establishment by the middle of the twentieth century. In 1951, however, two of Philby's colleagues were revealed to be Soviet agents of long standing, and in 1963 Philby himself was unmasked as the "Third Man" who had helped the other two escapes. Kim Philby was the central figure, surrounded by Donald Maclean, Guy Burgess, and "the fourth man" identified later as art historian Anthony Blunt. Like them, he defected to the Soviet Union, dealing a severe blow to the prestige of the British Secret Intelligence Service (MI6). John le Carré wrote the introduction to a book about the affair, *The Philby Conspiracy* (1969), by Bruce Page, David Leitch, and Phillip Knightley, and he went on to publish his own novelistic treatment in 1974.

The novel is set in London in the early seventies, during the Cold War. The U.S.A. stands in one corner, the grim legions of the Soviet Union in the other. Britain, America's most special ally (or so the Brits still care to think), is desperate to show it still has a role to play. Le Carré dubs MI6 'The Circus', and gives its HQ a specific location, in the heart of London's West End, where Shaftesbury Avenue meets Charing Cross Road, above a shabby shop at the northeast corner of Cambridge Circus. The author makes up an atmosphere for what he hasn't got in suspense, and creates a whole rackety secret world, a place where English public school boys gang up with con men and racketeers around the world to keep Britain safe.

Tinker, Tailor has an intricate structure, befitting the tricky complexities of its subject. The flashbacks that unfurl within flashbacks, the stories that nestle within stories, are tricky to be followed even on the page. The novel starts with Jim Prideaux in the present, before delving back in time. The plot is tangled and suspenseful, and the inductive skill of the diffident, intellectual hero is enough to bring joy to the hearts of the purists. The scale and complexity of this novel are much greater than in any of le Carré's previous books. The plot consists mostly of blocks of flashbacks. The action starts long after Control, the chief of Circus has died and his old staffs', including George Smiley, have retired.

Smiley is summoned by the Cabinet Office's Oliver Lacon, the bureaucrat charged with oversight of British Intelligence, out of his retirement and charged with the task of ferreting out a mole in the organization. Everyone who works there now, including the four-man cabal running things, is a suspect. Smiley himself is in the clear only by virtue of his having been out of the Circus a year prior following the ouster of the department's long time Chief Control. Control (since deceased) went somewhat crazy in his final year, paranoid and obsessed with discovering the leak in his organization. With the aid of trustworthy confidante Peter *Guillam,* Smiley picks up where his late mentor left off and quickly determines that the mole has to be one of four men, all former colleagues of his: Bill Haydon, Roy Blunt, Toby Esterhase or Percy Alleline—the latter now occupying Control's old position. It is beyond a doubt that a mole, implanted decades ago by Moscow Centre, has burrowed his way into the highest echelons of British Intelligence. His treachery has already blown some of its most vital operations and its best networks. It is clear that the double agent is one of its own kinds. George Smiley is assigned to identify the traitor.

Control, then chief of the Circus, had assigned the code names "Tinker", "Tailor", "Soldier", "Poor Man", and "Beggar Man" to five senior intelligence officers at the Circus. He suspected that one of the five is a Soviet mole and assigned these code names with the intention that, should his agent Jim Prideaux uncover information about the identity of the mole, Prideaux could relay it back to the Circus using an easy-to-recall codename. The names are derived from the English children's rhyme "Tinker, Tailor": The code name "Sailor" is not used as it sounds too much like "Tailor" and Control drops "Rich Man", resulting in Toby Esterhase being code-named "Poor Man". George Smiley is "Beggar Man".

Smiley acts characteristically and sets out to capture the mole despite his doubts. He plans to trade for British agents behind the Iron Curtain who were betrayed by the mole. Smiley grieves over all the betrayals and writes letters to Ann, his wife, that he never mails. In his final interrogation of the mole, Smiley learns that Karla had put the mole (a bisexual, a characteristic that further symbolizes his duality and mythical godlike qualities) up to having an affair with Ann "the last illusion of the illusionless man" (TTSS 364), in order to throw Smiley off the mole's track. This knowledge intensifies Smiley's obsession with Karla, his soviet counterpart.

The theme of loyalty and betrayal is comprehensively explored in this novel. Every character in the novel is caught in the webs of mutual loyalties and betrayal ranging from infidelity to treason. The friendship that develops between Bill Roach and Jim Prideaux at Thursgood's a prep school is a redeeming subplot that balances a story replete with treachery and betrayal. Holy Beth King shows how le Carré uses children like Roach to "reveal to us the rudimentary emotions, motivations and impulses which the adults have learned to suppress, hide and deny. . . . Simultaneously, he reveals the children buried in these so deadly adults." (85) King claims that Roach "establishes crucial hematic parallels that reveal the novel's basic moral context to us" (66).

Le Carré implies that Haydon and Prideaux were lovers as well as colleagues and close friends to dramatize further the depth of Haydon's betrayal of Prideaux. Prideaux follows Smiley as he tracks down the mole. After Haydon has been finally identified and incarcerated, Prideaux break his neck in the manner he had previously dispatched an injured bird at Thursgood's school. This act could be interpreted either as an act of revenge or a as a mercy killing of someone whose life is intrigue was over and therefore had nothing more for which to live. It is also entirely consistent with le Carré that it was both, because he suggests that individuals act for multiplicity of reasons, particularly when they appear to be acting without reason. Smiley suspects Prideaux of the murder but ignores his obligation as a citizen to report his suspicions to the proper authorities. Instead out of personal loyalty to Prideaux, Smiley says nothing, and Jim returns to his new life as a teacher.

Peter is torn between his conflicting loyalties to Smiley and to Haydon between his loyalty to the Circus and his sense of obligations to get to the truth. He reluctantly supplies Smiley with the secret documents from the Circus that enable Smiley to identify Haydon as mole. But Peter is not completely reconciled with his decision and its outcome."Somehow, for the first time in his life, he has sinned against his own notions of nobility. He had a sense of dirtiness, even of self –disguise" (TTSS 95). As so often is the case with le Carré, the decision that resolves the dilemma fails to bring relief or satisfaction. There always remains a gnawing doubt sense of guilt, which in the extreme cases drives the character to self-destruction. Myron comments:

Haydon betrays not only his country but also his class, agency, colleagues, intimate friends and lovers. By insinuating Haydon's bisexuality, le Carré symbolically conveys another dimension of his ability to be all things to all people and his mythical, godlike aura for those who fell under his spell. (46)

Le Carré differs from most writers of the spy genre, who focus on direct action in an attempt to build suspense. He appears to digress with subplots that introduce unrelated themes or characters. However, the subplots contribute to the portrayal of the complexity of the characters and the moral dilemmas they confront. For example, Smiley is convinced by his solicitor not to divorce his wife (who had run off with yet another lover): "George, how can you be so vulgar? Nobody divorces Ann. Send her flowers and come to lunch" (TTSS 19). The use of the term vulgar signifies the aristocratic disdain for divorce (as opposed to infidelity).

George's complex relationship with Ann symbolizes steadfast loyalty despite betrayal by the object of one's loyalty--one's spouse or one's country. Beene claims, "Smiley with Ann lives, although in emotional collapse, but without her he wanders a no-man's land" (25). Holly Beth King suggests while his love for Ann is his "greatest vulnerability" it is also "what preserves him as a hero in a world of ultimate betrayal" (68). Although Smiley rebels against the hypocrisy of her class, his loyalty to her symbolizes his attachment to traditional British values and a tradition he still cherishes. Panek suggests that Ann also represents Smiley's "pathetic quest for love," which he defines as "Sisyphean" (37). He also contends that she (and other women for other characters) represents Smiley's striving for the spontaneous, human side of life.

Smiley is depressed after an unpleasant encounter with an intolerable aristocratic Foreign Office bureaucrat (whom le Carré portrays with the satiric bite of Jonathan Swift). He views his loyalty as a form of weakness. "Weakness . . . and an inability to live a self-sufficient life independent of institutions . . . and emotional attachments that have long outlived their purpose Viz., my wife; viz., the Circus [British intelligence]; viz., living in London" (TTSS 25). Le Carré implies that such "weaknesses" constitute the core of Smiley's moral strength and decency. Yet, for the sake of his loyalty, he has been forced to sacrifice other deeply held moral principles.

Smiley's disillusionment leads to self awareness. Through him le Carré hopes the reader will also be led to greater self awareness of dominant political myths. Philip O'Neil interprets Smiley's disillusionment as statement of "post-modern cynicism."(187). Smiley ponders:

"Illusion? Was that Karla's really name for love? And Bill's?" They are the cynics, not Smiley. Smiley is on his way to Ann. He ponders the notion of illusion and illusionless and at the same time he is thinking about Ann. "he hope very much that her wretched lover had found her war to live. He wished he has bought her [Ann] her fur boots from the cupboard under the stairs"(TTSS 368).

Smiley is torn between anger over the tragic consequences of the multiple betrayals of the mole and his humanitarian feelings. "I refuse. Nothing is worth the destruction of another human being. Somewhere the path of pain and betrayal must end" (TTSS 345). Ann describes Smiley as "deceived in love and impotent in hate" (TTSS 346). Yet his loyalty and inability to sustain hatred toward those who have betrayed him and his resolve to act despite serious reservations about the consequences of his actions are precisely what make Smiley a tragic, flawed, but heroic figure.

Le Carré manages to cover almost every aspect of the espionage trade, from uncovering moles to penetration to turning defectors to intelligence gathering and distribution to running networks to blowing networks to crossing borders to forged passports to surveillance. The novel presents pieces of a jigsaw puzzle—a puzzle made doubly difficult by the fact that they cannot guess what the final picture is supposed to look like. A master solver of puzzles himself, George Smiley acts as a surrogate for readers, who watch him carefully assemble the pieces one by one. When the revelation finally comes, Smiley realizes that, like everyone else, he had known all along that the traitor was Haydon.

Tinker, Tailor provides a far more ambivalent picture of betrayal. Le Carré the polemicist has created in Haydon a perfect

embodiment of what he despised about British Intelligence and the class system that feeds it. Le Carré's originality and distinction as a popular novelist lie in his use of the conventions of the spy novel for purposes of social criticism. Locke in his review of *Tinker Tailor* published in *New York Times* in 1974 records:

It reconfirms the impression that le Carré belongs to the select company of such spy and detective story writers as Arthur Conan Doyle and Graham Greene in England and Dashiell Hammett, James M. Cain, Raymond Chandler and Ross Macdonald in America. (Locke)

Le Carré seems to have an insider knowledge having worked with British Intelligence. The world of spies, who are nothing but another variety of civil servants/bureaucrats, these people too are victims of same problems as anyone else, lowly paid salaries, office-politics, messed-up personal lives, whimsical bosses, never ending drudgery of work, limited resources, and bureaucratic inertia and hurdles. There is no fast paced action, no bag-bag, no glamour, no glitz, rather le Carré goes out of the way to deglamorise the whole thing, and shows us really how the spies work. Endless hours of poring over files, painstaking analysis, inquiries, interrogations, putting together millions of bits of information and trying to make sense, finds a pattern. Le Carré describes all this in authentic detail.

Le Carré's genius is his ability to transpose his attempts to deal with his own fragmented personality into a more universal exploration of human nature. His aim is to write spy fiction and to introduce novelties such as liberalism which signifies devotion to human interest rather than to super human powers of spy. It is the human interest that envelops almost all his novels and, clearly, it is a striking departure from the accepted norms of spy literature.

Le Carré sees his role as holding up a mirror to the secret world showing it the monster it could become. Particularly given the centralized system in Great Britain and the unusually strict limitations, for a democracy, of the Official Secrets Act, he has played an extremely important role. His message artistically wrapped in wonderful entertainment, offers lessons in citizenship for everyone. He portrays examples of how to deal with conflicting personal and institutional loyalties. He gives insight into the infinite complexity of human nature and the extreme difficulty of mutual communication and understanding.

A critical study of the novel reveals the fact that Le Carre has taken the spy genre, which was formerly dominated by Ian Fleming's escapist James Bond books and elevated it into literature.

Works Cited

Aronoff, Myron J. *The Spy Novels of John Le Carré, New* York: St. Martin's Press, 1999. Print.

King, Holy Beth. "Impudent Crimes in *The Honourable Schoolboy*" ed. Harold Bloom, *John le Carré*, New York: Chelsea House, 1987, pp. 7-12. Print.

Le Carré, John. *Tinker, Tailor, Soldier, Spy*, London: Hodder & Stoughton, 1974. Print. All subsequent quotations are from this edition.

O'Neil, Philip. "Le Carré: Faith and Dreams." In *The Quest for le Carré*, edited by Alan Bold, 169-87. New York: St Martin's. 1988. Print.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

मध्यप्रदेश के विदिशा जिले का विकास

Dr.SMT REETA JAIN(SEN. TEACHER)
GOVT. H.S.S. MADHAVGANJ 2 VIDISHA

मध्यप्रदेश का विदिशा जिला, जिसका क्षेत्रफल 7371 वर्ग किलो मीटर है, जो अपने आंचल में 10 तहसीलों को समेटे हुये है, राष्ट्रीय राजमार्ग क्रमांक 86, जिसके मध्य से गुजरता है, अपने विकास हेतु प्रतिक्षारत है। यद्यपि जिले में आर्थिक विकास के प्रयास मध्यप्रदेश के पुनर्गठन के पश्चात से सतत् किये जाते रहे हैं, किन्तु अभीष्ट परिणाम अभी भी अदृश्य हैं। विकास का दायित्व सरकार का ही है। यह एक पक्षीय दृष्टिकोण है। वस्तुतः विकास नागरिकों की इच्छाओं का मूर्तरूप है। अतः विकास का उद्देश्य नागरिक जीवन की सम्पन्नता तथा उनके रहन–सहन के स्तर में वृद्धि करना है। विकास के लिए प्राकृतिक साधनों की उपलब्धि ही पर्याप्त नहीं है उसका समुचित विदोहन अत्यन्त आवश्यक है। इस संबंध में अद्यतन प्रयासों की रिक्ति की पूर्ति सार्वजनिक व्ययों के माध्यम से की जा रही है। राजकीय आय के माध्यम से आर्थिक विकास, आर्थिक नियोजन तथा सामाजिक सुरक्षा के प्रकल्पों को साकार रूप दिया गया। ये प्रयास आगामी वर्षों में जिले विदिशा के बहुमुखी विकासात्मक कार्यों को निश्चित रूपेण गति प्रदान करेंगे।

राजस्व में हम राज्य के साधनों की पूर्ति और उनके उपयोग का अध्ययन करते हैं। सरकार के बढ़ते हुए उत्तरदायित्व के फलस्वरूप राजस्व का क्षेत्र विस्तृत हुआ है। सार्वजनिक व्यय एवं करों के माध्यम से सरकार अर्थव्यवस्था को नियंत्रित करती है। मध्यप्रदेश सरकार के वर्ष 2016–17 के बजट में 118 करोड़ रू. का घाटा अनुमानित हैं । कमोवेश यही स्थिति विदिशा जिले की भी है। अतः राजस्व की क्रियाओं के माध्यम से वित्तीय अनुशासन बनाये रखने का प्रयास किया जाता है।

सरकारी कोष का संग्रह और उसका व्यय आसान कार्य नहीं है और इन्हें सुचारू रूप से करने के लिए विस्तृत जानकारी रखनी पड़ती है। हमें यह जानना होगा कि अर्थव्यवस्था में उत्पादन और आय का प्रवाह कैसे होता है। यह भी मालूम करना होगा कि इस प्रवाह पर सार्वजनिक व्यय का क्या और कितना प्रभाव पड़ता है। उत्पत्ति, आय, रहन–सहन के स्तर, धन और आय के वितरण पर राजस्व का क्या प्रभाव पड़ता है।

प्रजातंत्र में राजस्व की सफलता नागरिकों के सहयोग और राजनीतिज्ञों की दूरदर्शिता पर निर्भर करती है। रोमन साम्राज्य के पतन का एक प्रमुख कारण कर प्रणाली की असफलता थी। अनुचित करों के बोझ से त्रस्त फ्रांस की जनता ने सन् 1789 में क्रान्ति की थी। प्रथम महायुद्ध में जर्मनी की हार का एक कारण वहां की पुरानी कर प्रणाली थी। इतिहास राजस्व के महत्व का साक्षी है। इस तथ्य की अवहेलना का परिणाम सुखद नहीं होगा।

मध्यप्रदेश के अन्य जिलों की तुलना में चूंकि विदिशा जिला प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से सम्पन्न है, किन्तु इस जिले का विकास अपेक्षाकृत कम हुआ है। जिले के समुचित आर्थिक विकास के लिए सार्वजनिक आय एवं व्यय का अध्ययन किया जाना समीचीन प्रतीत होता है।

विदिशा विगत वर्षों में पिछड़े जिलों से निकलकर विकासशील जिले में शामिल हुआ है और विकसित जिलों की श्रेणी में शामिल होने के लिए प्रयासरत है, जिसकी अभिपूर्ति हेतु सार्वजनिक आय एवं व्यय के विविध आयामों का अध्ययन आवश्यक है, क्योंकि विदिशा जिले की विगत 5 वर्षों की प्राप्तियां व्ययों की तुलना में 170 करोड़ रू. कम है। अतः राजकोषीय उपायों के माध्यम से सार्वजनिक वित्त की स्थिति को बेहतर बनाया जा सकता है।

राजकीय वित्त से जहां एक ओर आर्थिक विकास, सामाजिक न्याय, आर्थिक स्थायित्व, पूंजी निर्माण की उच्च दर, संतुलित आर्थिक विकास एवं रोजगार के अवसरों में वृद्धि सुनिश्चित होती है तो दूसरी ओर आर्थिक सुधारों के वर्तमान दौर में आय से अधिक व्यय के कारण घाटे की वित्त की स्थिति का सामना करना पड़ता है। इस स्थिति को कैसे बेहतर बनाया जा सकता है।

ऐसी स्थिति से निपटने के लिए रणनीतिक कदम उठाना आवश्यक है। जिले में सार्वजनिक आय में वृद्धि एवं सार्वजनिक व्यय के विवेकीकरण हेतु सुझाव निम्नलिखित हैं –

1. लोक सेवाओं को अधिक प्रभावी बनाना।
2. सरकारी एजेंसियों को रचनात्मक तरीके से कार्य करना चाहिए।
3. लोक सेवाओं को इस ढंग से कार्य करना चाहिए जिससे कि सेवाओं की वास्तविक लागत वसूल हो सके।

4. सेवा लागत में भविष्य की क्षति तथा मरम्मत की राशि भी जुड़ी होना चाहिए।

5. प्रशासनिक मशीनरी को प्रभावी स्तरीय निरीक्षण करना चाहिए।

6. सेवा सुरक्षा की लागत भी सेवा लागत में जुड़ी होना चाहिए।

7. कर संग्रहण करने में छापामार कार्यवाही या कठोर कार्यवाही करने वाले अधिकारियों को अतिरिक्त सुरक्षा प्रदान करना।

8. कर ढांचे को अधिक प्रगतिशील बनाना।

9. कर कानूनों को अधिक कठोर बनाना जिससे कर की चोरी न हो।

10. लोगों की क्रय शक्ति बढ़ाने के प्रयास करना।

11. कर भुगतान प्रणाली का अधिक सरलीकरण करना।

12. अनौपचारिक क्षेत्र को कर की परिधि में लाना।

13. कृषकों को अधिक प्रभावी ढंग से उन्नत बीज, खाद तथा तकनीकी जानकारी प्रदान की जाये जिससे उनकी आय में वृद्धि होगी। प्रभावपूर्ण मांग में वृद्धि होगी तथा अप्रत्यक्ष करों की आय में वृद्धि हो सकेगी।

14. सरकार को पिछड़े हुये क्षेत्रों में निवेश में वृद्धि करना चाहिए। जिसका प्रभाव त्वरित विकास के रूप में स्पष्ट होगा, परिणामस्वरूप लोगों की आय एवं करदान क्षमता में वृद्धि होगी।

इस प्रकार मध्यप्रदेश के विदिशा जिले में राजकीय आय की अपेक्षा राजकीय व्यय अधिक हैं जो एक ओर तो कींस के सिद्धांत के आधार पर विकास का द्योतक हैं वहीं दूसरी ओर उत्पादकता में वृद्धि के बिना राजकीय व्यय में वद्धि के परिणामस्वरूप अति मुद्रा स्फीति की स्थिति निर्मित होती है, जो अन्तोगत्वा विकास के मार्ग को अवरूद्ध करती है। यद्यपि वर्तमान में ऐसी स्थिति नहीं है परन्तु भविष्य में भी ऐसी स्थिति निर्मित न हो इसके लिए उपर्युक्त सुझाव प्रस्तुत हैं। यदि इन सुझावों पर अमल किया जायेगा तो न केवल राजकीय आय में वृद्धि होगी वरन् राजकीय व्ययों का विवेकीकरण भी होगा। जिले के आर्थिक विकास को गति मिलेगी। प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होगी एवं समृद्ध विदिशा की परिकल्पना साकार हो सकेगी।

स्रोत– राज कोष विदिशा CSFMS, M.P. Treasury org. nic. In

विदिशा विकास पुस्तिका, जिला योजना एवं सांख्यिकी कार्यालय जिला विदिशा
खरे महेश्वरी दयाल 'विदिशा'', म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2009
जैन, पुखराज ''म.प्र. एक अध्ययन'', साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2014
माहेश्वरी पी.डी. एवं गुप्ता शीलचन्द्र ''लोक अर्थशास्त्र'', कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, 2010
जैन ए.सी.सी. ''राजस्व'', कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, 2011

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

खनिज संसाधन का भौगोलिक अध्ययन अनूपपुर जिले के विशेष सन्दर्भ में

डॉ. हीरालाल चौधरी
अतिथि विद्वान–भूगोल
यूनिक कॉलेज ऑफ टेक्नोलॉजी, अमरपाटन जिला सतना (म.प्र.)

सारांश : खनिज संसाधन भौतिक पदार्थों के रूप में खान से खोदकर बाहर निकाला जाता है। जिसकी उपयोगिता का प्रमाण ही लोहा, अभ्रक, बॉक्साइट, कोयला आदि अनूपपुर जिले में निकाला जाता है। खनिज संसाधन प्राकृतिक रूप से जैविक और अजैविक दोनों तत्वों के रूप पाया जाता है। यह तत्व मानव की उपयोगिता को तरासते है। वहाँ संसाधन की उच्च गुणवत्ता की कोटि में प्राप्त होते हैं। खनिज संसाधन की संतुलित अवस्था ने प्रकृति के चक्रियकरण की प्रक्रिया को प्रवल बनाती है।[1] अनियंत्रित खनिज संसाधन अत्यधिक संकट उत्पन्न करते हैं। जहाँ मानवीय जीवन भी प्रभावित होता है। इस हेतु अनूपपुर जिले में खनिज संसाधन की उपलब्धता अधिक मात्रा में पाई जाती है। जिस परिणाम के लिए यह खनिज संसाधन मानव के आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं।

आज प्राकृतिक संसाधनों की विविधता ने मानवीय जीवन को उन्नत तो किया है। किन्तु निम्न स्तर का जीवन जीने वाले मजदूरों के पक्ष में कोई भी पहल नहीं हुआ। जिसके जीवन की अनेक सम्भावनाओं को पूँजीवादी व्यवस्था ने खत्म कर दिया है। इन संसाधनों के लिए मानव ने उपयोग करने के कारण व्यवस्था का परिणाम है। की मानवीय जीवन की अनेक सम्भवनाओं का अनदेखा नहीं किया जा सकता है। जिससे भारतीय संस्कृति और सभ्यता का विकास अवरूद्ध हो। इन्हीं संकटों से निकलने के लिए खनिज संसाधनों से प्राप्त होने वाली आय को नियत्रित रूपों में उपयोग किया जाना चाहिए।

प्रविधि : शोध पत्र में खनिज संसाधन का भौगोलिक अध्ययन अनूपपुर जिले के विशेष सन्दर्भ में प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध सामग्री का प्रयोग किया गया है। इसके साथ–साथ विद्वानों का मार्गदर्शन और व्यक्तिगत साक्षात्कार भी समाहित है। खनिज संपदा को संरक्षित हेतु वहाँ के कार्य कर रहे श्रमिकों से भी जानकारी एकत्रित की गई है। यहाँ तक कि पत्र–पत्रिकाओं को भी अध्ययन का आधार बनाया गया है।

उद्देश्य :–

1. खनिज संसाधनों का अध्ययन करना।
2. संसाधनों की उपयोगिता का अध्ययन करना।
3. खनिज संसाधनों में कार्यरत श्रमिकों का अध्ययन करना।
4. खनिज संसाधनों के भौगोलिक वातावरण का अध्ययन करना।

उपयोगिता : खजिन संसाधनों की वैचारिक समस्याऐं उत्पन्न हो रही है। जहाँ प्राकृतिक संकट का मानव मूल्यों में गहरा प्रभाव पड़ रहा है। इसी विचारधारा ने जीवन को आगे बढ़ने से बाधित करती है। पृथ्वी के इस धरातल में व्यक्ति न जाने कितना उत्पादन कर रहा है। उसे संतुलित उपभोग का नाम ही नहीं ले रहा है। जहाँ पर पूँजीवादी विचारधारा ने जीवन को अनियंत्रित रूपों का परिणाम दिखाई देने में सक्षम साबित हो रही है। यहाँ तक की मजदूरों के जीवन की दिशा को बाधित कर रहा है। इसी कारण पूँजीवादियों ने खनिज संसाधन के रूप में भूगोल के अनेक संसाधनों की उपलब्धता का सिद्धान्त प्रतिपादित किया है।[2]

इसी कारण साम्यवादी विचारधारा ने देश में एक समुदाय के लोगों को पृथ्वी से प्राप्त होने वाले खनिज संसाधनों को अनियंत्रित दोहन को कम करने की आबाज उठाई है। जिससे इस पृथ्वी के धरातल को और गहरा करने से रोका जा सके। यह इसी प्रकार की गति बढ़ती रही आने वाले भविष्य में नर संहार की सम्भावनाऐं प्रबल हो जायेगी। जिस प्रकार से अनूपपुर के कोयला खानों को निकालने के कारण वहाँ गहराई तक खोद–खोद कर बरबाद कर दिया है। जिसकी विसंगतियों को कम करना मानव का एक कर्तव्य है। जिससे मानव का जीवन सुरक्षित रह सके। वह दिन दूर नहीं होगा जिसमें नई पीढ़ी को आने की जरूरत है। यदि उसी गति से बढ़ती रही। वहाँ भौगोलिक वातावरण अनियंत्रित होने की सम्भावनाऐं प्रबल होती जा रही है।[3]

भौगोलिक संसाधन को प्रमाणिकता का दावा करने बाले कई विद्वान अपना मत प्रस्तुत करते है। जिसके आर्नाल्ड गायोट[4] भूगोलवेत्ता ने संसाधन का स्पष्टीकरण करते है। इस पृथ्वी पर खनिज संसाधनों की अधिक उपलब्धत्म मात्रा में पाया जाता है। जहाँ भौगोलिक संसाधन की अधिकता का परिणाम खनिज है। जिससे आर्थिक उन्नति को भी बल मिल रहा है। इसके लिए कृत्रिम संसाधनों की व्यवस्था ने मानवीय जीवन की अनेक घटनाओं का परिणाम भी संसाधन में सामिल है। जिसका बेवजह क्षरण होता जा रहा है।

किसी भी देश के विकास में ऊर्जा संसाधन का अत्यधिक महत्व है। इन्हीं ऊर्जा संसाधनों की अधिकता के कारण मानव का जीवन स्तर बढ़ोत्तरी की ओर है। इससे राष्ट्रीय आय की बढ़ोत्तरी हो रही है। जहाँ पर आर्थिक स्त्रोंत का एक स्तर ऊर्जा संसाधन से प्राप्त होता है। व्यवसायिक दृष्टि से कोयला, पेट्रोलियम व बिजली प्रमुख रूपों में आर्थिक आय के स्त्रोत है। ऊर्जा का प्रयोग स्थानीय स्तर पर निरूपित होता है। इसके लिए औद्योगिक विकास में कोयला ने अहम भूमिका निभाई है। अनूपपुर जिले में कोयला का उत्पादन अत्यधिक मात्रा में होता है। जिसके मूल स्त्रोंतों हेतु ऊर्जा की अत्यधिक आवश्यकता होती है। तापीय शक्ति ने कोयले को पुनः बढ़ावा दिया है। जिसके लिए बिजली और संयत्रों के विकास में द्रुतगामी गति से प्रयोग होता जा रहा है। भविष्यगामी शक्ति के रूप में ऊर्जा का स्त्रोत बन रहा है। ऊर्जा के विविध स्वरूपों में ऊर्जा का विकास हो रहा है।

समाधान : खनिज तीन रूपों में पाया जाता हैं। प्रथम धात्विक, द्वितीय अधात्विक एवं तृतीय ऊर्जा खनिज।

प्रथम धात्विक खनिज के रूप में– लौह अयस्क, लौह धातु, निकेल, मैगनीज, कोबाल्ट इत्यादि के धात्विक खनिज के रूप में पाया जाता है। अलौह धातु के रूप में ताँबा, लेड, बाक्साइड़, टिन आदि। बहुमूल्य खनिज, चाँदी, सोना, प्लैटिनम आदि पाया जाता है।[5]

द्वितीय – अधात्विक खनिज के अन्तर्गत, अभ्रक, लवण, पोटाश, सल्फर, चूना पत्थर, ग्रेनाइट, संगमरमर।

तृतीय ऊर्जा खनिज के रूप में पाया जाता है– कोल, पेट्रोलियम, ऊर्जा खनिज और प्राकृतिक गैस आदि ऊर्जा खनिज पदार्थो के रूप में प्राप्त होता है।

अनुसंधान की दृष्टि से यदि देखने का प्रयास किया जाता हैं तब लगता है कि इस उत्खनन से अनूपपुर जिले की अत्यधिक खुदाई से आर्थिक स्त्रोंत तो प्राप्त किया जा रहा है। किन्तु मनुष्य, जीव–जन्तुओं का जीवन अत्यधिक संकट में है। क्योंकि भूतल में अधिक खुदाई होने से जमीनी स्तर गिरता जा रहा है। इसलिये आज के व्यक्ति के भविष्य की पीढ़ियों के लिए अन्धकार में होता जा रहा है।

कोयला एक खनिज ईधन के रूप में अनूपपुर जिले में प्राप्त होता है। इसकी भू–पृष्ठ की अवसादी शैल में पाया जाता है। जिसके भू–गर्भिक स्खलन से भूमि का अधिक हिस्सा दलदल होता जा रहा है। इन्हीं कारण वनस्पति के कुछ स्त्रोंत भी नष्ट होते जा रहे हैं। कोयला एक कठोर, काला, चमकदार खनिज है। जिसमें कार्बन की अत्यधिक मात्रा के बढ़ जाने से कोयला मतें जीवश्म वनस्पति के रूप में जाना पहचाना जाता है।[6]

अत्यधिक दबाव के कारण आक्सीजन की कमी के कारण इसके मूल स्वरूप का कोई अस्तित्व नहीं रहा और नही यह पूर्ण विकसित जल बनने में सक्षम हो सका। जलवायु परिवर्तनों के प्रभाव के साथ वनस्पतियों एवं मिट्टी की नमी एक दूसरे पर निक्षेपित हो गयी। इस प्रकार निक्षेप वं दबाव की प्रक्रिया साथ–साथ क्रियान्वित होती रही। कालान्तर में ऊष्मा और दबाव के फलस्वरूप आक्सीजन, कार्बनीकरण एवं अन्य रासायनिक प्रक्रियाओं तथा सम्पीणन आदि क्रियाओं से दबी हुई वनस्पतियाँ कोयले की तहों के रूप में परिवर्तित हो गयी। निक्षेप की अवधि एवं रासायनिक प्रक्रियाओं के अन्तराल के फलस्वरूप कोयले की विभिन्न किस्मों का विकास हुआ है। जिसमें एन्थ्रेसाइट, बीटूमिनिस, लिग्नाईट, केनाल तथा पीट कोयला मुख्य रूप से पाया जाता है। इसी कारण संसाधनों की अन्तर्गत होने वाले दोहन का आज शोषण होता जा रहा है। संसाधनों के संवर्धन एवं सरंक्षण के उपाय से दोनों एक दूसरे पर निर्भर है। संसाधन उसे कहते हैं जिसकी मूलभूत उपयोगिता का लाभ मानव को प्राप्त हो सके। यह जैविक और अजैविक दोनों रूपों में पदार्थ के तह तक प्राप्त होने वाले संसाधन के रूप में माना जाता है।

निष्कर्ष : मानव के आर्थिक पक्ष और आवश्यकताओं की औद्योगिक पूर्ति का परिणाम संसाधन है। बिना संसाधन के मानव विकास की कल्पना नहीं की जा सकती है। यह आवश्यकताऐं प्राकृतिक संसाधन के रूप में मानव को प्राप्त होती है। जहाँ अनूपपुर जिले के गोड़वाना युग की चट्टानों में निक्षेपित बीटूमिनिस एवं लिग्नाईट किस्म का कोयला कार्बोनीफेरस युग की देन है। बीटूमिनिस एवं लिग्नाईट किस्म का कोयला कार्बोनीफेरस युग की देन है। खनिज संसाधनों के रूप में प्राकृतिक रूप से उपलब्ध होने वाले पदार्थों के रूप में आंतरिक संरचना से माना जाता है।

सन्दर्भ : –

1. E.W. Zimermann, World Resources and Industries. Harper and Bros 1966 pp. 1-8.
2. Dr. D.S. Negi, Geography of Resources, Kadarnath Ramnath Pubn. North Delhi. 1990-91.
3. ममोरिया एवं शर्मा, संसाधन भूगोल, साहित्य भवन आगरा, 1990–91 पृ. सं. 28.
4. Gauat Arnold : The earth and Man 1854.
5. कन्हैलाल, अग्रवाल, विन्ध्य क्षेत्र का ऐतिहासिक भूगोल, सुषमा प्रेस, सतना, 1987, पृष्ठ 20
6. डॉ. प्रमिला कुमार मध्यप्रदेश, एक भौगोलिक अध्ययन, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल (म.प्र.). द्वितीय संस्करण, पृष्ठ 40

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

ई–कचरा क्या और कसे

प्रेमलाल साकेत
शोधार्थी–भूगोल, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह (स्वशासी एवं उत्कृष्ठता केन्द्र) महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

प्रस्तावना : आपने कभी गौर किया है, कि कबाड़ वाले को आप घर पर जो कबाड़ बेंचते है। उसमें अब पुराने अखबारों, बोतलों, डिब्बों, लोहा लक्कड़ के साथ एक खतरनाक चीज जुड़ गई है, ई–कचरा। कम्प्यूटर पुराना हो जाये तो अपग्रेड कराना हमें झंझट लगता है। इससे ज्यादा सुविधाजनक लगता है। नया खरीदना, लेकिन तकनीक के साथ कदमताल के इस जुनून में एक पल ठहरकर क्या हम सोचते है, कि पुराने कम्प्यूटर का क्या होगा। कम्प्यूटर ही क्या मोबाइल, सी.डी., टी.व्ही., रेफ्रिजरेटर, ए.सी., जैसे तमाम इलेक्ट्रॉनिक चीजे हमारी जिन्दगी का इतना अहम हिस्सा बन गये है, कि पुराने के बदले हम फौरन अत्याधुनिक तकनीक वाला खरीदने को तैयार हो जाते है। लेकिन पुरानी सी.डी. व दूसरे ई–वेस्ट को डस्टविन में फेंकते वक्त हम कभी गौर नहीं करते कि कबाड़ी वाले तक पहुंचने के बाद यह कबाड़ हमारे लिये कितना खतरनाक हो सकता है। क्योकि पहली नजर में ऐसा लगता भी नहीं है, बस यही है। ई–वेस्ट का साइलेंट खतरा।

प्रविधि : इस शोध पत्र में **ई–कचरा क्या और कैसे** शीर्षक पर प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध सामाग्री का प्रयोग किया गया है। इसके साथ–साथ पत्र–पत्रिकाओं एवं विद्वानों का मार्गदर्शन, साक्षात्कार के द्वारा शोध पत्र के निर्माण में अध्ययन किया गया है।

उद्देश्य : लोगों की बदलती जीवन शैली और बढ़ते शहरीकरण चलते इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का ज्यादा प्रयोग होने लगा है, मगर इससे पैदा होने बाले इलेक्ट्रॉनिक कचरेक के दुष्परिणाम से आम आदमी बेखबर है। ई–कचरे से निकलने वाले रासायनिक तत्व लीवर, किडनी, को प्रभावित करने के अलावा, कैंसर, लकवा जैसी बीमारियों को कारण बन रहे है। खास तौर पर उन इलाकों में रोग बढ़ने के आसार ज्यादा हैं, जहां अवैज्ञानिक तरीके से ई–कचरे की रीसायक्लिंग की जाती है। बिजली से चलने वाली चीजें जब पुरानी या खराब हो जाती हैं और बेकार समझकर इन्हें फेंक दिया जाता है तो उसे ई–वेस्ट कहा जाता है। घर और आफिस में डेटा–प्रोसेसिंग, टेलीकम्युनिकेशन, कलिंग या इंटरटेनमेंट के लिए इस्तेमार कियो जाले वाले उपकरण इस कैटेगरी में आते है। ई–वेस्ट से निकलने वाले जहरीले तत्व और गैसें मिट्टी और पानी में मिलकर उन्हें बंजर व जहरीला बना देते है। फसलों और पानी के जरिये ये तत्व हमारे शरीर में पहुॅचकर बीमारियों को जन्म देते है।

उपयोगिता : अभी भारत में एक अरब स ज्याद मोबाइल–फोन ग्राहक हैं। मोबाइल सेवा शुरु होने के बाद लगभग 20 वर्षों में यह आंकड़ा पिछले साल जनवारी में पार किया था। हालांकि पड़ोसी देश चीन यह करिश्मा सन् 2012 में ही कर चुका है। दुनिया में फिलहाल चीन और भारत ही ऐसे दो देश हैं जहां एक अरब से ज्यादा लोग मोबाइल फोन से जुड़े हैं। देश में मोबाइल फोन उद्योग को अपने पहले दस लाख ग्राहक जुटाने में करीब पांच साल लग गये थे।

मोबाइल की बात करें तो, कबाड़ में फेंके गये इन फोनों में इनमें इस्तेमाल होने वाले प्लास्टिक और विकरिण पैदा करने वाले कलपुर्जे सैकड़ो साल तक जमीन में स्वभाविक रूप से घुलकर नष्ट नहीं होते है। सिर्फ एक मोबाइल की बैटरी अपने बूते छः लाख लीटर पानी दूषित कर सकती है। इसके अलावा एक पर्सनल कम्प्यूटर में उसे 8 पौंड घातक सीसा, फास्फोरस, कैडमियम व मर्करी जैसे तत्व होते है, जो जलाये जाने पर सीधे वातावरण में घुलते है। और विषैले प्रभाव पैदा करते है।

सामाधान : कम्प्यूटरों कें स्क्रीन के रूप में इस्तेमाल होने वाली कैथोड किरणें पिक्चर ट्यूब से जिस मात्रा में सीसा को पर्यावरण में छोड़ती है, वह भी काफी नुकसान देह है। इलेक्ट्रॉनिक उत्पाद बनाने वाली कम्पनियां, अपने उपभोक्ताओं के खराब हो चुके चीजों को वापस लेने की जहमत नहीं उठाती, क्योंकि ऐसा करना खर्चीला है, और सरकार की तरफ से इसे बाध्यकारी नहीं बनाया गया है। इसी तरह उपभोक्ता भी अपनी इन हानिकारक बातों को लेर सजग नहीं है, कि खराब थर्मामीटर से लेर सी.एफ.एल. बल्ब और मोबाइल फोन आदि को ऐसे ही कबाड़ में फेंक देना कितना खतरनाक है।

सेंटर फार साइंस एण्ड एनवायरनमेंट (ब्ैण्म्) ने कुछ साल पहले जब सर्किट बोर्ड जलाने वाले इलाके के आसपास शोध कराया तो पूरे इलाके में बड़ी तादाद में जहरीले तत्व मिले थे, जिससे वहॉ काम करन

वाले लोगों में कैंसर होने की आशंका जताई गई, जबकि आसपास के लोग भी फसलों के जरिये इससे प्रभावित हो रहे थे। भारत में यह समस्या 1990 के दशक में उभरने लगी थी। उसी दशक को सूचना प्रौद्योगिकी की क्रांति का दशक भी माना जाता है।

पर्यावरण विशेषज्ञ डॉ. ए.के. श्रीवास्तव कहते हैं, कि ''ई–कचरे का उत्पादन इसी रफ्तार से होता रह तो 2020 तक भारत लगभग 10 लाख टन ई–कचरा हर वर्ष उत्पादित करेगा।

राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय पूसा के पूर्व निर्देशक डॉ. श्रीवास्तव कहते है, कि ई–कचरे की वजह से ही खाद्य श्रंखला बिगड़ रहीं है। ई–कचरे के आधे–अधूरे तरीके के निस्तारण से मिट्टी में मिल खतरनाक रासायनिक तत्व मिल जाते है। जिनका असर पेंड़ पौधे और मानव जाति पर पड़ रहा है।

पौधों में प्रकाश–शंसलेषण की प्रक्रिया नहीं हो पाती जिसका सीधा असर वायुमण्डल में आक्सीजन के प्रतिषत पर पड़ रहा है। इतना ही नहीं कुछ खतरनाक रासायनिक तत्व जैसे – पारा, क्रोमियम, कैडमियम, सीसा, सिलिकान, निकेल, जिंक, मैग्नीज, कॉपर तथा भू – जल स्तर पर भी पड़ रहा है। जिन इलाकों में अवैध रूप स रिसायक्लिंग का काम होता है। उन इलाकों का पानी पीने लायक नहीं रह जाता है।

असल समस्या ई–वेस्ट की रिसायक्लिंग और उसे सही तरीकों से नष्ट (डिस्पोज) करने की है। घरों और यहां तक कि बड़ी–बड़ी कम्पनियों से निकलने वाला ई–वेस्ट ज्यादातर कबाड़ी उठाने है, वे या तो इसे लैण्डफिल में डाल देते है। या फिर कीमती मेंटल निकालने के लिए इसे जला देते है, जो कि और भी ज्यादा नुकसान देह है। कायदे में इसके लिये अलग से पूरा सिस्टम तैयार होना चाहिये, क्योंकि भारत में न सिर्फ अपने देश का ई–वेस्ट जमा हो रहा है, बल्कि विकसित देश भी अपना कचरा यहीं जमा कर रहें है। सी. एस. ई में इनवायरनमेंट प्रोग्राम के को–आर्डिनेटर कुशल पाल यादव के मुताबिक विकसित देश भारत को डपिंग ग्रांउड क तरह इस्तेमाल कर रहें है, क्योंकि रिसायक्लिंग काफी मॅहगी प्रक्रिया हैं।

हमारे यहां ई–वेस्ट की रिसायक्लिंग और डिस्पोजल दोनों ही सही तरीके से नहीं हो पा रही है। इसे लेकर जारी की गई गाइडलाइन का कहीं भी पालन नहीं हो पा रहा है। कुल ई–वेस्ट का 99 प्रतिशत हिस्सा न तो सही तरीक से इक्कट्ठा किया जा रहा है और नहीं उसकी रिसायक्लिंग सहीं ठंग से क जा रहीं है। आमतौर पर सामान्य कूड़े–कचरे के साथ ही इसे जमा किया जाता है। और अक्सर उसके साथ ही डंप भी कर दिया जाता है। ऐसे में इनसे निकलने वाले रेडियोएक्टिव तत्व और दूसरे हानिकारक तत्व अंडरग्राउंड वाटर, जमीन को और भी प्रदूषित कर रहे है। ऐसे में सरकार को ई–वेस्ट के रिसायक्लिंग के लिये ससक कानून बनाना होगा, क्योकि आने वाले दिनों में खतरा और भी गंभीर होगा।

कबाड़ी ई–वेस्ट को मेटल गलाने वाले को बेंचते है, जो कि कॉपर और सिल्वर जैसे मॅहगे मेटल निकालने के लिये इन्हें जलाते है। या एसिड में उबालते है। एसिड का बचा पानी या तो मिट्टी में डाल दिया जाता है। या फिर खुले में फेंक दिया जाता है। ऐसा इसलिये हो रहा है, क्योकि यहां साफ कानून नहीं है।

एनवायरनमेंट एन.जी.ओ. ''टाक्सिसलिंक'' के डायरेक्टर रवि अग्रवाल का कहना है। कि हमारे देश में सालाना करीण चार–पांच लाख टन ई–वेस्ट पैदा होता है। और 97 प्रतिशत कबाड़ को जमीन में गाड़ दिया जाता है। स्क्रैप डीलर इस खतरनाक चैन की मुख्य कड़ी है, क्योकि वो पुराने पी.सी., रेडियेा, टी.व्ही. आदि कस्टमर्स से खरीदतें है। और उनके हिस्सों को अलग–अलग कर चोर बजार में बेंच देते है। बचे हुये कचरे को वातावरण में यू ही फेंक दिया जाता है। जरुरत है आज हम सबको ई–कचरे के हानिकारक दुष्प्रभाव को आम जनता तक पहुंचाने की। अन्यथा वातावरण में वायु, जल, एवं मिट्टी के प्रदूषण से भी खतरनाक ई–कचरे के दुष्प्रभाव दिखाई देने लगेगें अगर सरकारें इस तरह तेजी से बढ़ हरी समस्या का निदान जल्द से जल्द नहीं निकालेगी तो प्रकृति के साथ हो रहे खिलवाड़ का दुष्परिणाम हम सबको उठाना पड़ सकता है।

निष्कर्ष : सबसे पहले जरुरत है सख्त कानून बनाने और उतनी सख्ती से पालन करने की ताकि ई–कचरे की अवैध रिसायक्लिंग पर पूर्ण विराम लग सके। सरकारों से इतर हम और मिलकर भी इस समस्या पर काफी हद तक काबू पा सकते है। ई–वेस्ट का सबसे अच्छा मंत्र रिड्यूस, रियूज, और रिसायक्लिंग का है, यानि इलेक्ट्रानिक चीजों को संभलकर और किफायत से इस्तेमाल करें।

सन्दर्भ :

1. विजय कुमार तिवारी, मध्यप्रदेश में नगरीय एवं मलिन बस्ती क्षेत्रों की समस्या, उत्तर भारत भूगोल पत्रिका अंक, 2003, 39, पृ. 73–80

2. एम.एस., तोमर, चम्बल सम्भाग के जल संसाधन एवं उनका उपयोग, अप्रकाशित शोध प्रबंध जीवजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर 1998,। दैनिक नई दुनिया, भोपाल, 05 जुलाई 1991।
3. राजेश्वरी दुबे, नगरीय वातावरण की झुग्गी बस्ती में रहने वाली महिलाओं का स्तर : भोपाल नगर की भीमनगर बस्ती का प्रतीक अध्ययन, उत्तर भारत भूगोल पत्रिका अंक 34, 1998, पृ. 109–111
4. शशि नायक, म.प्र. का आर्थिक विकास म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
5. आर. एस. पवार, समन्वित ग्रामीण विकास की संकल्पना रूरलइंडिया, अंक 52, संख्या 464, 1989, सितम्बर।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

गांवो के हिन्दू विधवा महिलाओं की पारिवारिक एवं सामाजिक स्थिति का अध्ययन

सुकली डावर
पी–एच.डी. शोधार्थी, माता जीजाबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर

''गांवो के क्षेत्रों में आज भी विधवा महिलाओं को वह सम्मान नही मिल रहा है जिसका वे हकदार रखती है। सामाजिक माहौल इनके अनुकूल नही रहता है जबकि पारिवारिक वातावरण भी इन्हें नही मिलता है। ऐसी स्थिति में महिलाओं को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। गांवो में विधवा महिलाओ को अधिक सम्मान मिले तथा इनके पारिवारिक एवं सामाजिक स्थिति सुधरे, इसी मुद्दे पर प्रस्तुत अध्ययन किया गया है।''

शब्द कुंजी – सामाजिक एवं पारिवारिक स्थिति, गांवो की स्थिति, हिन्दू विधवा महिलाएँ

प्रस्तावना : विधवापन एक ऐसी प्रस्थिति है जिसमें महिला अपने जीवनसाथी को खो देती है। इस कारण अकेलेपन और मानसिक अवसाद की स्थिति निर्मित होती है। विचलित व्यवहार की संभावना भी बढ़ जाती है। परिवार के लिये यह स्थिति परिवार के संचालन में व्यवधान उत्पन्न करती है। बच्चों के पालन–पोषण की समस्या होती है। समाज में विवाह सौभाग्य का प्रतीक होता है, जीवनसाथी के नहीं रहने पर यह दुर्भाग्य का सूचक कहलाता है।

समाज में विधवा महिलाओं की स्थिति अत्यन्त कठिन होती है। विधवा महिलाओं पर भोजन–वस्त्र, चिकित्सा सुविधाओं की माँग की तुलना में पूर्ति होने से तनाव बढ़ जाता है। विधवा महिलाएँ घरेलू कामकाज में अधिक श्रम करती हैं लेकिन घरेलू कामों का कोई पारिश्रमिक नहीं होता है। विधवा महिलाओं की स्थिति पुरूष प्रधान समाज के मूल्यों एवं मानदण्ड़ों के कारण अधिक खराब रहती है। यह स्थिति इसलिए अधिक रहती है। क्योंकि जो सामाजिक अनुशास्तियाँ हैं वे पितृसत्तात्मकता में पुरूष पर स्त्री की निर्भरता को स्वीकार करते हुए उसके पृथक अस्तित्व के पक्ष में नहीं होती, यही कारण है कि वैभव्य की अवस्था में उसके सौभाग्य के प्रतीक चिन्हों को हटाने का प्रतिमान प्रचलित है। दूसरी प्रमुख बात यह है कि महिला का दोयम दर्जे की स्थिति में स्वयं को महसूस करना, इसलिए वह अपने हक में बने कानूनों, अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं हो पाती। शहरी क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में विधवा महिलाओं की स्थिति अधिक दयनीय होती है। विधवाओं की स्थिति को समझने के लिए हमें प्राचीनकाल से अब तक महिलाओं की स्थिति को समझना होगा।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. हिन्दू विधवा महिलाओं के शिक्षा संबधी कारकों का अध्ययन करना।
2. हिन्दू विधवा महिलाओं के पति की मृत्यु के कारणो का अध्ययन करना।
3. हिन्दू विधवा महिलाओं के पारिवारिक स्थिति का अध्ययन करना।
4. हिन्दू विधवा महिलाओं के प्रति गांवो के लोगो की मनोवृत्ति दशा स्थिति का अध्ययन करना।

अध्ययन का क्षेत्र : प्रस्तुत अध्ययन धार जिले की बदनावर, मनावर, कुक्षी, धरमपुरी तहसील से तथ्य संकलित किये गये है।

निदर्शन विधि : धार जिले के 1484 गांव में से 50 ग्रामों का चयन दैव निदर्शन की लाटॅरी पद्धति से किया गया है। जिसके तहत प्रत्येक गांव से 06–06 हिन्दू विधवा महिलाओं का लिया गया है।

निष्कर्ष :

- अध्ययन में सम्मिलित विधवा महिलाओं में सर्वाधिक 158 (52.67%) उत्तरदाता महिलाएँ निरक्षर है। 26 (8.67%) महिलाएँ साक्षर है, 79 (26.33%) महिलाओं ने प्राथमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त की है। 29 (9.67%) महिलाओं ने माध्यमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त की है। अध्ययन क्षेत्र के उत्तरदाता विधवा महिलाओं का विवाह कम उम्र में ही कर दिया। जिसके कारण निरक्षर महिलाएँ सर्वाधिक है।
- अध्ययन में विधवा महिलाओं के पति की मृत्यु के कारण तथ्यों से कहा जा सकता है कि सर्वाधिक 39 (13.00%) उत्तरदाता महिलाओं के पति की मृत्यु का कारण दुर्घटना रहा तथा न्यूनतम अध्ययन में सम्मिलित 07 (02.33%) महिलाओं के पति की मृत्यु का कारण कैंसर रहा। परिवार की आर्थिक स्थिति ठीक नही होने के कारण घर का मुखिया मजदूरी करता है। दैनिक मजदूरी या

जोखिम वाले कार्य करने पलायन करता है जहाँ दुर्घटनाएँ होने की संभावनाएँ बढ़ जाती है।

- अध्ययन क्षेत्र में विधवा महिलायें सर्वाधिक 261 (87.00%) महिलाएँ वर्तमान समय में एकाकी परिवारों में निवास कर रही हैं, जबकि 39 (13.00%) महिलाएँ संयुक्त परिवारों में निवास कर रही है। विधवा महिला को संयुक्त परिवार में मानसिक प्रताड़ना दी जाती है जिसके कारण वह अकेली या बच्चों के साथ अलग परिवार में निवास करती है।
- अध्ययन में विधवा महिला के प्रति समाज का व्यवहार संबंधी तथ्यों से कहा जा सकता है कि सर्वाधिक 233 (77.67%) समाज में खराब व्यवहार किया जाता है तथा 15 (05.00%) समाज में उनके साथ अच्छा व्यवहार किया जाता है। समाज में आज भी विधवा महिलाओं के प्रति सोच एवं व्यवहार में बदलाव नही आया है।

सुझाव :

- रात्रिकालीन शिक्षा में विधवा महिलाओं को आर्थिक प्रबंधन, स्वास्थ्य, लेखन तथा पारिवारिक जानकारी दी जानी चाहिए।
- सामूहिक विवाह में विधवा महिलाओं के विवाह करने पर प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।
- स्वयं विधवा महिलाओं को सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने के लिए प्रयत्न करना चाहिए।
- विधवा महिलाओं को समान कार्य के लिए पुरूषों के समान ही पारिश्रमिक प्रदान किया जाना चाहिए। महिलाओं को पुरूषों के समान पारिश्रमिक नहीं दिये जाने वाले नियोक्ताओं के विरूद्ध कानूनी कार्यवाही की जानी चाहिए।
- पुरूष प्रधान समाज में विधवा महिलाओं के प्रति एवं ग्रामीण हिन्दू समाज में परिवार का व्यवहार एवं मानसिक विचारों में सकारात्मक परिवर्तन की आवश्यकता हैं।
- विधवा महिलाओं के प्रति महिला उत्पीड़न, अत्याचार, बलात्कार, एवं समाज में इनके प्रति गलत व्यवहार पर महिला आयोग एवं शासन को निष्पक्ष रूप से जाँच करना एवं दोषी पुरूषों पर कठोर कार्यवाही होना चाहिए।

संदर्भ :

1 आशारानी व्होरा, भारतीय नारी दशा और दिशा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1983
2 अल्तेकर ए. एस., द पोजीशन ऑफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1998
3 देसाई नीरा, भारतीय समाज में नारी, मेकमिलन कम्पनी, नई दिल्ली, 2008
4 गिरिजा खन्ना, इण्डियन वूमन टूडे, विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली 2006
5 के. एम. प्रभु, हिन्दू सोशल आर्गेनाईजेशन, पापुलर पब्लिकेशन, मुम्बई, 1991
6 मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसंधान जर्नल, उज्जैन, 2010
7 मध्यप्रदेश सामाजिक शोध, रिसर्च जर्नल, जून 2013
8 मुखर्जी डॉ. आर. एन. सामाजिक शोध व सांख्यिकी, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली, 1986
9 मुकर्जी रवीन्द्रनाथ, सामाजिक शोध व सांख्यिकी, विवेक प्रकाशन, 1990
10 पोथन के.पी. एवं टोंग्या वी.सी. परिवार और समाज, कमल प्रकाशन, इन्दौर, 1989
11 विजयलक्ष्मी, महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण, अक्टूम्बर 2008 , योजना, अंक 53, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, 2003

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भारत में महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति

डॉ. पूजा तिवारी

भारत में महिलाऐं मानव संसाधन का एक महत्वपूर्ण अंग है। देश की कुल आबादी का लगभग 48 प्रतिशत भाग महिलाओं का है लगभग आधा हिस्सा महिलाओं का होने के नाते सरकार का दायित्व बनता है कि महिलाओं की उद्यमशीलता को बढ़ावा देने हेतु उचित प्रयास किये जाये। जिस देश में महिला का स्थान सम्मानजनक होता है वह उतना ही प्रगतिशील और विकसित होता है। परिवार, समाज और देश के निर्माण में महिला का स्थान महत्वपूर्ण होता है। वह राष्ट्र सशक्त होता है, क्योंकि राष्ट्र निर्माण में महिला की भूमिका केन्द्रीय होती है। आज जब हम अतीत पर नजर डालें तो पाते हैं कि हमारे देश में गार्गी और मैत्रेयी जैसी प्रसिद्ध महिला दार्शनिक थी, जो पुरूषों के स्तर पर भाषण प्रवचन तथा बहस में हिस्सा लेती थी हमारे स्वाधीनता संग्राम में भी महिलाओं का योगदान पुरूषों से कम नहीं था। आजादी के बाद भी संविधान सभा के सदस्य के रूप में महिलाओं ने संविधान का मसौदा तैयार करने के काम में हिस्सा लिया।

विभिन्न उद्योगों एवं व्यवसायों में महिला श्रमिकों की स्थिति जगजाहिर है :–

अधिकांश महिलाएं नर्स, स्वास्थ्य श्रमिक के रूप में, शिक्षक, लिपिक, आशुलिपिक और झाड़ू देने के रूप में संगठित क्षेत्रों में कार्य करती है। वस्तु उत्पाद को एकत्र करने का काम, सामान को बांधने का काम तथा वस्तु के निर्माण कार्य एवं औद्योगिक इकाईयों में कार्य करती है, टेलीफोन, यांत्रिकी, खान–सामग्री ओर वृक्षारोपण जैसे औपचारिक उद्योगों में महिलाएं अधिक मात्रा में कार्यरत है। कृषि क्षेत्र में अधिकांश महिलाएं तथा अन्य निम्न अर्जित घरेलू गतिविधियों में 56 प्रतिशत आकस्मिक श्रमिक के रूप में कार्य करती है। कृषि के बाद बीड़ी तथा तम्बाकू बनाने के क्षेत्र में भी हमारे देश में महिलाऐं अधिक मात्रा में नियोजित है।

महिला उद्यमियों के प्रोत्साहन हेतु संचालित अनेक योजनाऐं सरकार द्वारा चलाई जा रही है। जिसमें कुछ प्रमुख योजना जैसे – पंचधारा योजना, ग्राम योजना, सामाजिक सुरक्षा पेंशन योजना, कल्पवृक्ष योजना, अपनी बेटी अपना धन योजना, कामधेनू योजना, दीदी बैंकों की स्व–स्फूति योजना इत्यादि, साथ ही विभिन्न बैंकों द्वारा भी कई योजना जैसे प्रियदर्शिनी योजना, सेन्ट कल्याणी योजना, स्त्री–शक्ति पैकेज योजना, सिडी योजना संचालित है।

महिला उद्यमिता की सम्भावनाएँ न केवल महानगरों एवं नगरों तक ही सीमित नही है, अपितु इसकी झलक देश के कस्बों और गांव में भी मिलती है महिला उद्यमिता के क्षेत्र में विकास की अपार संभावनाऐं मौजूद है जिससे संस्थागत ढाचा विकसित किया जा सकता है। आर्थिक प्रशासन में सुधार किया जा सकता है। निर्यात प्रौत्साहन के क्षेत्र में संभावनाऐं प्रस्फुटित की जा सकती है और अन्य संभावनाऐं–ब्यूटीपार्लर, पेंटिंग क्लासेस, ज्वैलरी निर्माण, गिफ्ट आयटम, इन्टीरियर डेकोरेशन, अचार, चटनी, पापड़ आदि निर्माण क्षेत्रों में अपार सम्भावनाऐं व्याप्त है।

भारत में महिलाओं की सामाजिक स्थिति :–

देश में महिलाओं की स्थिति जानने के लिए हमें उनके निम्न पहलू जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा, मातृत्व, मृत्युदर आदि के बारे में जानना आवश्यक हैं :–

- साक्षरता दर – भारत में साक्षरता दर में बड़ी असमानता है। 2011 की जनगणना आँकड़ों के अनुसार 82.14% परूषों के मुकाबले महिलाओं में साक्षरता का प्रतिशत 65.46% था। शिक्षा महिलाओं के विकास का केन्द्र बिन्दु है। शिक्षा से अन्य कई सामाजिक समस्याओं जैसे – ऊंची जन्मदर, स्वास्थ्य की देखभाल का अभाव, अज्ञानता एवं निर्धनता के समाधान में सहायता मिलती है। महिलाओं में शिक्षा के अभाव का तात्पर्य उनमें आत्मनिर्भरता की कमी है जिसके कारण वे अपनी समस्याओं का स्वतः समाधान नहीं कर सकती हैं। महिलाओं का शिक्षित होना बहुत जरूरी है क्योंकि वे परिवार को शिक्षित करती हैं किन्तु अधिकांश लोग शिक्षा को सिर्फ नौकरी प्राप्त करने का साधन ही समझते हैं। अतः वे लड़की की शिक्षा प्राप्त करने को सामाजिक दृष्टि से ठीक नहीं समझते। विगत 10–15 वर्षो के दौरान बालिकाओं का स्कूल जाना विशेष रूप से बढ़ा है। भारत में आर्थिक सुधार के पश्चात महिला साक्षरता को बढ़ाने के विशेष प्रयास किये जा रहे हैं इसके कुछ सकारात्मक परिणाम सामने आये हैं। सरकार द्वारा विभिन्न शिक्षा कार्यक्रमों को संचालित किया जा रहा है जैसे – सर्वशिक्षा अभियान, शिक्षा गारण्टी और शिक्षा सहयोग योजना इत्यादि इन कार्यक्रमों में महिलाओं और समाज के वंचित वर्गों की ओर

विशेष ध्यान दिया गया है। यूनेस्को ने भारत के प्रयासों के लिए दो बार लगातार साक्षरता पुरस्कार देकर केरल तथा पश्चिम बंगाल की सराहना की है।

- स्वास्थ्य – हमारे देश में महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति हमेशा से ही एक गम्भीर विषय है। स्वतंत्रता के पश्चात स्वास्थ्य सेवाओं की दिशा में प्रगति हुई है महिलायें उत्पादन कार्यो में 80 प्रतिशत तक योगदान करती हैं परन्तु वे अपने स्वास्थ्य पर अधिक ध्यान नहीं दे पाती। महिलाओं के स्वास्थ्य पर विशेष रूप से प्रभाव डालने वाले सांस्कृतिक मानदण्ड हैं – विवाह के प्रति दृष्टिकोण, विवाह की आयु, जनन क्षमता की दर, परिवार में महिलाओं का स्थान व सामाजिक मान्यताओं के अनुसार महिलाओं की भूमिका अपेक्षित रही है। कम आयु में विवाह, उच्च जनन क्षमता, माता व गृहणी की भूमिका का आदर्शीकरण महिला के शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालते हैं। भारत में महिलाओं के स्वास्थ्य पर फोकस करने के लिए अपने स्वास्थ्य सुरक्षा तंत्र को मजबूत बनाया जाये। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशिक्षित स्वास्थ्य कर्मियों की नियुक्ति कर सभी प्रजनन सेवाएँ एक स्थान पर दी जानी चाहिए।
- मातृत्व मृत्यु दर – भारत का विश्व में मातृत्व मृत्यु दर में प्रथम स्थान है। मृत्यु संबंधी आंकड़ों का विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि विवाहित स्त्रियों में 15–49 की आयु में ही मृत्यु की संभावनायें अधिक होती हैं। शिशु को जन्म देने के कारण होने वाली मृत्यु मातृत्व मृत्यु दर के अन्तर्गत आती है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में मातृत्व मृत्यु दर सबसे अधिक है। महिलाओं के स्वास्थ्य में सुधार करने के लिए सबसे अधिक आवश्यकता है सरकार के सतत् प्रयास, एक अनुकूल नीति, अनुकूल वातावरण एवं साधनों की।
- सुरक्षा – महिलाओं के प्रति अपराध पर लगाम लगाने और उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए भारतीय संविधान में कानूनी प्रावधान है। फिर भी दहेज हत्या, घरेलू हिंसा, कन्या भ्रूण हत्या, बालविवाह, यौन शोषण, ऑनर किलिंग आदि के मामले भारत में आम हो गए हैं। पिछले एक दशक में महिलाओं के साथ अपराध के मामलों में दुगुने से ज्यादा की वृद्धि हुई है। इस दौरान देश में ऐसे 22 लाख 40 हजार मामले दर्ज हुए हैं। आँकड़ों के अनुसार महिलाएँ हर एक घंटे में 26 अपराध यानी हर दो मिनिट में एक अपराध का शिकार बनती है। इन अपराधों में घरेलू हिंसा के मामले सबसे ज्यादा हैं। प्रताड़ना के 4 लाख 70 हजार 556 मामले दर्ज हुए हैं। तीसरे स्थान पर अपहरण से जुड़े मामले हैं। इसके अलावा दहेज विरोधी कानून के तहत 66 हजार मामले भी सामने आये। आँकड़ों के अनुसार वर्ष 2014 में महिलाओं के खिलाफ कुछ नई श्रेणियों में भी अपराधिक मामले दर्ज हुए, जिनमें बलात्कार के प्रयास से जुड़े 4 हजार 234 मामले, आत्महत्या के लिए उकसाने से जुड़े 3734 मामले और घरेलू हिंसा से बचाव के 426 मामले शामिल हैं।

भारत में महिलाओं की आर्थिक स्थिति :–

वर्ष 2013 में महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण को लेकर किए गए सर्वेक्षण सूची में भारत को 128 देशों में 115 वाँ स्थान मिला है। रिपोर्ट में बताया गया है कि भारतीय अर्थव्यवस्था ने अपने देश की महिलाओं के लिए असीम संभावनाएँ पैदा की है, इसके बावजूद महिलाओं का एक बड़ा हिस्सा सांस्कृतिक परंपराओं, लिंग–भेद व संसाधनों के अभाव में अपनी क्षमता का पूरा उपयोग नहीं कर पा रहा है। एक सर्वे के अनुसार जहाँ–जहाँ महिलाओं की व्यापार व कार्पोरेट जगत में अहम भागीदारी रही है, वहाँ करीब 53% अधिक लाभांश और करीब 24% अधिक बिक्री पाई गई है। लेकिन कुछेक महिलाओं को ऊँचे पद तथा सुदृढ़ स्थिति में देखकर हम उन अशिक्षित और शोषित महिलाओं को अनदेखा नहीं कर सकते जो आज भी अपने मौलिक अधिकारों तक के लिए संघर्षरत हैं। रोजगार तथा बेरोजगारी सर्वेक्षण 2011 में यह स्पष्ट होता है कि 15 से 59 वर्ष की आयु के बीच की शहरी महिलाओं में सबसे अधिक बेरोजगारी दर 15.7 फीसदी पाई गई है। जबकि इसी उम्र में पुरूषों की बेरोजगारी दर 9 फीसदी दर्ज की गई है। श्रमजीवी रोजगार में प्रवेश के लिए अधिक से अधिक संख्या में शहरी महिलाएँ तैयार है। लेकिन मौजूदा समय में पर्याप्त और योग्यता अनुसार अवसर खोजने में असमर्थ हैं।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (2012) की रिपोर्ट के अनुसार 131 देशों में भारत की शहरी महिला श्रमिक शक्ति दर 15 प्रतिशत के साथ दुनिया भर में नीचे से 11 वें स्थान पर है जो एक बेहद चिंताजनक आँकड़ा है। शहरी महिलाओं में बेरोजगारी दर सबसे अधिक पाई गई है। 5.7% बेरोजगारी दर के साथ स्नातक तथा उच्च डिग्रियाँ हासिल करने के बाद भी शहरी महिलाओं में बेरोजगारी का प्रतिशत सबसे अधिक है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन की 2011 की रिपोर्ट के अनुसार लगभग 20% शहरी महिलाएँ घरेलू सहायिका, सफाई कर्मचारी, विक्रेता, फेरीवाली एवं सेल्सगर्ल के रूप में

कार्य करती हैं। वहीं 43% महिलाएँ स्वनियोजित कार्य करती हैं, जबकि इतनी ही महिलाएँ मासिक वेतन पर काम करती हैं। लगभग 46% मासिक वेतन पर काम करने वाली शहरी महिलाओं के लिए सामाजिक सुरक्षा एवं रोजगार लाभ तय नहीं हैं। जबकि 56% महिलाओं के पास लिखित में कोई जॉब कांट्रेक्ट नहीं है, अर्थात देश की जीडीपी में उनकी हिस्सेदारी का कोई हिसाब नहीं है।

महिलाओं के संरक्षण के लिए बनाये गये कुछ महत्वपूर्ण कानून

- समान वेतन अधिनियम (1976)
- मातृत्व लाभ आधिनियम (1961)
- न्यूनतम मजदूरी अधिनियम (1968)
- घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम (2005)
- संतान पालन अवकाश अधिनियम (2015)

महिला सशक्तिकरण के लिए संचालित विभिन्न योजनायें

- राष्ट्रीय महिला कोष (आर.एम.के.) 1992–1993
- महिला समृद्धि योजना (एम.एस.वाय.) 1993
- इन्दिरा महिला योजना (आई.एम.वाय.) 1995
- स्वशक्ति समूह
- स्टेप योजना
- स्वावलम्बन योजना
- स्वधार योजना
- महिला सशक्तिकरण राष्ट्रीय मिशन
- धनलक्ष्मी 2008
- उज्जवला 2007
- स्वरोजगार के लिए ग्रामीण युवा प्रशिक्षण कार्यक्रम (टी.आर.वाय.एस.ई.एम.)
- प्रधानमंत्री रोजगार योजना (पी.एम.आर.वाय.)
- महिला विकास कार्पोरेशन योजना (डब्ल्यू.डी.सी. एस)
- इन्दिरा महिला केन्द्र
- महिला समिति योजना
- खादी एवं ग्रामीण उद्योग कमीशन
- इन्दिरा प्रियदर्शिनी योजना
- एस.बी.आई. स्त्री शक्ति योजना
- सिडबी महिला उद्यम निधि महिला विकास निधि
- एन.जी.ओ. क्रेडिट स्कीम
- कृषि एवं ग्रामीण विकास योजना

निष्कर्ष – किसी भी देश की परम्परा और संस्कृति उस देश की महिलाओं से झलकती है। महिलायें समाज की रचनात्मक शक्ति होती हैं। आने वाले कल को सुधारने के लिए हमें आज की महिलाओं की स्थिति को सुधारना होगा, उन्हें न्याय देना होगा महिला आधिकारों के संरक्षण के लिए बनाये गये विभिन्न कानूनों को पूरी ईमानदारी व सक्रियता से लागू करना होगा। साथ ही साथ हमें घरेलू तथा सामाजिक स्तर पर जागरूकता लाना होगा। महिलाओं में अपार क्षमता निहित है इन्हें सबल और सशक्त कर हम देश को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक रूप से सुदृढ़ बना सकेंगे। इस संदर्भ में प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू का यह कथन आज भी प्रासंगिक है कि –'' जब महिलायें आगे बढ़ती हैं, तो परिवार आगे बढ़ता है, समाज आगे बढ़ता है और राष्ट्र भी अग्रसर होता है।''

महिला सशक्तिकरण के लिए सुझाव

- सर्वप्रथम महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए प्रयास करने होंगे। महिला संगठनों, स्वयं सेवी संस्थाओं तथा सरकार को इस दिशा में प्रयास करने होंगे।
- शहरों के साथ–साथ गाँवों में भी महिलाओं का शोषण और उत्पीड़न को रोकने के लिए महिलाओं में शिक्षा का प्रसार करना होगा। उन्हें संगठित होकर अन्याय के विरूद्ध आवाज उठाने की प्रेरणा देनी होगी।
- विद्यालयों में छात्राओं को विशेष प्रशिक्षण (जूडो–कराटे), कानूनी अधिकारों की जानकारी, शोषण, उत्पीड़न संबंधी निर्देशों का सख्ती से पालन, महिला मामलों में पुलिस की पूरी सजगता एवं सक्रियता, महिलाओं के लिए पृथक थानों की व्यवस्था आदि आवश्यक है।
- विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में महिला भागीदारी को और बढ़ावा दिया जाये।
- वर्तमान में लागू महिला संबंधी कानूनों में व्याप्त विसंगतियों को दूर किया जाये जिससे महिलाओं को राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक आदि सभी क्षेत्रों में पुरूषों के समान कानूनी और वास्तविक रूप में सभी मानव अधिकार प्राप्त हो सके।

संदर्भ सूची :–

- भारतीय ममता, मेरठ, उप्र– मासिक उद्यमिता समाचार पत्र दिसम्बर 2013
- डॉ. श्रीमती पटेल कमला –मासिक उद्यमिता समाचार पत्र अगस्त 2013
- दास गुरूचरन स्तंभकार व साहित्यकार :– दैनिक भास्कर, मंगलवार 24 सितम्बर 2013
- इण्डिया वूमेन्स इम्पॉवरमेन्ट – आई.एफ.ए. डी/ओ.ई, 2000, द रिपब्लिक ऑफ इण्डिया; तमिलनाडु
- नागराज, बी. (2013), इम्पॉवरमेन्ट ऑफ वूमेन्स इन इण्डियाः ए क्रिटिकल एनॉलिसिस. जनरल ऑफ ह्यूमिनिटीज एण्ड सोशल साइंस
- शुक्ला पश्यंती, (2016), भारत में महिलाओं की स्थिति
- कुमार, संगीता (2008), अर्थव्यवस्था में महिलाओं की स्थिति, योजना, एन.एस.एस.ओः रिपोर्ट–नम्बर, 409 एण्ड

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

CONTRIBUTION OF LOCAL PEOPLE IN THE CONSERVATION OF HERITAGE

Dr. Alpana Singh (HOD)
Dept. Of History, Mata Gujri College (Autonomous), Jabalpur

Local people are the real carriers of culture and traditions. They are the only ones who knew the importance of their cultural heritage and tourist places. They had learnt the historical or mythological stories related to tourist places nearby from their forefathers. Therefore their support can be very useful for the development of tourism at any place.

Successfully planning for tourism development requires the active support and involvement of the local community. It is important to plan tourism so that it does not compromise their quality of life. The issues that can be included are over-crowding their localities, undue changes in social values, increased demand that raises the price of consumer commodities, and degradation of the natural environment.

According to UNESCO, "the aim is not only to preserve increasingly numerous items of cultural property but also to safeguard complexes which go far beyond single large monuments or individual buildings. The idea of the heritage has now been broadened to include both the human and the natural environment, both architectural complexes and archaeological sites, not only the rural heritage and the countryside but also the urban, technical or industrial heritage, industrial design and street furniture.

Furthermore the preservation of the cultural heritage now covers the non-physical cultural heritage, which includes the sigh and symbols passed on by oral transmission, artistic and literary forms of expression, languages, ways of life, myths, beliefs and rituals value systems and traditional knowledge and know-how. "The deliberate act of keeping cultural heritage from the present for the future is known as preservation (American English) or conservation (British English) though these terms may have more specific or technical meaning in the same contexts in other dialect.

In Mahakaushal region various monuments are not protected. They are being continuously damaged by people. Even their stones, doors, decorative motifs and sculpture are taken out and sold. Here the contribution of local population is needed, to extend their help to local bodies, and voluntary agencies in the protection of historical heritage.

Participation of local People in the Conservation of Heritage

The most important aspect of conservation is the participation of local people. **Drake (1991**) defines local participation as 'the ability of local communities to influence the outcome of development projects that have an impact on them.'

Educational efforts should be made with the help of press to build public awareness.

The participation of local people can be increased by organizing workshops and meetings. All research and information collected from the local people can be synthesized. The skills of youth can be gained by involving them in the conservation. The ecotourism project team together with the community could develop an action plan for implementing solutions to identified problems. "Participation therefore plays a key role in the initiative, as it empowers people to play a role in the decision making process, where in many cases it is only those who are politically connected or affluent who are involved in the control and management of the enterprise." (Sproule 1996) Development initiatives have better results if being implemented according to the suggestions of local people. Krippendorf (1982) advocated that 'tourism policies should no longer concentrate on economic and technical necessities alone, but rather emphasise the demand for an unspoiled environment and consideration of the needs of the local people.' "This 'softer' approach places the natural and cultural resources at the

forefront of planning and development, instead of as an afterthought."[2] Therefore it becomes more important to adopt Alternative Tourism.

Alternative Tourism is a term that encompasses various applications, ('appropriate', 'eco-friendly', 'soft', 'responsible', 'controlled', and 'people to people' tourism). This responsible tourism saves displacing local people from traditional life- style and original culture. This more sensitive approach to tourism development strives to satisfy the needs of local people and tourists and the host country in a complementary way.

Presently, Mass tourism is not preferred for the fact that it dominates tourism of a region, its environment and its people. Tourism research in 1980s, argued for an alternative tourism to mass tourism. Thus, Alternative tourism is form of tourism that advocates an approach opposite to mass tourism. Dernoi (1981) illustrates the advantages of AT-

a) Families will acquire managerial skills.

b) AT will generate direct revenue for community members, thus benefitting the local community.

c) AT will also help to preserve local traditions.

d) AT is ideal for travelers who prefer close contacts with local people.

e) AT will promote intercultural understanding.

'Local people are the first to recognize the benefits of conserving their natural-resources-base, much more so than large developers who don't live in the area.' (**Mackinnon, 1995)** Therefore, it is important that the local people should be involved. "Such involvement can take the form of community representatives who speak for various elements of the population."[3]

Education plays a key role and local people should be allowed to develop their own educational programmes for tourists. This will inspire them to shape and design tourism according to their needs and desire. It should be seen that tourists must abide by the structured guidelines developed by local people.

Local people should be given responsibility by involving them in preparing management plans, which is also important from the point of view of both the community development and development of the country.

Planning is for the benefit of the people, and they should be involved in the planning and development of tourism in their areas. Tourism development should be aimed at to protect natural and socio-cultural resources and improve the welfare of local people, while enhancing monetary gains and market access.[4] Linking Communities, tourism and conservation, through this involvement, tourism development will reflect a consensus of what the people want. Also, if residents are involved in planning and development decisions and if they understand the benefits the tourism can bring –they will more likely support it.[5]

An important aspect of sustainable development is emphasizing community based tourism this approach to tourism focuses on community involvement in the planning and development process, and developing the types of tourism, which generate benefits to local communities. It applies techniques to ensure that most of the tourism goes to local residents and not to the outsiders.[6] Maximizing benefits to local residents typically results in tourism growth and their active participation in the conservation of local tourism resources.

The benefits accruing to local communities are also beneficial to the country, through the income and foreign exchange earned, employment generated and the support that local communities give to national tourism development and conservation policies is beneficial to the country.[7]

The Contribution of Local People in the Conservation of Heritage in Mahakaushal

The credit of development of cultural heritage of Jabalpur in earlier periods goes to Raja Gokul Das and Beohar Raghubir Singh. Raja Gokul Das loaned money to the Jabalpur Municipality in 1881 for the construction of Khandari water works to solve the problem of lack of water. To commemorate the completion of the water works a fountain was built in Lordganj. While sanctioning the loan, he asked for one favour from the government that the public should not be required to pay any water tax or additional tax on account of water works.[8] Raja Saheb also gave money for

the construction of Town Hall for public functions.[9] This building houses a big library. Raja Saheb helped in the construction of a female hospital in Miloniganj. It was inaugurated on 7th December 1896, by Lord Elgin, the Viceroy and Governor-General of India, and was named as Lady Elgin Hospital.[10] The municipal community built a Dharamshala in the memory of Raja Gokul Das. Sir H.Credock, Chief Commissioner opened it for public in 1911. Lord Lansdowne has conferred him the title of Raja in 1889.

Rajman Rajeshri Beohar Raghubeer Singh was the last jagirdar of Jabalpur to whose ancestors the estates were granted by descendents of Rani Durgavati or acts of nationalism, patriotism, and bravery in the battlefield. His ancestor Rajman Rajeshri Beohar Adhar Singh was Rani Durgavati's Prime Minister and Army Commander who attained martyrdom fighting against Mughal forces at the battle of Narrai**.** Due to very strong hold among the masses, the hereditary title "Beohar" and jagirdari was respected by the subsequent Marathas. The British later become hostile to the family because of their patriotism. In the memory of Beohar Raghubeer Singh 'Beohar Bagh' is named and for the noble cause of rehabilitation of Thugs' families who were called 'gurinds', the Beohar family allowed their place of land known as 'Gurandi' to Col. William Henry Sleeman, appointed commissioner of Jabalpur. Beohar Raghubeer Singh's diary is been published as 'Pracheen Smritiyan' which provides information about Jabalpur.

The era of literary activities had begun with Pt. Makhanlal Chaturvedi and Shri Madhav Rao Sapre. Seth Govind Das, grandson of Raja Gokul Das created enthusiasm in the youth for literary activities by opening Rashtriya Hindi Mandir and Sharda Bhavan Pustakalaya in 1915. Pt. Narbada Prasad, Pt. Dwarka Prasad Mishra were actively associated with the Hindi movement.

Pt. Dwarka Prasad Mishra was the president of Jabalpur Municipal Committee from 1932-36. After independence he became home minister. As a journalist he successfully edited 'Lokmat'. He was Minister of Education in 1955.He was Vice Chancellor of Sagar University from 1956-62 and became the Chief Minister of M.P. in 1963.

Sharad Narayan Khare had done valuable work on Pt. Dwarka Prasad Mishra under the guidance of Dr. Rajeev Dubey. Pt. Dwarka Prasad Mishra was a freedom fighter, poet, journalist writer and administrator. He had taken admission in Robertson College of Jabalpur in 1923 but left his studies to participate in freedom movement. He decided to take Sanskrit as one of the subject because according to him it will provide him ample time for the work of congress.[11] He was known as "Loh Purush' in the political scenario of Central Provinces. Seth Govindas met D. P. Mishra when Gandhiji started Non-cooperation Movement in which he was participating actively. Mishraji was nearly 20 years of age and wanted to participate in the struggle and he had already left his college for the sake of it.[12] Mishraji started staying at GokulDas Palace with Seth GovindDas. "I was always influenced by his disposition, ability, political expertise, administrative skills and traits. Even his opponents praised him for his intelligence."[13]

Literary meets were arranged with Babu Ramanuj lal Shrivastava, Subhadra Kumari Chouhan, the writer of immortal poem 'Jhansi ki Rani' and Keshav Prasad Pathak, the famous translator of 'Omar Khhayyam'.

Among the literary personalities were Pt. Kunjilal Dubey, who later became the speaker of M.P. Assembly, and the Finance Minister, Beohar Rajendra Singh a prolific writer, Pt. Matadeen Shukla, at one time editor of 'Madhuri', Pt. Kamta Prasad Guru and Shri Harishankar Parsai, progressive writer of satire.

Pt. Kunjilal Dubey was the first Vice Chancellor of Jabalpur University when it came into being in 1956. He was a speaker of M.P. Assembly and became Finance Minister. He was awarded 'Padma Shri' in 1964 and D.Litt. from Jabalpur University in 1965 and from Vikram University in 1967.

Pt. Lajjashankar Jha was bestowed the title of D. Litt., by the Jabalpur University in 1964. He was also awarded with Sahitya Vachaspati in 1968 by Hindi Sahitya Sammelan. The same year Jabalpur Corporation honoured him.

Shri Bhawani Prasad Tiwari was a poet,

writer and seven times Mayor of Jabalpur Corporation. He was honoured with the title of Padmashri and translated Gitanjali of Rabindra Nath Tagore in Hindi.

Dr. M.C. Choubey, an A.M.S., Medical Practitioner of Jabalpur had given great contribution in conservation of culture of Jabalpur in the form of literature. The important works are 'Jabalpur: The Past Revisited' and 'Tripuri'. The illustrations of Shri Vishnu Agnihotri, made the works immensely admirable.

Shri Ram Manohar Sinha is highly appreciated in painting. He was student of Nandlal Bose of Shanti Niketan. He illustrated the original manuscript of the constitution of India. Shri Vishnu Agnihotri, Shri Kamta Sagar and Shri Amritlal Vegad are also reputed artists.

Shri Amritlal Vegad did his studies from Shanti Niketan and was trined under able teachers like Nandlal Bose. He joined as teacher at Institute of Fine Arts in Jabalpur. He was awarded with Sahitya Akedemi Award in 2004 for his travelogue-'Saundarya ki Nadi Narmada'[14] He was also awarded Madhya Pradesh Rajya Sahitya Award for his various works. He is also a recipient of the Mahapandit Rahul Sankrityayan award in Hindi.[15] Vegad has accomplished the entire Narmada Parikrama (literally , circumambulation, walking along the entire river bank) commencing from his city Jabalpur right up till Bharuch in Gujarat and back, finally completing his parikrama by 1999.[16] His other two travelogues are "Amritasya Narmada", and "Teere Teere Narmada".

Dr. M.G. Dixit has traced the antiquity of Tripuri from the pre-historic times down to the Kalachuri period till about the 11th century A.D. This excavation conducted by the University of Sagar, has yielded several interesting objects described in detail which throw a considerable light on the social and economic conditions of ancient Mahakoshala.

Ram Kinkar Upadhyaya is a noted scholar on Indian scriptures and recipient of Padma Bhushan in 1999. He wrote about 84 books mainly on Ramcharitmanas. Padmakara Bhatt has been recognized as one of the greatest Hindi poets. His numerous poems in Brajbhasha, especially depicting relations of Radha and Krishna or those sung in the praise of Ganga, are well known for their melody and sweetness.

The history of Sagar will remain incomplete without mentioning the name of Dr. Hari Singh Gour, the scholar and barrister. His numerous contributions to the legal, political and religious thought of the country constitute an eloquent testimony to his profound learning and wide experience in various fields.[17] His dream of University of Sagar, is fulfilled in 1946. He was the Founder Vice Chancellor of this University. Since then this institution is been inspiring large number of students for learning and researches.

Pt. Ravi Shankar Shukla was the Chancellor of University of Sagar and the first Chief Minister of the Madhya Pradesh Government, not only supported the scheme of excavations but has also given his active support to the project of Tripuri by giving liberal grants through the Government to carry out the excavations, the first of that kind in Madhya Pradesh, and further to publish in a substantial form the results achieved therein.

Dr. R.P. Tripathi gave suggestions to institute Department of Archaeology at the University of Sagar which was accepted. He was Vice Chancellor of Sagar University in 1953-55 and supported wholeheartedly excavations at Tripuri.

Dr. Rajeev Dubey was awarded by MPCOST for his valuable work in the field of social science. He is a learned professor and known teacher of Rani Durgawati Vishwadyalaya. His notable contributions for the development of Mahakaushal region and conservation of its heritage can be seen in his efforts. He wrote many books and promoted researches on the region.

Among the few great man of Mahakoshala, there is always mention of Rajneesh (Osho). He has marked his times with his thoughts and vision. He taught in Jabalpur University for 9 years. His global intellectual impact can be seen by the number of disciples.

Maharishi Mahesh Yogi developed the Transcendental Meditation technique and was the leader and guru of a worldwide organization. He had trained nearly 40,000 TM teachers and taught the Transcendental Meditation technique to more than five million people and founded thousands of

teaching centre and hundreds of colleges, Universities and schools.

Shri Premnath, Arjun Rampal, Ashutosh Rana and Raghubeer Yadav are well known for their performances in cinema. Rajnikant Trivedi, Kulkarni Bandhu and K.K. Naikar are famous in the field of comedy. Jadugar Anand, as magician achieved success internationally. Smt. Sushila Bai Pohankar, Shri Ajay Pohankar and Adesh Shrivastava earned great fame in the field of music. In the field of photography Shashin and Rajnikant Yadav are acknowledged.

Local artists such as painters and sculptors had also contributed in the promotion of heritage. Numerous committees welcome the tourists and local public wholeheartedly in their well decorated pandals during Durga Pooja and Ganesh Utsav festivals. These members work hard 2-3 months prior to the festivals to decorate the *pandal* in an innovative and unique style each year. This healthy competition develops the spirit of better performance the next year. These committees also held Chal Samaroh (Grand procession of idols) in festive manner but peacefully. Some of these Samitis working from long time are NavJyoti Durga Mandal, and Nav Shakti Durga Mandal Gorakhpur.

Thus we can say that contribution of local people works in two ways in the conservation of heritage. They are the one who had preserved traditional art, craft, and cultural heritage. Secondly, they can be involved in the planning and management of tourism. Also local people become the main pillars, offering to tourists in a sustainable form, local products in which they have pride as things representing their locality, so developing and sharing emotions and happiness between tourists and themselves (local residents) making at the same time a contribution to the development of tourism of the local area concerned.

REFERENCES :

1. en/Wikipedia.org/ wiki/ cultural heritage
2. Badan B.S. & Harish Bhatt, Ecotourism, 2007, p.7
3. Badan B.S. & Harish Bhatt, Ecotourism, 2007, p.120
4. Gutirrez Eileen, Kristin Lamoureux, Seleni Metus, The George Washington University, 2005
5. Badan B.S.& Harish Bhatt, Tourism planning and development, Commonwealth publishers, 2007, p.10
6. Badan B.S. & Harish Bhatt, Tourism planning and development, Commonwealth publishers, 2007, p.8
7. Badan B.S. & Harish Bhatt, Tourism planning and development, Commonwealth publishers, 2007, p.8
8. Choubey M.C, Jabalpur, The Past Revisited, INTACH, 1993, p.5
9. Biography of Raja GokulDas, p.75
10. Biography of Raja GokulDas, p.83
11. Mera Jiya Hua Yug, Mishra D.P., Part1, p.51
12. Seth GovindDas, Ek Jansevi ka Vyaktitva, Mishra Abhinandan Granth, p.29-30
13. Seth GovindDas, Ek Jansevi ka Vyaktitva, Mishra Abhinandan Granth, p.29-30
14. Competition Science Vision, February, 2005, p.1561
15. Gaur Mahendra, Indian Affairs Annual, Volume 2, 2007, p.41
16. River of life and learning-Chat from Amrit lal Vegad by Parul Sharma Singh-The Hindu, 25 February 2011
17. Bajpai Prof. K.D., Sagar Through The Ages University of Sagar, 1964 p.24

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

तीव्र आधुनिक परिवर्तन एवं निम्न आर्थिक स्थिति का बाल अपचार (अपराध) पर प्रभाव

डॉ. मौसमी सिंह

प्रस्तुत शोध पत्र में तीव्र आधुनिक परिवर्तन एवं निम्न आर्थिक स्थिति का बाल अपचार पर होने वाले प्रभावों का अध्ययन किया गया है। वर्तमान परिवेश में पाश्चात संस्कृति के प्रभाववस तीव्रता से परिवर्तन हो रहे हैं। आधुनिक चकाचौंध में शामिल होने की ललक एवं सबकुछ शीघ्रता से पाने की जिज्ञासा बालकों को अपचार के ओर प्रेरित कर रही है।

प्रस्तावना : बाल अपचार का अर्थ समाज विरोधी व्यवहार का कोई प्रकार है। यह व्यक्तिगत तथा सामाजिक विघटन के कारण होने वाला प्रभाव है।

बाल अपचार में एक स्थान विशेष पर उस समय लागू कानून द्वारा निर्धारित एक निश्चित आयु के बालक द्वारा किये गये अनुचित कार्यो को सम्मिलित किया गया है।[13]

इन बच्चों में से ज्यादातर अभावग्रस्त वातावरण एवं जटिल सामाजिक परिस्थितियों में जीवन जीते है। जिससे उनके शारिरिक विकास के साथ–साथ सामाजिक उत्थान की प्रक्रिया में बांधा उत्पन्न होती है। प्रायः ऐसे बच्चे मानसिक रूप से उपेक्षित और असुरक्षा की भावना से ग्रसित होते है। जो समुचित देख रेख एवं संरक्षण के अभाव में निराशाजनक सामाजिक, पारिवारिक वातावरण में पलते है तथा अपचार की ओर उन्मुख होते है।

अनेक अनुसंधानों से यह सिद्ध हो चुका है कि 75 प्रतिशत से 95 प्रतिशत तक बाल अपचारी निर्धन परिवारों के थे।[14]

सन् 1991 में पकडे गये कुल बाल अपचारियों में से 60ण्4 प्रतिशत बाल अपचारी निर्धन वर्ग के थे।[15]

बाल अपचार का सीधा संबंध सामाजिक आयु से होता है, जिसमें भावनात्मक स्थिरता और प्रौढ़ता आदतें और दृष्टिकोण तथा समझ के प्रतिमान को सम्मिलित किया जाता है। यह जग जाहिर है कि उपेक्षित बालक जीने के साधन एवं सुविधाएँ तथा भावनात्मक सहारा और परिवेश न मिलने के कारण ही समाज विरोधी बन जाता है।

आधुनिक समाज संक्रमण और परिवर्तन की परिस्थिति से गुजर रहा है। जब समाज में तीव्रता से परिवर्तन आते है तो असमंजस्य की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इन तीव्र परिवर्तनों से बालक का मस्तिष्क बुरी तरह से प्रभावित होता है। फलस्वरूप वह अपचार की ओर प्रवृत्त होता है। वर्तमान में बाल अपचार के जो भी ऑकड़े प्राप्त हुये है उनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह समस्या प्रतिदिन गंभीर रूप धारण करती जा रही है।

बाल अपचार जहां आज एक ज्वलंत समस्या के रूप में हमारे सामने खड़ा है वहीं हमारे समाज पर पड़ने वाला इसका प्रभाव भी कम सोचनीय नहीं है।

अध्ययन का उद्देश्य :

आधुनिक समय में वैज्ञानिक एवं तकनिकी प्रगति में जहॉ मानव की सुख–सुविधाओं में उत्तरोत्तर प्रगति की है वहीं औद्योगिक समाज को भी जटील बना दिया है। परिणाम स्वरूप समाज में कई प्रकार की सामाजिक समस्यायें उत्पन्न हो गई है। ऐसे बालक जो देश का कर्णधार है कुछ विशेष परिस्थितियों के चलते अपराधिक प्रर्वति की ओर अग्रसर होते हैं। ऐसे बालकों में सदविचार का संचार करना ही अध्ययन का उद्देश्य है।

1. परिवार की आर्थिक स्थिति का बाल अपराध से संबंध ज्ञात करना।
2. अपचारी बालकों की जीवन शैली पर आधुनिकता के प्रभाव का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पना :

1. ऐसे बालक जो निम्न आर्थिक परिवेश में जीवनयापन कर रहे हैं उनमें सामान्य परिवार के बालकों की तुलना में अपराधी प्रर्वति अधिक पाई जाती है।
2. आधुनिकता की लालसा जैसे – अच्छा मनोरंजन, अच्छे कपड़े, बालाकों को अपचार की ओर प्रेरित करते हैं।

निर्दशन चयन :

प्रस्तुत शोध कार्य में तथ्य संकलन के उद्देश्य प्राप्ति हेतु उद्देश्य पूर्ण निदर्शन विधि का प्रयोग किया गया है।

शोध उपकरण :

प्रस्तुत शोध कार्य में तथ्य संकलन हेतु शोधकर्ता द्वारा स्वयं साक्षात्कार अनुसूचि का निर्माण किया गया हैं । अनुसूचि को दो भागों में वर्गित किया गया है। प्रथम भाग में सामान्य प्रश्नों को सम्मिलित किया गया है। जैसे बालक का नाम उम्र, परिवार का प्रकार आदि। तथा द्वितीय भाग में विशेष प्रश्नों को सम्मिलित किया गया है। जैसे परिवार की आमदनी, बालकों के कार्य करने की स्थिति, अर्जित आय का व्यय आदि।

सांख्यिकी तकनिकी :

प्राप्त तथयों को सांख्यिकी रूप से विशलेषित करने हेतु औसत तथा प्रतिशत विधी का उपयोग किया गया है।

तालिका क्रं–1
परिवार की मासिक आमदनी

क्रमांक	परिवार की मासिक आमदनी	संख्या	प्रतिशत
1	500 – 1000	17	34%
2	1000 – 2000	13	26%
3	2000 – 5000	10	20%
4	5000 – 10000	8	16%
5	10000 – अधिक आमदनी	2	4%
		50	**100**

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि लगभग 80 प्रतिशत बालक गरिबी रेखा से नीचे के परिवारों के हैं

तालिका क्रं–2
बालकों के कार्य करने की स्थिति

क्रमांक	कार्य का प्रकार	संख्या	प्रतिशत
1	कचरा बीनना	12	24%
2	मजदूरी	18	36%
3	होटलों में कार्य करना	11	22%
4	कुछ नहीं	9	18%
		50	100

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि लगभग 82 प्रतिशत बालक किसी न किसी कार्य में लगे हुये हैं।

तालिका क्रं–3
अर्जित आय को व्यय करने की स्थिति

क्रमांक	कार्य का प्रकार	संख्या	प्रतिशत
1	घर खर्च हेतु	15	30%
2	नशा	22	44%
3	मनोरंजन/खाना–पान/कपडे/खिलौने	9	18%
4	अन्य	4	8%
		50	100

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि लगभग 30 प्रतिशत बच्चे अपने परिवार में घर खर्च हेतु व्यय करते हैं। किन्तु लगभग 44 प्रतिशत बच्चे अपनी आय का अधिकांश भाग नशे पर व्यय करते है। लगभग 18 प्रतिशत मनोरंजन/खाना–पान/कपडे/खिलौने आदि पर व्यय करते है।

निष्कर्ष : तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट है कि बालग्रह में निवासरत अधिकांश बालकों की पारिवारिक स्थिति निम्न से भी निम्नतर है। तालिका क्रमांक 2 से स्पष्ट होता है कि बालकों का एक बडा हिस्सा आमदनी हेतु किसी न किसी कार्य में लगा हुआ है। तथा अर्जित आय का उपयोग आधुनिकता की वस्तुयें जैसे नशा,

मनोरंजन/खाना–पान/कपडे/खिलौने आदि पर व्यय करता हैं । अतः उपकल्पना क्रमांक 1 और 2 सार्थक पाई गयी।

परिशिष्ट

पुस्तके एवं शोध पत्र

1 बघेल डी. एच.ए अपराध शास्त्र, विवेक प्रकाशन, न्यू ए. जवाहर नगर, दिल्ली
2 बीसेज और बीसेज, मार्डन–मार्डन सोसाइटी
3 Burt Cyril, The Young Delinquent, London University, 1944 Press
4 बर्गेस, लाक एंड थामस "द फैमिली", वेननासाईड रीन हाल्ड कंपनी, न्यूयार्क, 1977
5 डॉ बघेल डी.एस.ए अपराध शास्त्रए विवेक प्रकाशन, दिल्ली, 1981
6 डॉ. प्रसाद बालेश्वर, भारत में श्रम संघवाद, उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ
7 रूथ नंदा एनशेन, द फैमिली इटझ फन्गशन एंड डिस्टीनी, हार्पर एंड ब्रदर्स न्यूयार्क, 1949
8 रविन्दनाथ मुखर्जी, सामाजिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी, सरस्वती सदन, दिल्ली तृतीय संस्करण, 1974
9 प्रो. एन.पी. परांजेप, अपराध शास्त्र एवं अपराधिक न्याय प्रशासन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 1971
10 शर्मा रामचन्द्र, अपराध शास्त्र सामाजिक विघटन एवं दंड शास्त्र, राजहंस प्रकाशन, 1975
11 महाजन एवं महाजन, अपराध शास्त्र, शिक्षा साहित्य प्रकाशन, 1991

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

सिवनी जिले में महिला उद्यमिता विकास का परिदृश्य

डॉ. गुंजा माहोरे
शासकीय स्वशासी स्नानकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा

प्रस्तावना – इतिहास साक्षी है कि महिलाओं ने सैनिक, नर्सिंग, प्रशासक, राजनैतिक आदि के क्षेत्र में योगदान दिया है, किन्तु मध्यकाल में महिलाओं के साथ एक अबला नारी की तरह व्यवहार किया जाता रहा है। किन्तु आधुनिक काल में नवप्रवर्तन का युग है इसमें महिलाओं ने हौजरी वस्त्र से लेकर ब्यूटी पार्लर ओर हैल्थ क्लब में तक महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन कर रही है अतः यह कहना सत्य को प्रगट करने के समान है कि महिलाओं की महिला उद्यमिता के क्षेत्र में महती भूमिका है।

सिवनी जिले का परिचय – सन् 1833 से निर्मित कई अवधारणा से परिपूर्ण सिवनी जिला अनूठी परम्पराओं को समेटे हुए है। शिव मंदिर के नाम से सिवनी प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका है, मध्यप्रदेश के शांति टापू के रूप में स्थापित है। प्रदेश में 24 वाँ स्थान रखता है, 1585 ग्राम है 8 विकासखण्ड है जिसमें महिलाओं की स्थिति अनेकता में एकता के रूप में स्थापित हैं।

अध्ययन की विधि – अध्ययन को सुगम एवं सारगर्भित बनाने के लिए प्रश्नावली एवं देव निर्देशन विधि का प्रयोग किया गया। 110 व्यवसायिक परिदृश्य का महिलाओं की भागीदारी के अध्ययन विषय को पूर्ण किया गया तथा प्राप्त निष्कर्ष आने वाले भविष्य में नयी संभावनाओं के केन्द्र विन्दु होंगे। इसी आशा ओर विश्वास के साथ।

आर्थिक विकास के प्रति बढ़ती जागरूकता बदलता सामाजिक परिवेश बदलती संस्कृति और आधुनिक सभ्यता ने संसार के विभिन्न समाजों को प्रभावित किया है, इससे भारतीय समाज भी अछूता नहीं है। मध्यप्रदेश के सिवनी जिले में विभिन्न आर्थिक, सामाजिक कार्य क्षेत्रों में महिलाओं के योगदान को अनदेखा नहीं किया जा सकता है। महिलाएँ परम्पराओं से हटकर एक नवीन संस्कृति की रचना कर सकती हैं। यही कारण है कि उद्योग और व्यवसाय उद्यमिता के क्षेत्र में महिलाओं की निरन्तर बढती भागीदारी एवं सफलता से उद्यमिता के विकास को नयी दिशा मिली हैं।

अतः विकास के परिदृश्य के मापन के लिए यह आवश्यक है कि जिले में स्थापित उद्योगों में महिलाओं की स्थिति का आंकलन किया जावें। इसके लिए प्रस्तुत तालिका में महिलाओं द्वारा संचालित उद्योगों का आंकलन किया गया है।

तालिका क्रमांक – 1
सिवनी जिले के औद्योगिक क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति

क्र.	वर्ष	सिवनी जिले में स्थापित उद्योगों की संख्या	महिला द्वारा संचालित उद्योगों की संख्या	महिला द्वारा संचालित उद्योग (प्रतिशत में)
1	2007-08	304	27	8.9
2	2008-09	389	45	11.6
3	2009-10	403	52	12.9
4	2010-11	403	77	19.1
5	2011-12	405	89	22.0

स्रोत – जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र सिवनी

कार्ल पियर्सन का सहसंबंध गुणांक (सिवनी जिले में स्थापित उद्योगों की संख्या एवं महिला द्वारा संचालित उद्योगों की संख्या के मध्य) = + 0.765

अतः इस विश्लेषण से स्पष्ट है कि महिलाओं का प्रतिशत औद्योगिक संचालन में निरन्तर बढ़ा है। जो कि इस बात का प्रमाण है कि महिलाओं में निर्भीकता बढ़ी है, वे स्वयं प्रोत्साहित है, इससे महिलाएँ प्रत्येक क्षेत्र में आगे आयी है, जो कि विकास की सार्थकता को स्पष्ट करता है। विगत 5 वर्षों के आँकड़ों का आंकलन करने के आधार पर यह कहा जाना उचित है कि आने वाला समय महिलाओं की भागीदारी को बढ़ायेगा।

जिले में महिला उद्यमिता विकास के चरण –

1. इस उद्योग की संचालिका मालिक के रूप में श्रीमति पुष्पा अग्रवाल है, जो कि औद्योगिक क्षेत्र सिवनी में सीमेन्ट के हर आकार के पाइप, टंकी एवं जालियाँ निर्माण करने का कार्य वर्ष 2008 से कर रही हैं।
2. इस उद्योग की संचालिका महिला उद्यमी मालिक के रूप में श्रीमति लक्ष्मी डहेरिया है। जो कि औद्योगिक प्रक्षेत्र लखनादौन में लक्ष्मी फ्लोर मील में मशीनों की सहायता से गेहूँ, दाल, दलिया आदि पीसने का कार्य वर्ष 2010 से कर रही हैं।
3. इस बांस उद्योग की संचालिका महिला उद्यमी मालिक के रूप में श्रीमति अनिता लोखंडे है। जो कि औद्योगिक प्रक्षेत्र केवलारी में बांस के द्वारा चटाई, टोकरी बच्चों के खिलौने आदि बनाने का कार्य 2006 से कर रही है।
4. इस मील की संचालिका मालिक के रूप में श्रीमति रेखा शर्मा है, जो कि औद्योगिक प्रक्षेत्र बरघाट में धान को मशीनों द्वारा पीसकर चाँवल का निर्माण कर रही हैं। इस मील की स्थापना वर्ष 2003 में हुई थी। इन्होंने ने 2.5 लाख रूपये स्वयं के तथा 2 लाख रूपये बैंक द्वारा ऋण प्राप्त कर अपना उद्योग प्रारंभ किया।
5. इस स्वसहायता समूह की संचालिका महिला उद्यमी मालिक के रूप में श्रीमति लीली बाई भीमटे है, जो कि 11 महिलाओं के समूह के साथ भोजन बनाकर टिफिन सर्विस सेवा कर रही हैं। इस स्वसहायता समूह की स्थापना वर्ष 2008 में हुई थी।
6. इस सिलाई सेंटर की संचालिका महिला उद्यमी मालिक के रूप में श्रीमति सीमा राय है। जो इस सिलाई सेंटर के माध्यम से लेडिज सलवार सूट, ब्लाउज, बच्चों के कपड़े, पेटीकोट आदि वस्त्रों का निर्माण वर्ष 2007 से कर रही हैं।
7. इस ब्यूटी पार्लर की संचालिका महिला उद्यमी मालिक के रूप में श्रीमति सरिता बघेल है। जो कि इस पार्लर के माध्यम से सौंदर्य प्रसाधन संबंधी सभी कार्य जैसे – थ्रेडिंग, मसाज, वैक्सीन, मेनीक्योर, पेडीक्योर, हेयर कटिंग, दुल्हन मेकअप आदि कार्य वर्ष 2009 कर रही हैं। तथा सौंदर्य प्रसाधन संबंधी समानों का विक्रय भी करती हैं।

महिला उद्यमी का व्यक्तिगत विवरण – जिले के विकास के परिदृश्य का अध्ययन करने के लिए यह आवश्यक है कि महिला उद्यमी के व्यक्तिगत विवरण का अध्ययन किया जावे, इसके लिए देव निदर्शन के आधार पर चयनित महिला उद्यमी के संबंध में आयु, शैक्षणिक योग्यता, उद्यम स्थापना के पूर्व अनुभव का अध्ययन किया जायेगा, जिसका विवरण निम्नानुसार है –

1) आयु के अनुसार – किसी भी उद्यमिता विकास में समस्त आयु समूह की महिलाओं का योगदान होता है, किन्तु जिले में 40 वर्ष से कम की महिलाएँ लगभग 68 प्रतिशत कार्यरत है, जो कि उद्यमिता के विकास में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से संलग्न है।

2) शैक्षणिक अर्हता के आधार पर – जिले में उद्यमिता के क्षेत्र में 6 प्रतिशत महिलाएँ अशिक्षित है। जो कि सहायक क्षेत्रों में सहयोग कर रही है, जबकि लगभग 94 प्रतिशत महिलाएँ शिक्षित है, जिसमें सर्वाधिक 24 प्रतिशत महिलाएँ स्नातक उपाधी की योग्यता रखती है, जो कि शैक्षणिक मापदण्ड में कम नहीं है।

3) अनुभव की प्रकृति के आधार पर – अध्ययन से प्राप्त जानकारी के अनुसयार लगभग 74.5 प्रतिशत महिलाएँ पारिवारिक संरचना से ही उद्यम स्थापित की है जिसमें उनके पति, भाई, रिस्तेदार आदि से आवश्यकतानुसार सहयोग प्राप्त हुआ है।

4) आय विश्लेषण के आधार पर स्थिति – आर्थिक दृष्टि से जिले के आंकलन करने पर यह ज्ञात हुआ कि जिला अधिक संपन्न नहीं है। 1लाख से कम आय वाली महिलाओं की संख्या लगभग 73.6 प्रतिशत है, मात्र 7.3 प्रतिशत महिलाएँ ऐसी है जिनकी वार्षिक आय 4 लाख से अधिक है।

निष्कर्ष – यह निष्कर्ष निकाला जाना न्यायोचित होगा, कि उद्यमिता के विकास की दृष्टि से महिलाएँ अलग–अलग क्षेत्रों में कार्यरत है, जिसकी पृष्ठभूमि का आंकलन विभिन्न चरणों के आधार पर किया गया। जिससे यह कहा जा सकता है कि उचित सरकारी नीति की आवश्यकता है, जिससे विकास की मंजिल को प्राप्त किया जा सकता है।

सुझाव –

1) सरकार की नीति के अंतर्गत महिला सशक्तिकरण के साथ आर्थिक रूप से संपन्न बनाया जाये।

2) वर्तमान में महिलाओं के शिक्षा का प्रतिशत तो बढ़ा है, तथा उनके परिवार का सहयोग महिला उद्यमियों को नयी दिशा प्रदान करेंगा।

संदर्भ ग्रंथ –

1) Anil kumar (2005) Women Entrepreneurship in Metropolitan Cities- Entrepreneurship & Employment, S.B. Verma (Deep & Deep Publication Pvt. Ltd. New Delhi) Page 5
2) Madhya Pradesh Human Development Report (2007), Oxford University Prees New Delhi Page 9
3) महिला उद्यमिता सर्वेक्षण (2010–2011)

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

शानी के साहित्य का यथार्थवादी कथा विन्यास

डॉ. परवीन बानो खॉन

काला जल :

शानी की सर्वाधिक प्रसिद्ध कृति है, काला जल जिसमें लेखक ने अल्पायु में ही अपने प्रतिभा संपन्न होने का परिचय दिया था। अपनी आसपास की परिस्थितियों घटनाओं को अपनी कहानियों में उकेरने वाले शानी ने काला जल में बस्तर में बसे हुए सामंती मुस्लिम परिवार की तीन पीढ़ियों की स्थिति, परिस्थिति , एवं दुर्गति को कथानक का आधार बनाया है। इसके साथ ही प्रतीक रूप में बस्तर के प्राकृतिक स्वरुप का भी अंकन किया है। जो हिन्दू–मुस्लिम संबंधों के तनाव और समन्वय को व्यक्त करते उपन्यासों में से सर्वश्रेष्ठ है। काला जल के इस काला पानी रुपी जीवन में मुस्लिम परिवार की व्यथा, उनकी मानसिकता, मुस्लिम परिवार की टूटन और त्रासदी का शानी ने यथार्थ चित्रण किया है। काला जल मुस्लिम मध्यमवर्गीय समाज का, तथा उसके आचार, विचार और व्यवहार की गहराईयों में हमें ले जाता है। यह उपन्यास स्वतंत्रता से पूर्व और स्वतंत्रता कालीन मुस्लिम समाज के चढ़ते–डूबते स्वरुप की गाथा है। काला जल मुस्लिम समाज के यथा स्थिति की एक अभिव्यक्ति है।

काला जल में कथा कहने की तकनिकी ही उनकी कुशलता की परिचायक है। शब –बरात की फातिया से प्रारंभ उपन्यास, फातिया की समाप्ति पर समाप्त होता है जिसमे खानदान के एक एक व्यक्ति का नाम लेकर फातिया पढ़ी जाती है और फातिया पढ़ने वाले के अंत में उससे जुडी समस्त घटनाएं जीवंत हो उठती हैं।

मोती तलाब के बंधे, सड़े दुर्गन्ध पूर्ण जल सम्पुर्ण उपन्यास में प्रस्तुत होता है, बंधे एवं जकड़े हुए जीवन की तरह। दो मुस्लिम परिवारों की तीन पीढ़ियों की व्यथा कथा में किसी महाकाव्य से कम नहीं जिसमें जीवन के विभिन्न रंग एवं भाव समाहित हैं। सम्पन्नता–निर्धनता, नैतिकता –अनैतिकता, स्वार्थपरता–निस्वार्थता, भीरुता–साहस, ईमानदारी–बेईमानी, सुख–दुःख अदि सभी के दर्शन होते हैं। इसके समस्त पात्र अपनी अलग छाप छोड़ते हैं।

आदिवासी क्षेत्र बस्तर में पुलिस के दरोगा करामत बेग का हिन्दू युवती बिट्टी

रोताइन से विवाह के समाज विरोधी कार्य से कथा प्रारंभ होती है। बिट्टी आगे चल कर बी दरोगन नाम से जानी जाती है। मिर्ज़ा की अकाल मृत्यु के बाद वह अपने बेटे रौशन की भावनाओं को न समझते हुए भी वह रज्जू मिया से विवाह कर लेती है। मर्यादा पसंद रौशन का विवाह छोटी फूफी से होता है। छोटी फूफी और उसकी भाभी जो बब्बन की माँ हैं का भारतीय गृहणी वाला रूप उभर कर आता है। जिसमें वे घटती–पिसती हुई परिवार संभालने में लगी हैं। रज्जू मिया का काम विकृत स्वरुप समाज के उन लोगों का प्रतिनिधित्व है जो छिपे रूप में अनैतिक कृत्यों से समाज को दूषित करते रहते हैं। वहीं बब्बन के अब्बा के किसी अन्य स्त्री से संबंध होने से परिवार की प्रतिष्ठा सम्पन्नता सुख–शांति तो नष्ट होती ही है बच्चों पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव का विश्लेषण भी शानी ने किया है।

छोटी फूफी की बेटी सल्लो आपा का दुसाहस मर्यादा पर भरी पड़ता है जो उनकी अकाल मृत्यु का कारण भी है। लेखक ने उनकी मृत्यु पर रहस्य का झीना आवरण बनाये रखा है। सल्लो आपा का भाई मोहसिन बहार से आकर रहने वाले पी . सी . नायडू के साथ जगदलपुर जैसे मृत क्षेत्र में स्वतंत्रता की अलख जगाने का हर संभव प्रयास करता है। तन मन धन से देश पर समर्पित नायडू हार कर विक्षिप्त हो जाता है एवं मोहसिन स्वतंत्रता प्राप्ति पश्चात अवसरवादी नेताओं, अधिकारियों के हाँथो प्रताड़ित होता है। उसे संदेह की दृष्टि से देखे जाने की पीड़ा का अंत करने के लिए पाकिस्तान जाने को उत्सुक हो जाता है। जिसका प्रतिकार बब्बन करता है।

उपन्यास में बब्बन शानी की अपनी ही प्रतिकृति प्रतीत होता है, जो बौद्धिक है, पर समाज भीरु भी, उसमें साहस का सिरे से आभाव है।

दो परिवारों की कथा स्वतंत्रता संग्राम की राजनैतिक उठापटक से होती हुई, स्वतंत्रता के पश्चात ऐसे प्रश्न के समक्ष खड़ी होती है जो आज भी अनुत्तरित है। वह यह की सदा से भारत भूमि में रह रहे मुस्लिमों का अपना राष्ट्र कौन है? वे अपनी भूमि से अलगाए जाते हैं और पकिस्तान के लिए भी बाहरी हैं। इसी यथार्थ की पीड़ा को शानी अनावृत करते हुए विचारणीय ढंग से प्रस्तुत करते है।

दो परिवारों की कथा के साथ ही 1910 की एक ऐतिहासिक घटना सरकारी कर्मचारियों के विरुद्ध बस्तर के आदिवासियों का विद्रोह भी है।

शाल वनों के द्वीप

मध्य प्रदेश के जनजातीय क्षेत्र बस्तर के घोर आदिजातीय अबुझमाड़ क्षेत्र एवं उसमें रहने वालीं मुरिया और मड़िया जनजातियों के सभ्यता से दूर अपनी प्रचलित परम्पराओं, मान्यताओं, आस्थाओं रीति –रिवाजों के साथ संघर्षपूर्ण जीवन को शानी ने अपनी कृति शाल वनों के द्वीप में केन्द्रित किया है, जो कि संस्मरण के निकट होते हुए भी हिंदी गद्य का पारंपरिक विचारों से हटकर नवीन संभावनाओं की ओर संकेत करती प्रतीत होती है। यह कृति शानी की लेखकीय प्रतिभा के एक नए पार्शव को सामने लाती है, जहाँ वे समाज शास्त्रीय तथ्यों के बीच से जीवन के हर्ष विषाद भरे चित्रों को उभारने का जोखिम उठाते हैं। इस प्रवत्ति के लेखन में विद्याओं की सीमाओं का हिलना तय है।

[1]: जानकी प्रसाद शर्मा, भारतीय साहित्य के निर्मात –शानी, साहित्य अकादमी, 2007, पृष्ठ 89

शानी जब अमेरिकी ...शास्त्रीय शोद्यार्थी एडवर्ड जे.जे.के. शोध सहायक के रूप में अबुझमाड़ के ओरछा गाँव में रह रहे थे तभी इन्होने इनके जीवन के विभिन्न पक्षों को निकटता से देखा महसूस किया। दूर से उनका स्वाभाविक, शाँत, सरल और स्वाभाविक लगने वाला जीवन कितनी कठिनाइयों और पीड़ाओं से भरा है। इसका जीवंत एवं संवेदनात्मक वर्णन उन्होंने श्साल वनों के द्वीपश में किया है। थोड़े से नमक के लिए साप्ताहिक बाज़ारों में चालीस, पैंतालिस मील की दूरी तय करना, जंगली जानवरों का जानलेवा आतंक, इलाज के आभाव में श्याज और श्हाईड्रोसिल आदि रोगों से तड़पते हुए दम तोड़ते लोग, खेती, शिकार, कंदमूल की खोज, बांस के टोकनी चटाई आदि बनाने में अथक परिश्रम के बाद भी भर पेट भोजन का आभाव, प्राकृतिक आपदायें, आदि देख शानी विचिलित हो कहते हैं ष्जीवन मृत्यु और कैसी होती है। " [2]

[2]:साल वनों के द्वीप–शानी पृष्ठ 37

इन मड़िया–गोंड़ जनजाति के अनंत संघर्षों को झेलते हुए जीवन, जीने की ललक को बनाये रखने के साधनों, समारोह, पर्व आदि उनमें जीवन के प्रति उमंग उत्पन्न करते हैं, एवं नई ऊर्जा, साहस और शक्ति का संचार करते हैं। इस सन्दर्भ में उन्होंने घोटुल प्रथा का विस्तार से उल्लेख किया है। काकसार पर्व का वर्णन भी सजीव है। इसके साथ उनकी संस्कृति के समस्त पक्षों का भी जीवंत चित्रण है जैसे देवी के प्रकोप को शांत करने के लिए पेन–लिस्कताल समारोह, डाही खेती , मेंडा खेत , एग दसीना, श्मोलाहिनाश प्रथा विवाह के लिए श्लम्हाड़े खटना आदि।

जनजातीय जीवन के साथ अबुझमाड़ के प्राकृतिक, नैसर्गिक वर्णन भी मनमोहक है। शानी ने बस्तर के लोगों की ही नहीं, वहां के नदी, पर्वत, झरने, और पेड़ पौधों की सांसों की आवाज़ को महसूस किया है। उन्होंने इस परिवेश के ठहरे हुए और अवसन्न जीवन के बीच अपनी अनेक कथा –रचनाओं की सामग्री खोजी है। " [3]

[3]: भारतीय साहित्य के निर्माता –शानी : जानकी प्रसाद शर्मा पृष्ठ –87

स्थानीय भाषा के शब्दों का सहजता से प्रयोग करते हुए शानी बाहरी दुनिया से अनभिज्ञ द्वीप के जीवन के समान ही इनका भी जीवन पाते हैं।

एक शहर में सपने बिकते हैं

फुटकर रचनाएँ जिनमे उनकी समीक्षात्मक दृष्टि, वैचारिकता, बौध्दिकता, संवेदनशीलता के साथ शानी के रचनात्मक सामर्थ का अनुमान होता है, वे लेख, संस्मरण, एवं निबन्ध एक शहर में सपने बिकते हैं पुस्तक में संकलित हैं। इसमें उनकी ग्यारह रचनाएँ चार उपशीर्षकों में संयोजित साहित्यकी संस्मरण, एकांकी और विविध। साहित्यकी के अंतर्गत श्आधुनिकता बनाम आधुनिकता में देशकाल एवं वातावरण के अनुसार आधुनिकता की वास्तविक पहचान बताते हुए पश्चिमीकरण से इसकी भिन्नता प्रकट करते हैं। जुनु में एक शाम में लोठार बुल्से, राजेंद्र यादव एवं शानी के बीच बातचीत है। जो उपन्यास के फिल्म बनने की प्रासंगिकता पर है। सौदाना बी के रोज़े में भारतीय मुस्लमान नमक शीर्षक से लेखक ने राही मासूम रज़ा के उपन्यास दिल एक सादा कागज़ की समीक्षा की है। एक कहानीकार का पुनर्जनम में मित्रों की शुभचिन्ता उनका महत्व के साथ एक लेखक का परिवार सामाजिकता एवं लेखन के मध्य सामंजस्य बैठाने की कठिनाई का वर्णन किया। गरेबाँ चाक करता है में शानी धर्मयुग में प्रकाशित श्री लक्ष्मीकांत वर्मा के लेख गैर जिम्मेवार पुस्तक समीक्षा के भिन्न रंगों साथ उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व एवं सार्थक रचनाओं के विषय में लिखा है।

तथा गर्दिश के दिन में आत्मकथात्मक रूप से अपने जीवन के अनेक उतार–चढ़ाव को रेखांकित किया है। एकाँकी शीर्षक में शानी ने दो एकांकी को स्थान दिया है। नाटक दर नाटक एकाँकी में स्त्री पुरुष के विवाहोत्तर प्रेम प्रसंगों पर आधारित है। तथा दूसरी

एकाँकी श्गुलाब में रफूश उनकी मार्मिक कहानी श्एक नाव के यात्री का नाट्य रूपांतरण है।

विविध के अंतर्गत सारे दुखिया जमुना पार में शानी दिल्ली के मजदूरों की बस्ती के बदले हुए नाम मयूर विहार में घर लेने पर माध्यम वर्गीय मानसिकता को पहुचने वाली आघात से समझौता का वर्णन करते हैं तथा अंतिम लेख एक शहर में सपने बिकते हैं शहर के स्वरुप, परिवर्तन, एवं उत्तम भविष्य के प्रति आस्थावान व्यकित की कथा है। उनके मन में गाँव से सपने लेकर शहर आए मजदूरों की भी चिंता कि कौन जाने वे वापस लौटते भी हैं या नहीं " [4]

[4]: एक शहर में सपने बिकते हैं, शानी पृष्ठ –97,

नैना कभी न दीठ

नैना कभी न दीठ में शानी के एक छोड़ सभी लेखन संकलित हैं जो नवभारत टाइम्स में किसी बहाने स्तम्भ के अंतर्गत मार्च 92 से अक्तूबर 92 के बीच छपे थे। जिसमे शानी ने तात्कालिकता एवं सामयिकता विषयों एवं ज्वलंत समस्याओं, को लेखन का आधार बनाया है। पुस्तक की प्रस्तावना में शानी खुद लिखते हैं कालम लिखते हुए मेरा यह बराबर और सचेत प्रयास था कि किसी भी बहाने मैं कहीं भी जा सकूँ। वह कोशिश भी शामिल थी कि कालम के तहत लिखे लेख सामयिकता और तात्कालिकता को छूते और समेटते हुए भी उन्हें फलाँग सकें। " [5]

[5]: पृष्ठ प•, नैना कभी न दीठ, शानी , इस संकलन का पहला लेख महाभारत का मुसलमान भारत के महान साहित्यकार राही मासूम रज़ा के मृत्युपरांत शोक में लिखा गया है। इस लेख में शानी ने भारतीय समाज में मुसलमान होने की नियति और स्थिति पर भी अपने विचार व्यक्त किये हैं। इस लेख में उन्होंने बड़ी ही प्रखरता से राही के जीवन का उनके लिखे साहित्य से तुलना की है। जैसे की डॉ. परमेश्वरी शर्मा के अनुसार सभी लेख महत्त्वपूर्ण हैं इनमें हिंदी के जाने–माने साहित्यकारों, साम्प्रदायिक दंगों, मन्दिर–मस्जिद–विवाद, भारत की संस्कृति, प्रकृति, साहित्यिक संघर्ष तथा अन्य अनेक पीड़ादायक घटनाओं से रू–ब–रू कराने का प्रयत्न हुआ है।

श्री जानकी प्रसाद शर्मा जी के अनुसार शानी ने सचेत भाव से उन घटना–स्थितियों को छुआ है जिनके जरिये अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक दोनों प्रकार की साम्प्रदायिकता को बेनक़ाब किया जा सके।" [6]

[6]: [99] गद्य रचनाएँ , भारतीय साहित्य के निर्माता शानी , जानकी प्रसाद शर्मा,

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Zora Neale Hurston: A New Voice in Feminism

Lokesh Yadav
Research Scholar (English)
School of Studies in Arts, Vikram University Ujjain

Having said that literature mirrors society and is also a mirror to society, a class of people especially writers have been fighting against the evils of caste, colour, creed, gender, language, culture, nationality etc. by raising their voices. Their voices against discrimination whether political, social or economical are imparted in literature by their effective use of language. All such agonies giving the birth to resistance in literature and in turn search for new voices as some of the writers think differently to come out of such pathetic conditions of pain and suffering. Janie, the protagonist of *Their Eyes Were Watching God* provokes self-realization which is inseparable from Zora's concomitant awareness of her cultural situation. The novel also celebrates the black woman's liberation from the legacy of degradation as Janie attains full strength with the utmost self-assurance by rejecting the community that has treated her poorly. Janie realized that suffering and sacrifice are necessary steps on the path toward self-discovery.

Janie, the protagonist of *Their Eyes Were Watching God* is Hurston's psychological self-portrait. Hurston reveals her insight into class and caste and demonstrate various socio-economic levels of blacks. Three moves of protagonist i.e. from rural west Florida, to the Negro city of Eatonville, to the Everglades and each move involves a different man, the last of whom gives Janie her reason for being. We first see Janie when at sixteen she is forced by her granny to marry an old farmer with sixty acres, thus prostituting her youth and beauty for Brother Logan Killicks's wealth and position in the community. Janie learns her first lesson that marriage is not meant for love. Then Joe Starks "a citified stylish dressed man", comes along, charms Janie, marries her, and takes her away with him to Eatonville. Joe rises from store owner to land owner and mayor, Janie grows increasingly disillusioned with her social status acquired at the cost of her husband's absence from her. Being an ambitious and having hunger for power, Joe treats Janie as an object rather than a person as a result happiness of their marriage deteriorates.

Thus when Joe dies Janie is ready for the remarkable Tea Cake, a genuine good-time man, comes along to teach her to fish, play checkers, pick beans, and make love. He takes her to Jacksonville to marry, then disappears with her secreted two hundred dollars, and fortunately falls in good company by staging a huge barbecue party and returns to Janie twenty-four hours later. Janie feels used only to discover Joe's honest acceptance; enjoyment is the basis of life

Their Eyes Were Watching God **is often classified as feminist as it is all about the story of a woman and above all it was the first major novel published by a black woman. The novel reflects the quest of a middle-aged woman for fulfillment in an oppressive society and asserts the view that racial liberation is possible only with the development of cultural awareness than rejecting the surrounding white culture. There is, of course no bitterness toward whites which reflects in the court trial of Janie after killing her husband Tea Cake where the white judge, the white lawyer and all-white jury are far more understanding than Janie's negro friends and acquaintances. In brief this is another good-will novel dramatizing the racial philosophy of Zora Neale Hurston.**

and money is useless unless you can enjoy spending it. Here Janie learns one more lesson from Tea Cake and prepare herself not to worry about money, manipulation, and selfishness.

After this episode Tea Cake takes Janie to the Everglades and earn a living in the groves. At this juncture Hurston shows a consciousness of racial oppression as a hurricane destroys the area and Tea Cake is forcibly recruited to dig grave-pits for the dead. Whereas whites are offered pine coffins, the blacks are thrown indiscriminately into ditches.Hurston probes into the psychology of race which creates guilt in her based on caste insecurity. Not only whites are treated superior in black community but also there lies the standard preference for mulattos. Janie is above all such discrimination. Her journey started with landowning farmer, Logan Killicks, marched with ambitious black man, Joe and summed up with Tea Cake. Logan and Joe are severely criticized whereas Tea Cake's disregard for money and position, regard for love, and unselfishness are praised, making *Their Eyes Were Watching God* **a novel of quest for life.**

In *The Natural (1952)***, the novelist Bernard Malamud writes: "we have two lives, the life we learn with and the life we live with after that. Suffering is what brings us toward happiness." This is certainly applicable to Janie's situation. She has grown, struggled, suffered and found her voice. Her quest requires experience of the world, of other people and places, but it is ultimately directed inward.**

Zora Neale Hurston establishes unusual perspective on gender difference. It raises immediate question in the minds of readers as it indicates space between the lives of men and women. In her novel *Their Eyes Were Watching God* **Zora Neale Hurston concerns about women as they are proud and defiant. Men seem passively to watch ships on horizon, filled with their dreams and hopes, and wait for them to arrive. The women also have dreams but they have to control their wills and chase their dreams. The unusual treatment in the novel is the utilization of female energy of 'acceptance' which resolved most of the issues of Janie, the protagonist of** *Their Eyes Were Watching God* **as reflected in her journey from Logan to Tea Cake. By accepting the circumstances and utilizing the inputs Janie underwent self-discovery and self-realization. Had Janie been fighting against the stream of male-dominance, race conflicts, discrimination etc. probably the novel would landed up somewhere else in the usual treatment. But it is the inbuilt hidden supra-rational element in Janie which she is not aware of throughout her journey, turned herself towards the absolute which is the power to realize the journey from known to unknown.**

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

विद्यार्थियों के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों का प्रभाव

डॉ. अमी राठौड़
सहायक आचार्य, लोकमान्य तिलक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, उदयपुर

प्रस्तावना : पृथ्वी के समस्त सजीवों में मानव ही वह प्राणी है जिसके पास बुद्धि तर्कना विचार सम्प्रेषण की क्षमता पायी जाती है। मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विचारों का आदान–प्रदान करता है। अपने विचारों, भावनाओं, उद्देश्यों, विश्वासो को दूसरे तक पहुंचाना ही संचार है। संचार मुख्य रूप से तीन प्रकार के होते है :–

1– अन्तः वैयक्तिक संचार (एक व्यक्ति की दूसरे व्यक्ति के साथ विचार अभिव्यक्ति)

2– समूह संचार (एक पूरे समूह के साथ विचार अभिव्यक्ति)

3– जनसंचार (पूरे जन समूह के साथ विचार अभिव्यक्ति)

जनसंचार का सामान्य अर्थ है जिसका जन–जन में संचरण हो अर्थात जब कोई बात विचार, भाव, अनुभव अथवा संदेश जो जन–जन में यानि अधिसंख्य लोगों में किसी माध्यम विशेष से संचारित होता है वही जनसंचार है।

Mass media refers collectively to all media technologies, including the Internet, television, newspapers, and radio, which are used for mass communications, and to the organizations which control these technologies.[1][2]

वर्तमान समय में जनसंचार मात्र राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य तक ही सीमित नहीं रह गया है बल्कि सभी क्षेत्रों में जनसंचार का महत्व अद्वितीय है। विशेष रूप से शैक्षणिक क्षेत्र में जनसंचार एक सशक्त माध्यम बन गया है क्योंकि वर्तमान समय में शिक्षा मात्र अध्यापकों के द्वारा दिये जाने वाले ज्ञान तक ही सीमित नहीं रह गयी है बल्कि अनेक संचार माध्यमों के द्वारा विद्यार्थी अपने ज्ञान का वर्धन करता है तथा नवीन जानकारी प्राप्त करता है। प्रमुख जनसंचार के साधनों जैसे रेडियों, टेलीविजन, समाचार पत्र, पत्रिकाएं, इन्टरनेट आदि ने विद्यार्थियों के शैक्षणिक जीवन को बहुत प्रभावित किया है।

उपरोक्त विचारों को ध्यान में रखते हुए शोधार्थियों ने जनसंचार माध्यमों का विद्यार्थियों के ज्ञान पर प्रभाव का अध्ययन किया। जिसमें जनसंचार के माध्यमों में टेलीविजन, रेडियों, समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं को लिया गया है क्योंकि इन्हीं के सम्पर्क मे अधिकांश विद्यार्थी रहते हैं।

शोध उद्देश्य :

1– माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों के प्रभाव का अध्ययन।

2– सरकारी एवं निजी विद्यालय के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों के प्रभाव का अध्ययन करना।

3– माध्यमिक स्तर के छात्रों एवं छात्राओं के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों के प्रभाव का अध्ययन करना।

4– सरकारी व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों के प्रभाव की तुलना करना।

5– माध्यमिक स्तर के छात्रों एवं छात्राओं के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों के प्रभाव की तुलना करना।

शोध परिकल्पनायें :

1– सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों एवं निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों के प्रभाव में सार्थक अन्तर नहीं होता।

2– माध्यमिक स्तर के छात्र एवं छात्राओं के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमो के प्रभाव मे सार्थक अन्तर नहीं होता।

शोध विधि :

प्रस्तुत शोध में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

न्यादर्श :

प्रस्तुत शोध में राजस्थान के भीलवाड़ा जिले के आसीन्द तहसील क्षेत्र के दो सरकारी विद्यालयों के 30 छात्र व 30 छात्राओं व दो निजी विद्यालयों के 30 छात्र व 30 छात्राओं कुल 120 विद्यार्थियों का चयन किया गया। चयन यादृच्छिक विधि के आधार पर किया गया।

शोध उपकरण :

प्रस्तुत शोध में स्वनिर्मित उपकरण 'जनसंचार प्रभाव प्रमापनी' का उपयोग किया गया ।

सांख्यिकीय प्रविधियां :

उपकरण द्वारा प्राप्त दत्तों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन व टी परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण एवं निष्कर्ष :

प्रस्तुत शोध में जनसंचार का अर्थ रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं से लिया गया है। ज्ञान पर प्रभाव देखने के लिए ज्ञान के निम्न क्षेत्र लिए गए हैं जिन्हें विषय विशेषज्ञों के सुझावों के आधार पर चयन किया गया ।

1– सामान्य ज्ञान

2– भाषा संबंधी ज्ञान

3– विषय विशेष संबंधी ज्ञान

4– प्रतियोगिता एवं प्रचलित पाठ्यक्रम संबंधी ज्ञान।

5– रोजगार एवं व्यवसाय संबंधी ज्ञान

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों के प्रभाव का पता लगाने के लिए समग्र न्यादर्श पर जनसंचार प्रभाव प्रमापनी प्रशासित की गई। क्षेत्रवार अंकन कर मानक विचलन एवं मध्यमान ज्ञात कर जनसंचार के माध्यमों का ज्ञान पर प्रभाव को मापा गया।

सारणी 1

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों के प्रभाव का क्षेत्रवार विश्लेषण (N=120)

क्र. संख्या	क्षेत्र	मानक विचलन	मध्यमान
1	सामान्य ज्ञान	2.01	21.57
2	भाषा संबंधी ज्ञान	2.29	21.18
3	विषय विशेषज्ञ संबंधी ज्ञान	1.69	18.57
4	प्रतियोगिता एवं प्रचलित पाठ्यक्रमों सम्बन्धी ज्ञान	1.64	18.37
5	रोजगार एवं व्यवसाय संबंधी ज्ञान	1.39	12.78
	योग	5.92	92.43

सारणी 1 से स्पष्ट है कि समग्र न्यादर्श का मध्यमान 92.43 प्राप्त हुआ जो कि कट ऑफ पोईन्ट मध्यमान 70 से अधिक है। अतः माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियो के ज्ञान पर जनसंचार माध्यम का प्रभाव पड़ा है।

सारणी 1 से यह भी स्पष्ट है कि सर्वाधिक प्रभाव 'सामान्य ज्ञान' के क्षेत्र पर पड़ा है अर्थात टेलीविजन, रेडियों ने प्रसारित समाचार कार्यक्रम, वार्ताएं, नाटकों आदि के द्वारा विद्यार्थियों के सामान्य ज्ञान में वृद्धि हुई है समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं में प्रकाशित सामग्री द्वारा भी विद्यार्थियों के सामान्य ज्ञान में वृद्धि हुई है।

मध्यमान के आधार पर यह भी स्पष्ट है कि भाषा संबंधी ज्ञान पर भी अधिक प्रभाव पड़ा है। इस क्षेत्र का मध्यमान 21.18 प्राप्त हुआ है। इस आधार पर कहा जा सकता है कि छात्रों की भाषा में होने वाली उच्चारण

संबंधी, लेखा संबंधी, त्रुटियों का ज्ञान एवं उनमें सुधार हुआ है। नवीन शब्दों का अर्थ जानने एवं पर्यायवाची शब्दों के ज्ञान में सुधार हुआ है। पहेलियों को भरने से मुहावरों एवं लोकोक्तियों के ज्ञान में वृद्धि हुई है।

तृतीय प्रभावी क्षेत्र 'विषय विशेष संबंधी ज्ञान' रहा है। इस क्षेत्र में मध्यमान 18.57 रहा। इससे स्पष्ट है कि विद्यार्थियों को अंग्रेजी विषय के नवीन शब्दों का ज्ञान में वृद्धि हुई हैं। डिस्कवरी चैनल आदि देखने से छात्रों के भूगोल एवं विज्ञान विषय के ज्ञान में वृद्धि हुई हैं।

है। ऐतिहासिक धारावाहिकों को देखने से इतिहास विषय के ज्ञान में वृद्धि हुई है।

चतुर्थ एवं पंचम क्षेत्र में भी मध्यमान कट ऑफ पोईन्ट से अधिक रहा अर्थात प्रतियोगिता एवं अलग अलग संस्थानों में प्रचलित पाठ्यक्रमों की जानकारी में वृद्धि हुई है। रोजगार संबंधी ज्ञान भी बढ़ा है किन्तु छात्र माध्यमिक स्तर पर होने की वजह से रोजगार संबंधी ज्ञान पर ज्यादा ध्यान नहीं देते

सारणी–2

सरकारी एवं निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों के प्रभाव का क्षेत्रवार विश्लेषण व तुलनात्मक विश्लेषण

क्र. सं.	क्षेत्र	न्यादर्श				टी मूल्य	.05 स्तर पर सार्थकता
		सरकारी विद्यालय N=60	सरकारी विद्यालय N=60	निजी विद्यालय N=60	निजी विद्यालय N=60		
		मध्यमान	S. D.	मध्यमान	S. D.		
1	सामान्य ज्ञान	21.32	2.05	21.80	1.92	1.33	सार्थक अन्तर नहीं है।
2	भाषा संबंधी	21.12	2.17	21.17	2.32	0.12	सार्थक अन्तर नहीं है।
3	विषय संबंधी	18.52	1.72	18.62	1.65	0.32	सार्थक अन्तर नहीं है।
4	प्रतियोगिता भावना	18.22	1.28	18.55	1.92	1.12	सार्थक अन्तर नहीं है।
5	व्यवसाय/रोजगार	12.88	1.94	12.68	1.55	0.62	सार्थक अन्तर नहीं है।
	योग	92	5.23	92.92	8.40	0.86	सार्थक अन्तर नहीं है।

उपरोक्त सारणी द्वारा सरकारी विद्यालय के मध्यमान 92 व निजी विद्यालय के मध्यमान 92.92 के विश्लेषण द्वारा पता चलता है कि यह मध्यमान कट ऑफ पोईन्ट मध्यमान 70 से अधिक है। अतः माध्यमिक स्तर के सरकारी व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों का प्रभाव पड़ा है।

सारणी 2 के अनुसार सरकारी एवं निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की शिक्षा पर जनसंचार माध्यमों प्रभाव का तुलनात्मक विश्लेषण करने के लिए मध्यमान व मानक विचलन से टी मूल्य ज्ञात किया गया। टी मान 0.86 प्राप्त हुआ जो कि 0.05 स्तर के सारणीयन 1.98 से कम है। अतः सरकारी व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों के प्रभाव में सार्थक अन्तर नहीं है। परिकल्पना सत्य सिद्ध होती है।

सारणी–3

माध्यमिक स्तर के छात्र एवं छात्राओं के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों के प्रभाव का क्षेत्रवार विश्लेषण व तुलनात्मक विश्लेषण

क्र. सं.	क्षेत्र	न्यादर्श				टी मूल्य	.05 स्तर पर सार्थकता
		छात्रा N=60	छात्रा N=60	छात्र N=60	छात्र N=60		
		मध्यमान	S. D.	मध्यमान	S. D.		
1	सामान्य ज्ञान	21.73	2.17	21.4	1.80	0.91	सार्थक अन्तर नहीं है।
2	भाषा संबंधी	21.27	2.30	21.08	2.28	0.44	सार्थक अन्तर नहीं है।
3	विषय संबंधी	18.32	1.71	18.82	1.63	1.64	सार्थक अन्तर नहीं है।
4	प्रतियोगिता भावना	18.35	1.65	18.42	1.63	0.22	सार्थक अन्तर नहीं है।
5	व्यवसाय/रोजगार	12.37	1.45	13.18	1.20	3.36	सार्थक अन्तर है।
	योग	91.95	6.03	92.9	5.77	0.88	सार्थक अन्तर नहीं है।

उपरोक्त सारणी द्वारा छात्राओं के मध्यमान 91.95 व छात्र के मध्यमान 92.9 के विश्लेषण द्वारा पता चलता है कि यह मध्यमान कट ऑफ पोईन्ट मध्यमान 70 से अधिक है। अतः माध्यमिक स्तर के छात्र व छात्राओं के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों का प्रभाव पड़ा है।

सारणी 3 के अनुसार छात्र व छात्राओं के ज्ञान पर जनसंचार माध्यमों के प्रभाव का तुलनात्मक विश्लेषण करने हेतु टी मूल्य ज्ञात किया। जिसका मान 0.88 प्राप्त हुआ जो कि .05 स्तर के सारणीमान 1.98 से कम है। अतः माध्यमिक स्तर के छात्र व छात्राओं की शिक्षा पर जनसंचार माध्यमों के प्रभाव में सार्थक अन्तर नहीं है। परिकल्पना सत्य सिद्ध होती है।

शैक्षिक निहितार्थ :

प्रस्तुत शोध के द्वारा जनसंचार के साधनों का विद्यार्थियों के ज्ञान पर पड़ने वाले प्रभावों परिणामों द्वारा स्पष्ट है कि जनसंचार के साधन विद्यार्थियों के विभिन्न क्षेत्रों में ज्ञान की वृद्धि करते हैं। अतः विद्यार्थियों को नवीनतम व विविध प्रकार की जानकारी इन माध्यमों द्वारा निरन्तर व सुसमय पर प्रदान की जानी चाहिए। सामान्य ज्ञान वृद्धि के लिए क्विज, समाचार द्वारा नवीनतम ज्ञान तथा विभिन्न प्रकार की घटनाओं की जानकारी जनसंचार माध्यमों द्वारा दी जानी चाहिए। भाषा संबंधी ज्ञान के विकास के लिए अंग्रेजी, हिन्दी व संस्कृत के नवीन शब्दों की जानकारी नियमित रूप से दी जानी चाहिए। इसके लिए विशेष कॉलम की व्यवस्था समाचार पत्र में की जानी चाहिए। विषय विशेष संबंधी ज्ञान की वृद्धि के लिए विषय विशेषज्ञों की वार्ता आयोजित करवायी जा सकती है साथ ही टेलीविजन द्वारा रोचक व आकर्षक कार्यक्रमों द्वारा भी विषय संबंधी ज्ञान दिया जा सकता है जैसे ऐतिहासिक धारावाहिक, वैज्ञानिक चमत्कार, खगोलीय घटनायें, भौगोलिक ज्ञान, आर्ट एण्ड क्राफ्ट आदि। प्रतियोगिता एवं संचालित पाठ्यक्रमों संबंधी ज्ञान वृद्धि के लिए विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों की वार्ताएं, विज्ञापन के विशेष समाचार पत्र या पत्रिकाओं की व्यवस्था की जानी चाहिए। विद्यार्थियों के रोजगार एवं व्यवसाय संबंधी ज्ञान वृद्धि के लिए विशेष प्रयास किये जाने चाहिए। उनके लिए केरियर व निर्देशन संबंधी वार्ताएं जो कि इस क्षेत्र के विशेषज्ञ हो उनके द्वारा रेडियो व टेलीविजन पर आयोजित करवानी चाहिए।

उपसंहार :

भविष्य में विद्यार्थियों के लिए किस–किस क्षेत्र में किस–किस प्रकार के रोजगार की संभावनाएं है उनका चयन वे किस प्रकार से कर सकते हैं उनके लिए

आवश्यक योग्यता कौन सी है इसके लिए भी प्रभावी कार्यक्रमों का प्रसारण किया जाना चाहिए तथा इन कार्यक्रमों का समय विद्यार्थियों के अनुकूल निर्धारित होना चाहिए ताकि वह सुनकर या देखकर पर्याप्त लाभ उठा सकें। इन सभी प्रयासों द्वारा निश्चित ही विद्यार्थी जनसंचार माध्यमों से अपने लक्ष्य का निर्धारण कर अपने लक्ष्य को प्राप्त करके भविष्य के सुनहरे स्वप्न को पूरा कर सकते हैं तथा अपने जीवन के सभी ऊँचे आयामों को प्राप्त कर सकते हैं।

संदभ साहित्य :

"Mass media", Oxford English Dictionary, online version November 2010

Potter, W. James (2008). *Arguing for a general framework for mass media scholarship*. SAGE. p. 32. ISBN 9781412964715. http://books.google.com/books

कपिल, एच.के. (1981) *''अनुसंधान विधियाँ''*, हर प्रसाद भार्गव पुस्तक प्रकाशन, आगरा

गेरेट हेनरी, ई., *''शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकी हिन्दी अनुवाद''*, कल्याणी पब्लिशर्स, लुधियाना

इवेल, आर. एल. रास. सी. सी. एण्ड (1958) *''मेजरिंग ऐजूकेशनल अचीवमेन्ट''* लन्दन।

स्टेनले, जी. सी. मरशैल, जै. सी. एण्ड (1954) *''मेजरमेण्ट इन टू डे स्केल''* न्यूयार्क।

हेल्स, एल. डब्ल्यू (1971) *''क्लासरूम एण्ड इवेल्यूएशन इन ऐजूकेशन''* कैलीफोर्निया।

शर्मा रामकृष्ण शर्मा रामदत्त आगौरी अम्बालाल *''हिन्दी भाषा और साहित्य शिक्षण''* राजस्थान प्रकाशन, जयपुर।

भार्गव महेश डॉ. *''आधुनिक मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन।*

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

मालवा का लोक नाट्य – माच

डॉ. देवकी यादव
हिन्दी विभाग

मालवा के लोक साहित्य में लोकनाट्य की परम्परा भी पुरातन काल से चली आ रही है। नाटकों के प्रादुर्भाव के प्रमाण तो वैदिक युग से ही प्राप्त होते हैं। नाटक तो पंचम वेद ही माना गया है। 'लोक नाटय' शब्द लोक और नाट्य दो शब्दों के सम्मिलन से बना है। लोक शब्द का विवेचन पूर्व अध्यायों में किया जा चुका है तथा नाट्य शब्द का अर्थ को" शानुसार नृत्य, नाटाकादि का अभिनय नृत्यकला, अभिनय कला अभिनेता की वेशभूशा तथा अभिनेता का घौतक है। लोकनाट्य की लोकप्रियता ओर महत्व का कारण है, उसकी कथावस्तु का लोक सम्प्रक्त स्वरूप और संगीतात्मकता। गीत संगीत और नृत्य रूपी तीन रस धाराओं से युक्त लोकनाटय सचमुच ही अनुपम ओर हदय को आंदोलित कर देने की क्षमता से परिपूर्ण होते हैं।

गुजरात का गरबा, महाराष्ट्र का तमाशा, बंगाल की जाना, उत्तरप्रदेश की नौटंकी अथवा राजस्थान के गवरी, लोकनाट्य के समान ही माच मालवा का प्रतिनिधित्व करता हैं।

मालवी का महत्व इसलिए भी है कि केवल इसी बोली में होने वाली गीति–नाटयों को सच्चे अर्थों में गीति–नाट्य कहा जा सकता है। वैसे, सैकड़ो, मालवी शब्द पंजाबी, मराठी, बुंदेलखण्डी, भोजपुरी, मैथिली और गढ़वाली में पाए जाते हैं, क्यों कि यह मधुर बोली है।

'माच' शब्द संस्कृत के मंच शब्द का अपभ्रंश है। मंच शब्द के अनेक तदभव रूप से सुनने को मिलते हैं, जैसे – माचन, माँचा, माँचली आदि। मँचान मकान बाँधते समय बनाया जाता है अथवा खेती में फसलों की रखवाली भी मचान बांधकर की जाती है। मांचा बड़े पंलग एवं छोटी मांचली छोटी खटिया के लिए प्रयुक्त भाब्द है। मंच से संबंधित उपरोक्त तीनों मालवी शब्दों का प्रछन्न किन्तु मूल भाव यह है कि जमीन से उपर उठे हुए उस कृत्रिम स्थान को माच कहेंगे, जहॉ पर बैठने की सुविधा हो सके। लकड़ी के तख्तों आदि के सहारे बनाया गया मंच यदि सजाकर किसी विशेष प्रदर्शन आदि के उपयोग में लाया जाये तो उसे रंगमंच की संज्ञा दी गई है। रंगमंच पर नाटकों का प्रदर्शन किया जाता है। भरतमुनि ने रंगमंच की सजावट किसी भी विशेष निर्देश भी दिए हैं। इस प्रकार नाटक, कथा रूपक एवं उनको प्रदर्शित करने के स्थान के लिए संस्कृत भाषा में अलग से दो शब्दो का प्रयोग हुआ है, किन्तु मालवी लोक नाटय एवं रंगमंच दोनों शब्दों कें भावो को प्रकट करने के लिए 'माच' शब्द मालवी में विशेष अर्थ सत्ता रखता है। मालवी में यह, शब्द मंच बाँधने और उस पर अभिनीत किए जाने वाले ख्याल दोनों ही अर्थ में प्रयुक्त होता है। वस्तुतः माच मंच पर अभिनीत किया जाने वाला मालवी लोक नाट्य है। माच बॉध कर उस पर अभिनीत किऐ जाने वाले खेलों लोक नाटकों के अर्थ में मॉच शब्द का प्रयोग किया जाता है। मंच शब्द से उत्पन्न होने वाला मांच रंगमंच की विशेषता एवं प्रयोजन को सूचित करता है।

भारतीय लोक नाट्यों की पुरातन परम्पराओं में हर प्रदेश के लोक नाट्यों को विभिन्न नामों से जाना जाता है। उत्तरप्रदेश का नौटंकी, राजस्थान का ख्याल, बंगाल की जात्रा, महाराष्ट्र की लावणी उसी प्रकार के लोक नाट्य को माच कहते हैं। माच शब्द मंच से बना है, वैसे यह मालवा का लोक नाट्य है। लोक नाट्य जितना अधिक जीवन के निकट पाया जाता है, उतना कोई भी साहित्य नहीं। प्राचीन परम्परा को लिए हुए लोक साहित्य और उसका प्रमुख अंग माच सहज स्वभाविकता एवं ईमानदारी का वह आईना है, जिसमें हम स्वयं को परिवार सहित साकार देख सकते हैं। मालवा का माच जन प्रचलित परम्परा को लिए चल रहा है। यह मनोरंजन के साथ जन–जीवन की सुन्दर स्वच्छ झाँकी को प्रस्तुत करता है।

मच साहित्य लोक जीवन का वह साहित्य है, जिसमें लोकसंस्कृति की धड़कने विद्यमान हैं। लोक जीवन की सांस्कृतिक अभिरूचियाँ उनमें प्रतिबिम्बत है। डॉ. शिवकुमार 'मधुर' के अनुसार मालव–प्रदेश के रीति रिवाज, टोने – टोटके, जादू – मंतर, प्रथाएँ, परम्पराएँ तथा आस्था विश्वास सभी कुछ माच रचनाओं में अभिव्यक्त है। माच प्रदर्शन के पूर्व किसी शुभ मुहूर्त में खम्बा गाड़ते हैं एवं गुरू या मुखिया के हाथों पूजा होती है। पूजन के समय ढ़ोल का सतत् बजते रहना अनिवार्य होता है। माच का रंगमंच बिल्कुल सरल व आडम्बर रहित होता है। मजबूत खम्बों के सहारे लगभग

पाँच–दस फुट उँचा मंच बनाया जाता है। मंच के उपर चार बल्लियों के सहारे सफेद चादर छत के रूप में लगा देते हैं। यह मंच तीनों तरफ से खुला रहता है। पृष्ठ भाग में कहीं–कहीं एक पर्दा टांग देते हैं। मंच के आगमन पर लगभग दो तीन फीट चौड़े लाल अथवा सफेद कपड़े की आडी पट्टी इस दृष्टि से बांध दी जाती है कि अभिनेता के पैर न दिखें मंच के एक कोने में वादक लोग ही बैठते हो, जिनमें ढ़ोलक, सारंगी और हारमोनियम वादक होते हैं। माच के दर्शको के लिए प्रेक्षागृह नहीं होता, दर्शक मंच के तीनों ओर बैठते हैं।

माच का दृश्य पूर्वरंग – सर्वप्रथम सभी कलाकार अपनी वेशभूशा में मंच पर आकर सामूहिक रूप स देवी–देवताओं का सुमिरन करते है, इसके बाद पात्र–परिचय के रूप में प्रत्येक कलाकार मंच पर आकर अपने गुरू को मिलाता है। प्रत्येक कलाकार का नाम चोबदार पुकारता है, तत्प" चात् भि" ती का प्रयोग होता है जो मशक से पानी छीटंता है व गीत के साथ स्वंय का परिचय देता है। इसके पश्चात् श्री गणेश व अन्य देवी देवताओं की स्तुति गायी जाती है। देवी का आगमन होता है ओर वह आर्शीवाद देती है अंत में गुरू की जय बोली जाती है। तत्पश्चात् मुख्य कथानक प्रारंभ होता है। पूर्वरंग का क्रम प्रत्येक खेल के आंरभ में एक सा होता है।

माच की कथावस्तु – माच की कथावस्तु में पौराणिक, ऐतिहासिक तत्व लोक कथानक होते हैं।

इनमें से ऐतिहासिक कथानकों में श्रृंगार परक वस्तु का महत्व अधिक है। माच की कुछ कथाएँ ऐसी भी हैं, जो विशुद्ध रूप से सामाजिक हैं, जिन कथाओं के आधार पर माच का निर्माण किया गया है। विषय एवं प्रवृत्तियों की दृष्टि से उनका निम्नलिखित वर्गीकरण होगा –

1. पौराणिक कथाओं पर आधारित

देवता एवं अवतार संबंधी	धर्म प्रधान चरित्र वाले महापुरूषों की कथाए	लौकिक महापुरूषों के दिव्य एवं विलक्षण कृत्यों की कथाऐ
शिव लीला	प्रहलाद लीला	बेताल पच्चीसी
कृष्ण लीला	राजा रिसालु	गेंदा परी
राम लीला	राजा हरिशचन्द्र	राजा विक्रमादित्य
इन्दर सभा		सिंहासन बत्तीसी
तेजाजी कथा		

2. लोक कथाओं पर आधारित

प्रेम कथाओं पर आधारित	किंवदंतियों पर आधारित नाम संप्रदाय के प्रभाव करने वाली गाथाएँ	लोक गीतों में प्रचलित एवं कल्पित ऐतिहासिक गाथाएँ
हीर रांझा	राजा गोपीचन्द	निहालदे – सुल्तान
ढोला मारूणी	राजा भरथरी	नागजी – दूलजी
मधु मालती		पूरण मल
नाग मती		

3. कल्पित प्रेम कथाएँ

सेठ सेठानी	जान – आलम	लाल सेठ
देवर भौजाई	कुंवर खेमसिंह आवलदे	चन्नन कुंवर
सुद बुद सांगला	कुंवर केसरी	मदन सेन
सूरज करण शशिकला	हीरा मोती	छल बेटा मोयना
चारण बणजारा		

माच का संगीत पक्ष –

माच विधा में संगीत का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होता है। इसके अंतर्गत गेय रचना, भाव प्रदर्शन, कथा प्रवाह, गीत, नृत्य, और अभिनय का समावेश होता है। माच की रचना में संगीत पक्ष नाट्य को चौगुना मार्धुय कर देता है। गीत के माध्यम से कलाकार दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर देते हैं। माच शैली में भाव एवं रस की उत्पत्ति गाने वाले लोक गीतों की अपनी क्षमता होती हैं।

माच में संगीत का समाहार –

भारतीय मान्यता के अनुसार संगीत के अंतर्गत गीत, वाद्य एवं नृत्य गीतों का समावेश होता है। माच में गीत वाद्य एवं नृत्य की त्रिधारा का समन्वय अवश्य है, किन्तु कंठ द्वारा रागरागिनी अथवा अन्य निर्धारित पद्धति में गेय मौखिक संगीत ही माच की प्रधान वस्तु है और उसको अधिक प्रभावशाली बनाने में वाद्य संगीत का पूरा योग रहता है।

माच का गीत –

माच के अंतर्गत गीत ही माच का प्रधान तत्व होता है और वाद्य एवं नृत्य का समावेश में प्रस्तुति में निखार आता है। माच का गीत अपनी विशिष्ट शैली है। इसमें कलाकार के द्वारा संवाद किए जाते है। जब गेय संवाद प्रस्तुत होता है, तब साथी कलाकार उसे दोहराते है। इसे टेक झेलना कहते है। गीत में प्रस्तुत तानों का चलन कहा जाता है। माच के अंतर्गत गाए जाने वाली धुनें रंगत कहलाता है। इसके कई प्रकार होते है जेसे – रंगत खड़ी, रंगत इकेरी, रंगत दोहरी, रंगत हलूर, रंगत सिन्दु, आदि। कुछ रंगते शास्त्रीय गायन की रंगत के अंतर्गत कालिंगड़ा, जोगिया, आसावरी, मांड एवं भैरवी रागों का प्रयोग किया है। इन रंगतों की प्रस्तुति कर्णप्रिय होती है। गीतों की स्वर रचनाएँ तार सप्तकमें खुली आवाज से गुंजायमान होती हैं। ये रंगते अधिकतर वक्र चाल वाली तालों में निबद्ध होती हैं जैसे झूमरा, दीपचंदी एवं तीव्रा।

माच में प्रयुक्त वाद्य –

माच की गायन शैली को अत्यधिक प्रभावशाली बनाने के लिए वाद्य का बहुत महत्वपूर्ण योगदान होता है, जो माच प्रस्तुति को चरम रूप में सुदृढ़ बनाता है। माच के प्रमुख वाद्य –ढ़ोलक, हारमोनियम एवं सारंगी होते है। ढ़ोलक की चाल ही माच के संगीत की पृष्ठभूमि को सशक्त बनाती है, उस समय गायक किसी गीत की टेक अथवा बोल कहता है और गाने में तीव्रता लाने की दृष्टि से ढ़ोलकिया ढोलक पर जैसे ही थाप मारता है, भावों को उत्कर्शता प्रदान करने के लिए गाने वाला बोल उठता है।

ढ़ोलक ताल फाड़क्के, ढ़ोलक सच्ची बाजे .....।

इस प्रकार माच में ढ़ोलक बजाने का विशिष्ट ढ़ंग होता है। ढ़ोलक पर कहरवा, दादरा, चांचर आदि के ठेके बजाऐ जाते है। स्वर वाद्य के रूप में सारंगी एवं हारमोनियम का उपयोग किया जाता है। आजकल कुछ मंडलिया वायलिन एवं शहनाई का प्रयोग करने लगे है। इस प्रकार माच को वाद्य संगीत उत्कष्ठ बनता है।

माच का नृत्य अभिनय – माच में नृत्य और अभिनय दोनों ही महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं, जो दर्शकों को अत्यधिक आकर्षित करते हैं। माच में नृत्य और अभिनय का ढ़ंग बड़ा सरल होता है। केवल कमर हिलाकर लटके – झटके वाला व्यक्ति अभिनेता के रूप में प्रवेश कर सकता है। इन लोक नाटयों में अभिनय आदि को प्रमुख महत्व नहीं दिया जाता। प्रदर्शन का आकर्षण तो केवल संगीत होता है। दूरी पर बैठे हुए दर्शकों को यदि अभिनेताओं के मुंह दिखाई भी नही पड़े, तो वे माच का आनंद उठाने से वंछित नही रहते। इसका कारण यह है कि दर्शक गीतों पर अधिक ध्यान नहीं देते हे। मंच के गायकों के बोल, संवाद एवं गीत प्रस्तुत करने की शैली ही दर्शकों के लिए रस प्रदान करने की कसोटी है। माच के रसास्वादन का माध्यम नेत्र नहीं, कान है। सामान्य नाटकों में ऑख और कान दोनों इंद्रियों से काम लेना पड़ता है, किन्तु माच की यह विशेषता है कि वह दृश्य–काव्य बनकर भी अन्य काव्य के रस की अनुभूति प्रदान करता है।

इस प्रकार सारी–सारी रात बुलंद आवाज में गाना, संवाद बोलना और नृत्य–अभिनय करना आसान काम नहीं हैं, अपितु बहुत श्रम साधना है। माच शैली के लिए राजस्थान के देवीलाल सामर लिखते है – माच के नृत्य की अदायगी इतनी कठिन व श्रमसाध्य है कि मामूली कार्य करने वालों के तो छक्के छूट जाते हैं। ढोलक की थापों पर पदों का द्रुत संचालन और भारीर की हदय विदारक उछलकूद बड़े बड़े बहादुरों को आश्यर्यचकित कर देती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. भरत मुनि – नाट्य शास्त्र – पृष्ठ 1/17–18
2. वृहद हिन्दी कोश, पृ 699
3. डॉ. चिन्तामणी उपाध्याय : मालवी लोकगीत – एक विवेचनात्मक, अध्ययन
4. डॉ. देवीलाल सामर – लोकधर्मी प्रदर्शनकारी कलाए पृ 271
5. डॉ. नगेन्द्र – भारतीय नाट्य साहित्य – नेशनल पब्लिशिंग हाउस
6. डॉ. महेन्द्र भानावत – लोकनाट्य : परम्परा और प्रवृतिया – भारतीय लोककला मण्डल, उदयपुर

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

जबलपुर नगर में औद्योगिक विकास विशेष संदर्भ में – शॉ वालेस जिलेटिन्स लिमिटेड फैक्टरी
NARMADA GELATINES LIMITED

डॉ. शिवपाल सिंह पटेल
अतिथि विद्वान, इतिहास विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

शॉ वालेस जिलेटिन्स लिमिटेड फैक्टरी की स्थापना स्वतंत्रता के पूर्व जबलपुर में हुई। इस फैक्टरी में जिलेटिन तैयार की जाती थी, जिलेटिन कुचली हड्डियों से तैयार की जाती है। जिसकी उस समय माँग अधिक थी। माँग को ध्यान में रखकर फैक्टरी की स्थापना के लिए जबलपुर भारत के मध्य में स्थित व कच्चे माल की उपलब्धता को ध्यान में रखकर की गई थी। लेकिन जबलपुर के नगरीयकरण के कारण शॉ वालेस जिलेटिन्स लिमिटेड फैक्टरी को स्थानांतरित करना पड़ा, क्योंकि जिलेटिन तैयार करने के लिए हड्डियों की आवश्यकता होती है। और उपलब्धता तो थी लेकिन देश आजाद होने के बाद जबलपुर का जो नगरीयकरण हुआ। इस फैक्टरी में जिलेटिन तैयार करते समय या जिलेटिन तैयार हो जाने के बाद जो गंदगी निकलती थी उससे जबलपुर नगर के जन–सामान्य को कठिनाईयों का सामना करना पड़ता था जैसे – वायु प्रदूषण, गंदे पानी का निकलना इत्यादि। नगर के जन–जीवन को ध्यान में रखते हुये नर्मदा जिलेटिन्स लिमिटेड (पूर्व शॉ वालेस जिलेटिन्स लिमिटेड) फैक्टरी को सन् 1961 में स्थानान्तरित कर मीरगंज भेड़ाघाट जबलपुर के पास स्थापित की गयी। कुचल हड्डियों के अपने मुख्य और आवश्यक आदानों, एसिड, चूने और अच्छी गुणवत्ता वाले पानी के लिए सुविधाजनक स्थान है।

छाया चित्र क्रमांक– 01 नर्मदा जिलेटिन्स लिमिटेड भेड़ाघाट, जबलपुर

नर्मदा जिलेटिन्स लिमिटेड, भारत में **ेमपद** और जिलेटिन के निर्माण के लिए प्रसिद्ध है और आज भारत विभिन्न उपयोगकर्ताओं को दुनिया भर के जिलेटिन उद्योग बैठक मानकों में माँग के दौर में सबसे आगे है।

नर्मदा जिलेटिन्स लिमिटेड, ने नर्मदा पर अत्याधुनिक तकनीक के सफलतापूर्वक प्रयोग से जिलेटिन निर्माण की प्रक्रिया के हर चरण में गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए कार्य किया है। कम्पनी के उत्पादों को अंतर्राष्ट्रीय गुणवत्ता मानकों को पूरा और वाणिज्यिक गतिशील घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय बाजार में Usage की एक व्यापक स्पेक्ट्रम के योग्य है। कम्पनी की निम्न बातें इस प्रकार हैं –

1. सरकार के घर में आर एण्ड डी सुविधा में मान्यता प्राप्त।
2. एक पेशेवर विपणन प्रमुख भारतीय महानगरों में स्टॉक अंक/गोदामों के साथ स्थापित।
3. अखिल भारतीय खरीद सेट अप पिछड़े एकीकृत इकाइयों के साथ करार किया।
4. घरेलू बाजार में एक प्रमुख स्थान है।

पुरस्कार

कम्पनी ने पुरस्कार प्राप्त किये जो निम्नलिखित हैं –

1. 1975 Ossein निर्यात के लिए Capexil द्वारा पुरस्कार
2. 1992 आयात के विकल्प के लिए भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय पुरस्कार
3. 1994 मध्य–प्रदेश के औद्योगिक संगठन से निर्यात प्रदर्शन पुरस्कार
4. 1995 उच्चतम् Capexil द्वारा जिलेटिन निर्यात पुरस्कार
5. 1998 में एक कर्मचारी को पर्यावरण में उत्कृष्ट योगदान के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार
6. 2001 में जिलेटिन निर्यात के लिए Capexil पुरस्कार
7. 2004 में जिलेटिन निर्यात के लिए Capexil पुरस्कार

प्रमाण–पत्र

1. BVCI द्वारा आईएसओ 9001–2008
2. DNV द्वारा आईएसओ 22000–2005
3. EDQM
4. ई – उलेमा हलाल – Jamait&
5. कोषेर
6. औषधि लाइसेंस–सरकार,
7. जीएमपी सरकार,

अग्रभूमि इंसान

नर्मदा जिलेटिन्स लिमिटेड में एक उपयुक्त शैक्षिक पृष्ठभूमि है और नियमित रूप से घर में गहन प्रशिक्षण के साथ लोगों को तकनीकी विशेषज्ञता और व्यक्तिगत ग्राहक सेवा के लिए आधार है। कम्पनी अपने सभी सौदे में मानव स्पर्श Personifie उत्कृष्टता के लिए ग्राहक उन्मुख प्रतिबद्धता नर्मदा जिलेटिन्स लिमिटेड में लोगों को इस कम्पनी के ग्राहक सेवा और ग्राहक संतुष्टि के उच्च स्तर में उदाहरण है कि लगातार ड्राइव किया गया है।

इस कारण कम्पनी सभी आपूर्तिकर्ताओं, ग्राहकों, एवं शेयर धारकों के साथ एक दीर्घकालिक व्यापार संघ का निर्माण सुरक्षित करता है। कम्पनी के उत्पादन, गुणवत्ता की ताकत कम्पनी के अधिकारियों एवं कर्मचारियों को है।

छाया चित्र क्रमांक– 02 Gelatine – An Overview

जिलेटिन रेंज –

1. औषधि
2. खाद्य
3. औद्योगिक
4. फोटोग्राफिक

दवा

जिलेटिन रेंज – एक चिकित्सा सहायता

छाया चित्र क्रमांक– 03 दवा में उपयोग जिलेटिन

जिलेटिन चिकित्सा और दवा क्षेत्र में लगभग अपरिहार्य है एवं हार्ड कैप्सूल, मुलायम कैप्सूल, माइक्रो कैप्सूल, गोलियाँ और अन्य कोटिंग अनुप्रयोगों में व्यापक उपयोग के लिए विशेष रूप से तैयार की जाती है।

एक अनोखी प्रक्रिया भी जिलेटिन अंतःशिरा प्लाज्मा Extenders के निर्माण में उपयोग के लिए उपयुक्तः प्रदान करने के लिए विकसित किया गया है। चरम जीवन जोखिम स्थितियों के दौरान अपने रक्त स्थानापन्न सुई लेनी के रूप में आवेदन अमूल्य है। इनमें इस्तेमाल जिलेटिन कम्पनी द्वारा तैयार की जा रही है। यह प्रशासन की अनुमति के बाद अपने अपघटन जगह किसी भी अवशेषों को छोड़ने के बिना किसी भी विशेष रूप से मानव को तनाव न हो पूरी तरह से ध्यान रखा जाता है।

छाया चित्र क्रमांक– 04 खाद्य पदार्थ में उपयोग जिलेटिन

जिलेटिन बहुत बड़े पैमाने पर दुनिया भर में खाद्य तैयारी में प्रयोग किया जाता है। यह उत्कृष्ट विशेषताओं, निम्नलिखित अद्वितीय बेजोड़ सेट प्रदान करता है, जो इस प्रकार हैं:–

1. जिलेटिन एक बहुत आसानी से पच प्रोटीन है। जिलेटिन एक शुद्ध प्राकृतिक भोजन मानव पोषण के लिए आवश्यक अमीनो एसिड की सबसे युक्त प्रोटीन है।
2. जिलेटिन अन्य खाद्य पदार्थों के लिए ज्यादा समय तक सुरक्षित रखता है, प्रोटीन सामग्री में समय की वृद्धि।
3. अपने ही अधिकार में एक खाद्य उत्पाद होने जिलेटिन, मानव उपभोग के लिए पूरी तरह सुरक्षित है।
4. जिलेटिन के लिए आहार की तैयारियों का समर्थन करने के लिए कार्य करता है।

छाया चित्र क्रमांक– 05 पेंट में उपयोग जिलेटिन

औद्योगिक पीस पहियों सहित कई लेपित और बन्धुओं Abrasive का निर्माण विशेष रूप से सिलिकॉन कार्बाइड और एल्युमीनियम ऑक्साइड अनाज के उच्च संबंधों के लिए उपयुक्त बनाया है। जिलेटिंस का उपयोग वर्तमान समय में अधिक किया जा रहा है।

अन्य व्यापक अनुप्रयोगों के अतिरिक्त, प्रिंटर रोलर्स, काग रचनाओं और पानी Dispersible कीटनाशकों के निर्माण में उपयोग में शामिल है। कम्पनी रक्षा के उपयोग– गेंद पाउडर बनाने के लिए प्रोटीन Colloid निर्माण करते है। जो आपको चित्र के माध्यम से बताया गया है।

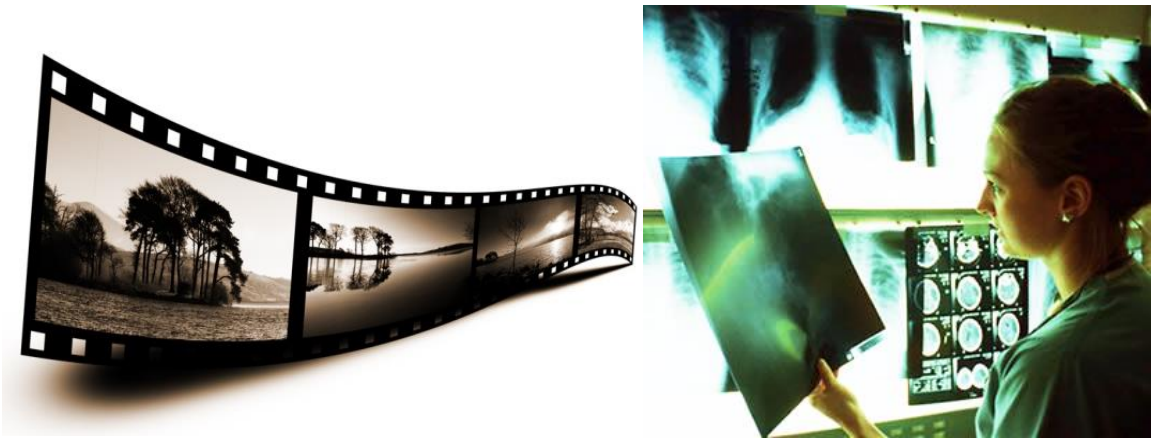

छाया चित्र क्रमांक– 06 फोटोग्राफी

जिलेटिन का उपयोग फोटोग्राफी को साफ करने में किया जाता है। फोटोग्राफी लाखों लोगों के लिए एक शौक है। जिलेटिन सिर्फ प्रकाश के प्रति संवेदनशील है और इनके साथ–साथ हैं, यह Photographically सक्रिय पायस रूप में है। जिलेटिन फोटोग्राफी के लिए उपयोग में सबसे महत्वपूर्ण कारक है। नर्मदा जिलेटिंस लिमिटेड कम्पनी में शोधार्थी ने यह सुनिश्चित किया है कि निर्माता कम्पनी अच्छी है। जिलेटिन से फिल्मों और एक्से–रे रोल पर छवि के तीखेपन की स्पष्टता हो जाती है। अंधेरे कमरे में जिलेटिन अनुमति देता है कि रासायनिक पदार्थों फोटो पायस में पर्याप्त घुसना के विकास के लिए आवयश्क है, एक सामान्य तरीके से यह इन समाधानों को विकसित करने के बाद धुल की अनुमति देता है।

Production

जिलेटिन Acidulation, परिपक्वता, और धोने के बाद निकाला जाता है। यह विभिन्न चरणों में निकाला जाता है। प्रारम्भिक निष्कर्षों में कम तापमान पर प्राप्त कर रहे है और उच्चतम जेल ताकत है, बाद के अर्क उच्च तापमान के चरणों में बना रहे है। प्रक्रिया प्रौद्योगिकी कम्पनी द्वारा सिद्ध जिलेटिन की पूर्ण और कुल निकासी सुनिश्चित करता है।

छाया चित्र क्रमांक– 07 जिलेटिन का शुद्धीकरण

जिलेटिन निष्कर्षण प्रक्रिया से आयन एक्सचेंज के अधीन है। यह शारीरिक और रासायनिक दोष के प्रभाव को हटाना सुनिश्चित करता है।

छाया चित्र क्रमांक– 08 जिलेटिन का वाष्पीकरण

ऊर्जा के प्रभावी उपयोग के साथ, पानी शुद्ध समाधान से निकाल दिया जाता है और जिलेटिन धीरे–धीरे स्थिरता की ओर केंद्रित हो जाती है। यह अधिक चिपचिपा होता है, समाधान एक बार फिर से चमकाने व बेहतरीन निलंबित कण को हटाने के लिए सक्षम फिल्टर के माध्यम से पारित हो जाता है।

जिलेटिन सुखाना

जिलेटिन सुखाने की प्रक्रिया केंद्रित जिलेटिन समाधान को बढ़ाया और जेली नूडल्स की एक सतत् प्रवाह का उत्पादन कर, इन नूडल्स को समान रूप से एक सतत बैंड सुखाने की मशीन पर फैलाते हैं। सुखाने के आपरेशन व्यवस्थित फिल्टर्ड, धोया, पूर्व सूखे और निष्फल हवा के साथ नियंत्रित किया जाता है।

छाया चित्र क्रमांक– 09 पीस – Sifting और मिश्रण जिलेटिन

अंत का उपयोग करने की आवश्यकता और विनिर्देशन पर निर्भर करता है। सूखी जिलेटिंस लगातार Despatchable सामग्री में बदल रहें हैं। विभिन्न उच्च गति मिलों और बड़ी क्षमता Blenders इस स्तर पर विशिष्ट आवश्यकताओं के आधार पर किया जाता है।

Quality Management & Control

जिलेटिन का नर्मदा जिलेटिंस लिमिटेड कम्पनी में उत्पादन कड़ाई से नियंत्रित और स्थिर स्थितियों में किया जाता है। गुणवत्ता नर्मदा जिलेटिंस लिमिटेड में एक लोकोक्ति है और बारीकी से प्रक्रिया के प्रत्येक चरण पर गुणवत्ता तकनीक लगातार सुधार कर रहे हैं। इन माँग गुणवत्ता नियंत्रण प्रणाली और मानकों के रूप में स्वाभाविक रूप से मान्यता और पुरस्कार में हुई है। कम्पनी के जिलेटिन उत्पादन की गुणवत्ता के कारण ग्राहक सबसे अच्छे न्यायधीश है। संयंत्र कर्मियों की एक अच्छी संख्या में कार्यात्मक एक या एक से अधिक निम्नलिखित गतिविधियों में शामिल हैं –

1. कच्चे माल की गुणवत्ता नियंत्रण
2. तैयार उत्पाद गुणवत्ता नियंत्रण
3. प्रक्रिया की निगरानी
4. आवेदन प्रौद्योगिकी
5. ग्राहक सेवा

छाया चित्र क्रमांक– 10 बन्धन एवं नियन्त्रण (जिलेटिन)

छाया चित्र क्रमांक– 11 जिलेटिन स्तर में सुधार एक सतत प्रक्रिया

जिलेटिन बनाने की प्रक्रिया (तालिका)

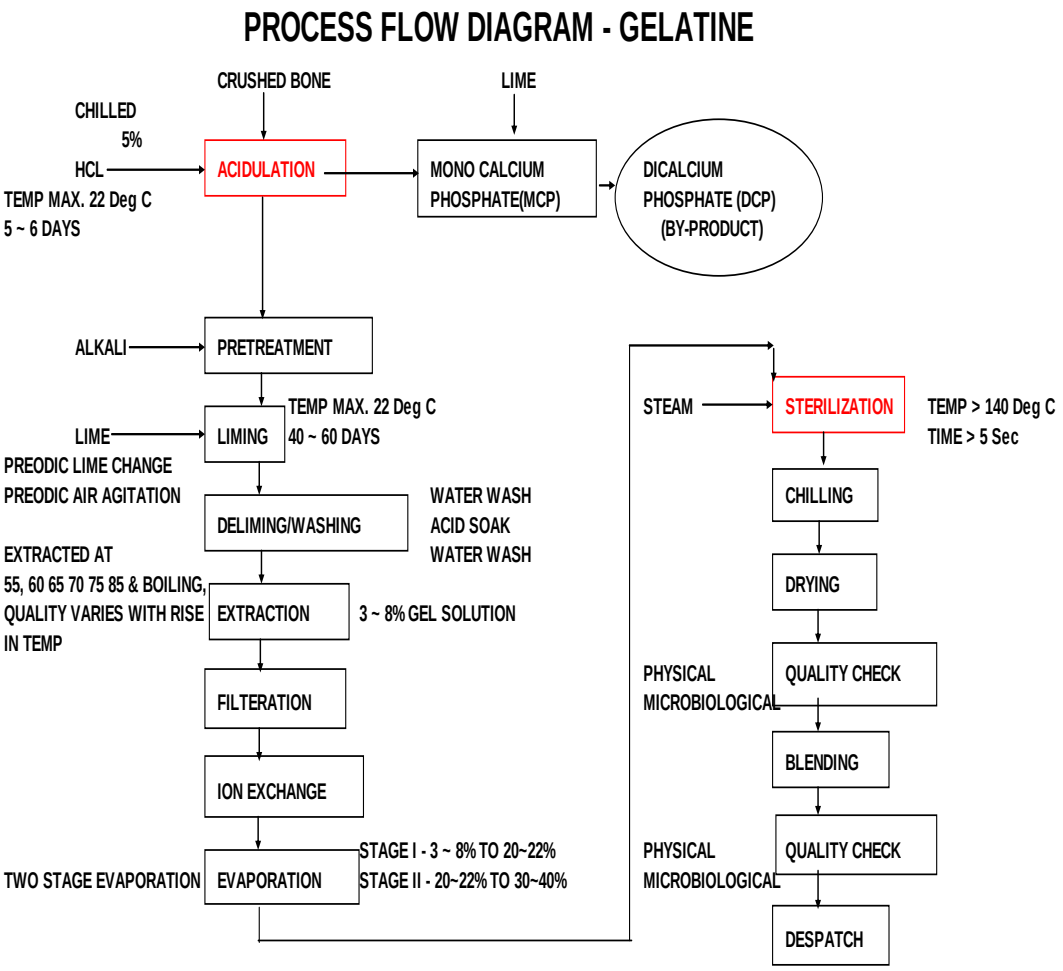

उच्चतम स्तर की गुणवत्ता के निर्माण की प्रक्रिया कठोर भौतिक, रासायनिक और जीवाणु नियंत्रण द्वारा सुनिश्चित किया जाता है। हमारे गुणवत्ता नियंत्रण प्रयोगशाला भी शामिल सभी सामग्री के लिए मापदंडों संरचना द्वारा कच्चे माल के प्रवेश करने से पहले हो जाता है। जाहिर है अंतिम जिलेटिन प्रक्रिया में सभी स्तरों पर कठोर मानकों कड़ाई से अनुपालन का परिणाम है। देखभाल करने के लिए सुनिश्चित करते कि **नर्मदा जिलेटिंस लिमिटेड** उत्पादों निर्धारित उद्योगों में खपत के लिए पूरी तरह से सुरक्षित हैं के लिए लिया जाता है। कम्पनी गुणवत्ता की अवधारणा भी हर ग्राहक की अद्वितीय आवश्यकता प्रोफाइल और जिलेटिन के गुणों, अपने उत्पाद फार्म और पैकेजिंग के प्रकार के लिए अनुकूल है। एक नियमित रूप से, लगातार नजर बाजार पर रखा है। सबसे ज्यादा माँग आदेश की शर्तों को पूरा कर रहे हैं।

नर्मदा जिलेटिंस लिमिटेड पर विशेष जोर देने के तरीके और तकनीकों के गुणवत्ता नियंत्रण और गुणवत्ता आश्वासन के क्षेत्र में सुधार पर रखी है। गुणवत्ता प्रबंधन प्रणाली के सभी पहलुओं को समय–समय पर दोनों आंतरिक रूप में अच्छी तरह बाह्य लेखापरीक्षित हैं। कार्बनिक ठोस अपशिष्ट के लिए VERMICULTURE प्रौद्योगिकी के उपयोग के क्षेत्र में अग्रणी है। बायोगैस के प्रवाह जिलेटिन से उत्पादन में अग्रणी है।

Code of Conduct

छाया चित्र क्रमांक– 12 जिलेटिन का उपयोग

GMAP, GME, GMIA, SAGMA – आचार संहिता

चार स्वतंत्र जिलेटिन दुनिया भर के प्रमुख संघ हैं :–

यूरोप यूरोप (GME) **1974** में स्थापित जिलेटिन निर्माता।

उत्तरी अमेरिका जिलेटिन अमेरिका के संस्थान (GMIA) **1956** में स्थापित विनिर्माण।

दक्षिणी अमेरिका दक्षिण अमेरिकी जिलेटिन विनिर्माण एसोसिएशन est. (SAGMA) **1995**।

एशिया प्रशांत एशिया प्रशांत (GMAP) **1997** में स्थापित जिलेटिन निर्माता।

ऊपर संघ प्रमुख जिलेटिन निर्माताओं के रूप में शामिल कर रहे हैं क्षेत्रों और सामूहिक रूप से जिलेटिन उद्योग के दुनिया भर में विशाल बहुमत का प्रतिनिधित्व करते है। अपने सदस्यों के व्यक्तिगत और उनके जिलेटिन की गुणवत्ता और सुरक्षा की पुष्टि करते हैं। अपने कच्चे माल की गुणवत्ता हैं :–

1. स्वस्थ जानवरों की सक्षम प्राधिकारी द्वारा जिलेटिन जाँच किया गया है, मानव उपभोग के लिए फिट निर्धारित है।

2. कम्पनी निर्मित जिलेटिन के माध्यम से अपने स्त्रोत से मिल सावधानी बरती जाती है।

जिलेटिन के निर्माण और विपणन है :–

1. आईएसओ **9001–2008**, आईएसओ **22000–2005** और जीएमपी के रूप राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मानकों के उच्चतम् सुरक्षा आवश्यकताओं के अनुपालन में।

2. नियमों, कानूनों और बिक्री के क्षेत्र या देश के लिए लागू अधिकारियों के साथ अनुपालन।

3. अनुपालन में और स्थानीय पर्यावरण, सामाजिक और नैतिक नियमों और मानकों के अनुरूप है।

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि जिलेटिन फैक्ट्री द्वारा निर्मित जिलेटिन से खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता एवं रख–रखाव में वृद्धि हुई तथा लघु व वृहद उद्योगों में अभूतपूर्व विकास हुआ।

सन्दर्भ–सूची –

1. साक्षात्कार, श्री सुधीर कुमार श्रीवास्तव, प्रबन्धक, शॉ वालेस जिलेटिन्स लिमिटेड फैक्टरी जबलपुर।
2. फील्डवर्क व इन्टरनेट से शॉ वालेस जिलेटिन्स लिमिटेड फैक्टरी का डाटा एकत्रित किया गया हैं।
3. लिस्ट ऑफ इंडस्ट्रीयल एस्टाब्लीसमेंट इन मध्यप्रदेश।
4. जबलपुर अतीत दर्शन, महेश चन्द्र चौबे, प्रकाशन– जिला योजना मंडल जबलपुर एवं भारतीय संस्कृति निधि, सुषमा साहित्य मन्दिर, जवाहरगंज जबलपुर, सन्–**1994**,

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

एम.एड. प्रशिक्षणार्थियों की तकनीकी साक्षरता की वस्तुस्थिति एवं समस्याओं का अध्ययन

डॉ. सुनीता मुर्डिया
सहायक आचार्य, लोकमान्य तिलक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय डबोक

प्रस्तावना :– ''विश्व तकनीकी दृष्टि से जो प्रगति हो रही है उसे ध्यान में रखकर शिक्षाविदों एवं मनोवैज्ञानिकों द्वारा जिन नवीन साधनों द्वारा शिक्षा में सुधार लाने का प्रयास किया जा रहा है, उसे शैक्षिक नवाचार कहा जाता है।''

जो शिक्षा आज दी जा रही है, उसका प्रतिरूप बैंकिग मॉडल है जिसके अनुसार बालकों को ठोस वास्तविकताओं की बजाय सुहावने, लुभावने, दिखावटी नारे सुनाना और रटना सिखाया जाता है। जीवन के क्षेत्र मे जो वास्तविक परिस्थितियों है उनके बीच में बालकों को नहीं ले जाया जाता है। वास्तविक मौलिक लक्ष्यों से उसका आमना–सामना नहीं कराया जाता है। अपितु दूसरों के द्वारा कही सुनी लिखी हुई बातों या अवनतिपूर्ण और अपूर्ण सत्य प्रेक्षणों के आधार पर बालकों के भावी जीवन की तैयारी के लिए अपूर्ण है।

डॉ. डी.एस. कोठारी के अनुसार ''वर्तमान में भारत के भाग्य का निर्माण उसकी कक्षाओं में हो रहा है।'' विद्यालय शैक्षिक उत्पादन की एक एकाई है जिसमें प्रमुख घटक शिक्षक, छात्र, प्रबन्धक एवं भौतिक साधन है। इनमें शिक्षक की ही महत्वपूर्ण भूमिका है। शिक्षक, राष्ट्र का निर्माता है, कर्णधार है। शिक्षक विद्यार्थियों के जीवन ढालने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। योग्य शिक्षक के प्रतिभावान छात्र ही देश की उन्नति तथा खुशहाली करने में समर्थ हो सकते हैं।

शिक्षण के बारे में 1952 के आयोग ने जो कमियाँ अनुभव की वे कुछ इस तरह की थी ''कोई भी विधि हो, वह छात्रों और शिक्षण के बीच परस्पर अन्तक्रिया के आत्मिक सम्बन्ध बनाती है। वह उनके केवल दिमाग पर असर नहीं करती, बल्कि उनके काम करने के ढंग और निर्णय पर, उनकी प्रतिभा भावनात्मक संगठन, अभिवृत्तियां और जीवन मूल्यों पर भी असर डालती है, हमारी स्कूल शिक्षा में ऐसा कही कुछ घटित होता दिखाई नहीं देता।''

नई शिक्षा नीति में शिक्षण स्थितियों में सुधार के स्थान पर सर्वत्र ही सीखने की स्थितियों में उत्तरोत्तर विकास की बात पर महत्व दिया गया है। नई शिक्षा नीति को जन–जीवन की यथार्थताओं पर वास्तविक आवश्यकताओं पर आधारित किये जाने का प्रयास किया गया है। शिक्षा को अधिक सार्थक प्रासंगिक व जन आकांक्षाओं के अनुकूल बनाने का संकल्प इसमें दिखाई देता है। ज्ञान–विज्ञान के अभूतपूर्व विस्फोट, जनसंख्या प्रसार की असमान वृद्धि व जनसंचार एवं सूचना माध्यमों सहित जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रौद्योगिकी क्रान्ति में विश्व के सभी देशों का निःसन्देह बहुत गहराई में उद्वेलि किया है। सम्पूर्ण मानव जीवन का भविष्य चुनौतियों से भरा प्रतीत होने लगा है और शिक्षा इस नये परिवेश की परिवर्तित समस्याओं से मूह नहीं मोड़ कसती है। इसी क्रम में अध्ययन अध्यापन पद्धतियों के नये विकल्प खोजने भी आवश्यक हो गये है। प्रभावी रूप से सीखने की प्रक्रिया में अनेक घटकों की आवश्यकता हुआ करती है, जैसेः– अनुभव, अन्तर्दृष्टि रहन नियमों का सामान्यीकरण व उनकी दृष्टि वास्तविक जीवन में उन नियमों की प्रयुक्ति एवं सम्पूर्ण परिवेश का व्यापक परिदृश्य निर्माण किया जा सकता है।

भारतीय नियम के अनुसार उन लोगों को शिक्षित गिना जाता है जो अपने हस्ताक्षर कर सकते हैं तथा पैसे का हिसाब–किताब करना जानते हैं अथवा समझ सकते हैं अथवा दोनों।

मुक्त ज्ञानकोश विकिपीडिया (2010) पृ. स. 1 से साक्षरता का अर्थ है साक्षर होना अर्थात् पढ़ने और लिखने की क्षमता से सम्पन्न होना। अलग–अलग देशों में साक्षरता के अलग–अलग मानक है। भारत में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के अनुसार अगर कोई व्यक्ति अपना नाम लिखने और पढ़ने की योग्यता हासिल कर लेता है तो उसे साक्षर माना जाता है।

आजादी के समय भारत की साक्षरता दर मात्र बारह (12%) थी जो बढ़ कर लगभग चोहत्तर (74%) हो गयी है परन्तु अब भी भारत संसार के सामान्य दर पिच्यासी (85%) से बहुत पीछे है। जब से भारत ने

शिक्षा का अधिकार लागू किया है, तब से भारत की साक्षरता दर बहुत अधिक बढ़ी है।

साक्षरता का अर्थ है साक्षर होना अर्थात् पढ़ने और लिखने की क्षमता से सम्पन्न होना। भारत में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के अनुसार अगर कोई व्यक्ति अपना नाम लिखने और पढ़ने की योग्यता हासिल कर लेता है तो उसे साक्षर माना जाता है।

साक्षरता के विभिन्न रूप

1. **डीज़िटल साक्षरता** :– डीजिटल साक्षरता से तात्पर्य उन संज्ञानात्मक कौशलों से है, जिसका प्रयोग व्यक्ति शैक्षिक वार्ताओं हेतु डीजिटल पर्यावरण में करता है।
2. **कम्प्यूटर साक्षरता** :– कम्प्यूटर साक्षरता का तात्पर्य व्यक्ति की उस योग्यता से है जिसके आधार पर वह ज्ञान प्राप्ति हेतु कम्प्यूटर और सॉफ्टवेयर का प्रयोग कर सकता है।
3. **मीडिया साक्षरता** :– मीडिया साक्षरता का अर्थ है विभिन्न प्रकार के मीडिया के रूप के बारे में गहनता से सोचने की योग्यता।
4. **राजनीति साक्षरता** :– राजनीति साक्षरता का तात्पर्य व्यक्ति की उस ज्ञान एवं कौशल से है जिसके द्वारा वह राजनैतिक गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग ले सके।
5. **सांस्कृतिक साक्षरता** :– सांस्कृतिक साक्षरता से तात्पर्य है कि व्यक्ति को अपने देश की संस्कृति के बारे में कितना ज्ञान है।
6. **बहुसांस्कृतिक साक्षरता** :– बहुसांस्कृतिक साक्षरता का तात्पर्य व्यक्ति की उस ज्ञान से है जिसके द्वारा वह अपने देश के अलावा अन्य देश की संस्कृतिक के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकता हो।
7. **दृश्य साक्षरता** :– दृश्य साक्षरता के माध्यम से व्यक्ति विभिन्न चित्रों के माध्यम से साक्षरता प्राप्त कर सकता है।
8. **सूचना साक्षरता** :– सूचना साक्षरता के माध्यम से व्यक्ति विभिन्न सूचनाओं के माध्यम से साक्षरता प्राप्त कर सकता है।

तकनीकी साक्षरता :– किसी भी सभ्य समाज में विकास का महत्वपूर्ण आधार – साक्षरता है। विभिन्न प्रकार की साक्षरता में तकनीकी साक्षरता का स्थान सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि यह साक्षरता देश की आधारभूत जरूरतों को पूरा करती है। तकनीकी साक्षरता में इंजीनियरिग, प्रौधोगिकी, प्रबंधन, शिल्प कला, वास्तु कला, फार्मेसी एवं नगर योजना आदि कार्यक्रम को लिया गया है। तकनीकी साक्षरता की शुरूआत स्वतन्त्रता से पूर्व अर्थात् ब्रिटिश शासकों के समय सार्वजनिक भवन, सड़क निर्माण आदि को लेकर हुई।

सन् 1990 (पृ.सं.42) में राजनीतिक एवं शिक्षाविदों ने तकनीकी साक्षरता के मानकों को तय किया जिसको एस.टी.ई.एम. (विज्ञान, तकनीकी, इंजीनियरिंग तथा गणितज्ञ) पुकारा गया। आस्ट्रेलिया एवं यू.एस.ए. में राजनीतिकों ने पॉलिसी दस्तावेज में स्कूल रूपान्तरण में विशेष रूप से तकनीकी साक्षरता पर जोर दिया। एस.टी.ई.एम. क्षेत्र का प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा में उतना ही उपयोग है जितना कि समाजीकरण में है।

तकनीकी साक्षरता में व्यक्ति विभिन्न प्रभावशाली तरीके से तकनीकी का प्रयोग करते हुए साक्षरता हासिल करता है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी शिक्षा संघ (प्ज्ब्।) के अनुसार तकनीकी को प्रबंधन, मूल्यांकन और प्रौद्योगिकी के परिपेक्ष्य में समझते हुए इसका उपयोग करना ही तकनीकी साक्षरता है।

अनुसंधान के उद्देश्य :– प्रस्तुत शोधकार्य हेतु निम्नलिखित उद्देश्यों का चयन किया गया है, जो इस प्रकार से है:–

1. एम.एड. प्रशिक्षणार्थियों की तकनीकी साक्षरता की वस्तुस्थिति का पता लगाना।
2. महिला व पुरूष प्रशिक्षणार्थियों की तकनीकी साक्षरता की वस्तुस्थिति का तुलनाात्मक अध्ययन करना।
3 एम.एड. प्रशिक्षणार्थियों की तकनीकी साक्षरता में वृद्धि करने हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध परिकल्पनाएँ :– पुरूष और महिला एम.एड. प्रशिक्षणार्थियों की तकनीकी साक्षरता की वस्तुस्थिति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

न्यादर्श चयन :– न्यादर्श प्रविधि शोधकार्य को व्यावहारिक तथा समय कथन शक्ति की दृष्टि से मितव्ययी बना देती है।

प्रस्तुत शोध में उदयपुर शहर के दो शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों का चयन किया जहाँ पर सह शिक्षा के साथ एम.एड. पाठ्यक्रम कराया जाता हो। दोनो महाविद्यालयों से कुल 80 एम.एड. प्रशिक्षणार्थियों का चयन किया गया है जिसमें प्रत्येक महाविद्यालय से 40 एम.एड. प्रशिक्षणार्थी का चयन किया गया है। न्यादर्श का स्वरूप इस प्रकार से है –

न्यादर्श का आकार

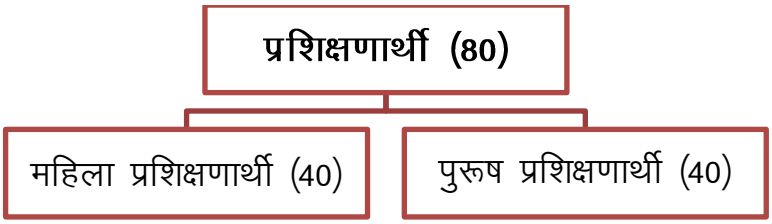

शाध में प्रयुक्त विधि :– प्रस्तुत शोध में एम.एड. प्रशिक्षणार्थियों की तकनीकी साक्षरता की वस्तुस्थिति एवं समस्याओं का अध्ययन करना है जो कि वर्तमान से संबंधित है तथा स्थानीय सूचनाओं पर आधारित है अतः प्रस्तुत अध्ययन के लिए **सर्वेक्षण विधि** का प्रयोग किया गया।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :– प्रस्तुत शोध में मानकीकृत उपकरण नहीं होने से निम्नलिखित स्वनिर्मित उपकरण काम में लिए :–

1. स्वनिर्मित प्रमापनी – तकनीकी साक्षरता की वस्तुस्थिति के लिए।
2. तकनीकी साक्षरता में आने वाली समस्याओं का पता लगाने हेतु प्रमापनी।

समस्या का परिसीमन :– प्रस्तुत शोधकार्य को निम्नलिखित सीमाओं में आबद्ध किया गया :–

1. प्रस्तुत शोधकार्य राजस्थान के उदयपुर शहर तक सीमित रखा गया।
2. प्रस्तुत शोधकार्य दो शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय तक सीमित रखा गया है।
3. प्रस्तुत शोधकार्य को केवल तकनीकी साक्षरता के अध्ययन तक सीमित रखा गया।
4. प्रस्तुतु शोधकार्य को केवल एम.एड. प्रशिक्षणार्थियें तक सीमित रखा गया।

शोध हेतु सांख्यिकी :– प्रस्तुत लघु शोधकार्य हेतु दत्तों के विश्लेषण करने के लिए निम्नलिखित सांख्यिकी का उपयोग किया गया।

1. मध्यमान
2. मानक विचलन
3. टी–परीक्षण

शोध उद्देश्य –1

एम.एड. प्रशिक्षणार्थियों की तकनीकी साक्षरता की वस्तुस्थिति का पता लगाना।

सारणी संख्या – 1.1

समग्र एम.एड. प्रशिक्षणार्थियों की तकनीकी साक्षरता की वस्तुस्थिति का मध्यमानवार विश्लेषण

क्र.सं.	क्षेत्र	कट पोइन्ट मध्यमान	मध्यमान
1.	तकनीकी साधनों का ज्ञान	9×2=18	20.20
2.	तकनीकी साधनों का उपयोग	15×2=30	35.40
3.	तकनीकी साधनों के उपयोग करने का समय	6×2=12	14.50

निष्कर्ष :–

- एम.एड. प्रशिक्षणार्थियों को पाठ्यपुस्तक के ज्ञान के साथ–साथ कम्प्यूटर व ओवरहेड प्रोजेक्टर का ज्ञान है तथा एम.एड. प्रशिक्षणार्थियों द्वारा नवीन विषय–वस्तु के बारे में जानकारी प्राप्त करने हेतु इन्टरनेट का प्रयोग किया जाता है।
- एम.एड. प्रशिक्षणार्थी शोधकार्य में आरेख प्रदर्शन एवं संख्यात्मक विश्लेषण हेतु कम्प्यूटर का तथा विषय वस्तु के प्रदर्शन हेतु पी.पी.टी. का उपयोग करते हैं।
- एम.एड. प्रशिक्षणार्थियों द्वारा किसी भी विषयवस्तु पर गहन व पूर्णज्ञान की प्राप्ति तकनीकी साधनों की सहायता से अल्प समय में कर लेते है तथा उनके अनुसार तकनीकी साधनों का उपयोग वर्तमान शिक्षा में प्रासांगिक है।

उद्देश्य 2 – महिला व पुरूष प्रशिक्षणार्थियों की तकनीकी साक्षरता की वस्तुस्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करना।

सारणी संख्या – 1.2

महिला व पुरूष प्रशिक्षणार्थियों की तकनीकी साक्षरता की वस्तुस्थिति का मध्यमान के आधार पर तुलनात्मक विश्लेषण

क्र. सं.	अध्ययन के आयाम	महिला प्रशिक्षणार्थी		पुरूष प्रशिक्षणार्थी		टी–मान	सार्थकता स्तर
		मध्यमान	प्रमाप विचलन	मध्यमान	प्रमाप विचलन		
1.	तकनीकी साधनों का ज्ञान	19.60	3.52	21.40	3.66	2.88	सार्थक अन्तर पाया गया
2.	तकनीकी साधनों का उपयोग	36.34	3.40	38.30	2.50	2.75	सार्थक अन्तर पाया गया
3.	तकनीकी साधनों के उपयोग करने का समय	13.60	3.57	16.20	2.76	3.16	सार्थक अन्तर पाया गया
4	समग्र	69.54	10.49	75.90	8.92	8.79	सार्थक अन्तर पाया गया

स्वतंत्रता के अंश (कत्रि 78) पर

0.05 स्तर पर सारणीमान = 1.99

- पुरूष प्रशिक्षणार्थीं नवीन विषय–वस्तु के बारे में जानकारी प्राप्त करने हेतु महिला प्रशिक्षणार्थी की अपेक्षा इन्टरनेट का प्रयोग अधिक करते है।
- पुरूष प्रशिक्षणार्थी शोधकार्य में आरेख प्रदर्शन एवं संख्यात्मक विश्लेषण हेतु तकनीकी साधनों का प्रयोग महिला प्रशिक्षणार्थी की अपेक्षा अधिक उपयोग करते है।
- पुरूष प्रशिक्षणार्थी की अपेक्षा महिला प्रशिक्षणार्थी पाठ्यक्रम की विषयवस्तु का अध्ययन सोप्ट कॉपी के बजाय हार्ड कोपी से पढ़ना ज्यादा आसान है ।
- तकनीकी साधनों का उपयोग एम.एड. पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों जैसे मनोविज्ञान, रिसर्च मैथड़ोलॉजी, सांख्यिकी आदि से सम्बन्धित विषय वस्तु को खोजने में किया जाता है।

उद्देश्य 3 – सुझाव

1. प्रशिक्षणार्थियों के अनुपात में महाविद्यालय में तकनीकी साधनों की उपलब्धता होनी चाहिए।
2. तकनीकी साधनों की निरन्तर उपयोगिता हेतु बिजली की वैकल्पिक व्यवस्था अर्थात् जनरेटर ,इनवेटर आदि की सुविधा होनी चाहिए।
3. महाविद्यालय में इन्टरनेट हेतु वाईफाई जोन होना चाहिए।
4. शिक्षक प्रशिक्षकों को भी अपने शिक्षण कार्य हेतु अनिवार्य रूप से तकनीकी साधनों का प्रयोग करना चाहिए।

5. प्रशिक्षणार्थियों को प्रस्तुतीकरण के लिए पी.पी.टी. का प्रयोग करना अनिवार्य कर देना चाहिए जिससे तकनीकी साधनो के प्रति जागरूकता बढ़ सके।
6. एम.एड. पाठ्यक्रम में तकनीकी साक्षरता से संबंधित पाठ्यचर्या अनिवार्य रूप से होनी चाहिए।

प्रशिक्षणार्थियो में तकनीकी साक्षरता के प्रति जागरूकता हेतु समय–समय पर महाविद्यालय द्वारा अनुभवी एवं विशेषज्ञो द्वारा समूह परिचर्चा आयोजित की जानी चाहिए।

Webliography :-

1. http://www.google.com
2. http://www.wickkipedia.com
3. http://www.igi.global.com
4. http://www.ijera.com
5. http://www.gemc.indiana.edu
6. http://www.igbssnet.com
7. shttp://www.rusc.uoc.ed

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भौतिक क्षैत्र का जनजातीय कला में परिवर्तन व नवीन आयाम

डॉ. पंकज रावल
सहायक आचार्य, भूगोल विभाग, मा.व. श्रमजीवी महाविद्यालय, उदयपुर
डॉ. प्रदीप पुरोहित
व्याख्याता, भूपाल नोबल्स पी.जी. महाविद्यालय, उदयपुर

परिचय :– समय व परिस्थिति के अनुसार हर समाज, जाति या अन्य किसी भी क्षेत्र में बदलाव अवश्य हुआ है। बदलाव का तात्पर्य किसी वस्तु अथवा क्रिया की प्रारम्भिक स्थिति में रूपान्तरण हो जाना है जो जनजातियों की कला में दिखाई पड़ता है। जो इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि जनजाति समाज की आधारभूत मान्यतायें समाप्त होती जा रही है। उनके स्थान पर एक नया स्वरूप सामने आ रहा है। उनके सोचने का तरीका, व्यवहार, मनोवृतियां आदि उनकी कलाओं में होने वाले परिवर्तनों की और संकेत करती है।

उद्देश्य :

1. समय व परिस्थिति के अनुसार जनजातीय कला में हुए बदलाव का अध्ययन।
2. जनजातीय कला धर्म व संस्कृति से जुड़ी हुई हो उसमें जो परिवर्तन उसका अध्ययन करना।
3. जनजातीय कला में हो रहे परिवर्तन को कैसे रोका जाए, उसका अध्ययन।

प्राकल्पना :

1. जनजातीय कला में ग्रहणशीलता व लचीलापन होता है जिससे बाहरी प्रभावों को आत्मसात करती हुई चलती है। जिससे कला में परिवर्तन हुआ है।
2. व्यवसायिकरण के कारण जनजातीय कला में मांग के अनुरूप परिवर्तन होता है।

जनजातीय कला में बदलाव, प्रकार एवं नवीन आयाम :– अरावली पहाड़ी के सघन वनों के निवासी जनजातियों का अधिकांश जीवन शहरी सभ्यता से दूर तथा एकाकी होने के कारण अधिकांश कम परिवर्तनीय रहा है। आर्थिक रूप से भले ही ये पिछड़े हुए हैं पर सांस्कृतिक समृद्धि की श्रेष्ठ धरोहर इनके पास है। अपने चारों ओर प्राप्त सामग्री से अपना जीवन निर्वाह करने वाले ये जनजाति अपने अतिरिक्त समय में प्रतिदिन उपयोग में आने वाली वस्तुओं को कलात्मक बनाने में लगे रहते हैं। गीत व नृत्य से अपना मनोरंजन करते हैं। कलायें इनके जीवन की अभिन्न अंग हैं। लोककला की सदैव यह विशेषता रही है कि इसमें अत्यधिक लचीलापन होता है। समस्त बाहरी रूचिकर प्रभाव इसमें आत्मसात होते चले आते हैं, यह उनकी कला के विकास की प्रमुख विशेषता रही है।

जनजाति कला में ग्रहणशीलता एवं लचीलापन है साथ ही बाहरी प्रभावों को यह आत्मसात करती हुई चलती है जिससे कि उसमें परिवर्तन दिखाई देता है। जहाँ वह अपने धर्म एवं संस्कृति से जुड़ी है उसमें परिवर्तन दृष्टिगत नहीं होता है। ये कलाएं समाज में अपनी एक अलग पहचान लिये हुए है। जहाँ व्यक्ति की अपनी रूचि है वहां आवश्यक रूप से परिवर्तन प्रत्यक्ष दिखाई पड़ता है यह परिवर्तन कला के विभिन्न स्वरूपों में दिखाई पड़ता है।

गांवों में कलाकार तो है किन्तु उनकी कलाओं में व्यावसायिकता का रूप अधिक दिखाई दे रहा है उन्होंने अपनी कलाओं को मांग के आधार पर परिवर्तित किया है जिस नृत्य, गीत व संगीत की मांग है उसी के अनुरूप प्रस्तुति प्रारम्भ कर दी है। पहले लोकगीत व नृत्य स्वान्तः सुखाय थे। गांव के लोग मिल बैठकर प्रस्तुत करते थे हजारों लोग उनका अवलोकन करते थे किन्तु अब यह कलाकारी कुछ व्यवसायी लोगों के पास ही है उन्होंने प्रस्तुतियों की शक्ल ही बदल दी है सामुदायिक रूप खत्म हो गया है। कलाओं की प्रस्तुति में मिलावटता बहुत अधिक दिखाई दे रही है। आदिवासियों के स्वभाव में उल्लास और राग–रंग का बहुत बड़ा स्थान है। संसार की सभी आदिम जातियॉ अपने इस गुण के कारण एक ही परिवार की समझी गई है, राग–रंग और सामूहिक आनन्द की भावना आदिम मानव का सबसे बड़ा गुण है। आदिम अवस्था में नाच–गान, सामूहिक समारोह तथा अपने पूर्वजों और देवी–देवताओं के लिए नाचना, गाना अपना जातीय कर्तव्य समझते थे। उनके संगठनात्मक गुणों की सबसे बड़ी और मधुर अभिव्यक्ति इन्हीं आनन्द और उल्लास की क्रियाओं से ही होती थी बल्कि कभी–कभी तो बिना,

भोजन तथा नींद के ही कई रातों अपने आपको नृत्य गान में संलग्न रखते थे। किन्तु अब जनजातियों ने अपने जातीय त्यौहार, पर्व छोड़ दिये और इन कार्यों को वे योजनाबद्ध करने लगे हैं। रात–रात भर नाच–गान में मशगूल स्त्री–पुरूष अवहेलना की दृष्टि से देखे जाने लगे। अब इन्हें इकतारा पकड़ा कर गांव की चौपालों में भजन–कीर्तन में मशगूल कर दिया गया। बड़े–बड़े स्टेजों पर रंगबिरंगी पौशाकों में सुसज्जित ये समूह अपनी नृत्य व गीत की प्रस्तुतियां देते दिखाई दे रहे हैं।

पहले जनजातीय कलाकार नृत्य कर आनन्द प्राप्त करना अधिक पसन्द करते थे किन्तु अब नृत्यों की प्रस्तुति अत्यन्त रंगीन एवं चमत्कारिक बनाकर मात्र कुछ कलाकारों द्वारा पेश की जाती है। अब नृत्यों एवं गीतों ने बौद्धिक तत्वों का सहारा लेकर कला के स्वरू में काफी बदलाव किया है। आज नृत्य गीतों की अनेक श्रेणियां बन गई है कभी तो ये आनन्द की अभिव्यक्ति के माध्यम बन गये हैं तो कहीं वे जीवन के अनुष्ठान के रू में नजर आते हैं। नृत्य गीतों की परम्परागत अब इसमें देखने को नहीं मिलती। लोक जीवन में तो नृत्य केवल कुछ अनुष्ठानों तथा त्यौहारों तक ही सीमित रह गये हैं। सामूहिक रूप अब दिखाई नहीं देता।

इस युग में केवल बाह्य माध्यम से मनोरंजित होने की प्रक्रिया दिन ब दिन जोर पकड़ती जा रही है। स्वातः सुखाय एवं स्वरचित मनोरंजन की प्रक्रिया लुप्त प्रायः सी हो रही है। दिन भर के व्यस्त एवं चिन्ताग्रस्त जीवन के लिए केवल कुछ खर्च करके मनोरंजनगृह में जाकर अपना मन बहलाव करना ही पर्याप्त समझा जा रहा है और मनोरंजनात्मक क्रियाओं में स्वयं शामिल होना फैशन से बाहर हो गया है। शहरों में जिस तरह सिनेमा तथा नाटकघरों की संख्या बढ़ रही है उसी तरह गांवों में भी परिवर्तित कला का रूप देखा गया है गांवों में जनजातीय समूह पहले स्वयं नृत्यगीत प्रस्तुत कर मनोरंजन करता था अब मंडलियों ने उसका स्थान ग्रहण कर लिया है ये मंडलियां अब नई–नई तरह की रंगीन पौशाकें पहन अलग–अलग तरह की नृत्य प्रस्तुति करते हैं। फिल्मी गीतों व नृत्यों की धुनों पर आधारित नृत्य किये जाते हैं। इनके इस नृत्य गीतों में दर्शकों में चकाचौंध पैदा करने की भरपूर क्षमता होती है।

जनजातीय समूहों के पास ऐसे अनेक लोग आते हैं जो उनकी कलाओं से लाभ उठाना चाहते हैं। वर्षों की मेहनत से सुरक्षित रखी गई कलाओं को अब वे व्यावसायिक बनाकर बेचना चाहते हैं और ऐसे में वह उस कला का स्वरूप ही बदल देते हैं। ऐसे अनेक लोग जो फिल्मी रचनाओं का प्रावधान रखते हैं वे चाहते हैं कि उनकी पूर्वरचित फिल्मों की घिसी–पिटी धुनों के अलावा उसकी नवीन रचनाओं में ऐसी धुनों का प्रवेश किया जाय जो सुनने में नवीन और ताजगी उत्पन्न करने वाले हों। यह भोले–भोले जनजातीय कलाकार अपनी कला को कोड़ियों के भाव बेच देते हैं और अपनी कला को वे परिवर्तित कर जनता की मांग के आधार पर प्रस्तुत करते हैं।

इन जनजातीय लोकगीतों व नृत्यों को सर्वत्र स्कूलों, कॉलेजों, सार्वजनिक संस्थाओं एवं समारोहों में परिवर्तित रूप में देखा जा सकता है जो नवीन पौशाकें पहने, आधुनिक धुनों पर तैयार किये गये नृत्यों व गीतों को प्रस्तुत करते हैं।

कलाकारों के व्यक्ति जीवन में भी झांकने का प्रयास किया गया तो पाया कि वह भी हर पहलुओं से परिवर्तित होता दिखाई दे रहा है। नाच–गान समाप्त होते दिखाई दे रहे हैं। रंगीन कपड़े अब नहीं पहने जाते हैं। कृषि के साथ अब वे सरकारी नौकरी करने लग गये हैं। पहले मनोरंजन गीत व नृत्य करते किया जाता था अब सिनेमा, टी.वी. देखकर मनोरंजन किया जाता है।

अब जनजातीय कलाकार का आवासीय जीवन स्वरूप भी बदल गया पहले वे खुली जगहों पर पहाड़ियों में रहते थे अब उन्हें मैदानों में धकेल दिया है। पक्के मकानों में रहने लग गये हैं। जनजातीय कलायें आज अपना रूप बदल कर साज–सज्जा, प्रदर्शनी का साधन बन गई है। कलाकार ने अपनी कला को सौन्दर्यात्मक दृष्टिकोण से बना उसके रूप को बदल हमारे समक्ष रखा है जिसे शान–शौकत के रूप में प्रयुक्त किया जाता है और नकली कपड़ा, नकली रंगाई और नकली भावना, कलाओं में हमें दिखाई देती है। कलाओं में इतना परिवर्तन किया है जिसको देख ऐसा लगता है व्यावसायिक आधार बना कर ही कला का विकास होगा।

कुछ कलाकारों ने अपने निजी स्वार्थ के कारण जिन कलाओं को बनाया वे कला बनाते बाजार में सबसे अधिक बिके जिससे उनकी कला में मौलिकता सामाप्त हो गई और उस जनजाति कला के रूपों को पहचानना भी कठिन हो गया। सर्वत्र बाजार में फॉक डिजाइन के कपड़ों की प्रमुखता बढ़ गई है। फैशन परस्त व्यक्ति उसे शौकियाना पहनना चाहता है इसलिए

जनजातीय कलाकार उसे फैशन के रूप में प्रदर्शित करता है।

सारणी 1 : कला के स्वरूप में परिवर्तन

क्र.स.	विशेषताएं	जनजाति आवास क्षेत्र				कला के प्रकार			जनजातियाँ			
	उद्देश्य	पहाडी क्षेत्र	घाटी क्षेत्र	मैदानी क्षेत्र	नगर के पास	लोक कला	लोक संगीत	लोक नृत्य	भील	मीणा	गरासिया	कथौड़ी
1	रंगों में परिवर्तन	0.00	0.00	2.90	12.90	22.00	0.00	0.00	7.30	0.9	4.70	10.00
2	लय ताल में परिवर्तन	0.00	0.00	0.70	4.30	7.00	0.00	0.00	0.31	8.80	4.70	0.00
3	आधुनिकता की ओर झुकाव	0.00	0.00	15.00	3.60	27.00	0.00	0.00	6.80	12.90	4.30	13.30
4	भाव–भंगिमा में परिवर्तन	0.00	0.00	2.90	2.90	0.00	0.00	0.00	3.60	0.90	4.70	0.70
5	मेकअप ड्रेसअप में परिवर्तन	0.00	0.00	2.20	2.90	15.00	0.00	0.00	2.60	9.90	4.70	0.00
6	प्रदर्शन में परिवर्तन	0.00	0.00	4.30	12.20	23.00	0.00	0.00	6.30	0.90	6.00	9.30
7	काई परिवर्तन	90.00	100.00	76.80	57.80	0.00	100.00	100	67.20	67.80	66.70	66.70
8	अन्य	0.00	0.00	1.40	10.00	6.00	0.00	0.00	2.60	0.90	4.7	10.00
9	प्रतिशत	100	100	100	100	100	100	100	100	100	100	100
10	आवृति	138	139	10	13	100	100	100	192	108	150	150
11	काई वर्ग सार्थकता	**47.10 (21)′**				**300 (14)′**			**44.60 (07)′**		**34.75 ( )′**	

जब कलाकारों से कला के स्वरूप में परिवर्तन के सम्बन्ध में पूछा गया तो उक्त सारणी 1 में सर्वाधिक दो तिहाई से अधिक कलाकार कोई परिवर्तन नहीं करते जबकि 10 प्रतिशत कलाकार कला के स्वरूप का आधार आधुनिकता की ओर झुकाव मानते हैं।

लोक संगीत एवं लोक नृत्य के शत–प्रतिशत कलाकार कोई परिवर्तन नहीं करते दो तिहाई भील कलाकार कोई परिवर्तन नहीं करते जबकि मीणा जाति के 13 प्रतिशत कला को आधुनिकता से युक्त करना चाहते हैं।

कथौड़ी और गरासिया जिले के दो तिहाई कलाकारों में कोई परिवर्तन नहीं किया। केवल 13 प्रतिशत कथौड़ी कलाकार आधुनिकता की ओर झुकाव को महत्व देते हैं। निजी संस्था में प्रशिक्षित बीस प्रतिशत कलाकार कला को आधुनिकता से जोड़ना चाहते हैं एवं अन्य कलाकार रंगों में परिवर्तन नहीं चाहते।

कला के प्रकार जनजाति प्रकार, आवास के चरों से 0.01 स्तर पर व प्रशिक्षण प्राप्ति में काई वर्ग का मान 0.05 स्तर पर सार्थक स्तर से प्राप्त किया गया जो कला में स्वरूपों से सार्थक रूप से सम्बन्धित है।

कला में परिवर्तन के नये आयाम :– कलाकार की कला के स्वरूपों में परिवर्तनों के सम्बन्धों में सारणी 2 से स्पष्ट है कि सर्वाधिक 31 प्रतिशत कलाकारों ने आकृतियों के रूपों तथा अन्य में परिवर्तन किया जबकि 15 प्रतिशत कलाकारों ने लय–ताल में तथा 19 प्रतिशत कलाकारों ने प्रस्तुति में परिवर्तन चाहा है।

कलाकार की कला के आधार पर सर्वाधिक शत–प्रतिशत लोकसंगीत के कलाकारों में लय व ताल में तथा लोक नृत्य के 36 प्रतिशत कलाकारों आकृतियों के रूपों में परिवर्तन किया। भील जाति के 30 प्रतिशत तथा मीणा जाति के 32 प्रतिशत कलाकारों ने आकृतियों के रूपों में परिवर्तन को महत्व दिया है जबकि गरासिया 32.70 व कथौडियों ने 24.00 प्रतिशत कलाकारों ने महत्व दिया है।

मैदानी क्षेत्र में निवास करने वाले एक तिहाई से कम कलाकार प्रस्तुति में परिवर्तन करते हैं। पहाड़ी क्षैत्र के 18 प्रतिशत कलाकार ताल व लय में परिवर्तन करते हैं।

जाति वार अध्ययन से स्पष्ट है कि गरासिया जनजाति के एक तिहाई कलाकार आकृतियों के रूपों में परिवर्तन करते हैं जबकि कथौड़ी जनजाति के 21 प्रतिशत कलाकार प्रस्तुति में परिवर्तन करना पसन्द करते हैं। केवल 20 प्रतिशत कलाकार जो परिवार के सदस्यों से प्रशिक्षित हैं ताल व लय में परिवर्तन करते हैं।

कला के प्रकार जनजातीय प्रकार आय, आवास के चरों में 0.01 व कलाकारों की आय भील, मीणा, गरासिया, कथौड़ी जनजाति में काई वर्ग का मान 0.05 के स्तर में सार्थक स्तर प्राप्त हुए जो यह दर्शाते हैं कि कलाकार अपनी कला के स्वरूपों में परिवर्तन के सार्थक स्तरों पर सम्बन्धित है।

हस्तशिल्प परिवर्तन :– जनजातीय कला की वस्तुओं में परिवर्तन किया गया है पहले ये जनजाति अपने दैनिक जीवन में काम आने वाली वस्तुयें चक्की, कोठी, डबूसा, खरल, झाडू आदि वस्तुओं को अत्यन्त सुन्दर एवं कलात्मक स्वरूप प्रदान करते थे। आज भी इन सभी वस्तुओं में कलात्मकता पायी जाती है परन्तु बहुत कम मात्रा में प्राप्त होती है। पहले सभी घरों में इस प्रकार की कलात्मक कृतियां उपलब्ध थी। आज कुछ ही घरों में इस प्रकार की कृतियां उपलब्ध होती हैं। ये अपना दैनिक जीवन में काल आने वाली वस्तुओं को आकर्षित करने के लिए रंगों से रंगते थे किन्तु अब ये कलाकार बाहरी आयामों से जुड़ अपना कार्य कर लेते हैं, चक्की से आटा पिसा लेते हैं इसलिए इसका प्रयोग कम होता जा रहा है यदि ये कलाकृतियां इनके घरों में है तो घर की शोभा के लिए होती हैं। इस प्रकार से जनजाति कला में धीरे–धीरे परिवर्तन आता जा रहा है।

जनजातीय कलाकारों ने धनुष–बाण को अपने से अलग नहीं किया, इसे अपने शरीर का एक अंग मानते थे जिसके बिना वह घर से बाहर नहीं निकलते थे उसे सजाने संवारने में ये अत्यधिक पारंगत रहे हैं तीर के फाल को विशेष आकार देना इसकी विशेषता रही है तीर के फाल अनेक डिजाइनों के बनाते थे परन्तु जैसे–जैसे तीर की आवश्यकता कम होती गई इन्होंने डिजाइनों में कमी उसमें कर दी, धनुष–बाण का प्रयोग भ्झी कम होता गया अब केवल शिकार के समय या जंगल में जाते समय ही ये लोग बाण साथ रखते हैं।

सारणी 2 : कलाकारों द्वारा कला में परिवर्तन के नूतन आयाम

क्र.स.	विशेषताएं	जनजाति आवास क्षेत्र				कला के प्रकार			जनजातियाँ			
	उद्देश्य	पहाडी क्षेत्र	घाटी क्षेत्र	मैदानी क्षेत्र	नगर के पास	लोक कला	लोक संगीत	लोक नृत्य	भील	मीणा	गरासिया	कथौड़ी
1	रंगों में साज–सज्जा	0.00	0.00	1.50	6.50	9.00	0.00	1.00	3.60	3.8	3.30	4.00
2	आकृतियों के रूप में	20.00	0.00	24.60	39.0	69.0	0.00	22.00	29.70	31.00	32.70	28.00
3	डांस प्रस्तुती में	28.90	12.20	30.00	30.70	0.00	0.00	96.00	19.80	17.60	16.70	21.30
4	वस्तुओं के लय व ताल में	17.40	13.70	10.00	23.10	21.00	100.0	0.00	18.80	10.20	26.00	5.30
5	अन्य	88	139	10	13	100	100	100	192	108	150	150
6	प्रतिशत	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0
7	आवृत्ति	135	139	10	13	100	100	100	192	108	150	150
8	काई वर्ग सार्थकता (क)	**25.02 (20)′**				**312.28 (08)′**			**22.27 (04)′**			

इन तीर कमानों, धनुष–बाणों को आज बड़ी–बड़ी होटलों, महलों और घरों में सजावट हेतु देखा जाता है इसलिए जनजाति कलाकार उसे उसी रूप में अर्थात् सौन्दर्यतम स्थान की सुन्दरता में रखने हेतु बनाता है। आधुनिक शहरी लोगों में लोक कलाओं में रूची जागृत हो जाने के कारण इन कलाओं की मांग बढ़ी है। पहले ये जनजाति जिन मूर्तियों की पूजा हेतु बनाते थे जिसकी स्थापना मन्दिरों में की जाती थी, अब ड्राईंगरूम में सजावट हेतु आधुनिक व्यक्ति खरीदता है

इसलिए कलाकारों ने उन मूर्तियों को उनकी इच्छानुसार बनाना प्रारम्भ किया।

कला रूपों में परिवर्तन को देख यह निष्कर्ष निकलता है कि कला प्रेमी जनजाति कलाकृतियों में रूचिकर परिवर्तनों को स्वीकारते तो रहे हैं परन्तु धर्म एवं अनुष्ठानों से जुड़े कला रूपों में शीघ्र परिवर्तन को नहीं स्वीकारते किन्तु यह भी देखने में आया कि समय की मांग के साथ–साथ इनकी कला में परितर्वन करना स्वाभाविक है।

नृत्यकला में परिवर्तन :– गवरी नामक प्रसिद्ध नृत्य–नाटिका पर भी पर्यावरण में बदलाव के कारण कई सामाजिक व राजनीति विषयक संदर्भों का समावेश हुआ है। 'गवरी' पूर्ण रूप से एक भील नृत्य–नाटिका है इस धर्म पर आधारित नृत्य नाटिका में धर्म के स्थल को छोड़कर अनेक परिवर्तन देखने में आते हैं। 'राइबूड़िया' आज भी यथावत कार्य करता है श्रृंगार भी यथावत है। परन्तु अन्य अभिनायक में ऐसा नहीं है उदाहरणार्थ अकबर बादशाह का ऐतिहासिक संदर्भ एक लघु नाटिका के रूप में खेला जाता है बादशाह अकबर का पगड़ी तथा चोगे से श्रृंगार करते थे परन्तु वर्तमान में नव आंगल सभ्यता के प्रभाव से बादशाह अकबर को हैट पहने देखते हैं साथ ही यह पाया गया कि दाणी का पात्र जिसे कि अंग्रेजी लिबास में दर्शाया गया है जो कि कस्टम अफसर है उसे पेन्ट कोट में दर्शाते हैं उसकी प्रकार ''भियावड़'' में एक राक्षस का प्रतीक तलवार लेकर लड़ाई करता है वह लड़ाई तलवार के उपलब्ध न होने पर डन्डे या छाते को हथियार के प्रतीक रूप में प्रयोग करने लगे हैं इस प्रकार देखा गया कि आदिवासी अपनी नृत्यकला की प्रस्तुति को सुविधानुसार कर लेता है इस तरह से गवरी नृत्य नाटिका के अन्तर्गत हम देखते है कि छोटे–छोटे अनेकों परिवर्तन समय के साथ किय हैं जनता को अधिक मनोरंजन करवाने के लिए ये इस नृत्य नाटिका में भी परिवर्तन करना स्वाभाविक मानते हैं।

अन्य नृत्य समूह जिसमें गैर, डांडिया पालीचोच जो इनके मुख्य नृत्य हैं उनमें भी परिवर्तन पाया गया है। ये जनजातियाँ पहले गैर नृत्य इसी तरीके से लय व ताल के साथ करते थे किन्तु जब इन्हें शिल्पग्राम में स्टेज पर गैर व डांडिया नृत्य करवाया जा रहा है तो उसे देख ऐसा लगता है कि यह नृत्य जनजातियों का आधुनिक नृत्य है, एक–सी पौशाकें, तरह–तरह के आभूषण, पहले ये स्त्रियां एवं पुरूष अपनी प्रस्तुति देते हैं। अलग–अलग गांवों में नृत्य समूहों ने रजिस्टर्ड समूह तैयार किये हैं वे समूह अपनी प्रस्तुतियां अलग–अलग स्थानों पर देने जाते हैं और कुछ तो व्यावसायिक समूह बन गये हैं जो हमेशा निमंत्रण पर ही प्रस्तुति देते हैं।

लोकगीतों में परिवर्तन :– जिस प्रकार हस्त कला, नृत्य कला में परिवर्तन देखे गए उसी प्रकार लोक गीतों में भी परिवर्तन देखे गये जो सारणी 3 से स्पष्ट है :–

सारणी 3 : लोक गीतों में परिवर्तन

क्र.स.	विशेषताएं	जनजाति आवास क्षेत्र				कला के प्रकार			जनजातियाँ			
	उद्देश्य	पहाडी क्षेत्र	घाटी क्षेत्र	मैदानी क्षेत्र	नगर के पास	लोक कला	लोक संगीत	लोक नृत्य	भील	मीणा	गरासिया	कथौड़ी
1	लय व ताल में परिवर्तन	9.40	15.10	20.00	23.10	0.00	39.00	0.00	10.00	14.80	12.00	14.00
2	आधुनिकता की ओर झुकाव	0.00	0.00	0.00	0.70	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00
3	मेकअप ड्रेसअप व भावभंगिमाओं में परिवर्तन	10.90	7.20	10.00	23.10	0.00	30.00	0.00	8.80	12.00	11.30	8.00
4	फैशन में परिवर्तन	66.70	69.80	70.00	30.70	100	0.00	0.00	65.60	68.60	66.70	66.70
5	अन्य	12.30	7.90	0.00	23.10	0.00	31.00	0.00	13.60	4.60	9.30	11.30
6	प्रतिशत	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0
7	आवृत्ति	138	139	10	13	100	100	100	192	108	150	150
8	काई वर्ग सार्थकता (कि)	**15.02 (20)''**				**300.00 (08)'**			**31.69 (04)'**			

सारणी 3 में दर्शाया गया है कि कलाकारों ने संगीतकला में क्या परिवर्तन किया इससे सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर के सर्वाधिक दो तिहाई कलाकारों ने अपने लोकसंगीत के प्रदर्शन में परिवर्तन किया एवं 13 प्रतिशत कलाकारों ने लय एवं ताल में परिवर्तन किया तथा 10 प्रतिशत कलाकारों ने संगीत के भावों में परिवर्तन किया।

लोककला एवं लोकनृत्य के प्रदर्शन में शत प्रतिशत परिवर्तन किया। लोकसंगीत के 30 प्रतिशत कलाकारों ने मेकअप ड्रेस रूप भाव–भंगिमा में परिवर्तन किया एवं एक तिहाई से अधिक कलाकारों ने लय व ताल में परिवर्तन किया है। मीणा व भील जाति के लगभग दो तिहाई कलाकार प्रदर्शन में परिवर्तन चाहते हैं, वहीं गरासिया व कथौड़ी जनजाति के कलाकार इसी के पक्षघर हैं।

आवासीय क्षेत्र पर अध्ययन से यह तथ्य सामने आया है कि पहाड़ी एवं मैदानी क्षेत्र के दो तिहाई से अधिक कलाकार प्रदर्शन में परिवर्तन को महत्व देते हैं। नगर के पास रहने वाले लगभग एक चौथाई कलाकार मेकअप ड्रेस व भाव–भंगिमा में परिवर्तन करते हैं। दो हजार से अधिक आय वाले कलाकार प्रथम घटक को दो तिहाई मत से समर्थन देते हैं।

कलाकार की कला के प्रकार, जनजातीय आवास प्रकार का काई वर्ग मान 0.01 एवं कलाकारों की जनजातीय प्रकार का 0.05 स्तर पर सार्थक स्तर प्राप्त किया गया जिनका कला के प्रकार, परिवर्तन के साथ सार्थक रूप से संबंधित है। जो कलाकार को प्रभावित करता है।

कला रूपों में परितर्वन का कारण :– कला रूपों में परिवर्तन का मुख्य कारण इन जनजातियों के बताये अनुसार यह पाया गया कि इनकी कलात्मक एवं धार्मिक भावना ने कुछ व्यावसायिक रूप लेना प्रारम्भ कर दिया है। इस कारण से जनजातीय कलाकारों ने अपनी कला को इनकी मांग के आधार पर बनाना प्रारम्भ किया एवं कला रूपों में परिवर्तन किया।

समय के साथ शहरी शौकीन व्यक्ति भी वहाँ पहुंचने लगे हैं। वे अपने घरों की सजावट के लिए उन मूर्तियों को खरीदने लगे जिसमें गणपति की मूर्ति की मांग बहुत अधिक है। भील जनजाति आज भी इस कला को उनकी मांग के आधार पर बना रहा है। उसने अपने कलात्मक गुणों को उन्होंने अन्य स्वरूपों में भी उभारने का प्रयास किया है। आधुनिक व्यक्ति का आकर्षण उस और अधिक है।

नागरिक प्रभाव के कारण इनके संयोजन में विशेष रूप से परिवर्तन दिखाई देता है क्योंकि नवीन सृजन वे करना चाहते हैं पुरानी कला अर्थात् परम्परागता को समाप्त करके उसके स्थान पर नागरिक रूची को अधिक ध्यान दिया जाता है यह उनकी कला में परिवर्तन का मुख्य कारण होता है। ये कलायें जनजातियों की आजीविका उपार्जन के लिए कुछ पेशेवर लोगों की धरोहर बन जाने के कारण उनमें कुछ प्रवीणता की अधिकता अवश्य है। किन्तु मुख्य कारण कला के स्वरूपों में परिवर्तन करने का व्यावसायिक पाया गया है। कलाओं पर समयगत प्रभाव होने से भी उसमें परिवर्तन किया गया है आज जनजातियां पढ़–लिख कर परम्परागत रूप से अपनी कला का प्रदर्शन नहीं करना चाहता व्यक्तियों की रूचियों को ध्यान रखता है। औद्योगिकरण व नगरीकरण पर संस्कृतिकरण भी कलाओं के परिवर्तन का मुख्य कारण है। कलाओं पर व्यापारिक मूल्यों का भी प्रभाव दिखाई देता है जिस कारण से कलाकार आज अपनी कला बदलता जा रहा है इन मुख्य कारणों को मद्देनजर कर आज जनजातियों द्वारा अपनी कला रूपों में परिवर्तन कर रहा है।

सारणी 4 : कला में परिवर्तन के कारण

क्र.स.	विशेषताएं	जनजाति आवास क्षेत्र				कला के प्रकार			जनजातियाँ			
	उद्देश्य	पहाडी क्षेत्र	घाटी क्षेत्र	मैदानी क्षेत्र	नगर के पास	लोक कला	लोक संगीत	लोक नृत्य	भील	मीणा	गरासिया	कथौड़ी
1	व्यापारिक मूल्यों का प्रभाव	15.40	11.50	30.00	15.40	5.0	3.0	35.00	17.20	9.30	9.30	25.30
2	औद्योगीकरण व नगरीकरण पर संस्कृतिकरण	39.70	44.60	60.00	38.40	58.0	50.0	19.0	37.70	51.80	51.80	34.00

3	निजी रूची में परिवर्तन	23.90	25.90	0.00	15.40	25.0	22.0	21.0	23.40	24.10	24.10	22.00
4	शैक्षणिक परिवर्तन	8.00	7.90	0.00	15.40	1.0	14.00	9.0	8.90	23.40	6.50	7.30
5	समयागत परिवर्तन	13.00	10.10	10.00	15.40	8.0	11.0	16.0	13.8	8.90	8.30	11.30
6	प्रतिशत	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0
7	आवृत्ति	138	139	10	13	100	100	100	192	108	150	150
8	काई वर्ग सार्थकता (कि)	**9.46 (12)''**				**79.54 (08)'**			**13.10 (04)'**			

कलाकारों द्वारा कला में परिवर्तन करने के कारण के सम्बन्ध में अध्ययन सारणी 4 में पाया गया कि 42 प्रतिशत कलाकारों ने औद्योगिकरण, नगरीकरण पर संस्कृतिकरण को प्रमुख कारण माना है। जबकि एक चौथाई के करीब कलाकारों ने निजी रूचि में परिवर्तन एवं 14 प्रतिशत व्यापारिक मूल्यों के प्रभाव एवं ग्यारह प्रतिशत समयागत परिवर्तन को कला परिवर्तन का कारण माना है। आधे से अधिक लोक कला के कलाकार औद्योगिकरण एवं नगरीकरण पर संस्कृति को परिवर्तन का कारण मानते हैं। भील, मीणा, गरासिया, कथौड़ी जाति के लगभग एक चौथाई कलाकार निजी रूचि में परिवर्तन को कारण मानते हैं। सर्वाधिक 61 प्रतिशत 40 वर्ष से अधिक के कलाकार औद्योगिकरण व नगरीकरण पर संस्कृति से परिवर्तन मानते हैं।

मैदानी क्षेत्रों में निवास करने वाले 60 प्रतिशत कलाकार औद्योगिकरण, नगरीकरण पर संस्कृति एवं एक चौथाई व्यापारिक मूल्यों का प्रभाव एवं नगर के पास रहने वाले कलाकार समयागत परिवर्तन एवं शैक्षणिक परिवर्तन को कारण मानते हैं।

कला के प्रकार उम्र, निवास क्षेत्र के चरों में काई वर्ग का मान का 0.01 स्तर एवं जनजातीय प्रकार में 0.05 स्तर पर सार्थक मान प्राप्त हुआ जो यह दर्शाता है कि कला में परिवर्तन जनजाति के प्रकार, निवास, आवास क्षेत्र के कारण सार्थक स्तर पर सम्बन्धित है।

निष्कर्ष :– उपरोक्त तथ्यों के अनुसार निष्कर्षतः कह सकते हैं कि विभिन्न भौगोलिक क्षेत्र (पहाड़ी, घाटी, मैदानी व नगरों के समीप) निवास करने वाली विभिन्न जनजातियों की कला में भिन्नता देखने को मिली। इनकी कला निवास क्षेत्र में मिलने वाली वस्तुओं पर आधारित है अर्थात् इनकी कला निश्चयवादी है। कला में अत्यधिक बदलाव नगर के समीप दिखाई पड़ता है क्योंकि नगर के समीपवर्ती क्षेत्र को जोड़ने से जनजातियों का आवागमन शहरों की ओर होने लगा जिसका परिणाम कला में परिवर्तन देखने को मिला।

जैसे– जनजातियां अपने दैनिक जीवन में काम आने वाली वस्तुएं चक्की (घटी), कोठी, डबुआ, खरल, झाड़ूं आदि वस्तुओं को अत्यन्त सुन्दर एवं कलात्मक स्वरूप प्रदान करते थे। आज इन वस्तुओं में कलात्मकता कम देखी जाती है। ये अपनी दैनिक जीवन में काम आने वाली वस्तुओं को आकर्षित करने के लिए रंगों से रंगते थे अब ये कलाकार बाहरी आयामों से जुड़कर अपना कार्य कर लेते हैं।

जनजातीय कलाकार धनुषबाण को अपने से अलग नहीं मानते थे, इसे अपने शरीर का एक अंग मानते थे जिसके बिना वे घर से बाहर नहीं निकलते थे। उसे सजाने संवारने में ये अत्यधिक पारंगत रहे हैं तीर के फाल को विशेष आकार देना इनकी विशेषता रही है। अब इन सब में कमी देखने को मिलती है। अब इन तीन कमानों का बड़ी–बड़ी होटलों, महलों, घरों में सजावट हेतु देखा जाता है। आधुनिक शहरी लोगों में लोक कलाओं में रूची जागृत हो जाने के कारण इन कलाओं की मांग बढ़ी है। पहले ये मूर्तियां पूजा हेतु बनाते थे जो मन्दिरों में स्थापित होती थी अब वे ड्रेसिंगरूम में सजावट हेतु आधुनिक व्यक्ति खरीदता है। इसलिए कलाकार उन मूर्तियों को उनकी इच्छा के अनुरूप बनाने लगे। कला रूपों में आए परिवर्तन को देखें तो यह निष्कर्ष सामने आता है कि कला प्रेमी जनजाति कलाकृतियों में रूचिकर परिवर्तनों को स्वीकारते तो रहे हैं परन्तु धर्म एवं अनुष्ठानों से जुड़े कला रूपों में शीघ्र परिवर्तन को नहीं स्वीकारते किन्तु यह भी सामने आया कि समय की मांग के साथ–साथ इनकी कला में परितर्वन करना भी स्वाभाविक है।

यहां नगर के समीप व पहाड़ी क्षेत्रों में निवासित भील जनजाति का मुख्य नृत्यकला गवरी में भी परिवर्तन देखने को मिले।

सुझाव :

1. जनजातीय कला भी उत्कृष्टता को प्रोत्साहन देने के लिए शासन द्वारा 'हस्तशिल्प विकास निगम' जैसी संस्थाएं चलाई जाए जो जनजातियों द्वारा बनाई गई सामग्रियों की शहरों व कस्बों में प्रदर्शनी लगती है, इसका प्रसार–प्रचार करना है और बेचनी है जिससे इस कला की लोकप्रियता बढ़े।
2. राष्ट्रीय व राज्य स्तरीय कलाकारों को सम्मानित कर पुरस्कृत किया जाना चाहिए ताकि कलाकारों को प्रोत्साहन मिले और कला में परिवर्तन करने की सोच नहीं रखे।
3. जनजाति कला परिषद जैसी स्वयंसेवी संस्थाओं का निर्माण करके कला का प्रचार करना चाहिए ताकि कला का संरक्षण किया जाए।
4. समय–समय पर विभिन्न भौगोलिक क्षेत्र के जनजाति कलाकारों द्वारा नये जनजाति कलाकारों को प्रशिक्षण देने के लिए आर्थिक सहयोग देने का प्रावधान रखना चाहिए, अर्थात् पहाड़ी क्षेत्र के कलाकार द्वारा वहां से प्राप्त वस्तुओं से कैसे कलात्मक वस्तुएं बनाई जाए आदि।
5. इन जनजातियों को आधुनिक सुविधाएं देने के साथ–साथ इनको प्रशिक्षण के माध्यम से बताना चाहिए कि कला में परिवर्तन नहीं करें।
6. दस्तकारी हेतु कला केन्द्र खोले जाएं जहां उकी कला का प्रदर्शन वे सही तरीके से करें।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Sri. MEENAKSHI SUNDARESWARAR TEMPLE, VILATHIKULAM-A STUDY

A. VIMALA
M.Phil., Research Scholar, PG & Research Department of History,
V.O.C. College, Thoothukudi – 628 008, Tamil Nadu.

Location of the Temple : Sri Meenakshi Sundareswarar temple, swamy is called Sri Chokkalingam. Vilathikulam is located at a distance of 35-kms from Kovilpatti railway station. "Sithirai Thiruvizha" in Meenakshi Amman temple is the most famous festival in Vilathikulam which will last for more than 10 days. Vilathikulam owes its name to a temple pond "Vila" + "Athi" + "Kulam". The Meenakshi Amman Temple has a temple pond, which had a "Vila" tree and an "Athi" tree and hence, the name.[1]

Legendary origin

The *Thiruppanimalai*[2] begins with the traditional history of the Vilathikulam Temple since the time it was supposed to have been founded by Devendra, the king of Devas. This account is traceable from the *Tiruvilaiyadal Puranam*, the local Sthalapuranam, which ascribes the origin of the temple to the efforts of Airavata, the elephant vehicle of Indra, the king of *Devas*. The origin of the Vilathikulam Temple goes back to legendary rather than historic time.[3] According to tradition, Indra, the king of Devas, once committed a sin when he killed a demon by the name of Virudhran, who was then performing penance. Indra had thus violated one of the sacred norms of battle and this mortal sin sat heavily on his conscience. Finding no peace of mind in his own kingdom, he came down to the earth and bathed in many holy rivers in an effort to expiate his sin.[4] While passing through a forest of Kadamba trees in the Pandya land, he felt relieved of his burden. He has informed by his men that there was a Shiva Linga under a Kadamba tree. Convinced that it was Shiva himself who had absolved him of his sin, he worshipped the *Linga* and built a small temple

around it.[5] It is believed that it is this *Linga* which is still under worship in the Madura Temple.

Dhananjayan, a merchant of Manavoor, a village seven miles east of the present city of Madurai and where the Pandyas were living, came across this temple while looking for a shelter on the way of his travel. He slept for a night near the shrine. When next morning he woke up, he was astonished to see signs of worship. Thinking that this must be the work of the Devas, he informed the matter to the Pandyan king Kulasekaran at Manavoor. Meanwhile Lord Shiva appeared in the Pandya's dream and instructed him to build a temple and a city at the spot Dhananjayan would indicate. Kulasekara obeyed the order of Lord Shiva.[6] Thus the temple and the city of Vilathikulam were originated.31 One can see the sculptures of Kulasekara and Dhananjayan in the northern corridor of the Golden Lotus Tank.[7]

In the ultimate analysis it appears that Shiva deliberately brought Indran, Dhananjayan and Kulasekara to the spot, so that a temple and a city may be built there. He could therefore be called the chief architect. After the period of Kulashekara[9], Malayadhwaja Pandya was ruling from Madurai. He married the daughter of Chola celebrity, Surasena named Kanchanamala.[8] They had no issues. He and his queen Kanchanamala performed a sacrifice for a child. Shiva caused his divine consort Parvathi herself, to step out from the holy fire as a little girl, with three breasts. By the time the anxious couple could recover from their surprise divine voice told them that the third breast would disappear when Lord Shiva set His eyes on her. The girl was named
Thadathakai34 and she was brought up as a princess under divine instruction.[10]

Evolution of the Vilathikulam Temple

The early temples are said to be made of perishable materials like bamboo or wood. 38 Since stone was not used for temple building until the reign of Pallavas, it may be assumed that the temple was made of wood at first and subsequently it might have been made of burnt brick.[11] They were simple and single-celled structure with a small verandah like *mandapa* in the front. The small shrines in times were expanded by the additions of *praharas* enclosed in concentric rings of larger walls. Gateways developed into monumental rectangular pyramids with hundreds of feet of brick super structures called *gopuras* and their outer surface covered up by stucco figures of Gods and other religious minor deities.[12]

Festivals

Every year during Chithirai month, (same day and dates as of Madurai Meenakshi Amman Temple), Chithirai Festival is celebrated and ends with a Car Festival crowded by the people from nearby villages.[13]

Accessibility

Instead of Vilathikulam one can a get flight to Tuticorin Airport on regular basis. There are no regular trains from other major cities to Vilathikulam. Nearest train station is Kovilpatti. Vilathikulam is well connected to other major cities of the country via regular buses.[14]

Shlokas

Kailaasarana Shiva Chandramouli Phaneendra Maathaa Mukutee Zalaalee Kaarunya Sindhu Bhava Dukha Haaree Thujaveena Shambho Maja Kona Taaree.[15]

Meaning –

Oh Lord Shiva who is seated on Mount Kailash, where the moon decorates his forehead and the king of serpents crown his head, who is merciful and removes delusion, You alone can protect me. I surrender to thee.

Aum Trayambakam Yajaamahey Sugandhim Pusti Vardhanam Urvaarukamiva Bandhanaath Mrutyor Muksheeya Maamritaat

Meaning - We worship the fragrant Lord Shiva, who has 3 eyes and who cultivates all beings. May He free me from death, for immortality, as even a cucumber is separated from its bond with the vine?[16]

Conclusion : *Madurai Meenakshi Amman Sundareswarar* Temple is a symbol for the beauty of art and architecture. The symbol stands for the immortal world of art and architectural.

Notes and References :

1. R. K. Das, *Temples of Tamil Nadu*, Bharatiya Vidya Bhavan Chanpathy, Bombay, 1964, p. 489.
2. J.P.Lasrad Shenoy, *Madura: The Temple City*, Madurai Publications, Madurai, 1939, p.29.
3. *ARE* 275 of 1941-42.
4. S.V.Varadarajan, *IndianTemples and Festivals at a Glance*, Surya and Bros, Chennai, 2007,p.57.
5. Robert Sewel, *List of Inscriptions and Sketch of the dynasties of Southern India*,Archaeological Survey of Southern India, Vol II, Madras, 1971, p.19.
6. P.K.Nambiar and K.C.Narayana Kurup, *Census of India 1961, Vol IX, Temples of Madras State*, Madras, 1969, p.131.
7. *Ibid.*
8. *Maduraikkanchi,* ll. 331-669.
9. T.V.SataShiva Pandarathar, *Pantiyar Varalaru*, South Indian Saiva Siddhanta Works Publishing Society, Chennai, 1966, p.38.
10. P.Arangasami, *Adhi Kumaragurubarar (Kurung Kappiam)*, Lalkudi, 2003, p.35.
11. P.V.Somasundaranar, *Paripadal Thirattu*, Thirunelveli, Thenninthiya Saivasidhantha Noorpathipu kazhakam Ltd., Chennai, 1975, p.407.
12. T. V. Sadasiva Pandarathar, *Kalladam*, Senthamil, Vol IV, Madurai Tamil Sangam, Madurai, 1916, p.113.
13. C.Santhalingam, *A peep into the Meenakshi Temple*, Arulmigu Meenakshi SundARE swarar Thirukkoil Kumbabishekam Souvenir, Madurai, 2009, p.364.
14. Mrs.T.Thiyagarajan, *Pandiyar Varalaru*, Madurai Tamil Sangam Ponvizha Malar, Madurai, 1956, p.348.
15. *ARE* 275 of 1941-42.
16. W.Francis, *Madura District Gazetteer*, Cosmo Publications, New Delhi, 2000, p.35.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

St. PATRIC CHURCH IN THOOTHUKUDI- A STUDY

B. ANITHA
M.Phil., Research Scholar, PG & Research Department of History,
V.O.C. College, Thoothukudi – 628 008, Tamil Nadu.

St. Patrick's Church, Vadakkur in Thoothukudi in the district of Thoothukudi is a protestant church. It is located west of the sea shore and near to Thoothukudi Railway Station. St. Patrick's church has a long history of its own. It is considered as the oldest protestant church in Thoothukudi and called the mother of all protestant churches in Thoothukudi which is popularly known as the Pearl City.

Originally constructed as the thatched shed it has gone through many phases of construction, modification and renovation. Today it stands majestically and impressively. In the year 1839 St. Patrick's church was situated in a small thatched shed in Vadakkur. Some ten families attended the Church services. The important person among them was a customs clerk. He served in the church for nearly 25 years. This fact is mentioned in the stone plaque fixed on the western side of the vestry inside the church building.

From 1861 onwards men and women mostly residing in Vadakkur, came into the faith on Jesus Christ. It was from then onwards that the Christian congregation witnessed an appreciable growth in numbers. In the meantime kearns worked hard for the improvement of Thoothukudi. There were more Christians in Vadakkur. So, Kearns, a missionary in Puthiamputhur felt that the congregation needed a church near their habitations in vadakkur. He got a land from the Government; and laid the foundation in July 1868 to build a Church.

Gnanaprakasam (1869-1871)

In 1869 a Pastor, namely Gnanaprakasam was appointed as the pastor of Thoothukudi. He was ordained by Bishop Frederick Gell on 31.1.1869 at Palayamkottai. Gnanaprakasam was the first pastor of Thoothukudi. He was the second son of Daniel, native of Idaiyangudi. Daniel was one of the early Christians of that place. He did yeoman service in his new pastorate, and helped kearns a great deal in collecting money for the building of the church. As the first pastortate chairman he was put on the list of missionaries and treated as such though Thoothukudi congregation paid his salary. When Thoothukudi was made a pastorate on the 2nd of February 1869, a new era of progress dawned. In September 1871. D. Gnanaprakasam was transferred to kumbakonam.

Swamidason (1871-1879)

In Gnanaprakasam's place A.Swamidason, a candidate for ordination was appointed. Swamidason was ordained in December 1871, and he took charge soon after. He gave full attention to the building work. The church building was completed in 1872. The missionary, J.E. Kearns wrote a year later on 13.12.1872 the following. "I am now completing a neat and substantial church in Thoothukudi, and hope to have it opened in the first week of February, for divine service. The building is quite an ornament to the town and is regarded by native Christians with pardonable pride. It is thoroughly well-built. But to me, the church will be known as 'St-Patrick's Church'. Swamidason served here till 1879. During his eight years, he helped the building of not only the church, but also the parsonage and a small school room near them. During his devoted ministry, the congregation grew in number and in Christian life.

Inauguration of St.Patrick's Church

Frederick Gell of Madras came to palayamkottai again in January 1873. After few days the Bishop went to Thoothukudi on Friday the 17th January. The 19th January 1873, the second Sunday in Epiphany he dedicated the Church for divine worship with the name of St.Patrick's Church, Thoothukudi. This is the name of a saint form Ireland Patrick who lived in Ireland during the 4th century was a very pious person. In 1855 Kearns named the church at Nagalapuram as 'St.Patrick's Church'. Generally many C.S.I churches are named of the saints.

Bishop Cald Well

In 1877 during the month of April Bishop Caldwell arrived Thoothukudi harbour from Calcutta. A grand welcome was given to him under the leadership of Swamidason. Then the Bishop held a thanks giving service at the English Church. After that a large number of Christians were fed by an Asanam feast. In the evening the Bishop held another Thanks giving service at St.Patrick's Church and gave the message Caldwell mentioned in the SPG Report as follows: "Next to Tirunelveli, Thoothukudi was a fast improving town. So I decided to transfer some institutions from sawyerpuram to Thoothukudi".

S.Devasagayam (1874 – 1881), D.Samuel (1881 – 1889) and **D.Pakyam (1889 – 1896)**

A.J.Godden, a young missionary of 29 years was working in sawyerpuram. He was an able administrator. During his first official visit to Thoothukudi in 1893, he preached to the congregation in St.Patrick's Church. Due to the lack of space in the church, most of the congregation had to stand outside. He therefore decided to demolish the church and rebuild another at a cost of Rs. 20,000/-. The extension work of the church was begun in 1894. D.Pakyam stained himself much to have the work completed. His labours were crowned with success. They extended and renovated the church which was opened for divine worship in 1895.

In 1907 this church building was constructed in another direction. This has been mentioned in the S.P.G. Report by Dignam. The opening of the new church has had a good effect upon the attendance at services and on Sunday mornings and at the chief festivals, the church is well filled with a congregation of 800 or 900 people. As the building constructed in 1907 was not enough for the congregation, it was decided to expand the church building. Rev. A.Diraviam Jesudason was the pastor of the church from 1960 -1966. At that time Koilpillai the chief Engineer and Administrator of Thoothukudi Harbour gave his full support for the construction. So the expansion work was started in 1965 and was completed quickly. The building was re-dedicated by the Bishop Rt. Rev.A.G.Jebaraj, Tirunelveli. In 1992 Rev.Pitchamuthu took pains to construct concrete terrace in the portico removing the tiles. There is a small brass stand used for Bible Reading. The Pulpit is placed at the right side of the building. There are pews for choir boys, special seats for presbyters and also special chair for the Bishop. There is also a tank used for adult baptism. From the year 1991, the church has been kept open from 5 am to 9 pm for the convenience of people those who want to pray, on the compound wall an arrangement has been made to keep the Bible open with necessary light. Since the letters are big enough, the passersby can read the passage of the day. In fact one could see many people halting before the Holy Scripture and reading it.

Architecture of the Church

Generally, the doors and windows of all Christian churches will be in arch shape. Likewise, the doors and windows of St. Patrick's Church are also in the shape of an arch. The windows have been built in arch shape. After constructing the concrete terrace on both sides of the church building, tiles were fixed in the central upper part of the walls. The concrete pillars in the centre though small are strong and sturdy. The small towers outside the building are designed as

ancient forts. Thermo coal ceiling is fixed above the altar floor and side walls have been polished.

St. Patrick's Forest City

St. Patrick's Church began in a little town of Forest City which was located west of Holy Sepulchre Cemetery. Forest City was founded and incorporated in 1859. Irish Catholic families began settling in the area as early as 1856. In 1858, the Catholics of Forest City organized as a church group under the direction of their first priest, Father Francis Cannon. Father Cannon was followed by several missionaries. By 1859, there were sixteen Catholic families living around Forest City. These pioneers gradually became too numerous to meet comfortably in dugouts or log cabins for Mass; therefore, they decided to build a church. Initially, William Fogarty donated two acres of land for the church about a quarter of a mile north of Forest City. By 1860, all the building materials had been gathered; however, William Fogarty sold his farm to John Waggoner, who did not want the church on his land. This was quite a blow to the community. The work resumed in 1863 when Wesley Knight, the founder of Forest City, donated an acre of his land. There was a good crop of wheat that year and $70.00 was collected for carpentry to build the 20 x 30 ft. log structure, while the logs and labor were donated. The Bishop blessed the church in honor of St. Patrick which was very appropriate since nearly all parishioners hailed from the Emerald Isle. Missionaries continued to serve St. Patrick's Church. On July 5, 1869, John Thomas Jr. and his wife donated five acres of their farmland for a cemetery. This graveyard is presently known as Thomas Calvary. At this time the community had approximately 160 Catholics. This growth necessitated the need for a larger church structure. A 30 x 60 ft. frame church was erected next to the log church at the cost of $600.00 for carpentry work and $1,000.00 for lumber. Fr. Patrick Keenan was the first resident pastor in 1875. Several priests followed with the longest resident pastor, Fr. John Vincent Wallace (1880-1917). In 1884, he opened the second graveyard, which is presently called Holy Sepulchre Cemetery.

St. Patrick's Church began in a little town of Forest City which was located west of Holy Sepulchre Cemetery. Forest City was founded and incorporated in 1859. Irish Catholic families began settling in the area as early as 1856. In 1858, the Catholics of Forest City organized as a church group under the direction of their first priest, Father Francis Cannon. Father Cannon was followed by several missionaries. By 1859, there were sixteen Catholic families living around Forest City. These pioneers gradually became too numerous to meet comfortably in dugouts or log cabins for Mass; therefore, they decided to build a church. Initially, William Fogarty donated two acres of land for the church about a quarter of a mile north of Forest City. By 1860, all the building materials had been gathered; however, William Fogarty sold his farm to John Waggoner, who did not want the church on his land. This was quite a blow to the community. The work resumed in 1863 when Wesley Knight, the founder of Forest City, donated an acre of his land. There was a good crop of wheat that year and $70.00 was collected for carpentry to build the 20 x 30 ft. log structure, while the logs and labor were donated. The Bishop blessed the church in honor of St. Patrick which was very appropriate since nearly all parishioners hailed from the Emerald Isle. Missionaries continued to serve St. Patrick's Church. On July 5, 1869, John Thomas Jr. and his wife donated five acres of their farmland for a cemetery. This graveyard is presently known as Thomas Calvary. At this time the community had approximately 160 Catholics. This growth necessitated the need for a larger church structure. A 30 x 60 ft. frame church was erected next to the log church at the cost of $600.00 for carpentry work and $1,000.00 for lumber. Fr. Patrick Keenan was the first resident pastor in 1875. Several priests followed with the longest resident pastor, Fr. John Vincent Wallace (1880-1917). In 1884, he opened the second

graveyard, which is presently called Holy Sepulchre Cemetery.

In 2001, with the help of Pastor, Fr. Daniel Soltys, a larger worship space and an religious education facility was very much needed. The former church entrance on Angus Street, as well as the body of the orginial church would remain as does the bell tower, choir loft and stained glass windows. During construction, the windows were removed, refurbished and placed in the north and south transepts of the church. The brick on the new church was chosen to match the old brick as closely as possible. The tabernacle and sanctuary lamp that was donated in1947 by Mrs. John Langdon had been refinished and placed in the adoration chapel. The stations of the cross and the statues were repainted, repaired and placed throughout the church uniting the past and present. The seating capacity went from 240 to approximently 900

In 2005, Fr. Michael Grewe took over as Pastor and continued to add to St. Patrick's to help the growth of Gretna. The altar was refurbished from concrete to tile. The Adoration Chapel was built and made larger. There was the demolition of the old CCD building as well as the old Parish Hall located west of the church. The most recent project was the feasibility study that led to a capital campaign for the Religious Education addition which also comprised of a new Preschool program and the Parish Center. Later, the Narthex and southwest entrance were remodeled. As of Spring 2017 with the help of our community, St. Patrick's is debt free. Today, St. Patrick has nearly 1,400 families and continues to see a growth spurt with the leadership of Pastor, Fr. Matthew Gutowski.

REFERENCES :

1. *Tanzilo, Bobby (October 25, 2016), "VIP MKE: Our Lady of Guadalupe (Holy Trinity)", OnMilwaukee.com, retrieved October 28, 2016*
2. *Our History, Our Lady of Guadalupe and St. Patrick's Parishes, retrieved October 28, 2016*
3. *National Park Service (2007-01-23). "National Register Information System". National Register of Historic Places. National Park Service.*
4. *National Park Service (2009-03-13). "National Register Information System". National Register of Historic Places. National Park Service.*
5. Brown, Mary Ann. *Ohio Historic Inventory Nomination: St. Patrick Catholic Church*. Ohio Historical Society, October 1977.
6. Brown, Mary Ann and Mary Niekamp. *National Register of Historic Places Inventory/Nomination: Cross-Tipped Churches Thematic Resources*. National Park Service, July 1978. Accessed 2010-03-09.
7. DeLorme. *Ohio Atlas & Gazetteer*. 7th ed. Yarmouth: DeLorme, 2004, 55. ISBN 0-89933-281-1.
8. Who was Saint Patrick, History Channel, 2008. Accessed 2010-03-09.
9. Brown, Mary Ann. *Ohio Historic Inventory Nomination: St. Patrick Catholic Rectory*. Ohio Historical Society, October 1977.
10. Fortin, Roger. *Faith and Action: A History of the Archdiocese of Cincinnati 1821-1996*. Columbus: Ohio State UP, 2002, 401.
11. The Futures Project, Archdiocese of Cincinnati. Accessed 2010-03-09.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

LIFE AND WORKS OF Fr. CAUSSANAL – A STUDY

P. KALIESWARI
M.Phil., Research Scholar, PG & Research Department of History,
V.O.C. College, Thoothukudi – 628 008, Tamil Nadu

The spirit of liberty, equality and fraternity born out of the French Revolution of 1789 spread far and wide[1]. Though for a short period of about twenty two years, when Napoleon Bonaparte kept in his hands the whole of Europe except England the spirit continued to flame over the world. However Napoleon tried to conquer the spiritual power with the temporal power[2]. Napoleon in fact contained the spread of Christianity though he himself was a Christian. After his exile to the island of St. Helena, the political and religious map of Europe was redrawn[3]. During his exile, the Pope Pius VII was kept in captivity by the French Government in 1816[4]. The political power revolved around Austria with its Prince Metternich. At this time France was declared as a Republic. Napoleon died in Captivity in the island in 1821[5]. But the flame of French imperialism lighted by him and once again France came under the Bonaparte dynasty. Louis Napoleon Bonaparte, the son of Napoleon's brother Louis Bonaparte became the ruler of France in 1852. He was Napoleon III[6].

The political instability of France due to wars affected Christianity a lot. It was under such a circumstance, the church in France needed a total overhauling of Christianity. For recovering the lost glory of Catholicism and the fallen feather of the pope, many Frenchman came forward to surrender their lives for the sake of the revival of Catholicism[7]. One such a person was Caussanal.

Early Life

It was an issue where the faith in religion was in a constant state of flux that Adrian Caucasian was born on September 27th 1850 at a small village called Mazieres in the Aveyron District of Southern France. His parents were Antoinet Caussanel and Marie Anna Debar8. The whole family of Fr. Caussanel was well respected and they mainly involved in wheat cultivation. The family of Caussanel is known for piety, knowledge and hard works. There were totally nine children in the family. The male children were namely Francis, Fredrick, Yugin, Joseph, Adrian and Jerome. The female children were Maria, Emily and Uphresi[9]. Adrian Caussanel was the seventh child in the family. When he was born, he was very weak in health and this made his mother weep profusely. The father of Adrian was a very pious man, who met his Parish priest Fr. Herme and explained about his predicament. Breaking the inabilities the child was given baptism. Baptism gave the child a lease of lift and was relieved from illness and this made every one happy[10].

As the child grew, it became very mischievous and used to sit beside the fence of the wheat fields and gaze at distant skies and play with the flock of sheep. His studies also started flourishing. Most of the Catholics of France were very loyal to the Church and they used to pray and read The Bible for hours for peace and prosperity[11]. The child started thinking on various things from childhood days. Those days, the growth of Churches in other nations was strong and steady. The principles and prayers in life were read during Sunday ceremonies in the Churches; which were carried from one nation to another. Among all the Churches in the world, the Church of France was the leading one and its services were very much commendable in India and Africa. Since Christianity was a missionary religion likes the Buddhism, Missionaries were moving from one country to another to render the service bearing with calm and cool all oddities. The people of France were very much fond of knowing about the

growth of Churches and the life style of people in other countries[12].

French clergymen who came to preach Christianity in India attracted the young mind of Adrian Caussanel*. The Jesuit Missionaries like Robert de Nobili who was born in an affluent family in Rome discarded all earthly pleasures, came to Tamil Nadu and became a proficient speaker both in Tamil and Hindi[13]. Fr. John de Britto came from Lisbon under the influence of St. Xavier. After them came Alexander Martin, Louis Carnier, Louis Garden, and Joseph Bertrand from Bordeaux and they together influenced the mind of Adrian Caussanel[14]. Two brothers of Adrian Caussanel namely Fredrick and Joseph became fathers of St. Vincent, the Paul Church. Likewise two of his sisters namely Maria and Emily also became nuns. The parents of their family were very proud that four of their children were blessed to serve Lord Jesus Christ. This feeling inspired Adrian Caussanal to become a priest and to serve in India[15]. He longed for a life of celibacy discarding all earthly pleasures and severed all relationships. One fine morning, he sought the permission of his mother who was deeply disappointed. His mother experienced both joy and sorrow. She was happy for the reason that her son is ready to serve the God. She felt worried for getting separated from her favourite son. However, she proved her courage when she sent four of her children for serving Jesus. She was much worried since an unhealthy son took to religious service and on whom she bestowed a special love. Unless such a situation Caussanal decided to embrace sainthood so as to serve the Almighty[16]. Even on holidays, he was deeply involved in divine theological books. It was noticed by the Rodez Arch Bishop Bourret who wanted him to become a Diocese priest. But Caussanel wanted to become a Jesuit father[17].

His Priest-hood

He therefore joined the Minor Seminary of Villefranche in 1864 and in 1865 at Saint Pierre. He was highly regarded and appreciated by his companions as well as by his teachers. At St. Pierre, he was awarded the prize of Honour. Then he had joined the Major Seminary of Rodez to do his philosophy on October 4, 1871[18]. During thosedays, he visited the libraries of nearby places and read about the histories of various Churches and their disciples. Seniors helped him immensely in enriching his knowledge by giving him more books to read. He indulged in lot of research activities. They are still preserved as important records[19]. In 1875, he was awarded the title Subdeaconry*. He joined the monastery of Pau in Toulouse state as a Jesuit in the same year. He developed a pious mind and became a complete devotee after one year of rigorous practice[20].

In the second year of his early priesthood, he got transfer to a Church called Mary-Des-Champs. There he wrote more than 1500 pages about various things that he came across in his life. He literally burned mid-night oil and developed a strong research mind. From then onwards, his writing skill improved by leaps and bounds and it became a shield later to explain the rights of the Church. His writings reflected his hard works. His skill was very much recognized and he was permitted to give 'first vows'[21].

Then he was sent to the scholastic ate of Vals at the beginning of October 1877. The following year in the month of September, he was assigned as supervisor and professor at St. Gabriel College of St. Affrique and worked with zeal and success until the holidays of 1882[22]. Sensing his scholarly learning and research mentality, he was sent to work as a teacher. A Christian priest working as teacher along with the priesthood was not an unusual thing in those days. This was possible only because of the supreme intelligence of Caussanel. He was also given the additional responsibility of supervisory of the hostel students[23]. His last two years in this college were extremely difficult because after the enforcement of the junior post decrees, he was about the only Jesuit left. The absolute trust conferred onto him

by all the students brought about some worries on the part of the new teachers[24].

In the month of August 1882, he left to Spain to study theology at Uccle's. He stayed in that monastery until 1885. There he received the priest hood on September 7, 1884[25]. At Ucles, he helped the poor and needy and nourished them with food[26]. His superiors recalled him to France on April 9, 1885 and he was put in charge of General Prefect for the hostel students in the college of Tivoli at Bordeaux[27].

Then he left to London on October 1, 1887 for his 3rd year of probation[28]. He spent one month at Monrasa Monastry at Rochampton near London. He studied there to gain some knowledge about the English language. His superiors had now designated him for the mission of Hindustan. He left from Marseille on October [21], 1888 landed at Puducherry along with Fr. Bertram and Fr. Lacomph on November 15. Fr. Bertram was the founder of the Loyola College of Madras and Fr Lacomph was responsible for the conversion of many Brahmins in Tiruchi29. Later, Caussanel was sent to Tanjore and in January 1889 he became the head of the Church of Tuticorin[30].

Service in Tuticorin

At Tuticorin he had to meet many challenges. The people suffered from Casteism and social evils. He was shocked to see the caste troubles. Caste considerations and consternations were not infrequent. As a result, the Tirunelveli region witnessed many caste conflagrations. Anyhow he did his Catechist duties in many villages like Maravan Madam, Nagalapuram, Vaipar and Vilathikulam situated in and around Tuticorin[31].

He spread Christianity to the Paravas of the Pearl-fishery coast and Nadars and other down trodden people. He met some challenges from the protestant people[32]. Amidst of problems, he did many educational services. He started primary and high schools[33]. At the Port Trust, most of the harbour workers were Christians. In order to enable them to take part in Sunday Sermon, he made the government to declare Sunday a Holiday[34].

Fr. Caussanel was quite instrumental in converting around 10,000 participants into Christianity in and around Tuticorin[35]. Of the many Catholics who lived in Tuticorin, only a few were involved in religious sermons and were following Christian principles. He had to visit several small townships and meet several priests and inculcate a sense of belief in the minds of the non-believers of Christianity[36]. Later he established schools in various parts of Tuticorin and served the poor and needy. The inhabitants of Maravan Madam changed their mindset and became followers of Christianity due to the efforts Caussanel[37]. He constructed a Church and established a school in Pudukottai. He went to Nagalapuram and converted many Hindus living there as Christians[38].

In a place namely Pudukulam, the huts of the Catholics were burnt by antisocial elements. Fr. Caussanel explained to them about the hardship experienced by the followers. He fulfilled the spiritual demands of the Christians of Chippikulam[39]. Then he constructed a Church in Vembar at his own cost and thus satisfied the demands of the inhabitants of the town. Later he attracted the people at Kattapadu and Hattalampatti[40]. Then in 1892, he satisfied the demands of the people of Vilathikulam by constructing a Church for them[41].

In the pearl city, the Father was mainly responsible for the growth of education. The encouragement shown him and his innovative techniques were chiefly responsible for the growth of St. Xavier School at Tuticorin. He considered education to be a sort of bridge that binds Catholics and offered them knowledge to lead their life successfully.

Notes and References

1. R. Kulandai Arul, Op. Cit., p.4
2. V.D. Mahajan, History of Modern Europe Since 1789, 11th edition, Chand & Company, New Delhi,

3. 1986, p. 107.
4. K.L.Khurana, World History Published by Lakshmi Narain Agarwal, Agra, 1997, p.110.
5. R. Kulandai Arul, Op. Cit. p.4.
6. K.L. Khurana, Op. Cit, p.115.
7. V.D. Mahajan, Op. Cit., p. 215.
8. Ibid., p. 220.
9. S. Sebestian, Thennagathin Oli- Caussanel, op. cit., p.4.
10. R. Kulandhai Arul, op. cit., pp. 5-6.
11. Ibid., p.6.
12. Ibid., p. 7.
13. Ibid., p.8.
14. See Plate No. 3
15. Ibid., p. 9.
16. Ibid.
17. Ibid., p.10.
18. Ibid., p. 10.
19. S. Sebestian, Thenngathin Oli, p. 8
20. Adrian Caussanel (The Man) Writings on Fr. Caussanel translated by Marcel R. Riopel, Brothers of the Scared Heart, Palayamkottai, 1994, P.3.
21. R. Kulandhai Arul, Op. cit, pp. 14-15.
22. To assist the higher Priest in doing the Gospel work.
23. S. Sebastian, Thennagathin Oli – Caussanel, Op.Cit., p. 10.
24. Ibid., pp. 10-11.
25. Adrian Caussanel (The Man), p.3.
26. R Kundai Arul., Op.Cit., p.17.
27. Adrian Caussanel (The Man), Op.Cit., p.3
28. Ibid., p.4.
29. S. Sebastian, Thennagathil Oli – Caussanel, p. 15.
30. Adrian Caussanel (The Man) op. cit., p.4
31. Ibid., p.4.
32. S. Sebastian, Thennagathin Oli, Caussanel, op. cit., p. 18.
33. Adrian Caussanel (The Man) op. cit., p.4.
34. S. Sebastian, Thenagathin Oli. Caussanel, pp. 23-25.
35. Ibid., PP. 30-31.
36. Ibid., PP 34-36.
37. Ibid., PP 38-39.
38. R. Kulandai Arul., op. cit., p.34.
39. S. Sebastian, Thennagathin Oli – Caussanel, pp. 19-20
40. Ibid., p.24
41. Ibid, p.25.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

ROLE OF WOMEN'S IN DRAVIDIAN MOVEMENT IN TAMIL NADU- A STUDY

S. DIVYAVATHI
M.Phil., Research Scholar, PG & Research Department of History,
V.O.C. College, Thoothukudi – 628 008, Tamil Nadu

Tamil Nadu has a great tradition of heritage and culture that has developed over 2,000 years and still continues to flourish. This great cultural heritage of the state of Tamil Nadu evolved through the rule of dynastic that ruled the state during various phases of history. Many of the rulings dynastic gave patronage to Art and Culture that resulted into the development and evolution of a unique Dravidian culture which Tamil Nadu today symbolizes. Under the rule of the Pallavas, Cholas and the Pandya kings, there were tremendous growth and development in the field of Art, Architecture and Literature. The history of Tamil language can be traced back to
the Age of the Tolkapiyam, the Tamil Grammar text, ascribed to around 500 B.C. Similarly, the Sangam literature dates back to 500 B.C.[1]

Status of Women in Ancient Period

The status of women during the pre-Aryan, Dravidian civilization was higher and the excavation at Mohanjadaro and Harappa reveals the fact that mother goddess was given more importance during this period. The women also allowed listening to the epics and puranas. [2]

Status of Women in Vedic Period

Women were given a very high position in Vedic society. They enjoyed more freedom in this period. No religious rites could be performed without women. Girls had considerable freedom in selecting their life partners and there was no system of child marriage. Women freely moved out from their houses and attended public functions. Females were always under the care of males both before and after marriage. Polygamy prevailed only among the kings and the nobles. Widow Remarriage was common. The Vedic women did not use purdah.[3]

Status of Women in Rig Vedic Period

The Rig Vedic society was a male dominated society. The elder son took up the responsibilities of the family after the father. The Rig Vedic husband was called 'Grahapathi' and wife was called 'Illatharasi'. The wife was always to participate in festivals and religious ceremonies. The Rig Vedic people liked the birth of male child. Because they believed that the male child only was their Guardian and the right to do the funeral duties. The Rig Vedic society also hated the female child because after the marriage, the girl would go to her husband's house, and also they had to give lots of dowry for her marriage.[4]

Rig Vedic people followed Monogamy but the rich men and kings followed polygamy. The Rig Vedic women had the right to decide their marriage. There was no infanticide, child marriage and caste based discrimination. Sati was not popular in that time. Monogamy was the general rule. Polyanders were unknown. Widow Remarriage was also very common at that time. The widows could remarry their brother in-law to get children. This marriage was called 'Neoga'.[5]

Education was given at homes itself to the Rig Vedic women. They specialized in Arts, Literature, Music and dance. Vis Varva, Ghosha, Apala, Lopamudra, Surya, Yami, Indirani, Sarparajini, Oorvasi were some of the poetess of Rig Vedic period. Vishpala, Mudkalani were the brave women of this period. Rig Veda mentioned that female scholars and philosophers were knows as 'Brahma Vardhinis' (women who had attained knowledge of Brahman).[6]

Arundhathi, wife of sage Vasishta shined as a devoted spouse, a model for newlyweds, Kowsalya, mother of Shri Rama and Tara, wife of Bali were described in Ramayana and Draupathi in Maha-bharatha as Pandita.[7] Goddess worship was very common in the Rig Vedic period. They worshipped 'Saratha' for faith and 'Manya' for anger. They also worshipped the Goddesses like Thaya, Vithra, Varna and Ashwini.[8]

Status of Women during Later Vedic Period

In later Vedic period, the position of women declined. The female child's birth was considered as a sin. Woman was considered as the cause for sorrows and also she was considered as a burden to the family. 'Ramayana' and 'Mahabharatha' also reflect the same opinion about women. In this period women were given a lower position in the society. They were considered as inferior and subordinate to men. Birth of a girl child was not welcomed.[10]

Atharva Veda says that the later Vedic people did so many poojas to get male child. In this period women are not allowed to participate in the political assemblies. Still some women were respected in the society, for instance, 'Kundhi' and 'Lobamudra'. They saved their parents from a great destruction and also got the lands as their wedding gifts and gave it to their parents. So they were respected very highly in the society.[11] Women had the right to choose their husbands. Normally monogamy and polygamy prevailed. Child marriage was absent and widows could remarry. Sati and purdah systems had not started yet.[12] In this period, the people believed that goddess Lakshmi was the God of virgin. In "Ramayana" also when Rama returned from the forest, the virgins anointed Rama as king.[13]

The caste based education was denied to the girls but they were taught by the educated old women in their houses. Religion, philosophy and medicine were taught to 5-16 year old girls. Some girls committed their whole life to learn the Vedas and lived the life of celibacy. As equal to men, women also learnt 'Bhurva Memamsa' (it is a kind of Mathematics). 'Karki and 'Maitheraye' were some of the important women philosophers in the later vedic period.[14] In Later Vedic period, women were spoken highly off. But they were not allowed to participate in king's affairs equally like men. According to 'Ithraya Brahmanam' the one who is not questioning and accepts everything was called a good girl. 'Sada Patha Brahmanam' says that the wife has to eat the food after her husband.[15]

During this period, they followed a special form of marriage, called 'Swayamvara". Swayamvara was the institute of marriage especially among the higher castes. Sita of "Ramayana" and Draupati of "Mahabharata" got married by way of Swayamvara. Swayamvara does not give the freedom of choice to the bride in the modern sense, because often her freedom to choose her husband is limited. In the institution of Swayamvara she was compelled to marry the winner of a competition, conducted to prove the martial excellence of her prospective bridegrooms.[16]

The Ramayana and the Mahabharata present a galaxy of women called 'Great Indian Women'. Sita, Kausalya, Draupathi, Savitri and Kunti are some of the noblest figures who are perfect embodiments of Indian woman hood. Sita proves by her life that woman's spiritual guide is her husband. Gandhari is the noblest of the women characters in Mahabharata. She set an example of true sahadharmini who dared to bandage her own eyes for the sake of her blind husband Dhratarashtra. Another character, Kunti is the embodiment of patience, perseverance and self-sacrifice. Draupati, the central figure of the great epic, was a woman who possessed courage, sense of dignity and justice.[17]

Because of the increasing of Sakthi worship, the women got somehow high status in the society. So the high status women were mentioned in some of the Hindu literature. The main duty of man was praising his mother. Concept of mother as the best teacher also came in this period. If a son was a monk, when he met his father the father should bow down before the

son. But the son used to bow down before his mother to get blessings. This is mentioned in Mahabharatha.[18]

Status of Women in the Period of Manu

The Hindu social Law was given by 'Manu'. It is called 'Manusmirithi' or'Manu Sasthra'. Many rules were given in Manusmirithi on the basis of caste system. Child marriage was legally accepted. The marital age of a girl was seven. Widow remarriage was opposed. According to Manu, the wife has to worship her husband as God. If he is not a good man also, she has to worship him as God. If she goes to the temple also, she has to worship her husband alone. Then only she could attain heaven. Without husband the religious rights were denied to the women. Men were allowed to marry more than a wife and they only had the right to divorce. But the women did not have the right to divorce. Women did not get any benefits or rights from this law.

Manu had encouraged the male domination in the society.[19] Manu also says that day and night women must be kept in dependence by the males and their families. Father protects her in childhood, husband protects her in youth and son protects her in old age. A woman is never fit for independence.[20] In Daksa it is expressed that women are like the leech. But, while the poor leech draws blood, the woman draws your riches, your prosperity, your flesh, your vitality and your strength. During adolescence, she is in fear of the man, during youth demands excessive pleasure and when her husband becomes old, she does not care a straw for him. Manu gives the circumstances under which a woman is likely to go astray. Drinking, associating wish immoral people, separating from her husband, roaming around, sleeping late, and dwelling with other man - these are the six causes of her ruin.[21]

Status of Women in Sangam Age

From B.C.3 to A.D.3, 600 years, is called Sangam age in Tamil History. Tholkappiam, Aganaanuru, Kurunthogai, Pura-Nanuru, Madurai Kanji, Nartrinai, Nedunelvadai, Tirukural, Naladiyar and Silapathikaram are some of the pieces of Sangam literature. They have shown a clear picture about Sangam women and their status. There was no equality between men and women legally as well as socially.[22]

Women of the Sangam age had much responsiblity. Though husband earned money, it was her duty to preserve it for the maintenance of her family.[23] Patriarchal society was there in Sangam age. The Sangam literature says that women had the status not equal to men. They had to follow lots of rules, which were not meant to men. There was no evidence for punishing a man who left his wife and went to prostitute.[24] There were evidences, which show that the Sangam age women were treated worst. For example, in Naladiyar, a Tamil king named Nannan imprisoned his enemy's wives in a war. He shaved their hair and made it as a rope to tie the elephant.[25]

Sangam age was an age of war. Even though they needed more men to fight in the war, they did not hate the birth of the female child. They expected eagerly for the birth of male child.[26] Sangam age did not determine the marital age for the women.[27]

Status of Women in Modern Period

Modern India refers to the period starting from the period of Later Mughals to the end of British rule in India (1700 A.D. to 1947 A.D.). In the British period the education of women was encouraged and this resulted change in the position of women. The educated women started to raise their voice against the British domination and entered the freedom struggle. Later they started to fight for their own rights.

Notes and References :

1. N. Subramanyan, *History of Tamil Nadu upto 1565* (Tamil), Udumalai, 1991, pp.18-19.
2. Suresh Narayan Jha, *UGC History Exam Study Material*, New Delhi, 2007, p.6.

3. P.K. Sinha, *UGC History Exam Study Material*, Agra, 2006, p.17.
4. Rosapoo and Kalyana Sundari, *India Mahaliriyal* (Tamil), Madurai, 2005, p.1.
5. N.K. Mangala Murugesan, *Social History of India*, Chennai, 1975, p.65.
6. Shantharam, *Profiles of Women Problems and Challenges*, Thiruvanthapuram, 1993, p.5.
7. *Ibid*.
8. Rosapoo and Kalyana Sundari, *op.cit*., p.3.
9. J.K. Chopra, *UGC History Exam Study Material*, New Delhi, 2008, p.44.
10. Rosapoo and Kalyana Sundari, *op.cit*., p.3.
11. J.K. Chopra, *op.cit*., p.44.
12. Rosapoo and Kalyana Sundari, *op.cit*., p.4.
13. *Ibid.*, p.5.
14. N.K. Mangala Murugesan, *op.cit*., p.76.
15. Hajira Kumar and Jaimon Varghese, *Women's Empowerment- Issues, Challenges, strategies*, New Delhi, 2005, p.40.
16. *Ibid*., pp.40-41.
17. Rosapoo and Kalyana Sundari, *op.cit*., p.26.
18. *Ibid.*, p.5.
19. S.K. Pandit, *Women in Society*, New Delhi, 1998, p.14.
20. *Ibid*., p.15.
21. Rosapoo and Kalyana Sundari, *op.cit*., p.12.
22. Swaminathan, *History of Tamil Nadu*, Chennai, 2004, p.71.
23. R. Vijaya Lakshmi, *Tamilaka Makalir Totaka Kalamuthal Aram Nurrantu Varai* (Tamil),
24. Chennai, 1997, p. vii.
25. Duraisami Pillai, *Explanatory Commentary of Nattinai*, Chennai, 1968, pp.10-11.
26. O.V. Saminatha Iyer (Ed), *Purananuru*, VII Edition, Chennai, 1971, p.3.
27. M. Shanmuga Pillai (Ed), *Kurunthogai*, Tanjour, 1985, p.396.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

K.T. KOSALRAM IN THE CONGRESS PARTY – A STUDY

S. MARISELVI
M.Phil., Research Scholar, PG & Research Department of History,
V.O.C. College, Thoothukudi – 628 008, Tamil Nadu.

K. T. Kosalram was an Indian politician. He was a member of Lok Sabha elected from Tiruchendur constituency in 1977, 1980 and 1984 elections. He was also a freedom fighter and a congressman. He belongs to Kalingar Vamsam. He also owned Dina Sethi, a newspaper from Purasawakkam, Chennai espousing the cause of Nadars.[1] His Wife Name is K. Gomathi Devi, second wife K.T.K Saroja who lives in Madurai. His first wife Late K. Gomathi family are First Son K T K Subash, Second Son K T K Mohan Ram,Third Son K T K Ashokan, First Daughter Mrs Jamuna and Second Daughter Mrs Aruna His Second Wife family information are as follows:[2] His son K.T.K Jawahar who is now late having two daughters, second son K.T.K thoosimuthu having one son and a daughter and last daughter K.T.K Indra with two sons. K. T. Kosalram was an Indian politician. He was a member of Lok Sabha elected from Tiruchendur constituencyin 1977, 1980 and 1984 elections. He was also a freedom fighter and a congressman. He belongs to kalungar vamsam. He also owned Dina Sethi, a newspaper from Purasawakkam, Chennai espousing the cause of Nadars.[3]

The Congress party, the oldest and biggest political party in India, founded in 1885 with the object of seeking constitutional redress for the grievances of the Indian masses, slowly attainted the status of a genuine national organization, with the entry of Mahatma Gandhi in 1919. During the Gandhian Era, the national movement was going on one side and the ideological conflicts going on the other side within the Congress. From the beginning, Congress party had been having a number of groups such as the Mylapore group, Egmore group, Moderate group, Extremist group, Gandhian group, *Swarajist* group and so on. In Tamil Nadu, for instance, two factions vied for control of the T.N.C.C., in 1920. One faction known as the Nationalists, centred in Madras City and was led by K. T. Kosalram ,[4] S.Sathyamurthy and Kasturiranga Iyengar. The other was led by Rajaji contained upcountry men largely from western Tamil Nadu who wished to challenge the city's domination of provincial politics. In 1920, Rajaji's faction aligned with Gandhi in All India Politics and emerged the ascendant.

Tamil Nadu contributed its share to the emergence of the national consciousness. Along with the first generation leaders of the I.N.C., in Tamil Nadu such as K. T. Kosalram, G.Subramania Iyer, Salem C.Vijayaraghavachariar and others, Rajaji and K.Kamaraj were the second generation leaders who labored much for the cause of Independence and so on. Basically K.Kamaraj having no proper education or social status but he could become the Chief Minister of Tamil Nadu and later the president of All India Congress Committee.[5] It was a rare feat which only a few could achieve, especially when politics was confined only to the educated and the aristocrats. Rajaji was a well educated person. He was a Hindu nationalist as much as an Indian nationalist. Tilak was the hero of his youth and later Gandhiji. But later he went against the Congress ideals. When the ideological conflict between Rajaji and K.Kamaraj arose in 1945 many could not understand about this conflict which originated in 1931. During the time of the Civil Disobedience movement, the Tamil Nadu Congress was a divided house. There were two factions in the Tamil Nadu Congress. One was led by Rajaji and the other by K. T. Kosalram. Rajaji represented the affluent and intellectual section of the Congress in Madras.[6] K.

T. Kosalram on the other hand, was poor and represented the have-nots section of the Congress. The history of Tamil Nadu Congress from 1931 to 1942 was one of the histories of personality politics. There were ups and downs on both sides but the final round was won by K. T. Kosalram with the help of K.Kamaraj. These personality politics occurred on the ideological lines. These ideological conflicts were reflected in some of the events such as T.N.C.C., presidential elections of 1931, 1939, and 1940 the, first Congress Ministry of 1937, Quit-India movement of 1942, and the Tiruparankunram incident of 1945 and K.Kamaraj's resignation in 1946 over the Gandhiji's statement of 'Clique' and so on.[7]

The year 1946-1947 witnessed the power struggle that took place in the Madras Presidency after the 1946 general election among the prominent leaders of the Congress. Among the leaders of the Madras Presidency, two were then towering personalities; one was Rajaji who had the support of the Congress high command and the other was K. T. Kosalram the resident of the T.N.C.C. and the disciple of S.Sathyamurthy. Rajaji who was the Premier of the first Congress ministry had a natural claim to become the Premier but could not ascertain his claim as a result of his action and policies before 1946. He re-entered the Congress with stiff opposition after his exit in 1942.[8] But he had a group of his own. At the same time, the T.N.C.C., was under the full control of K.Kamaraj, the President of the Congress Committee from 1940 to 1952. In the Tamil Nadu Congress Executive Committee out of 14 members, Presidency. No meeting of the legislature was held since November 1939 after the resignation of Rajaji ministry. During the period of the Second World war the Madras Presidency was under the rule of the Governor. The Assembly was not dissolved till 1st October 1945 though the Rajaji ministry resigned in 1939.7 Fresh elections were ordered but were not completed by 31st March 1946.

Following this, the first general elections were held in 1952 in India as well as Tamil Nadu under the new constitution. In this election, the Congress could not obtain a majority in the Madras Assembly. The Congress was reduced to a minority with only 152 seats in a House of 375. Half of the seats were won by other parties like the Communists-61, Kisan Mazdor Party-35, Tamil Nadu Toilers Party-19, Krishikar Lok Party-15, Socialists- 13, Independents-63 and the other parties-17.[9]

At the same time, the Communists Party in alliance with the Praja Socialist Party and some independents, under the leadership of T.Prakasam held a convention of all Non-Congress M.L.A's on 12th February 1952. About 160 newly elected members for the State Assembly representing the Communist Party, the K. T. Kosalram Party, Tamil Nadu Toilers Party, Krishikar Lok, Common Weal, Forward Bloc and Independents attended the convention. 20 The general feelings however was that the fundamental differences between the various parties would make it impossible for them to evolve a common front and form a stable ministry and ultimately the Congress as the largest single unit, had to shoulder the responsibility.[10] There was an agitation to remove K.Kamaraj from the presidentship of the Tamil Nadu Congress Committee.

In this regard, Rajaji, K.Kamaraj and C.P. Ramasamy Iyer K. T. Kosalram among others participated in the house warming ceremony of the new T.V.S., Buildings in Madurai in 1953. As usual Rajaji dragged the Brahmin, Sudra controversy in his speech. He said that Brahmins were engaged in Motor business which should be done only by Sudras. This angered K.Kamaraj. After praising T.V. Sundaram Iyengar for his handing over the affairs of the company when he became old, Rajaji sat down. Here was an opportunity for K.Kamaraj to teach Rajaji some home truths. K.Kamaraj did not let it go.[11]

In his speech he said that he agreed with Rajaji's K. T. Kosalram remarks about handing over responsibility to the younger generation by the old. But he did not stop with this expression of agreement with Rajaji's view. He went further and

said that if such a principle was followed not only in business but in politics also, the nation would be making greater progress than it did now. Everyone of the audience was dumbstruck, for K.Kamaraj in his speech had clearly enunciated his views on Rajaji's leadership and implicitly persuaded him to give place to younger men.

Notes and References :

1. "Small, but loud, in the 1940s". The Hindu. 25 June 2007.
2. Volume I, 1977 Indian general election, 6th Lok Sabha Archived 18 July 2014 at the Wayback Machine.
3. Volume I, 1980 Indian general election, 7th Lok Sabha Archived 18 July 2014 at the Wayback Machine.
4. Volume I, 1984 Indian general election, 8th Lok Sabha Archived 18 July 2014 at the Wayback Machine.
5. Small, but loud, in the 1940s". The Hindu. 25 June 2007.
6. Volume I, 1977 Indian general election, 6th Lok Sabha
7. Volume I, 1980 Indian general election, 7th Lok Sabha
8. Volume I, 1984 Indian general election, 8th Lok Sabha.
9. Meera Devi, *Factionalism in the Congress Party of Tamil Nadu,* Ph.D Thesis, University of Madras, 1988, pp. 62-88.
10. Baker, C.J., and Washbrook, D.A., *South India: Political Institutions and Political Change 1880-1940*, Delhi, 1975, p.131.
11. Extracts from F.R., 1942-1944, Vol.74, p.32; All India Congress Committee File No.29/1945 and No.2
12. 6/1945; *Harijan,* 10th February 1946.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

रामदरश मिश्र कृत उपन्यास 'पानी के प्राचीर' में व्याप्त लोक संस्कृति

आलोक कुमार

शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

'पानी के प्राचीर' रामदरश मिश्र का प्रथम उपन्यास है जिसका प्रकाशन सन् 1961 ई0 में हिन्दी प्राचारक संस्थान वाराणसी से हुआ। अपने प्रथम उपन्यास से ही मिश्र जी आंचलिक परम्परा के उल्लेखनीय कथाकारों में शुमार हो गये और उनकी इस रचना में मिश्र जी के व्यापक और गहन आंचलिक अनुभवों का उष्ण स्पंदन सहज ही देखा जा सकता है। 'पानी के प्राचीर' की कथा का केन्द्रबिन्दु पूर्वी उत्तर प्रदेश के अंचल का एक छोटा–सा गाँव पांडेपुरवा है जो दोनों ओर से राप्ती और गोर्रा नामक दो नदियों से घिरा हुआ है फलस्वरूप शेष दुनिया की परिवर्तनशील हलचलों और विकासोन्मुखी विचारधाराओं से असंपृक्त हैं साल–दर–साल होने वाले नदियों के प्रकोप से गाँव का जीवन अत्यन्त अभावग्रस्त, संघर्षपूर्ण और थमा–सा है। गाँव के लोगों के समक्ष सबसे बड़ा और ज्वलंत प्रश्न अपनी दैनिक और दैहिक आवश्कताओं की पूर्ति का। अतः भविष्य और भविष्य की आशा भरी सम्भावनाओं उनके लिए निरर्थक–सी जान पड़ती है। मिश्र जी ने स्वयं अपने स्वर में इस कृति को ग्राम पांडेपुरवा की ''युगों से 'राप्ती' नदी के प्रकोप और अपने अभावों को असूझ अंधकार से जीवट के साथ जूझती हुई जनता को''[1] समर्पित किया है।

आंचलिक परम्परा का निर्वहन करने वाले प्रस्तुत उपन्यास में ग्राम्य जीवन का यथार्थ चित्रांकन किया गया है। ग्राम्य जीवन से जुड़ी हुई चेतना, संस्कृति, संस्कार, समाज, राजनीति, आर्थिक एवं धार्मिक भावनाएँ सभी का एकछत्र पुट इसमें मिलता है। ग्राम्य जीवन में सबसे अधिक महत्व होता है संस्कृति का। संस्कृति में राष्ट्र के समस्त सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक उपलब्धियों को विशेष महत्व दिया जाता है। हमारी भारतीय संस्कृति विविधता में एकता का प्रतीक है। मानव के परिष्कृत एवं सुसंस्कृत चिंतन, विचार, व्यवहार एवं कार्यों का समवित रूप ही संस्कृति है।''[2]

संस्कृति का शाब्दिक अर्थ होता है परिष्कृत, सुधार या ऊँचाई। अतः संस्कृति के अन्तर्गत उन सभी तत्वों को सम्मिलित किया जा सकता है जो व्यक्तित्व का परिष्कार कर सके, उसे सुधार सकें, ऊँचा उठा सके। रामधारी सिंह दिनकर के अनुसार, ''संस्कृति आत्मा का गुण है।''[3] इस अर्थ में संस्कृति जीवन का वह बहुमूल्य पक्ष है जो जीवन की पहचान बनाता है और मनुष्य में आत्मिक गुणों का प्रसार करता है। संस्कृति के अन्तर्गत तीज–त्योहार, जप, पूजा–पाठ, गीत, नृत्य, रहन–सहन परिवेश आदि का समावेश होता है। यह अनुकरणीय प्रक्रिया है जिसमें मानव के सर्वांगीण विकास का रहस्य छिपा हुआ है।

प्रस्तुत उपन्यास में रामदरश मिश्र ने आंचलिक स्तर पर लोक संस्कृति के अनेक चित्र उकेरे हैं। ग्रामीण अंचल में विद्यमान लोक संस्कृति के अनेक रूप इस उपन्यास में समाहित हैं जिसे बिन्दुवार देखा जा सकता है–

(1) पर्व एवं त्योहार

(2) लोकगीत एवं लोकनृत्य

(3) रहन–सहन एवं परिवेश

(4) रीति–रिवाज एवं परम्परायें।

(1) पर्व एवं त्योहार :– आदिकाल से ही भारतवर्ष में पर्वों और त्योहारों का अपना महत्व रहा है। वस्तुतः ये पर्व और त्योहार हमारे सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग भी हैं और ग्रामीण संस्कृति के संवाहक तत्व भी। ग्राम्य अंचलों में पर्वों और त्योहारों की स्वस्थ परम्परा रही है, ये परम्पराएँ ग्राम्य–जीवन के कठिन और संघर्षमय जीवन में उल्लास और नवस्फूर्ति के सहज उपादान के रूप में प्रयुक्त होते रहें हैं, हालांकि आधुनिक भारत के गाँवों में इसकी प्रयोजनीयता लगातार कम होती जा रही है और शहरों में तो इनका स्वरूप ही परिवर्तित हो गया हैं मिश्र जी आधुनिक हिन्दी के उन चुनिन्दा लेखकों में से हैं जिनका रचना–संसार ग्राम्य–जीवन और उसके परिवेश, उसकी सस्कृति की मटमैली गंध से व्याप्त है। मिश्रजी के आंचलिक और अनांचलिक सभी उपन्यासों में स्थानीय संस्कृति को व्यक्त करते पर्वों और त्योहारों की उपस्थिति सहज ही देखी जा सकती है। मिश्र जी ने

'पानी के प्राचीर' उपन्यास का आरंभ ही होली के पर्व से किया है–

'धिना धिन्ना धिनाक

धिना धिन्ना धिनाक'

लोग पहपट गाते हुए होली के पास पहुँच रहे थे।

पहपट शुरू हुआ–

धिना धिन्ना धिनाक

झम झम झम झम

फागुन भरि बाबा देवर लागी।''[4]

''रासरंग शुरू हुआ। होली में आग लग गई। लपटें चिटख–चिटखकर आसमान छूने लगी। लपटों की लम्बी–लम्बी छायाएँ पोखर को पार करती हुई बरगद और बाँसों की शिखाओं पर लोटने लगी। लोग लपट में तीसी भून रहे थे। शुभ है यह।''[5] अगली सुबह जली हुई होली के पास बच्चों और लोगों का जमावड़ा शुरू होता है और फिर शुरू होती है क्रमशः राख, धूल, गोबर और गुलाल–अबीर की होली। ''गुलाल और रंग खेलने का समय आ गया। द्वार–द्वार पर घूम–घूमकर लोग फाग गा रहे थे। आज तो वर्ष का प्रारंभ है। लोग नया खाते हैं, नया पहनते हैं।''[6] इसी उपन्यास में नागपंचमी के त्योहार का भी सजीव वर्णन देखने को मिलता है। पांडेपुरवा गाँव बाढ़ की विभीषिका से घिरा है लेकिन ग्रामीण जन इस प्राकृतिक आपदा को भी अपने त्योहार के माध्यम से विकट परिस्थितियों में भी लोगों की उत्कट जिजीविषा को प्रदर्शित किया है।'' नागपंचमी आ गई। खेत बह गए, घर गिर गए, चारों ओर से पानी गाँव को घेरे हुए है। घर में कुछ खाने को नही है और यह नागपंचमी आ गई। लड़के मेंहदी रचाने के लिए आफर कर रहे है परन्तु मेहंदी कोई कहाँ से लाए। बाढ़ ने जीवन की सारी लाली छीन ली है तो मेंहदी ही कैसे बचती? कोई बात नहीं बिना मेंहदी के भी चलेगा। सारे गाँव में इस त्योहार ने एक जान डाल दी है। जमी हुई उदासी कुछ छँट गई हैं। लड़कों ने गाँव में ही मुखिया की लंबी–चौड़ी सहन में चिक्का–कबड्डी खेलना शुरू कर दिया है। लड़कियाँ धराऊँ साड़ियाँ पहनकर पुतली फेंक रही हैं और कजली गा रही हैं।''[7]

(2) लोकगीत एवं लोकनृत्य :– लोक संस्कृति के प्रकटीकरण का सर्वाधिक मुखर और परिचित रूप है लोकगीत। वास्तव में लोक–गीत, लोकजीवन के प्राण ही है। लोक जीवन के विविध क्रियाकलापों, दुःखों और खुशियों और जीवन मूल्यों का आईना है लोकगीत। लोकगीत विभिन्न ऋतुओं, पर्वों और त्योहारों यहाँ तक की दैनिक जीवन के कार्य व्यापारों से भी सम्बन्धित होते है। लेखक ने अपनी रचनाओं में लोकगीतों का खुलकर प्रयोग किया है। ये लोकगीत उनकी रचनाओं में कथा–सूत्रों को आगे बढ़ाने के साथ–साथ कथ्य की प्रभावान्विति को बढ़ाने में भी खूब मददगार सिद्ध हुए हैं।

प्रस्तुत उपन्यास में लोकगीतों की भिन्न–भिन्न छटायें दर्शनीय हैं। कथानक के आरंभ में होली के अवसर पर गायें जाने वाले पहपट और कबीर गाँव की संस्कृति को जीवन्तता से प्रस्तुत करते हैं–

''सदा अनंद रहे एहि द्वारे

जिए से खेले फाग रे।

डिम्मर भटाक धिना डम्मर मटाक धिना।''[8]

चैत्र नवरात्रि, हिन्दू मान्यतानुसार वर्षारंभ। गाँव के लोग देवी की आराधना कर, वर्ष भर संकट से बचने के लिए माँ की स्तुति करते हैं–

''निबिया के डरिया मइया झूलेली हिंडोलवा

कि झूलि–झूलि ना

मइया मोरि गावेली गीतिया कि

झूलि–झूलि ना।''[9]

वर्षा ऋतु में गायी जाने वाली कजली में बिछोह का दर्द, खेतों में काम करती स्त्रियों की थकान, जीने के संघर्ष भुलाती चुहलबाजियाँ, सभी एकाकार हो जाते हैं–

''रामा नाहीं पिया अइलें फुहार में

आरे साँवलिया।

सब सखियाँ मिल झूला झूलें

हम बैठी अपने ओसार में

आरे साँवलिया।

रोई–रोई काटहु बैरी बरखवा

तोर पिया आइहें कुवार में

आरे साँवलिया।''[10]

प्रस्तुत उपन्यास में मिश्र जी ने लोकगीतों की सर्जनात्मक शक्ति का भरपूर उपयोग किया है।

कथानक को गति देते सभी मुख्य प्रसंगों में लोकगीतों के प्रयोग में कथानक को सशक्तता देने के साथ–साथ पाठकों में तीव्र भावानुभूति उत्पन्न करने की महत्वपूर्ण भूमिका भी निभायी है। संध्या के विदाई के अवसर पर प्रयुक्त विदाई गीत पात्रों के मनोभावों को व्यक्त करते हैं–

''बाबा जे रोवेलें जूनी–जूनी
जब नहाए क जुनिया
घर में एक बेटी कहाँ गइलू हो
देतू धोतिया से डोरिया।
मइया जे रोवेली जूनी–जूनी
जब सूने क जुनिया
गोदिया क बेटी कहाँ गइलू हो
कइलू गोदिया तू सून...''[11]

इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में व्यापक स्तर पर लोकगीतों का प्रयोग, मिश्रजी के गद्य–साहित्य की एक विशेषता है।

(3) रहन–सहन एवं परिवेश :– 'पानी के प्राचीर' मिश्र जी का नितांत आँचलिक उपन्यास है। अंचल के संघर्षपूर्ण जीवन में आर्थिक अभाव और उससे उपजी परिस्थितियाँ, स्थानीय जीवन के रहन–सहन को प्रभावित करती है। इस उपन्यास का कथानक स्वतंत्रतापूर्व से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक का है, जब गाँव पूरी तरह अविकसित अवस्था में है। साथ ही कछार अंचल की प्राकृतिक दशा, वहाँ के जीवन को और अधिक प्रभावित करती है। चारों ओर पानी से घिरे गाँव में बाढ़ का प्रकोप नयी बात नहीं है। बाढ़ से खेती और फसलों को लगातार नुकसान उठाना पड़ता है, सो गाँव का जीवन घोर–गरीबी, भूख और सुविधाओं से हीन है। गाँव–ज्वार के एक–दो घर ही आर्थिक रूप से सम्पन्न है, जिनका रहन–सहन अन्य लोगों की अपेक्षा अच्छा कहा जा सकता है। 'पानी के प्राचीर' के कथानक का आरम्भ होली से होता है। गाँव की परम्परानुसार इस दिन लोग नया खाते हैं, नया पहने है किन्तु आर्थिक रूप से पिछड़े पांडेपुरवा में लोगों के पास न अच्छा खाने को है, न पहनने को। दो वक्त को रोटी का जुगाड़ ही बड़ी कठिनाईयों से हो पाता है, त्योहारों में बनने वाले नए–नए पकवान तो उनके लिए सपना ही है। ''देह पर कहने–सुनने को फटे–फटे गंदे–गंदे अंगोछे लिपटे हुए है जिन्हें शायद फटी धोतियों से फाड़–फाड़कर बनाया गया है। किसी की कमर में भगई लिपटी है जिसका पछोटा बाहर निकलकर लुटुर–लुटुर हिल–डुल रहा है। किसी की कमर लिंगोटी से कसी है। जो कुछ छोटे है वे तो यों ही मस्त विचर रहे हैं। जो कुछ बड़े हैं वे अलबत्ता अपनी लाज की गरदन छोटी–छोटी धोतियों या फटे–पुराने नेकरों में फाँसे हुए है।''[12] उपन्यास का नायक नीरू भी इसी निर्धनता की चपेट में है। नीरू के पास भी एक ही आधी बाँह की कमीज है, जिसकी पीठ जगह–जगह मुँह बाये हुए है। उसका छोटा भाई केशव त्योहार पर नये कपड़ों के लिए मचल रहा है। गाँव के मुखिया की शान इस त्योहार के मौके पर देखने लायक हैं और गाँवों के लिए ईर्ष्या और असमर्थता का एहसास भी। ''मुखिया धुला हुआ शर्बती का कुरता और दुपलिया टोपी लगाए रंग छिड़क रहे थे। महेश का ठाठ एकदम नया था, मतलबनया कुरता, नया धोती मुँह में पान का बीड़ा, आँखों पर आठ आने वाला हरा चश्मा।''[13] वस्तुतः गाँव में मुखिया या गजेन्द्र बाबू जैसे शोषक ही सम्पन्न है या मलिंद जैसे कुछेक लोग भी है जिनके पास पुश्तैनी संपदा है। मलिंद संपन्न घर का लड़का है, शहर में पढ़ता है अतः उसके घर का परिवेश और रहन–सहन गाँव वालों के हिसाब से अलहदा है–''मलिंद अपने ओसारे की कुर्सी पर खड़ा होकर टूथब्रश कर रहा था। एक बादामी रंग की रेशमी तहमद लपेटे हुए था और एक धुली हुई बनियान पहने था।''[14] इसके विपरीत गाँव के अधिकांश लोगों के घर मिट्टी की दीवारों, खपरैलों और फूस की छतों से घिरे झोपड़ीनुमा मकान ही थे। मिश्र जी नीरू के धर का स्वाभाविक एवं चित्रात्मक वर्णन करते हैं–''घर क्या था जर्जर दीवारों से घिरा एक मकान था, जिसके एक ओरकी दीवारेंआधी गिरी हुई थी और तीन ओर की दीवारे गिरने के इंतजार में थी। ऊपर टूटी हुई कड़ियों और धरनों पर खपरैल अँटका हुआ था, जिसमें कई जगहों पर बड़े–बड़े छेद हो गये थे और बरसात के दिनों में उनमें से होकर पूरा आसमान घर में उतर जाता था। घर के दक्खिन की ओर अरहर के डंठलों से घेरकर एक बखार बनाया गया था जिसमें कुछ भूसों के साथ अनाज रखा हुआ था। दो–चार डेहरियाँ भी इधर–उधर रखी हुई थी। रसोईघर में दो–चार टूटे–बरतन रखे हुए थे, जिनमें कुछ रोटियाँ और दाल पड़ी थी।''[15]

(4) रीति–रिवाज एवं परम्परायें :– रीति–रिवाज, प्रथा और परम्परायें किसी परिवेश के भौगोलिक एवं

सांस्कृतिक रूप को प्रकट करते है या रीति–रिवाजों और परम्पराओं के माध्यम से किसी क्षेत्र–विशेष या परिवेश विशेष को जान पाते हैं। हर ग्रामीण परिवेश की कुछ स्थापित मान्यताएँ या परम्पराएँ होती है जो गाँव के सामाजिक जीवन को संचालित करने के लिए आवश्यक मानी जाती है, इसके अतिरिक्त इन रीति–रिवाजों या मान्यताओं से स्थानीय संस्कृति की भी झलक मिलती है। ''भारतवर्ष के ग्रामीण समाज में अशिक्षा और अज्ञानता के कारण रूढ़ियों ही चिन्तनहीन स्वीकृति वहाँ की सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक व्याधि है। परम्पराएँ किसी भी समाज में प्रचलित प्रथाओं एवं जनरीतियों आदि का सम्पूर्ण योग है। रूढ़ियाँ एवं परम्परायें एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होती है। तीज–त्योहार या समाज में कई धार्मिक कार्यक्रमों में परम्परा दृष्टिगत होती है।''[16] रामदरश मिश्र के उपन्यासों में ये रीति–रिवाजों एवम् परम्पराओं का ज्यादा वर्णन उनकी आंचलित कृतियों में ही मिलता है।

''पानी के प्राचीर'' उपन्यास के पांडेपुरवा गाँव में पहपट और कबीर गाये जाने की परम्परा होली के त्योहार में देखने को मिलती है होली जलने से लेकर खेलने तक की सभी परम्पराओं को गाँव के मुखिया के निर्देशन में ही पूर्ण किया जाता है। यह परम्पराएँ कितनी प्राचीन है और कितनी आवश्यक है कहना मुश्किल है किन्तु शिक्षा के प्रचार–प्रसार से इनकी आवश्कताओं पर समय–समय पर सवाल उठते रहे हैं। पांडेपुरवा में होली के अवसर पर गाये गए कबीर में घर की स्त्रियों के प्रति अपमानजनक और गालीसूचक शब्दों का प्रयोग किया जाता है। उपन्यास का नायक नीरू जो कि पढ़ा–लिखा और आदर्श पात्र है, वह इस परम्परा को पसंद नहीं करता। कबीर गाते–गाते लोग घरों में घुस रहे हैं। मन के भीतर संचित जनम–जनम के गंदे उद्‌गारों को औरतों पर फेंक रहे थे, जैसे घूड़े पर कूड़ा फेंकते हैं। जिस लड़के के घर कबीर उमड़ रहा था, वह लड़का अपनी माँ या भावज के प्रति बहती हुई गालियों से छटपटाकर कबीर गाने वालों को ही कबीर सुना रहा था।''[17]

इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में परम्पराओं का जटिल स्वरूप दिखाई नहीं देता बल्कि प्रसंगवश ही आवश्यक परम्पराओं और मान्यताओं का जिक्र आता रहा है चूँकि मिश्र जी स्वयं प्रगतिशील विचारों के रहे हैं। अतः उन्होंने आडम्बर वाली रूढ़ियों को अपने लेखन में ज्यादा तरजीह नही दी है।

संदर्भ :–

1. पानी के प्राचीर– रामदरश मिश्र, समर्पण वाक्य
2. रामदरश मिश्र के उपन्यास साहित्य में सांस्कृतिक चेतना– डॉ0 गीता यादव पृ0 13
3. रामदरश मिश्र के उपन्यास साहित्य में सांस्कृतिक चेतना– डॉ0 गीता यादव पृ0 14
4. पानी के प्राचीर– रामदरश मिश्र पृ0 14
5. पानी के प्राचीर– रामदरश मिश्र पृ0 14
6. पानी के प्राचीर– रामदरश मिश्र पृ0 20
7. पानी के प्राचीर– रामदरश मिश्र पृ0 103
8. पानी के प्राचीर– रामदरश मिश्र पृ0 19
9. पानी के प्राचीर– रामदरश मिश्र पृ0 37
10. पानी के प्राचीर– रामदरश मिश्र पृ0 99
11. पानी के प्राचीर– रामदरश मिश्र पृ0 180
12. पानी के प्राचीर– रामदरश मिश्र पृ0 17
13. पानी के प्राचीर– रामदरश मिश्र पृ0 20
14. पानी के प्राचीर– रामदरश मिश्र पृ0 66
15. पानी के प्राचीर– रामदरश मिश्र पृ0 57
16. रामदरश मिश्र के उपन्यासों में यथार्थ–डॉ0 जेड0 एम0 जंघाले पृ0 223
17. पानी के प्राचीर– रामदरश मिश्र पृ0 18–19.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Fungal Lipases And Their Properties : A Review

Farooq Ahmad Ahanger[1], Sanjay Sahay[2], Suhaib Mohd Malik[1], Kirti Jain[1]

[1]Govt. Science and Commerce College Benazeer, Bhopal -462008 (MP) India
[2]Department of Botany, NSCB Govt. PG College, Biaora, Rajgarh (MP) India

Abstract :- Enzymes are biocatalysts of nature. Lipases are versatile enzymes that are used broadly. Generally Lipases exist in nature, although only microbial lipases are industrially important. In last few years, fungal lipases gained important consideration in the industries because of their specificity to substrate and stability under different physical and chemical situations. Fungal enzymes are secreted extracellularly and they can be purified simply, which considerably decreases the cost and makes this source superior over bacteria. The some applications of lipases include hydrolysis of oils and fats, flavor development in food processing, modification of fats, resolution of racemic mixtures, removal of oil strains from clothes, estimation of amount of triacylglycerol in the person serum, removal of pitch from timber during paper manufacturing and chemical analysis. An elaborated study of lipase properties makes possible its application in appropriate industrial processes. Thus by keeping the vast applications of lipases in mind, the current review is focused on properties such as activity and stability profile in various pH and temperature, impacts of metal ions and stability in organic solvents.

Introduction :- Enzymes or microbial cells are used as biological catalysts due to their high specificity and economic advantages without any environmental impact. This is because; (1) enzymes work better at mild and obtainable temperatures and other environment conditions. It is possible to use enzymes instead of harsh conditions and harsh chemicals, as a result it could be useful to save energy and avoid pollution. In the process, it does not use expensive corrosive-resistant equipment. (2) Enzymes are highly specific thus, the production of unwanted by products is avoided and there is no need to have extensive downstream processes. (3) Enzymes can be immobilized and can therefore be reuse several times. (4) Enzymes can also be used to treat waste consisting of harmful compounds. (5) Normally enzymes able to decompose naturally by assist of decomposers, so the entire chemical components of the enzymes are readily recycled back to nature (Gennari et al., 1998). Furthermore, because of the many different bio-transformations that enzymes can catalyze, the numbers of enzymes used in commercial scale highly increased (Sharma et al., 2001a).

We compare microbial enzymes with that of enzymes originated from plants or animals, microbial enzymes have variety of catalytic activities, high production capacity within a short period of time and ease for genetic manipulation. However, microbial enzymes can be produced at any time and do not affected by seasonal variation. The other advantage of microorganisms over that of plants and animals is that they can grow rapidly on inexpensive media. Microbial enzymes are more stable interms of activity (Wiseman, 1995). Lipases have appeared as one of the leading biocatalysts with definite potential for contributing to the million-dollar underexploited lipid technology bio-industry and have been used in in situ metabolism of lipid and ex situ versatile industrial applications (Sharma and Kanwar, 2012). Lipases are triaclyglycerol acylhydrolases that catalyze the hydrolysis of triaclyglycerol to glycerol and fatty acids. They generally show additional activities such as cutinase, phospholipase, cholesterol esterase, isophospholipase, amidase

and other esterase type of activities (Svendsen, 2000). They are ubiquitous in nature and are produced by several plants, animals and microorganisms (Thakur, 2012). Microbial lipases have gained special industrial attention due to their ability to remain active under extremes of temperature, pH and organic solvents, and chemo-, regio and enantioselectivity. In addition to the hydrolysis of triglycerides, lipases can catalyze a variety of chemical reactions which include esterification, trans-esterification, acidolysis and aminolysis. Lipase is frequently used to catalyze the hydrolysis of wide non-natural substrates in order to obtain enantio- and regio selective substrates (Wang et al., 2015).

Among the microorganisms, fungi are recognized as one of the best source of lipases (Facchini et al,. 2016). Filamentous fungi are believed as the excellent source of extracellular lipase for mass production at industrial level. High rate of lipase production is a main problem in its application in industrial processes. Therefore a variety of efforts have been made to reduce its production cost (Smaniotto et al., 2012). Generally Fungi are selected as lipase producers since they produce extracellular enzymes that can be simply separated from the fermentation media (Maia et al., 1999). Mostly, species belonging to Penicillium, Mucor, Rhizopus, Aspergillus and Geotrichum are broadly identified as excellent source of lipase (Carvalho et al., 2005; Contesini et al., 2010). Amongst them some species of Aspergillus, isolated from terrestrial sources, have been recognized to excrete lipase with notable properties fit for biotechnological applications (Basheer et al., 2011; Sharma et al., 2016). Physico-chemical properties of some extracellular fungal lipases have been determined. Numerous lipases have been carefully purified and characterized in terms of their stability and activity profiles relative to temperature, pH, and impacts of metal ions, organic solvents and chelating agents (Jayaprakash and Ebenezer, 2012). Soil contaminated with spillage from the products of oil and dairy harbors fungal species which have the potential to secrete lipases to degrade fats and oils (Niyonzima and More, 2014). Fungi role in bioremediation process has been well documented (Gopinath , 2005).There has been an increasing awareness of potentially harmful effects of the universal spillage of the oil and fatty substances in both saline and fresh waters. Domesticated waste is also considered as a pollutant as it has a high quantity of fatty and oil substances and bioconversion by fungal activity results in the production of a vast number of useful substances. Filamentous fungi and yeasts usually behave more efficiently in solid-state fermentation and show greater productivities when compared to submerged fermentation (Ramos-Sanchez et al., 2015). Therefore, the present review is focused on microbial lipase and their important properties.

Sources :- Lipases are ubiquitous enzymes and have been found mostly from the microbial (Mukhtar et al., 2016; Facchini et al., 2016; Gilbert, 1993; Pandey et al., 2016), plant (Huang, 1984; Mukherjee and Hills, 2002) and animal kingdom (Carriere et al., 2000). Micro-organisms have the advantages including the ability to catalyze various reactions, produce high yields, broad substrate specificity, enhanced stability and reduced production costs (Nagarajan, 2012; Tan et al., 2015). In addition, they have the advantage of relative ease of genetic manipulation. The interest in microbial lipase production has increased in the last decade, because of its large potential in manufacturing applications as food additives (flavor modification), fine chemicals (synthesis of esters), waste water treatment (decomposition and removal of oil substances), cosmetics (removal of lipids), pharma (digestion of oils and fats in foods), leather (removal of lipids from animal skins) and medicine (blood triglyceride assay) (Loli et al., 2015; Davranov, 1994; Burkert et al., 2004; Kumar et al., 2005). Fungi have been considered as best lipase sources (Falony et al., 2006; Kumar and Ray, 2014) because of extracellular lipase

production (Ramos-Sanchez et al., 2015; Narasimhan and Bhimba, 2015). Fungal lipases have benefits over bacterial ones due to the fact that present day technology favors the use of batch fermentation and low cost extraction methods. Major genera of filamentous fungi include Rhizopus, Aspergillus, Penicillium, Mucor, Ashbya, Geotrichum, Beauveria, Humicola, Rhizomucor, Fusarium, Acremonium, Alternaria, Eurotrium and Ophiostoma (Singh and Mukhopadhyay, 2012). A list of various fungal lipase producers is presented in **Table 1**. Species of the mold Aspergillus are well known lipase producers. Lipases from Aspergillus niger are produced both intracellularly and extracellularly (Liu et al., 2015; Amoah et al., 2016a). Lipase from Penicillium sp. was optimized by using response surface methodology (Wolski et al., 2008). Fungal species which produce lipases are Candida rugosa, Candida antarctica, T. lanuginosus, Rhizomucor miehei,Pseudomonas, Mucor and Geotrichum (Sharma et al., 2001; Gordillo et al., 1998; Muralidhar et al., 2001).

Table 1 Various fungal strains for lipase production through fermentation.

Microorganism	**Time (h)**	**Lipase activity (U/ml)**	**Type of fermentation**	**Raw material**	**Reference**
Penicillium aurantiogriseum	48	25	SmF	Soya bean oil	(Lima et al., 2003)
Rhizopus rhizopodiformis	24	43	SSF	Olive oil cake-Bagasse	(Cordova et al., 1998)
Rhizopus pusillus	25	10.8	SSF	Olive oil cake-Bagasse	(Cordova et al., 1998)
Penicillium restrictum	24	30	SSF	Babassu oil cake	(Gombert et al., 1999)
Penicillium simplicissimum	36	30	SSF	Babassu oil cake	(Gutarra et al., 2007)
Rhizopus oligosporus TUV-31	48	76.6	SSF	Egg yolk	(Iftikhar and Hussain, 2002)
Rhizopus oligosporus ISUUV-16	48	81.2	SSF	Almond meal	(Awan et al., 2003)

Aspergillus carneu	96	12.7	SSF	Sunflower oil	(Kaushik et al., 2006)
Candida cylindracea	179.5	23.7	SmF	Oleic acid	(Kim and Hou et al., 2006)
Candida rugosa	50	3.8	SmF	Olive oil	(Rajendran et al., 2008)
Penicillium verrucosum	48	40	SSF	Soybean bran	(Kempka et al., 2008)
Geotrichum sp.	24	20	SmF	Olive oil	(Burkert et al., 2004)
Rhizopus homothallicus	12	826	SSF	Olive oil	(Rodriguez et al., 2006)
Penicillium chrysogenum	168	46	SSF	Wheat bran	(Kumar et al.,2011)
Fusarium solani FS1	120	0.45	SmF	Sesame oil	(Maia et al., 2001)
Penicillium simplicissimum	48	21	SSF	Soy cake	(De Luccio et al., 2004)
Aspergillus awamori	96	495	SmF	Rice bran oil	(Basheer et al., 2011)
Candida cylindracea NRRLY-17506	175	20.4	SmF	Olive mill wastewater	(Brozzoli et al., 2009)

Properties of lipases :- The number of available lipases has increased since the 1980s and used as industrial biocatalysts because of their properties like bio-degradability (Mauti et al.,2016), high specificity (Das et al., 2016), high catalytic efficiency (Amoah et al., 2016b), temperature (Liu et al., 2015), pH dependency, activity in organic solvents (Kumar et al., 2016), and nontoxic nature. The most desired characteristics of the lipase are its ability to utilize all mono-, di-, and tri-glycerides as well as the free fatty acids in transesterification, low product inhibition, high activity/yield in non-aqueous media, low reaction time, resistance to

altered temperature, pH, alcohol and reusability of immobilized enzyme. Additionally, lipases can carry out reactions under mild conditions of pH and temperature and this reduces energy required to direct reactions at unusual temperatures and pressures.

Temperatures impact on activity and stability of lipase :- Falony et al., (2006) investigated impact of various temperatures (20-90 ºC) on the activity of lipase by A. niger. Enzyme was highly active at 40 ºC and then lipase activity was started to decline drastically after 60 ºC. Enzyme activity was completely lost at 90 ºC. Sarkar and Laha (2013) reported that lipase of A. niger exhibited maximum activity (0.40 U ml-1) at 40 ºC. Jayaprakash and Ebenezer (2012) studied influence of various temperatures (20-90 °C) on the activity and stability of lipase purified from A. japonicus. An optimum temperature of 40 °C was found, that was followed by reduction in the lipase activity with rise in temperature and activity reached to minimum at 90 °C. In the stability pattern, lipase remained stable in the temperature range of 30-60 °C when pre-incubated for 1 h. Ulker et al., (2011) depicted an optimum temperature of 40 ºC for the maximum activity of lipase from T. harzianum. Lipase activity was reduced by changing the temperature optima, while in the stability profile, enzyme remained stable at the temperature range of 20-40 ^{0}C, after pre-incubation for 1 h. However activity of lipase was completely lost at high temperature range from 60-80 ^{0}C.

Pera et al., (2006) demonstrated activity of A. niger lipase within the temperature range of 4-55 ^{0}C. Among all temperatures, optimum activity was found at 37 ºC while in the temperature stability profile, enzyme remained stable in the temperature range of 30-55 ºC with highest stability at 37 ºC when pre-incubated for 1 h. Similarly, an optimum temperature of 37 ºC for activity of lipase has been documented by other workers (Kamini et al., 1998; Saxena et al., 2003). However, Essamri et al., (1998) manifested that lipase of R. oryzae exhibited optimum activity at 30 ºC. Kalindhi and Vijayalakshmi (2015) reported that purified lipase of fungus E. ashbyii demonstrated optimum activity at 30 ºC with pH of 7.0.

Maia et al., (1999) revealed an optimum temperature of 25 ºC for activity of lipase by F. solani. Lipase activity was decreased above the optimum temperature and reached to zero at 60 ºC while in the stability pattern, highest stability was detected in the temperature range of 25-30 ºC after pre-incubation for 1 h. Enzyme became inactivated at temperature above 40 ºC. Shu et al., (2006) reported that lipase of Antrodia cinnamomea retained stability within the temperature range of 25-60 ºC with maximum stability at 45 ºC. Ranjitha et al., (2009) reported that the lipase of V. fischeri retained 80% of its activity at 35 ºC, but the lower residual activities were found at 5 ^{0}C, 10 ^{0}C and 50 ºC. Kumar et al., (2012b) demonstrated that purified lipase of B. pumilus RK31 was found stable at 40 ^{0}C, 50 ^{0}C and 60 ºC retaining the 66%, 66% and 69% residual activities.

PH impact on lipase activity and stability :- Falony et al., (2006) studied influence of various pH on the activity of A. niger lipase. In the activity pattern, highest lipase activity was obtained at pH 6.0 among the all pH (4.0-10.0). In the stability profile, the lipase was stable and retained 100% of its activity within the pH range of 4.0 to 7.0 for 24 h. Lipase stability was declined after pH 7.0 and reached to minimum at pH 10.0. Similar results were obtained by Sarkar and Laha (2013). Pera et al., (2006) depicted that lipase of A. niger MYA 135 was active within the pH range of 2.0-10.0 but optimum activity was obtained at pH 6.5, while in the pH stability pattern, lipase retained its activity within the pH range of 2.0-10.0 when pre-incubated for 1 h at 37 ºC. Sugihara et al., (1988) previously reported that the lipase secreted by A. niger demonstrated its highest activity between pH 4.5 to 5.5 at 25 °C and retained its stability in

the pH range from 3.0 to 10.5 at 30 °C for 24 h. For maximum activity of lipase, an optimum pH of 2.5 for A. niger (Mahadik et al., 2002), pH of 6.5 for A. niger (Kamini et al., 1998), and pH of 9.0 for A. carneus (Saxena et al., 2003) has been reported.

Jayaprakash and Ebenezer (2012) investigated influence of different pH (3.0-12.0) on the activity and stability of lipase purified from A. japonicus. In the activity profile, pH 7.5 was the best for highest activity of lipase followed by reduction in the activity with rise in the pH and the activity was completely lost at pH 12.0. In the stability profile, the enzyme retained stability in the pH range of 6.5-8.0 when incubated for 24 h. Costa and Peralta (1999) earlier manifested that optimum temperature and pH for activity of lipase by P. wortmanii were 45 ºC and 7.0, respectively. An optimum temperature and pH for the activity of A. oryzae lipase were found to be 30 ºC and 7.0, respectively (Toida et al., 1995).

In case of lipase stability, the enzyme was found highly stable at pH optima and retained 70% of its activity within the pH range of 8.0-11.0, after pre-incubation of 24 h. Hoshino et al., (1992) also demonstrated highest stability of F. oxysporum lipase at alkaline pH. Shu et al., (2006) reported that lipase of Antrodia cinnamomea was found stable within the alkaline pH range of 7.0-10.0 with maximum activity at pH 8.0. Both the enzyme activity and stability were declined considerably in the pH values above 10.0. An optimum activity of R. oryzae lipase within the alkaline pH range has been documented by Minning et al., (1998). Costa-Silva et al., (2014) reported that activity of extracellular lipase of fungus Cercospora kikuchii was not lost when kept in the pH range of 3.0-9.0.Zhang and Zhang (1982) reported that the purified lipase preparation retained stability within the alkaline range of pH from 7.0 to 10.0 justified it to be a potent alkaline lipase in the degreasing process in leather industry.

Organic solvents impact on stability of lipase :- Pera et al., (2006) studied impact of various water miscible solvents (methanol, ethanol, acetone, butanol, hexane and heptane) on the stability of A. niger lipase. The enzyme was found stable in all organic solvents with highest residual activity in acetone when pre-incubated for 1 h at 37 ºC. Lowest residual activity was obtained with heptanes. Jayaprakash and Ebenezer (2012) investigated influence of different organic solvents (at a concentration of 10% and 20% v/v) on the stability of purified lipase of A. japonicus. The enzyme retained 90% of its activity in methanol, acetone, chloroform, ethanol and hexane with highest residual activity (95%) in methanol (10% v/v) when pre-incubated for 1 h. Reduction in lipase stability was noticed with the rise in concentration of organic solvents from 10% to 20%. It was reported by Maia et al., (1999) that lipase of F. solani retained 30% of its activity in acetone and n-propanol (10% v/v) while 20% concentration of both solvents completely suppressed lipase stability. However, Zhou et al., (2012) reported inhibition of lipase activity by ethanol and n-butanol. It was reported that organic solvents (water miscible) shred water from the enzymes, which results in denaturation of the molecule at a much rapid rate than in a pure water system (Azevedo et al., 2001). Kumar et al., (2012b) reported highest (120.50%) and lowest relative activity (10%) by B. pumilus RK31 in petroleum ether and diethyl ether, respectively.

Metal ions impact on stability of lipase :- Metal ions can either stimulate or inhibit microbial enzyme production. Metal cations, particularly Ca^{2+}, play important roles in the structure and function of enzymes, and some of the lipases are strictly calcium dependent. Ca^{2+} ions activated the enzyme, while Zn^{2+}, Fe^{2+}, Fe^{3+} strongly inhibited its activity. Salt ions like Ca^{2+}, Cd^{2+}, and Fe^{2+} enhanced the activity of immobilized biocatalyst while a few ions like Co^{2+}, Zn^{2+}, Mg^{2+}, Mn^{2+}, Al^{3+}, and Na^{+} had mild inhibitory effect (Kumar and Kanwar, 2011).

Kambourova et al., (2003) described that the stimulatory impact of Ca^{2+} is because of formation of insoluble ion-salts of fatty acids during hydrolysis, hence avoiding the inhibition of product formation. Yu et al. (2009) depicted that activity of lipase from R. chinensis was enhanced up to 24% by Ca^{2+} (1 mM) while on the other hand, Ohnishi et al. (1994) reported that activity of A. oryzae lipase was inhibited up to 77% by Ca^{2+} (5 mM). Hasan et al., (2006) had previously described that metal ions have tendency to make complexes with ionized form of fatty acids, which results in changing their behaviour and solubility at interfaces. The liberation of fatty acids into the culture medium is rate determining factor, which is influenced by metal ions. However, the impact of metal ions varies and depends on the type of lipase. The activity of extracellular lipase from R. japonicus NR400 was not influenced in the presence of metal ions (1 mM) (Suzuki et al., 1986). Mase et al. (1995) reported that activity of lipase by P. roqueforti IAM7268 was not influenced by the addition of Ca^{2+}, Mg^{2+}, Mn^{2+}, Na^{+}, K^{+} and Cu^{2+}.

Conculusion :- Fungi are able to produce various enzymes for their constant existence within a wide variety of substrates. Among those enzymes, lipases are frequently utilized in a number of applications. The major benefit of fungal lipases is that they are simply acquiescent to separation because of their extracellular nature, which greatly decreases the overall cost and makes these lipases more interesting than bacterial lipases. A detailed characterization study (activity and stability under different pH, temperature, metal ions and organic solvents) of fungal lipases should be done in order to determine their suitability in diverse industrial processes.

Refrences :-

- Amoah J, Ho SH, Hama S, Yoshida A, Nakanishi A, Hasunuma T, Ogino C, Kondo A. (2016a). Lipase cocktail for efficient conversion of oils containing phospholipids to biodiesel. Bioresour Technol. 211: 224-230.
- Amoah J, Ho SH, Hama S, Yoshida A, Nakanishi A, Hasunuma T, Ogino C, Kondo A. (2016b). Converting oils high in phospholipids to biodiesel using immobilized Aspergillus oryzae whole-cell biocatalysts expressing Fusarium heterosporum lipase. Biochem Eng J. 105: 10-15.
- Azevedo AM, Prazeres DMF, Cabral JMS, and Fonseca LP. (2001). Stability of free and immobilised peroxidase in aqueous-organic solvents mixtures. J. Mol. Catal. B: Enzym., 15(4-6): 147-153.
- Basheer SM., Chellappan S, Beena PS, Sukumaran K, Elyas KK, and Chandrasekaran M. (2011). Lipase from marine Aspergillus awamori BTMFW032: Production, partial purification and application in oil effluent treatment. N. Biotechnol., 28(6): 627-638.
- Burkert JFM, Maugeri F, Rodrigues MI. (2004). Optimization of extracellular lipase production by Geotrichum sp. using factorial design. Bioresour Technol. 91(1): 77-84.
- Carriere F, Renou C, Lopez V, De Caro J, Ferrato F, and Lengsfeld H. (2000). The specific activities of human digestive lipases measured from the in vivo and in vitro lipolysis of test meals. Gastroenterol. 119(4): 949-960.
- Carvalho PDO, Calafatti SA, Marassi M, da Silva, DM, Contesini FJ, Bizaco R, and Macedo GA. (2005). Potential of enantioselective biocatalysis by microbial lipases. Quim. Nova., 28(4): 614-621.
- Contesini FJ, Lopes DB, Macedo GA, Nascimento, MDG, and Carvalho PDO. (2010). Aspergillus sp. lipase: Potential biocatalyst for industrial use. J. Mol. Catal. B Enzym., 67(3-4): 163-171.
- Costa MA, and Peralta RM. (1999). Production of lipase by soil fungi and partial characterization of lipase from a selected strain (Penicillium wortmanii). J. Basic Microbiol., 39(1): 11-15.

- Das A, Shivakumar S, Bhattacharya S, Shakya S, and Swathi SS. (2016). Purification and characterization of a surfactant-compatible lipase from Aspergillus tamarii JGIF06 exhibiting energy-efficient removal of oil stains from polycotton fabric. 3Biotech. 6(2):131 DOI: 10.1007/s13205-016-0449-z.
- Davranov K. (1994). Microbial lipases in biotechnology (Review). Appl Biochem Microbiol. 30: 427-432.
- Essamri M, Deyries V, and Comeau L. (1998). Optimization of lipase production by Rhizopus oryzae and study on the activity in organic solvents. J. Bacteriol., 60(1-2): 97-103.
- Facchini FDA, Vici AC, Pereira MG, Jorge JA, and Polizeli TM. (2016). Enhanced lipase production of Fusarium verticillioides by using response surface methodology and waste water pretreatment application. J Biochem Tech. 6(3): 996-1002.
- Falony G, Armas JC, Mendoza JCD, and Hernandez JLM. (2006). Production of Extracellular Lipase from Aspergillus niger by Solid-State Fermentation. Food Technol. Biotechnol., 44(2): 235-240.
- Gennari FS, Miertus M, Stredansky and F. pizzio, (1998). Use of biotecnology for industrial applications. Genetic Eng. Biotechnol., 4: 14-23.
- Gilbert EJ. (1993). Pseudomonas lipase biochemical properties and molecular cloning. Enzyme Microb Technol. 15(8): 634-645. 40.
- Gordillo MA, Montesinos JL, Casas C, Valero F, Lafuente J, Sola C. (1998). Improving lipase production from Candida rugosa by a biochemical engineering approach. Chem Phys Lipids. 93(1-2): 131-142. 41.
- Hasan, F, Shah, AA, and Hameed A. (2006). Industrial applications of microbial lipases. Enzyme Microb. Technol., 39(2): 235-251.
- Hoshino T, Sasaki T, Watanabe Y, Nagasawa T. and Yamane T. (1992). Purification and some characteristics of extracellular lipase from Fusarium oxysporum f. sp. lini. Biosci. Biotechnol. Biochem., 56(4): 660-664.
- Iftikhar T, Hussain A. (2002). Effect of nutrients on the extracellular lipase production by the mutant strain of R. oligosporous Tuv-31. Biotechnol. 1(1): 15-20.
- Jayaprakash A, and Ebenezer P. (2012). Purification and characterization of Aspergillus japonicus lipase from a pig fat production medium. J. Acad. Indus. Res., 1(1): 1-7.
- Kalindhi K. and Vijayalakshmi S. (2015). Isolation and Purification of Lipase from the Riboflavin Overproducing Fungus Eremothecium Ashbyii. J. Analg., 3(1): 1-8.
- Kambourova M, Kirilova N, Mandeva R, and Derekova A. (2003). Purification and properties of thermostable lipase from a thermophilic Bacillus stearothermophilus MC 7. J. Mol. Catal. B: Enzym., 22(5-6): 307-313.
- Kempka AP, Lipke NR, Pinheiro TLF, Menoncin S, Treichel H, and Freir DMG. (2008). Response surface method to optimize the production and characterization of lipase from Penicillium verrucosum in solid state fermentation. Bioprocess Biosyst Eng. 31(2): 119-125.
- Kumar S, Kikon K, Upadhyay A, Kanwar SS, and Gupta R. (2005). Production, purification, and characterization of lipase from thermophilic and alkaliphilic Bacillus coagulans BTS-3. Protein Express Purif. 41: 38-44.
- Kumar A. and Kanwar SS. (2011).Synthesis of isopropyl ferulate using silica-immobilized lipase in an organic medium, Enzyme Res., 1-8.
- Kumar DS, amd Ray S. (2014). Fungal lipase Production by solid state fermentation-An overview. J Anal Bioanal Tech. 6: 1-10.
- Liu G, Hu S, Li L, and Hou Y. (2015). Purification and characterization of a lipase with high thermostability and polar organic solvent tolerance from Aspergillus niger AN0512. Lipids. 50: 1155-1163.

- Loli H, Narwal SK, Saun NK, and Gupta R. (2015). Lipases in Medicine: An Overview. Mini Rev Med Chem. 15(14): 1209-1216.
- Maia MDMD, Morais MMCD, Morais MAD, Melo EHM, and Filho JLDL. (1999). Production of extracellular lipase by the phytopathogenic fungus Fusarium solani FS1. Rev. Microbiol., 30(4): 304-309.
- Maia MMD, Heasley A, Camargo de Morais MM, Melo EHM, Morais MA Jr, and Ledingham JLWM. (2001). Effect of culture conditions on lipase production by Fusarium solani in batch fermentation. Bioresour Technol. 76(1): 23-27.
- Nagarajan S. (2012). New tools for exploring old friends-microbial lipases. Appl Biochem Biotechnol. 168(5): 1163-1196.
- Narasimhan V, and Bhimba V. (2015). Screening of extracellular lipase releasing microorganisms isolated from sunflower vegetable oil contaminated soil for bio-diesel production. Asian J Pharm Clin Res. 8(2): 427-430.
- Ohnishi K, Yohko Y, Toita J, and Sekiguchi J. (1994). Purification and characterization of a novel lipolytic enzyme from Aspergillus oryzae. J. Ferment. Bioeng., 78(6): 413-419.
- Pandey N, Dhakar K, Jain R, and Pandey A. (2016). Temperature dependent lipase production from cold and pH tolerant species of Penicillium. Mycosphere. Doi 10.5943/mycosphere/si/3b/5.
- Pera LM, Romero, CM, Baigori MD, and Castro GR. (2006). Catalytic Properties of Lipase Extracts from Aspergillus niger. Food Technol. Biotechnol., 44(2): 247-252.
- Rajendran A, Palanisamy A, Thangavelu V. (2008). Evaluation of medium components by Plackett-Burman statistical design for lipase production by Candida rugosa and kinetic modeling. Chin J Biotechnol. 24(3): 436-444.
- Ramos-Sanchez LB, Cujilema-Quitio MC, Julian-Ricardo MC, Cordova J, and Fickers P. (2015). Fungal lipase production by solid state fermentation. J Bioprocess Biotechnol. 5: 1-9.
- Sarkar D, and Laha, S. (2013). Optimization of extracellular lipase enzyme production from Aspergillus niger by submerged and solid state fermentation process. Int. J. Pharma Bio Sci., 4(4): 978-985.
- Saxena RK, Davidson WS, Sheoran A, and Bhoopander G. (2003). Purification and characterization of an alkaline thermostable lipase from Aspergillus carneus. Process Biochem., 39(2): 239-247.
- Sharma AK, Sharma V, and Saxena J. (2016). Isolation and Screening of extracellular lipase producing fungi from soil. Am. J. Pharm. Health Res., 4(8): 38-50.
- Smaniotto A, Skovronski A, Rigo E, Tsai SM, Durrer A, Foltran LL, Luccio MD, Oliveira JV, de Oliveira D, and Treichel H. (2012). Synthetic lipase production from a newly isolated Sporidiobolus pararoseus strain. Braz. J. Microbiol., 43(4): 1490-1498.
- Sugihara A, Shimada Y, and Tominaga Y. (1988). Purification and characterization of Aspergillus niger lipase. Agric. Biol. Chem., 52(6): 1591-1592.
- Suzuki M, Yamamoto H. and Mizugaki M. (1986). Purification and general properties of a metal-insensitive lipase from Rhizopus japonicus NR 400. J. Biochem., 100(5): 1207-1213.
- Svendsen A. (2000). Review: Lipase protein engineering. Biochim. Biophys. Acta., 1543(2): 223-238.
- Tan CH, Show PL, Ooi CW, Ng EP, Lan JCW, and Ling TC. (2015). Novel lipase purification methods–a review of the latest developments. Biotechnol J. 10(1): 31-44.
- Thakur S. (2012). Lipases, its sources, Properties and Applications: A Review. Int. J. Sci. Eng. Res., 3(7): 1-29.
- Toida J, Kondoh K, Fukuzawa M, Ohnishi K, and Sekiguchi J. (1995). Purification and characterization of a lipase from Aspergillus oryzae. Biosci. Biotechnol. Biochem., 59(7): 1199-1203.

- Ulker S, Ozel A, Colak A, and Karaoglu SA. (2011). Isolation, production, and characterization of an extracellular lipase from Trichoderma harzianum isolated from soil. Turkish J. Biol., 35(5): 543-550.
- Wang W, Zhou W, Li J, Hao D, Su Z, and Guanghui Ma. (2015). Comparison of covalent and physical immobilization of lipase in gigaporous polymeric microspheres. Bioprocess Biosyst Eng. 38: 2107-2115.
- Wiseman A, (1995). Introductin to principles. In: Handbook of Enzymes Biotecnology, Wiseman, A.(Ed). 3rd Edn., Ellis Horwood Ltd., T.J. Press Ltd., padstow, cornwall, UK, pp: 3-8.
- Wolski E, Menusi E, Mazutti M, Toniazzo G, Rigo E, Cansian RL, Mossi A, Oliveira JV, Luccio MD, Oliveira JV, Luccio MD, Oliveira D, amd Treichel H. (2008). Response surface methodology for optimization of lipase production by an immobilized newly isolated Penicillium sp. Ind Eng Chem Res. 47: 9651-9657.
- Yu XW, Wang LL, and Yan X. (2009). Rhizopus chinensis lipase: Gene cloning, expression in Pichia pastoris and properties. J. Mol. Catal. B: Enzym., 57(1-4): 304-311.
- Zhang X. and Zhang Y. (1982). Test use of alkaline lipase in degreasing of pigskin. Pige Keji, 40: 16-21.
- Zhou J, Chen WW, Jia ZB, Huang GR, Hong,Y, Tao JJ. and Luo XB. (2012). Purification and Characterization of Lipase Produced by Aspergillus oryzae CJLU-31 Isolated from Waste Cooking Oily Soil. Am. J. Food Technol., 7(10): 596-608.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Volume : 4 Sep. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

जबलपुर नगर में इलेक्ट्रानिक वस्तुओं के विक्रेता

दुर्गा मिश्रा
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

इलेक्ट्रानिक उद्योग भारत में 1965 को प्रारंभ हुआ था। यह पूर्णतः सरकार की देख–रेख में में शुरू किया गया था और यह सरकार की देख–रेख में ही विकसित किया गया। इस समय इलेक्ट्रॉनिक जगत के कई उत्पाद थे जिनका विकास तीव्र गति से हो रहा जिसमें प्रमुख उत्पाद ट्रांजिस्टर, रेडियों ब्लैक एण्ड व्हाईट टी.व्ही.केल्कुलेटर और अन्य सुनने वाले उत्पाद शामिल है। कलर टी.व्ही जल्द ही आने वाला था। 1982 का युग इलेक्ट्रानिक उत्पाद जैस ट्रांजिस्टर, रेडियों, ब्लैक एण्ड व्हाईट टी.व्ही. केल्कुलेटर आदि के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा। यह वर्ष भारत के इतिहास में इलेक्ट्रानिक जगत के लिए अधिक महत्वपूर्ण रहा है। इस वर्ष सरकार ने लगभग 1000 टी.व्ही सेट आयात किए क्योंकि नई दिल्ली में चल रहे एशियन गेम्स का प्रसारण इनके माध्यम से पहली बार किया जा रहा था जिसे देखने का लोगों में काफी उत्साह था। इसके बाद जैसे इलेक्ट्रॉनिक जगत में क्रांति आ गई और लगभग हर वर्ष इनका उत्पादन तथा बिक्री 30 प्रतिशत से 40 प्रतिशत तक बढ़ती रही। इस प्रगति ने भारत के बाजार को ही नहीं बल्कि विदेशी बाजार को भी काफी हद तक प्रभावित किया और निरन्तर बाजार को बढ़ाया है।

भारत के इतिहास में 1984 से 1990 का समय प्रमाण है, जब इलेक्ट्रॉनिक उद्योग लगातार अतितीव्र गति से बढ़ रहे थे। उस समय को इलेक्ट्रॉनिक युग का स्वर्ण युग भी कहा जा सकता है।1991 से आगे की तरफ चले तो युद्ध के बाद का समय इलेक्ट्रिॉनिक उद्योग एवं अन्य उद्योग के लिए थोड़ा खराब रहा क्योंकि इस समय भारत की आर्थिक स्थिति दयनीय होने के कारण बाजार भी प्रभावित हुआ। युद्ध में अपार जन–धन की हानि हुई थी जिससे आर्थिक स्थिति खराब हो गई थी परन्तु इसके बाद में इलेक्ट्रॉनिक्स उत्पाद के निर्माण प्रक्रिया पर असर तो पड़ा पर फिर भी उत्पाद बाजार में कभी नहीं आई और नई–नई तकनीकों के आ जाने से उद्याोग दिन प्रतिदिन बढ़ता गया और हर दिन नए–नए उत्पादों को बाजार में नए ढ़ग से निर्माता प्रस्तुत करते गए जिससे बाजार में प्रतियोगिता भी शुरू हो गई और व्यापार भी बढ़ा।

वर्तमान में इलेक्ट्रॉनिक उद्योग अति तीव्र गति से बढ़ रहा है। एक अनुमान के आधार पर इनका विकास लगभग 10 बिलियन तक बढ़ा है और यह 2010 तक लगभग 40 बिलियन तब बढ़ने की संभावना है। जबकि 2015 तक यही विकास की दर लगभग 158 बिलियन तब बढ़ने की संभावना है। इलेक्ट्रॉनिक उत्पाद की इस प्रगति ने ग्लोबल प्लेयरस का ध्यान भी भारतीय बाजार की तरफ आर्कशित किया है। तथा Solectron, Flextronics, Jabil, Nolia, Elcoted आदि कम्पनियों के उत्पादों के लिए बड़ी मात्रा में विनियोग किया है। एल. जी. और सेमसंग कम्पनी ने बहुत से इलेक्ट्रानिक उत्पाद भारतीय बाजार को प्रदान किए है। जिसमें टी. व्ही. ,सी.डी.प्लेयर और सुनने के उत्पाद भारतीय बाजार को बढ़ाया है, जिससे आयात एवं निर्यात व्यापार भी बढ़ा है। इस समय इलेक्ट्रॉनिक उत्पाद निर्मित करने वाली हजारों कम्पनियां है, जो इलेक्ट्रॉनिक उत्पाद के निर्माण में लगी हुई और हर दिन नए उत्पादों को उपभोक्ता बाजार में प्रस्तुत कर रही हैं, जिससे बाजार का विकास हो रहा है।

जबलपुर नगर में इलेक्ट्रानिक वस्तुओं के विक्रेताओं में कुछ प्रमुख विक्रेता है, जो इस प्रतियोगिता में लगे हुए है और नई – नई वस्तुओं को बाजार में लाकर प्रचार कर रहे है, जिससे इन उत्पादो की मॉग बढ़ रही है। अगर हम इलेक्ट्रॉनिक वस्तु का अध्ययन करेंगें तो पायेगें कि आज का मानव पूर्णतः इलेक्ट्रॉनिक वस्तुओं पर निर्भर हो गया है। सुबह उठने से लेकर रात में सोने तक वह कई ऐसी वस्तुओं का उपयोग करता है जो इलेक्ट्रॉनिक है। भागदौड़ वाली जिंदगी में हर मनुष्य अपना कार्य जल्दी और कम समय में निपटा लेना चाहता है और इसके लिए वह इन वस्तुओं का उपयोग करता है। घरों में भोजन पकाने, कपड़े धोने से लेकर आफिस तक के काम इन बिजली से चलने वाले उपकरणों द्वारा होते है। कुछ ऐसे स्थान है, जहॉ पर इन उपकरणों के बिना कार्य होता ही नहीं है। जैसे बैंकों में आजकल कम्प्यूटर के माध्यम से कार्य किया जाता है।

इसी प्रकार रेल्वे स्टेशनों में भी कम्प्यूटर उपयोग हो रहा है इसके द्वारा ही यात्रियों की टिकट बनायी जाती है एवं सारी सूचनाएँ दी जाती हैं इलेक्ट्रॉनिक उत्पाद में बाजार में लगे कई उत्पाद में एक ही वस्तु को अलग –अलग प्रकार से प्रस्तुत किया है, चाहे फिर उन वस्तुओं के उपयोग के तरीका एवं कार्य एक ही हो, उत्पाद में इन्हें कहीं रंग और कहीं आकार में अलग–अलग करके प्रस्तुत किया है ताकि वे उपभोक्ता को अपनी और आकर्षित कर सके और बाजार में इन वस्तुओं का व्यापार बढ़ा सकें। जैसे पंखे का उत्पादन करने वाली कई कम्पनियॉ है, जिन्होंने अलग–अलग रंगों एवं आकार में इसे बाजार में प्रस्तुत किया है, फिर भले ही इन सभी कार्य एक ही हो इसी प्रकार जबलपुर नगर में भी कई उत्पादक है, जो विभिन्न इलेक्ट्रॉनिक उत्पाद का निर्माण कर उन्हें विक्रय हेतु बाजार में प्रस्तुत करते है।

आधुनिक प्रबंध में विपणन का विशेष महत्व हैं और यह प्रबंध की महत्वपूर्ण अवधारणों में से है जब तक कि इसे भली भांति न समझा जाये एवं इसे व्यवहार में न लाया जाये, तब तक अधिकांश व्यावसायिक अथवा औद्योगिक संस्थान या तो भक्ति विहीन होकर समाप्त हो जायेगें अथवा असफल हो जायेंगे, अतएव आधुनिक विपणन अवधारणा का अर्थ समझना एवं उसे व्यवहार में लाना आवश्यक है। यह तब स्पष्ट होगा जबकि हम यह स्वीकार करने के लिए तत्पर होंगे कि विपणन एक ग्राहकोन्मुखी क्रिया है। यह निम्न तीन मूलभूत अवधारणाओं पर आधारित है–

आधुनिक विपणन की अवधारणा

1. कम्पनी की नीतियॉ 2. व्यवसाय का लक्ष्य उचित
3. आधुनिक विपणन

लाभप्रद क्रियाये करना अवधारणा

1. **कम्पनी की नीतियॉ** – कम्पनी की नतियॉ एवं क्रियाये ग्राहकोन्मुखी है अतएव समस्त व्यवसायिक क्रियाओं का प्राथमिक उद्दे" य ग्राहकों की इच्छाओं एवं आवश्यकताओं की प्रभावी ढ़ंग से संतुष्टि करना है।
2. **व्यवसाय का लक्ष्य उचित लाभप्रद क्रियाये करना** – व्यवसाय का लक्ष्य उचित लाभप्रद विक्रय करना है। आधुनिक विपणन अवधारणा मात्र एक क्रिया नहीं है अपितु इसमें वे सभी क्रियायें समाहित है जो कि उत्पाद को उसके उत्पत्ति के स्थान से उठाकर अंतिम उपभोक्ताओं एवं उपयोगकर्त्ता उद्योगों के हाथों में सौपती है। और उन्हे संतुष्टि प्रदान करती है।
3. **आधुनिक विपणन की अवधारणा** – आधुनिक विपणन की अवधारणा का प्रारंभ उस समय हो जाता है। जबकि किसी उत्पाद को निर्मित करने के विचार का सृजन होता है और इसका अंत उस समय हो जाता है। जबकि एक ओर ग्राहक को पूर्णतः संतुष्टि प्राप्त हो जाती है और दूसरी ओर निर्माता को उत्पाद विक्रय से उचित प्रतिफल प्राप्त हो जाता है इस दृष्टि से आधुनिक विपणन की अवधारणा एक व्यापाक प्रक्रिया है।

BIBLIOGRAPHY :-

S.N.	Title of the book	Name of the Author
1.	Marketing Management	Dr. B.M.Bhadada Dr. B.L.Porwal
2.	A Study of Marketing in Indai	Brajendra Swarup Saxena & Surendra Saxena
3.	Elemnts of Statistics	R.P.Varshney
4.	Business Statistics	Dr.B.N.Gupta
5.	Statistical Methods	Dr.R.P.Mishra
6.	Principes of Stutistics	Pro. D.C. Sharma
7.	Principes Analysis	Dr. Ram Gopal Sharma Dr. Ravi Kumar Jain
8.	Marketing Management	Dr. S.P. Bansal
9	Business Statistics	Dr. S.M.Shukla
10.	Principes of Marketing	Dr. S.P. Bansal